मिश्रबंधु-विनोद

अथवा

हिंदी-साहित्य का इतिहास तथा कवि-कीर्तन

(द्वितीय भाग)

लेखक

गणेशविहारी मिश्र

माननीय श्यामविहारी मिश्र एम्० ए०

रायबहादुर शुकदेवविहारी मिश्र बी० ए०

"हैं सुकृती रससिद्ध कवि वंदनीय जग माहिं ;
जिनके सुजंस-सरीर कहँ जरा-मरन भय नाहिं ।"

प्रकाशक

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

२९-३०, अमीनाबाद-पार्क

लखनऊ

द्वितीय वार

सजिल्द ४।) ३॥)   सं० १९८४   सादी ३।) २)

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

विषय-सूची
पूर्वालंकृत प्रकरण

पृष्ठ

पृष्ठ

पृष्ठ

मिश्रबंधु-विनोद

पूर्वालंकृत प्रकरण

(१६८१-१७९०)

अठारहवाँ अध्याय

पूर्वालंकृत हिंदी

महात्मा सूरदास और तुलसीदास का समय हिंदी-साहित्य के लिये जैसा गौरव-पूर्ण हुआ था, वह हम ऊपर देख चुके हैं। हर्ष का विषय है कि गोस्वामीजी के पीछे देवजी पर्यंत यह समय कविता के लिये और भी अधिक महत्त्व का हुआ। उस काल के साथ उत्तम तथा परिपक्क भाषा का जन्म हुआ था और हिंदी ने अभूतपूर्व सर्वांग-पूर्ण चमकती हुई कविता का मुख देखा था। तो भी शैशवावस्था और यौवनावस्था में अंतर होना स्वाभाविक ही है। इसी नियमानुसार इस काल की भाषा अधिक परिपक्क थी।

इस समय एक अनहोनी-सी बात यह भी हुई कि चिरकाल से पददलित और विमर्दित हिंदू-जाति ने फिर से सिर उठाया और कई शताब्दियों के विजयी यवनों का साम्राज्य बिगड़ते-बिगड़ते ध्वस्त ही हो गया। इसी काल में महाराजा शिवाजी ने बीजापूर, गोलकुंडा और दिल्ली को विमर्दित करके विशाल महाराष्ट्र राज्य स्थापित किया, इसी काल में महाराजा जसवंतसिंह ने हिंदूपन के भाव को जागृत करके मुग़लों की सेवा करते हुए भी खुल्लमखुल्ला कई बार औरंगज़ेब

को ज़र्कें दीं और शिवाजी से मिलकर शाइस्ताख़ाँ की दुर्गति करा डाली, इसी काल में महाराणा राजसिंह ने मुग़लों की अधीनता को लात मारकर छः प्रचंड युद्धों में स्वयं औरंगज़ेब को पराजित किया, इसी काल में जसवंतसिंह के मर जाने पर भी शूर-शिरोमणि राठोरों ने ३० वर्षों तक मुग़लों से घोर युद्ध करके अपने बालक-महाराज अजीतसिंह तथा माड़वार-राज्य की रक्षा की, इसी काल में चंपतिराय ने अपने प्रभाव से सारे बुँदेलखंड को दीप्तिमान् करके मुग़लों को हिला दिया, इसी काल में महाराजा छत्रसाल ने केवल ५ सवार और २५ पैदलों के ही सहारे से प्रयत्न आरंभ करके मुग़लों का सामना किया और धीरे-धीरे विजयों पर विजय प्राप्त करते हुए अंत में दो कोटि वार्षिक आय का विशाल राज्य बुँदेलखंड में और उसके आस पास संस्थापित कर दिया, और इसी अनुपम काल में शौर्यमूर्ति बालाजी विश्वनाथ और बाजीराव पेशवा ने मुग़ल-साम्राज्य को चकनाचूर कर भारतवर्ष में ५०० वर्षों से खोए हुए आर्य-साम्राज्य को फिर से स्थापित किया।

ऐसे दर्पपूर्ण प्रतिभाशाली सुकाल में साहित्य की विशदोन्नति परम स्वाभाविक थी और वह हुई भी। सूर और तुलसीदास के समय में जैसे कृष्ण और राम-भक्ति की धारा ने उमड़कर उत्तरी भारत को पुनीत किया था, उसी प्रकार इस भूषण और देववाले काल में उत्साह की मूर्ति खड़ी हो गई और वीर-रस ने हिंदी-साहित्य को एक बार कुछ समय के लिये इभारोही करके छत्र-मुकुट से सुशोभित कर दिया, मानो वह साक्षात् दीपक राग का प्रतिरूप बन गया। सौर काल के पीछे तुलसीदास के समय जो विविध विषय-वर्णन की परिपाटी चली थी, उसने और भी पुष्टि पाई और हिंदी को सैकड़ों विषयों की पुस्तकों से सर्वांगपूर्ण बनाया। उस काल ने नवरत्नों में तीन रत्न उत्पन्न किए, तो इसने चार प्रकट करके दिखला-दिए। नवरत्नों के अतिरिक्त उत्तम कवियों की संख्या इस काल में

बहुत अधिक पाई जाती है। वास्तव में प्रथम कक्षा के इतने कवि किसी अन्य समय में नहीं देख पड़ते।

भक्त-शिरोमणि प्राणनाथ, सुंदरदास, गुरु गोविंदसिंह, ध्रुवदास आदि ने इसी समय को पुनीत किया। महात्मा प्राणनाथजी ने पन्ना में रहकर समस्त बुँदेलखंड पर बड़ा विशद प्रभाव डाला और एक नया पंथ ही स्थापित कर दिया। सुंदरदास ने दादू पंथ को उन्नत किया। गुरु गोविंदसिंहजी ने भक्ति को शौर्य से मिलाकर सिक्खों में जातीयता का बीज बोया और सिक्ख विशाल राज्य की नीव डाली। यदि यह महात्मा संसार में न हो गया होता, तो महाराजा रणजीतसिंहजी को एक ही शताब्दी पीछे इतना विस्तृत साम्राज्य स्थापित करने का सौभाग्य कभी न प्राप्त होता। इस महात्मा ने हिंदी-कविता भी बढ़िया की है।

महाराजा जसवंतसिंह, तत्पुत्र महाराजा अजीतसिंह (दोनों जोधपुर-नरेश), महाराजा राजसिंह, महाराजा छत्रसाल (बुँदेलखंड के स्वामी), राव राजा बुद्धसिंह (बूँदी-नरेश) और महाराजा नागरीदासजी (कृष्णगढ़-नरेश) इस देदीप्यमान काल में प्रसिद्ध कवि और कवियों के कल्पवृक्ष हो गए हैं। महाराजा जसवंतसिंह का बनाया हुआ "भाषाभूषण" अबतक अलंकार-जिज्ञासुओं के गले का हार हो रहा है, वे लोग प्रायः यह ग्रंथ और कवि-कुल-कंठाभरण को ही अलंकार समझने के लिये पढ़ते हैं। महाराजा राजसिंह की भी कविता अच्छी होती थी। मान कवि ने महाराणाजी के यहाँ आश्रय पाकर इनके चरित्र-वर्णन में राजविलास-नामक सुविशाल ग्रंथ बनाया, जो नागरीप्रचारणी ग्रंथ-माला में छप गया है। महाराजा छत्रसाल की कविता ऐसी मनोहर होती थी, जैसी कि सुकवियों की होती है। इनका एक ग्रंथ बुँदेलखंड में एक धामी के पास वर्तमान है, परंतु वह उसे किसी को दिखाता भी नहीं। छत्र-

साल की कविता को हाल में वियोगी हरिजी ने प्रकाशित किया है। ये महाराज ऐसे गुणग्राहक थे कि इतने बड़े राजा होने पर भी इन्होंने एक बार भूषण की कविता से प्रसन्न होकर उनकी पालकी का डंडा अपने कंधे पर रख लिया था। लाल कवि ने इन्हीं के यशकीर्तन में प्रसिद्ध ग्रंथ छत्रप्रकाश बनाया। इनके दरबार में सैकड़ों कविगण आते और आदर पाते थे। भूषण और हरिकेश के समान उद्दंड सत्कवि, नेवाज-जैसे शृंगारी, और लाल के ऐसे कथाप्रासंगिक प्रबल लेखक, सभी इस कल्पद्रुम की उदारता के साक्षी हैं। जितने सत्कवियों की बनाई हुई इस महाराजा की प्रशंसा मिलती है, उनके आधे भी सरस्वती सेवियों ने किसी भी राजा-महाराजा की विरदावली का गान नहीं किया है। एक और भी कथनीय बात है कि इन्होंने प्रायः परमोत्तम कवियों का ही विशेष मान किया जिससे इनकी साहित्य-पटुता प्रकट होती है। राव राजा बुद्धसिंह भी कवियों के प्रसिद्ध आश्रयदाता थे। महाकवि मतिराम इन्हीं के यहाँ रहते थे, और भूषण तथा कवींद्र ने भी इनकी प्रशंसा के छंद कहे हैं। यह भी उत्कृष्ट कवि और गुणग्राहक थे। महाराजा नागरीदास के विषय में यहाँ कुछ कहना व्यर्थ है। इनके साहित्य और गुणों का वर्णन इस प्रकरण में यथास्थान कुछ विस्तृत रूप से मिलेगा। महाराजा शिवाजी ने भी भूषण-ऐसे प्रसिद्ध कवि को आश्रय देकर अपनी गुणग्राहकता दिखाई। शिवाजी महाराज स्वयं भी कवि थे। इनके गुरु रामदास ने भी हिंदी में कविता की थी। जैपुर के महाराजा जयसिंह ने बिहारीलाल का समादर किया था। इन महाराजाओं के अतिरिक्त अन्य राजा-महाराजाओं ने भी कवियों को आश्रय दिया, जिसका वर्णन उन कवियों के साथ मिलेगा। इनमें शाहजहाँ, औरंगज़ेबात्मज आज़मशाह, अकबरअलीख़ाँ, क़मरुद्दीनख़ाँ आदि मुसलमान महाशय भी परिगणित हैं।

भाषा-साहित्य के आचार्य भी इस काल में बहुत हो गए, जिनमें देव, भूषण, मतिराम, चिंतामणि, श्रीपति,कवींद्र, महाराजा जसवंतसिंह, सूरति मिश्र, रसलीन, कुलपति और सुखदेव मिश्र प्रधान हैं। सबल कविता करनेवालों में इस काल के बैताल, लाल, भूषण और हरिकेश अगुआ हैं, और प्रेमियों में नेवाज, शेख़ और आलम मुख्य माने जाते हैं। घाघ ने मोटिया नीति ग्रामीण भाषा में कही है। गद्य काव्य सूरति मिश्र ने रची, और कृष्ण तथा सूरति से टीकाओं की प्रणाली फिर से चलती है। उर्दू और फ़ारसी के तलाज़मे यदि हिंदी में कहीं पाए जाते हैं, तो बिहारी आदि में। देवजी ने तो मानो सभी कुछ कहा और भाषा की वह अभूतपूर्व उन्नति की, जो दर्शनीय है। जैसी सोहावनी भाषा का प्रयोग देव और मतिराम ने किया है वैसी हिंदी किसी कालवाले किसी कवि ने नहीं लिख पाई।

इस समय अन्य विषयों के अतिरिक्त शृंगार काव्य ने बहुत उन्नति की और नायिका-भेद के ग्रंथ बनाने की परिपाटी-सी पड़ गई। अलंकार, षट्ऋतु आदि के ग्रंथों एवं रीति की पुस्तकों में भी शृंगाररस का ही महत्त्व क्रमशः हो गया। यद्यपि इस काल में शौर्य का प्राधान्य भारतवर्ष में रहा और अच्छा समय था कि कवियों का चित्त शृंगार से उचटकर वीरकाव्य में लग जाता, पर शृंगार कविता की नींव हिंदी में ऐसी दृढ़ हो चुकी थी कि वीर कविता के होने पर भी कवियों एवं उनके आश्रयदाताओं का ध्यान शृंगार की ओर से न हटा और वीर एवं शृंगार दोनों रसों की कविता अब भी पूर्ण रीति से होती रही। इस समय भारत में बहुत-से वीर पुरुष वर्तमान थे। उनके प्रोत्साहन से वीर कविता ने अच्छा आदर पाया और शौर्य वर्णन के ग्रंथों की मात्रा-वृद्धि भी ख़ूब हुई, पर इसके पीछे देश में कादरता बहुत बढ़ी, सो कुछ दिनों में वीर-ग्रंथों का मान अच्छा न रहा। इस कारण ऐसे बहुत-से ग्रंथ नष्ट हो गए और

बहुत-से जहाँ-के-तहाँ दबे पड़े हुए हैं। यही कारण है कि हिंदी में वीर-ग्रंथों का बाहुल्य होते हुए भी वह बहुधा देखने में नहीं आते और शृंगार-ग्रंथों से ही भाषा-कविता भरी हुई जान पड़ती है।

प्रौढ़ माध्यमिक काल में प्राचीन दबी हुई कथा-प्रासंगिक प्रणाली की उन्नति न हुई। इसके आदि में स्वयं सूरदास, क़ुतबन एवं जायसी ने कथाएँ कहीं, पर अन्य किसी सुकवि ने ऐसा न किया। पीछे से नरोत्तमदास, तुलसीदास एवं केशवदास ने कथा-प्रासंगिक ग्रंथ रचे, परंतु किसी अन्य सुकवि का ध्यान इस ओर न गया। इन कथाओं में मुसलमान कवियों ने तो साधारण विषयों का आदर किया, परंतु शेष कवियों ने राम या कृष्ण को ही प्रधान रक्खा। उस समय के बहुत-से भक्त सुकवियों ने विशेषतया कृष्ण-भक्ति-पूर्ण स्फुट छंदों एवं पदों ही पर संतोष किया।

इस पूर्वालंकृत काल में भक्तिपूर्ण कथा-प्रासंगिक साहित्य में ऊनता हुई और केवल छत्र तथा सबलसिंह ने महाभारत का कथन किया, परंतु इन ग्रंथों में भी भक्ति-प्रचुरता नहीं पाई जाती। सेनापति एवं देव ने भी कुछ-कुछ कथा-प्रसंग चलाया है, परंतु उनका कथा का सूत्र इतना पतला, तथा उन्होंने कोरे काव्योत्कर्ष पर इतना अधिक ध्यान रक्खा है कि उन्हें कथा-प्रासंगिक कवि कहना नहीं फबता। सुकवियों में धर्म से संबंध न रखनेवाली कथाएँ नेवाज, लाल एवं सूरति ने कहीं। सो इस समय में कथा-प्रसंग का विशेष बल नहीं हुआ, परंतु फिर भी लाल के होते हुए यह विभाग हीन नहीं कहा-जा सकता। धर्मप्रचारकों में इस काल केवल स्वामी प्राणनाथ एवं गुरु गोविंदसिंह थे, सो धर्म-चर्चा का भी बाहुल्य न था। भक्त कवियों में सुंदर, ध्रुवदास, नागरीदास एवं सेनापति प्रधान थे। इन नामों से प्रकट है कि इस समय भक्ति कविता का प्राधान्य बिलकुल न था, और शृंगार तथा वीर रसों ही ने साहित्य पर पूरा प्रभाव डाला।

इस काल का सर्वप्रधान गुण यह है कि इसके कवियों ने भाषा को अलंकृत करने में पूरा बल लगाया। प्रौढ़ माध्यमिक काल में भाषा भली भाँति परिपक्व हो चुकी थी, अतः पूर्वालंकृत काल में कवियों ने हिंदी को भाषा-संबंधी आभरणों से सुसज्जित करना आरंभ किया। इस प्रकार भाषा श्रुतिमधुर एवं सुष्ठु होने लगी। फिर भी ये कविगण भाव बिगाड़कर भाषालालित्य लाने का प्रयत्न नहीं करते थे।

सारांश यह कि इस काल में भाषा अलंकृत हुई, वीर एवं शृंगार की वृद्धि रही, आचार्यता में परिपक्वता आई, भक्ति एवं कथा-प्रसंग शिथिल पड़े और काव्योत्कर्ष की संतोषदायक उन्नति हुई। यह समय हिंदी के लिये बड़े गौरव का हुआ।

उन्नीसवाँ अध्याय

नाम—(२७८) महाकवि सेनापति।

जन्म-काल—संवत् १६४६ के लगभग।

ग्रंथ—(१) कवित्तरत्नाकर, (२) काव्यकल्पद्रुम। (१७०६)

महात्मा तुलसीदास के पीछे हिंदी में छः महाकवि थोड़े ही समय में हुए, अर्थात् सेनापति, बिहारीलाल, भूषण, मतिराम, लाल, और देव। इन सत्कवियों की पीयूषवर्षिणी वाणी ने हिंदी जाननेवाले संसार को पूर्णतया आप्यायित कर दिया और हिंदी-भंडार को ख़ूब परिपूर्ण किया। इनमें से सेनापति और लाल प्रथम श्रेणी के कवि हैं और शेष चार तो नवरत्न में परिगणित हुए हैं। हिंदी-कविता के लिये इतने गौरव का कोई अन्य समय कठिनता से ठहरेगा। इस अध्याय में हम इन्हीं कवियों में से प्रथम का वर्णन कुछ विस्तार के साथ करते हैं।

सेनापति दीक्षित कान्यकुब्ज ब्राह्मण परशुराम के पौत्र और गंगा-

धर के पुत्र थे। इनके गुरु का नाम हीरामणि था। सेनापतिजी अनूपशहर के वासी थे। जान पड़ता है कि इनका जन्म संवत् १६४६ के इधर-उधर हुआ होगा। इन्होंने अपना कवित्तरत्नाकर नामक ग्रंथ संवत् १७०६ में संपूर्ण किया। इस ग्रंथ में इन्होंने लिखा है कि मेरे केश श्वेत हो गए हैं, मैं बुड्ढा हो गया हूँ और अब चाहता हूँ कि इस असार संसार को छोड़कर कृष्णानंद में मग्न रहूँ और व्रज के बाहर न निकलूँ। इससे विदित होता है कि ये उस समय साठ वर्ष से कम न होंगे। इसी के पीछे यह चेत्र-संन्यास लेकर वृंदावन में रहने लगे। चेत्र-संन्यास का यह भी अर्थ है कि संन्यासी अपने निवासस्थान के बाहर न जावे। अतः विदित होता है कि यह महाकवि अपनी इच्छा को पूर्ण रूप से सफल करने में समर्थ हुआ था। इनके मृत्यु-संवत् का हमें कोई पता नहीं लगा। ये महाराज पूर्ण कवि होने के अतिरिक्त पूरे भक्त भी थे। इनके निर्मल चरित्र और ऊँचे एवं विशुद्ध विचार औरों को उदाहरणस्वरूप हैं। सूरदास और तुलसीदासजी की भाँति सेनापति भी पूरे ऋषि थे।

शिवसिंहजी ने लिखा है कि इनका 'काव्यकल्पद्रुम'-नामक एक ग्रंथ है और हज़ारा में इनके बहुत-से छंद मिलते हैं। हमारे पास काव्यकल्पद्रुम एवं हज़ारा नहीं हैं, परंतु पंडित युगुलकिशोर मिश्र के पुस्तकालय में इनका 'कवित्तरत्नाकर'-नामक ग्रंथ वर्तमान है, जो इस समय हमारे पास उपस्थित है। पंडित नकछेदी तिवारी ने सेनापति के एक तृतीय ग्रंथ षट्-ऋतु का नाम लिखा है, परंतु यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है वरन्, कवित्तरत्नाकर का एक तरंग-मात्र है।

कवित्तरत्नाकर का संवत् सेनापति ने यों लिखा है—

संवत् सत्रह सै छ मैं सेइ सिया-पति-पाय ;
सेनापति कविता सजी सज्जन सजौ सहाय।

इस ग्रंथ में पाँच तरंग हैं। प्रथम में ६४ छंद हैं और उसमें

श्लेष कविता तथा रूपकों का कथन है। द्वितीय तरंग में ७४ छंदों द्वारा शृंगार-रस की कविता है, एवं तृतीय में ५६ छंदों द्वारा षट्-ऋतु का वर्णन किया गया है। चतुर्थ तरंग में ७६ छंद हैं, और उसमें रामायण का विषय वर्णित है तथा पंचम तरंग में ८७ छंदों द्वारा भक्ति और शेष २७ छंदों द्वारा चित्रकविता कही गई है। सेनापतिजी ने निम्न छंदों द्वारा अपना परिचय दिया है और अपनी कविता की प्रशंसा भी की है—

दीक्षित परशुराम दादो है बिदित नाम,
जिन कीने जज्ञ जाकी जग में बड़ाई है;
गंगाधर पिता गंगाधर के समान जाके,
गंगातीर बसति अनूप * जिन पाई है।
महा जान मनि बिद्या दान हू ते चिंतामनि,
हीरामनि दीक्षित ते पाई पंडिताई है;
सेनापति सोई सीतापति के प्रसाद जाकी,
सब कवि कान दै सुनत कबिताई है॥ १॥

मूढ़न को अगम सुगम एक ताको जाकी,
तीछन बिमल बिधि बुद्धि है अथाह की;
कोई है अभंग कोई पद है सभंग,
सोधि देखे सब अंग सम सुधा परवाह की।
ज्ञान के निधान छंद कोष सावधान,
जाकी रसिक सुजान सब करत हैं गाहकी;
सेवक सियापति को सेनापति कवि सोई,
जाकी द्वै अरथ कबिताई निरबाह की॥ २॥

दोष सों मलीन गुनहीन कविताई है,
तौ कीने अरबीन परबीन कोई सुनि है;

---

* अर्थात् अनूपशहर।

बिनुही सिखाए सब सीखिहैं सुमति,
　　जोपै सरस अनूप रस रूप या मैं धुनि है।
दूषन को करिको कवित्त बिन भूषन को,
　　जो करै प्रसिद्ध ऐसो कौन सुर मुनिहै;
राम अरचतु सेनापति चरचतु दोऊ,
　　कवित रचतु याते पद चुनि-चुनि है॥ ३॥
राखति न दोषै पोषै पिंगल के लच्छन को,
　　बुध कवि के जो उपकंठहि बसति है;—
जोपै पद मन को हरख उपजावत है,
　　तजै को कुनर सै जो छंद सरसति है।
अच्छर हैं बिसद करत ऊखै आपुस मैं,
　　जाते जगती की जड़ताऊ बिनसति है;
मानो छबि ताकी उदवत सविता की,
　　सेनापति कविता की कबिताई बिलसति है॥ ४॥
तुकनि सहित भले फैल को धरत सूधे,
　　दूरि को चलत जे हैं धीर जिय ज्यारी के;
लागत बिबिध पच्छ सोहत है गन संग,
　　श्रवन मिलत मूठि कीरत्ति उज्यारी के।
सोहैं सीस धुनै जाके उर मैं चुभत नीके,
　　बेगि बिधि जात मन मोहै नरनारी के;
सेनापति कवि के कवित्त बिलसत अति,
　　मेरे जान बान हैं अचूक चापधारी के॥ ५॥
बानी सौं सहित सुबरन मुँह रहै जहाँ,
　　धरत बहुत भाँति अरथ समाज को;
संख्या करि लीजै अलंकार हैं अधिक या मैं,
　　राखौ मति ऊपर सरस ऐसे साज को।

सुनौ महाजन चोरी होति चारि चरन की,
तातें सेनापति कहै तजि डर लाज को ;
लीजियो बचाइ ज्यों चुरावै नाहिं कोई सौंपी,
बित्त कीसी थाती मैं कबित्तन के ब्याज को ॥ ६ ॥

"सेनापति बरनी है बरखा सरद रितु मूढ़न को अगम सुगम परवीन को"

शिवसिंहजी निम्न वाक्यों द्वारा सेनापतिजी की प्रशंसा करते हैं—"काव्य में इनकी प्रशंसा हम कहाँ तक करें, अपने समय के भानु थे।"

ये छंद देखने से ज्ञान पड़ता है कि इन्होंने अपनी कविता की बहुत बड़ी प्रशंसा कर डाली है, परंतु हमारा मत है कि इनकी प्रायः कुल दर्पोक्तियों से भी इनकी पूरी प्रशंसा नहीं हो सकी है। इनको कविजन केवल इसी कारण बहुत कम जानते हैं कि इन्होंने चोरी हो-जाने के डर से अपनी कविता छिपा डाली थी और इनका कोई भी ग्रंथ अब तक मुद्रित नहीं हुआ।

सेनापति की भाषा शुद्ध ब्रज भाषा है, परंतु दो-एक छंदों में इन्होंने प्राकृत मिश्रित भाषा भी लिखी है। इनकी कविता में मिलित वर्ण बहुत ही कम आने पाए हैं और उसमें अनुप्रास व यमक का बाहुल्य है। ऐसी उत्तम भाषा सिवा बड़े-बड़े कवियों के और कोई लिखने में समर्थ नहीं हुआ। इनकी भाषा का उदाहरण-स्वरूप एक छंद नीचे लिखा जाता है।

दामिनी दमक सुर-चाप की चमक स्याम
घटा की घमक अति घोर घन घोरते ;
कोकिला कलापी कल कूजत है जित तित,
सीतल है हीतल समीर झकझोर ते।
सेनापति आवन कह्यो है मनभावन,
लगो है तरसावन बिरह-जुर जोरते ;

आयो सखि सावन विरह सरसावन,
सु लागो बरसावन सलिल चहुँ ओर ते ॥ ७ ॥

सेनापतिजी को रूपकों से विशेष प्रेम था। इनकी रचना में जहाँ देखिए वहीं रूपक बाहुल्य है।

ये उपमाएँ भी अच्छी खोज-खोजकर कहते थे। इनको श्लेष-कविता बहुत प्रिय थी और इसके उदाहरण ग्रंथ में हर जगह प्रस्तुत हैं। उत्तम उपमा के उदाहरण-स्वरूप तृतीय तरंग के छंद नं० २८ तथा ३९ एवं चतुर्थ तरंग का छंद नं० २१ द्रष्टव्य हैं।

इनका षट्ऋतु बहुत ही चित्ताकर्षक बना है। इसको इन्होंने केवल उद्दीपन का मसाला न बनाकर इसमें प्राकृतिक शोभा का बड़ा विलक्षण वर्णन किया है और एक अध्याय-भर में इसी का समा बँधा है। भाषा-काव्य में प्रकृति-वर्णन का कुछ-कुछ अभाव-सा देख पड़ता है, परंतु सेनापतिजी ने इस अभाव को पूर्ण करने का अच्छा प्रयत्न किया है। इनके प्राकृतिक वर्णन बहुत ही सुघर और अनूठे होते हैं। हमारे मत में देव को छोड़ भाषा के किसी कवि ने षट्ऋतु का ऐसा विशद वर्णन नहीं किया है। उदाहरणार्थ दो छंद ग्रीष्म और वर्षा के लिखते हैं। इनकी कविता में उद्दंडता का भी प्रधान गुण है। उसमें प्रत्येक स्थान पर इनकी आत्मीयता झलकती है। आपने प्रायः कहीं भी किसी दूसरे का असाधारण भाव नहीं ग्रहण किया और न किसी संस्कृत श्लोक का ही उल्था या भाव लिया है। इनकी कविता इन्हीं की कविता है और सब इन्हीं के मस्तिष्क से निकली है।

उदाहरण

बालि को सपूत कपिकुल पुरहूत रघुवीर,
जू को दूत धरि रूप विकराल को ;
युद्ध मद गाढ़ो पाउँ रोपि भयो ठाढ़ो,
सेनापति बल बाढ़ो रामचंद्र भुवपाल को।

कच्छप-कहलि रह्यो कुंडली टहलि रह्यो,
दिग्गज दहलि त्रास परो चक चाल को ;
पाँव के धरत अति भार के परत भयो,
एक ही परत मिलि सपत पताल को ॥ ८ ॥

वृष को तरनि तेज सहसौ किरनि तपै,
ज्वालनि के जाल बिकराल बरसत है ;
तचति धरनि जगु झुरतु झुरनि सीरी,
छाँह को पकरि पंथी पंछी बिरमत हैं ।
सेनापति नेक दुपहरी ढरकत होत,
धमका बिषम जो न पात खरकत है ;
मेरे जान पौन सीरे ठौर को पकरि कौनो,
घरी एक बैठि कहूँ घामै बितवत है ॥ ९ ॥

सेनापति उनए नए जलद सावन के,
चारि हू दिसान घुमरत भरे तोय कै ;
सोभा सरसाने न बखाने जात केहूँ भाँति,
आने हैं पहार मनौ काजर के ढोय कै ।
घन सों गगन छप्यौ तिमिर सघन भयो,
देखि न परत मानौ गयो रवि खोय कै ;
चारि मास भरि स्याम निसा को भरम मानि,
मेरे जान याही ते रहत हरि सोय कै ॥ १० ॥

विना षट् ऋतु का पूरा वर्णन पढ़े उसका ठीक अनुभव नहीं हो सकता ।

उद्दंडता के साथ-ही-साथ सेनापति ने अपनी रचना में कठिनता की मात्रा भी बढ़ा रक्खी है । उनको इस बात का शौक़ था कि मूर्ख उनकी कविता को न समझ सकें, जैसा उन्होंने कहा है कि "सेनापति बरनी है बरखा सरद रितु मूढ़न को अगम सुगम परबीन को ।"

सेनापति ने स्वयं लिखा है कि उन्होंने अपनी कविता के पद चुन-चुनकर रक्खे हैं। अतः यदि कोई इनकी कविता में कोई बुरा अथवा शिथिल छंद ढूँढ़ना चाहे, तो उसको व्यर्थ का श्रम उठाना पड़ेगा। इनके सभी छंद उत्कृष्ट हैं। अच्छे छंदों के उदाहरण में यहाँ एक छंद देते हैं—

दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई देखो,
आई रितु पावस न पाई प्रेम पतियाँ;
धीर जलधर की सुनत धुनि धरकी,
सुदरकी सुहागिनि की छोह भरी छतियाँ।
आई सुधि बर की हिए में आनि खरकी,
सुमिरि प्रानप्यारी वह प्रीतम की बतियाँ;
बीती औधि आवन की लाल मन भावन की,
डग भईं बावन की सावन की रतियाँ॥ ११॥

इनकी कविता में प्रत्येक स्थान पर इनकी तल्लीनता देख पड़ती है। इस कवि की समस्त कविता सच्ची है। इसने प्रायः न कहीं किसी दूसरे का भाव लिया है और न अपने चित्त के प्रतिकूल कोई बात लिखी है। इनकी तल्लीनता निम्न चार पदों से प्रकट होगी—

दीन बंधु दीन के न बचन करत कान मौन ह्वै,
रहे हौ कछू भाँति मन माखे हौ;
याते राजा राम जगदीस जिय जानी जाति,
मेरे क्रूर करम कृपाल कीलि राखे हौ।

× × × ×

क्योंरे कलि काल मोहिं कालौ ना निदरि सकै तैं तौ,
मति मूढ़ अति कायर गँवार को;
सेनापति निरधार पाँयपोस बरदार हौं तौ,
राजा रामचंद्र जू के दरबार को।

यह कवि अपनी धुन का इतना पक्का था कि इसको सवैया छंद पसंद न होने के कारण इसने एक भी सवैया अपने काव्य में नहीं रक्खी। चोरी होने के डर से इनको अपने प्रत्येक छंद में नाम रखना बहुत ज़रूरी समझ पड़ता था और सवैया में इनका नाम नहीं आ सकता था। शायद इसी कारण सवैया इन्होंने न लिखी हो।

इनकी अगाढ़ भक्ति भी इनके जीवन का एक प्रधान गुण है। सेनापति की कविता में उनके विचार भरे पड़े हैं। अपने विषय में इतनी बातें भाषा के बहुत कवियों ने न कही होंगी। इनकी भक्ति पंचम तरंग के छंद नंबर ६, १३, १६ और २१ से विदित होती है, वरन् यों कहें कि चतुर्थ और पंचम तरंग-भर से भक्ति टपकी पड़ती है। सेनापति की भक्ति सूरदास और तुलसीदास की भक्ति से शायद कुछ ही कम हो। उदाहरणार्थ केवल एक छंद नीचे उद्धृत करते हैं—

ताही भाँति धाऊँ सेनापति जैसे पाऊँ,
तन कंथा पहिराऊँ करौं साधन जतीन के;
भसम चढ़ाऊँ जटा सीस मैं बढ़ाऊँ,
नाम, वाही को पढ़ाऊँ दुखहरन दुखीन के।
सबै बिसराऊँ उर तासों उरझाऊँ,
कुंज बन बन धाऊँ तीर भूधर नदीन के;
मन बहिराऊँ मन मनहिं रिझाऊँ,
बीन लैके कर गाऊँ गुन वाही परवीन के ॥१२॥

आपके निर्मल विचारों और पुनीत जीवन का कुछ-कुछ परिचय पंचम तरंग के छंद नं० १०, ११ और ४० से भी मिलता है। इनसे यह भी जान पड़ता है कि आपके बाल सफ़ेद हो गए थे और अवस्था आधी से अधिक बीत गई थी। कोई मनुष्य पचास वर्ष से ऊपर हुए बिना साधारणतः यह कभी नहीं कह सकता कि मेरी आयु आधी से अधिक बीत गई है। इसी से हमारा विचार है कि जिस

समय यह ग्रंथ इन्होंने समाप्त किया, उसी समय इनकी अवस्था प्रायः ६० बरस की होगी। छंद नं० ४० से यह भी जान पड़ता है कि ये महाशय बादशाही नौकर थे, क्योंकि उस छंद के बनाते समय इनको उससे अश्रद्धा हो चुकी थी। यथा—

केतो करौ कोय पैये करम लिखोय ताते,
दूसरी न होय उर सोय ठहराइए;
आधी ते सरस बीति गई है बरस अब,
दुज्जन दरस बीच रस न बढ़ाइए।
चिंता अनुचित धरु धीरज उचित,
सेनापति ह्वै सुचित रघुपति-गुन गाइए;
चारि बरदानि तजि पाय कमलेछन के,
पायक मलेछन के काहे को कहाइए॥ १३॥

इनके चित्त का पूर्ण वैराग्य निम्न-लिखित छंद से पूरा प्रकट होता है और यह भी मालूम पड़ता है कि यह कंगाल नहीं थे। यथा—

महा मोह कंदनि मैं जगत जकंदनि मैं,
दिन दुख दंदनि मैं जात हैं बिहाय कै;
सुख को न लेस है कलेस सब भाँतिन को,
सेनापति याही ते कहत अकुलाय कै।
आवै मन ऐसी घर बार परिवार तजौं,
डारौं लोक-लाज के समाज बिसराय कै;
हरिजन पुंजनि मैं बृंदाबन कुंजनि मैं,
रहौं बैठि कहूँ तरवर तर जाय कै॥ १४॥

ठाकुर शिवसिंहजी ने लिखा है कि इन्होंने क्षेत्र-संन्यास ले लिया था। इनकी कविता से ज्ञात होता है कि ये क्षेत्र-संन्यास लेना भी चाहते थे, क्योंकि ये बृंदावन की सीमा के बाहर जाना नहीं चाहते थे।

पान चरनामृत को गान गुन गानन को,
हरि कथा सुने सदा हिये को हुलसिबो ;
प्रभु के उतीरन की गूदरी औ चीरन की,
भाल भुज कंठ उर छापन को लसिबो।
सेनापति चाहत है सकल जनम भरि,
बृंदावन सीमा ते न बाहेर निकसिबो ;
राधा मन रंजन की सोभा नैन कंजन की,
माल गरे गुंजन की कुंजन को बसिबो ॥ १९ ॥

× × × ×

बारानसी जाय मन करनी अन्हाय मेरो,
शंकर सों राम नाम पढ़िबे को मन है।

इतने बड़े भक्त और कड़े विचारों के मनुष्य होने पर भी सेनापति कोमल भावों के वर्णन में भी पूर्णतया समर्थ हुए हैं। महादेवजी की आज्ञा पाकर बहुत-से गण कुंभकरण के कटे हुए शिर को उठाने गए, उसके वर्णन में सेनापति ने हास्य-रस ख़तम कर दिया है।

जोर कै उठायो जुरि मिलि कै सबन त्योंही,
गिरिहूते गरुवो गिरो है डगुलाय कै ;
हाली भुव गगन को चाली चपि चूर भयो,
काली भाजी हँस्यो है कपाली हहराय कै।

इतने बड़े भक्त होने पर भी सेनापति धार्मिक विषयों तक में स्वतंत्र विचार रखते थे। इन्होंने प्रथम तरंग में कलि के गोसाइयों को पूरे भिखमंगे बताया है। पंचम तरंग में कई धार्मिक विषयों पर इस ऋषि की स्वतंत्र अनुमतियाँ द्रष्टव्य हैं, जिनमें से कुछ यहाँ लिखी जाती हैं—

"आपने करम करि हौंहीं निबहौंगो ;
तौब हौंहीं करतार करतार तुम काहे के।"

"धातुसिला दारु निरधारु प्रतिमा को सारु ;
सो न करतारु है विचारु बैठि गेहरे।
करु न सँदेह रे कहे मैं चित देह रे ;
कही है बीच देह रे कहा है बीच देहरे।"
"तोरि मरौ पाउँ करौ कोरिक उपाय सब ;
होत है अपाउ भाउ चित को फलतु है।
हिये न भगति जाते होइ नभ गति जब ;
तीरथ चलत मन ती रथ चलतु है।"

सेनापति के गुण-दोष हम यथाशक्ति ऊपर दिखा चुके। बड़े खेद का विषय है कि इस ऋषि के केवल ३८४ छंदों का एक ग्रंथ हमें देखने को मिला। इतनी सजीव कविता हमने बहुत ही थोड़े कवियों की देखी है। प्रत्येक छंद में सेनापति का रूप देख पड़ता है। इतने कम छंदों में इतने विचार भर देने में बहुत कम लोग समर्थ हुए होंगे। अपने ग्रंथ में सेनापति ने कोई ख़ास क्रम नहीं रक्खा है। जान पड़ता है पहले ये महाशय स्फुट कविता बनाते गए हैं और फिर इन्होंने संवत् १७०६ में उसे एकत्र करके ग्रंथस्वरूप में परिणत कर दिया। इनका काव्य कल्पद्रुम भी अवश्य ही उत्तम होगा। अनुमान से जान पड़ता है कि 'कालिदास हज़ारा' में लिखे हुए इनके स्फुट छंद कवित्तरत्नाकर के ही होंगे, क्योंकि इस ग्रंथ में सब स्फुट कविता ही भरी है। दुर्भाग्यवश अभी इनका एक भी ग्रंथ प्रकाशित नहीं हुआ है। यदि भाषा का कोई भी अमुद्रित ग्रंथ प्रकाशित होने की योग्यता रखता है, तो सेनापति के ग्रंथ सबसे पहले नंबर पर हैं।

नवरत्न में केशवदास के वर्णन में हमने संस्कृत और भाषा-साहित्य की प्रणाली का कथन किया है। सेनापति की रामायण काव्य-संबंधी प्रथा की है। सेनापति ने ऐसी सजीव, अनूठी, सच्ची और मनमोहनी

कविता की है कि कुछ ही महाकवियों को छोड़ शेष सभी कवि-समाज का इन्हें वास्तविक सेनापति बरबस मानना ही पड़ता है। सेनापति-जी की गणना कवियों की प्रथम कक्षा में है और उसमें भी ये महाशय प्रायः सर्वोत्कृष्ट हैं।

बीसवाँ अध्याय

सेनापति-काल

(१६८१ से १७०६)

इस अध्याय में हम सेनापति के समयवाले कवियों का वर्णन समयानुसार करेंगे।

(२७९) ध्रुवदास

हमारे मित्र बाबू राधाकृष्णदास ने वल्लभाचार्यीय संप्रदाय एवं भक्त कवियों के इतिहास प्राप्त करने में बहुत श्रम किया था, और इस विषय के कितने ही ग्रंथ संपादित करके उन्होंने नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा तथा अन्य प्रकार से प्रकाशित कराए। उनका यह श्रम बहुत ही प्रशंसनीय और उनके विचार माननीय हैं। इन्हीं महाशय ने ध्रुवदास की भक्त नामावली को भी नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला में प्रकाशित कराया। यह केवल १० पृष्ठों का ग्रंथ है, परंतु टिप्पणी व मुखबंध इत्यादि मिलाकर बाबू साहब ने इसे ८८ पृष्ठों में मुद्रित किया है। यह लेख उन्हीं के विचारों के आधार पर लिखा गया है।

ध्रुवदास ने निम्न-लिखित छोटे-छोटे ग्रंथ निर्माण किए—
[खोज १९००]

बानी, वृंदावनसत, सिंगारसत, रसरत्नावली, नेहमंजरी, रहसिमंजरी, सुखमंजरी, रतिमंजरी, वनविहार, रंगविहार, रसविहार, आनंददशाविनोद, रंगविनोद, नितंबिलास, रंगहुलास, मानरसलीला,

रहसिलता, प्रेमलता, प्रेमावली, (१६७१) भजनकुंडली, बावन-बृहत्पुराण की भाषा, भक्तनामावली, मनसिंगार, भजनसत, सभामंगल श्रृंगार, मनशिक्षा, प्रीतिचौवनी, मानविनोद, ब्यालिस बानी, रसमुक्तावली और सभामंडली। इनमें सभामंडली संवत् १६८१ में, वृंदावनसत १६८६ में, और रहसिमंजरी संवत् १६९८ में बनी। खोज १९०२ की रिपोर्ट में, भजनसत १६९२ में, प्रीतिचौवनी १६९२ में, सभामंगल श्रृंगार १६८६ में, सिंगारसत १६९२ तथा वृंदावन-सत १६८६ में बनना लिखा है। शेष ग्रंथों का समय नहीं दिया है। रासलर्वस्व से विदित होता है कि ध्रुवदासजी रासलीला के बड़े अनुरागी एवं करहली ग्रामवाले रासधारियों के बड़े प्रेमी थे। भक्तनामावली में ध्रुवदास ने १२३ भक्तों के नाम और उनके कुछ-कुछ चरित्र लिखे। बाबू राधाकृष्णदास ने उनमें से प्रत्येक के विषय धर्मग्रंथों और इतिहासों में जो कुछ मिलता है, उसको बड़े परिश्रम से इस ग्रंथ के नोट में दे दिया है। इन्होंने अपनी कविता व्रजभाषा में की है और वह अच्छी है। इनका काव्य भक्ति-पूर्ण और सरस है। भक्तनामावली से कुछ छंद नीचे दिए जाते हैं—

हित हरिवंसहि कहत ध्रुव बाढ़ै आनँद बेलि;
प्रेम रंग उर जगमगै जुगुल नवल रस केलि।
निगम ब्रह्म परसत नहीं जो रस सबते दूरि;
कियो प्रगट हरिवंस जी रसिकन जीवन मूरि।
पति कुटुंब देखत सबनि घूँघट पट दिय डारि;
देह-गेह बिसरयौ तिन्हैं मोहन रूप निहारि।

द्वि० त्रै० खोज की रिपोर्ट में इनके निम्न-लिखित ग्रंथों का पता और दिया है—

(१) रसानंदलीला, (१६९०) (२) ब्याहहुलासलीला, (३) सिद्धांत-विचार, (४) रसहीरावली, (५) हितसिंगारलीला, (६) ब्रजलीला,

(७) आनंदलता, (८) अनुरागलता, (९) जीवदशा (१०)वैद्यक-लीला, (११) दानलीला और (१२) ब्याहलो ।

इनके बयालीस लीला, बानी और पदावली ग्रंथ हमने छतरपूर में देखे । ये उपर्युक्त नामावली में नहीं हैं । बानी में व्रजभाषा द्वारा श्रृंगार-रस के सवैया, कवित्त इत्यादि तथा अन्य छंदों में श्रीकृष्णचंद्र-जी की लीलाओं के वर्णन ३०० पृष्ठ फ़ुल स्केप साइज़ पर बड़े ही सरस तथा मधुर किए गए हैं । इनकी कविता बड़ी मधुर और प्रशंसनीय है । हम इन्हें तोप की श्रेणी का कवि समझते हैं ।

उदाहरण—

सेज सरोवर राजत हैं जल मादक रूप भरे अरुनाई ;
अंगन आभा तरंग उठैं तहँ मीन कटाच्छन की चपलाई ।
प्यासी सखी भरि अंजुलि नैन पियैं सिगरी उपमा धुव पाई ;
प्रेम गयंदनि डारे हैं तोरि कै कंजन केल चहूँ दिसि माई ।

जीव दसा कछु यक सुनि भाई; हरि जस अमृत तजि विष खाई ।
छिन भंगुर यह देह न जानी; उलटी समुझि अमर ही मानी ।
घर घरनी के रँग यों राच्यो; छिन-छिन मैं नट कपि ज्यों नाच्यो ।
बय गै बीति जात नहिं जानी; जिमि सावन सरिता को पानी ।
माया सुख मैं यों लपटान्यो; विषय स्वाद ही सरबसु जान्यो ।
काल समय जब आनि तुलानो; तन मन की सुधि तबै भुलानो ।

ध्रुवदासजी स्वप्न द्वारा हितहरिवंश के शिष्य हुए थे । ये सदैव उन-के शिष्य रहे और माने गए ।

(२८०) स्वामी चतुर्भुजदासजी अष्टछापवाले इसी नाम के कवि से पृथक् हैं । उनका समय १६२५ था और इनका सं० १६८४ । इनके बनाए हुए धर्मविचार (४० पद), बानी (६८ पद), भक्त-प्रताप (१५ पद), संतप्रसाद (१८ पद), सिच्छासार (५६ पद), हितउपदेश (४६ पद), पतितपावन (१४ पद), मोहनीजस (२०

पद), अनन्य भजन (४२ पद), राधाप्रताप (२२ पद), मंगलसार (४२ पद) और विमुख सुखभंजन (३४ पद)-नामक ग्रंथ हमने छत्रपूर में देखे हैं। इन ग्रंथों में पदों ही में वर्णन हैं। द्वादश-यश भी इन्हीं की एक रचना है। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रक्खेंगे। प्रथम त्रैवार्षिक खोज से इनके एक और ग्रंथ हितजू को मंगल का पता चलता है।

उदाहरण—

मन ते तन नीचो अति कीजै; देह अमान मानता दीजै।
सहन सुभाव वृक्ष को सो करि; रसना सदा कहत रहिए हरि।
वृषभ वृक्ष पर पाँव न दीजै; क्रीड़ा अर्थ न नीर तरीजै।
आगि गाँव वन में न लगावै; भोजन जल न अनर्पित पावै।

नाम—(२८१) व्यासजी मथुरावाले। [प्र० त्रै० रि०]।

ग्रंथ—(१) श्रीमहावाणी (१३५ पृष्ठ), (२) पद (४८ पृष्ठ), (३) नीति के दोहे, (४) रागमाल, (५) पदावली। पंचाध्यायी।

कविता-काल—१६८५।

वृत्तांत—इनके छंद हज़ारा में मिलते हैं। ये साधारण श्रेणी के कवि थे। इनके १ व २ ग्रंथ छत्रपूर में हमने देखे। इनको हरव्यास देव भी कहते थे। ये निंबार्क संप्रदाय के थे। इन्होंने वृंदावन के हरिव्यासी मत को चलाया।

उदाहरण—

भगति बिन अगति जाहुगे बीर।
बेगि चेति हरि चरन सरन गहि छाँड़ि विषै की भीर;
कामिनि कनक देखि जनि भूलौ मन में धरियो धीर।
साधुन की सेवा करि लीजौ जब लौं जियत सरीर;
मानुस तन बोहित करिया हरि गुन अनुकूल समीर।

नाम—(२८२) खीमराज चारण ग्राम खीमपुरा उदयपुर।

ग्रंथ—फुटकर गीत-कविता।

कविता संवत्—१६८५।

आश्रयदाता महाराजा जगतसिंह उदयपुर और म० रा० गजसिंह जोधपुर।

(२८३) सदानंद

इस कवि के केवल तीन छंद हमने देखे हैं। इसके जीवन-चरित्र का हमें कुछ भी वृत्तांत ज्ञात न हो सका, पर इसका समय संवत् १६८५ के आसपास है।

इसकी कविता सरस और अच्छी है। हम इसकी गणना साधारण श्रेणी में करते हैं।

उदाहरण—

सोहै सेत सारी मंजु मोतिन किनारी वारी,
भीर मैं निहारी जाति संग सखियान के;
सदानंद सुंदरी न कोऊ यह रूप जाके,
आनन की आभा-सी न आभा ससि-भान के।
हगन की कोर लागी कानन की छोर जैसी,
भृकुटी मरोर जोर जोरे धनुबान के;
धीरी चालवारी मुख वीरी लालवारी वह,
पीरी सालवारी रहै नीरी अँखियान के।

(२८४) मलूकदास ब्राह्मण कड़ा मानिकपूर-निवासी थे। इनका समय सरोज में १६८५ लिखा है, परंतु कोई ग्रंथ इनका हमारे देखने में नहीं आया। इनकी कविता बड़ी मनमोहिनी है। हम इनकी गणना तोष की श्रेणी में करते हैं। दूसरी त्रैवार्षिक के खोज में इनके दो ग्रंथ भक्त-बछल और रतनखान मिले हैं। चतुर्थ त्रैवार्षिक खोज रिपोर्ट से इनके ज्ञानबोध तथा मलूक रामायण का पता चलता है।

चंद कलंकी कहा करिहै सरि कोकिल कीर कपोत लजाने;
विद्रुम हेम करी अहि केहरि कंज-कली औ अनार के दाने।

मीन सरासन धूम की रेख मलूक सरोवर कंबु भुलाने ;
ऐसी भई नहिं है भुव में नहिं होइगी नारि कहा कबि जाने ॥१॥

अलंकार छंद काव्य नाटक अगार राग,
रागिनी भँडार बरबानी को निवास है ;
कोक कारिका बिख्यात पंकज को कोस मानौं,
निकसत जामैं भाँति-भाँति को सुबास है।
फूल-से झरत बानी बोलत मलूक प्यारी,
हँसनि मैं होत दामिनी को परकास है ;
ऐसो मुख काको पटतर दीजै प्यारे लाल,
जामैं कोटि-कोटि हाव भाव को बिलास है ॥२॥

(२८५) दामोदर स्वामी हितहरिवंश के अनन्य संप्रदाय के थे। इन्होंने संवत् १६८७ में 'नेमबत्तीसी' बनाई। इनके बनाए हुए नेमबत्तीसी, रेखता, भक्तिसिद्धांत, रासविलास और स्वगुरुप्रताप-नामक ग्रंथ हमने छत्रपूर में देखे। तृतीय त्रैवार्षिक खोज में इनके जजमान कन्हाई जस, रासलीला, गुरुप्रताप लीला, वसंत लीला, पद, तथा रासपंचाध्यायी-नामक ६ और ग्रंथ मिले हैं। इनकी कविता अच्छी होती थी। हम इन्हें साधारण श्रेणी में समझते हैं।

उदाहरण—

श्रीहरिवंश कृपाल लाल पद पंकज ध्याऊँ ;
वृंदावन में बसौं सीस रसिकन को नाऊँ।
अँचऊँ जमुना-नीर जीव राधापति गाऊँ ;
नैननि निरखौं कुंज रेनु या तन लपटाऊँ।
कहुँ झूठ न बोलौं सति कहौं निंदा सुनौं न कान ;
नित पर जुवती जननी गनौं पर धन गरल समान।

(२८६) कवींद्राचार्य सरस्वती ब्राह्मण

इन महाशय ने शाहजहाँ बादशाह-देहली की प्रशंसा में "कवींद्र-

कल्पलता"-नामक ग्रंथ बनाया, जिसमें कुल १६० छंदों द्वारा उक्त बादशाह व उसके पुत्रों इत्यादि की प्रशंसा की गई है। शाहजहाँ का समय संवत् १६८३ से १७१५ तक है। इसी के बीच में यह ग्रंथ बना होगा। संभवतः कविजी का जन्म-काल सं० १६५० के लगभग होगा। सं० १६८७ में समरसार-नामक इनका द्वितीय ग्रंथ बना। इस विचार से ये महाशय तुलसीदासजी के समकालिक ठहरते हैं। सरोज में इनका संवत् १६२२ दिया हुआ है, जब शायद शाहजहाँ वा इनका स्वयं जन्म भी न हुआ हो। ये महाराज संस्कृत के भी पूर्ण विद्वान् थे। इनकी सानुप्रास भाषा में व्रज और अवध की बोलियों का कुछ-कुछ मिश्रण है और वह ललित है। हम इनको पद्माकरजी की श्रेणी में रखते हैं। उदाहरण लीजिए—

मंदर ते ऊँचे मनि मंदिर ए सुंदर हैं,
मेदिनी पुरंदर को पुर दरसत है;
हिय में हुलास होत नगर विलास लखि,
रूप कयलास हू ते अति सरसत है।
दुंदुभि मृदंग नाद विविध सुवाद जहाँ,
साहिजहाँवाद अति सुख बरसत है;
छहौ ऋतु छाई छाजै आछी छवि देखन को,
मानुप की कहा कहै इंद्र तरसत है।

इन्होंने संस्कृत की भी अच्छी कविता की है। योगवाशिष्ठसार-नामक इनका एक और ग्रंथ (प्र० त्रै० रि०) खोज में मिला है। ये काशी-वासी थे।

नाम—(२८७) माधुरीदास।

ग्रंथ—(१) श्रीराधारमण विहारी माधुरी, (२) वंशीवटविलास माधुरी, (३) उत्कंठा माधुरी, (४) वृंदावन केलि माधुरी, (५) दान-माधुरी, (६) मानमाधुरी, (७) वृंदावनविहार माधुरी, (८) मानलीला।

कविताकाल—१६८७। (खोज १६०२)

विवरण—मधुसूदनदास श्रेणी। इस कवि ने इन छोटे-छोटे ग्रंथों में कृष्ण-यश-गान किया है। ये राधावल्लभीय थे।

उदाहरण—

जुगुल प्रेम के दान हित कियो जुगुल अवतार;
आप भक्ति आवरन करि जग कीनो विस्तार।
निसि दिन तिनकी कृपा मनाऊँ; नित वृंदावन बासहि पाऊँ।
पिय प्यारी की लीला गाऊँ; जुगुल रूप लखि-लखि बलि जाऊँ।

(२८८) सुंदर ब्राह्मण ग्वालियर वासी शाहजहाँ बादशाह के दरबार में थे। शाह ने इन्हें प्रथम कविराय की और फिर महा-कविराय की उपाधि दी। इन्होंने संवत् १६८८ में सुंदर-श्रृंगार-नामक नायिका-भेद का ग्रंथ बनाया, जिसमें उपर्युक्त बातें लिखी हैं। सिंहासनबत्तीसी-नामक इनका एक दूसरा ग्रंथ भी है। याज्ञिकत्रय के पास बारहमासी नाम का भी इनका बनाया ग्रंथ है। खोज में ज्ञानसमुद्र-नामक ग्रंथ भी इनके नाम लिखा है, पर वह सुंदरदास दादूपंथी का जान पड़ता है। इनकी कविता परम मनोहर और यमक-युक्त है। हम इन्हें तोष की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

काके गए बसन पलटि आए बसन,
सुमेरो कछु बस न रसन उर लागे हौ;
भौंहैं तिरिछौहैं कवि सुंदर सुजान सोहैं,
कछू अलसौहैं गौहैं जाके रस पागे हौ।
परसौं मैं पायँ हुते परसौं मैं पायँ गहि,
परसौं ये पायँ निसि जाके अनुरागे हौ;
कौन बनिता के हौजू कौन बनिता के हौ,
सु कौन बनिताके बनि ताके संग जागे हौ।

'बारहमासी'-नामक इनका एक और ग्रंथ है।

(२८६) पुहकर कवि

ये जाति के कायस्थ भूमिगाँव गुजरात सोमनाथजी के पास रहते थे। संवत् १६८१ में जहाँगीरशाह के समय में कहा जाता है कि ये आगरे में क़ैद हो गए थे, जहाँ जेलख़ाने में इन्होंने रसरतन-नामक ग्रंथ बनाया, जिस पर प्रसन्न होकर जहाँगीरशाह ने इन्हें कारागार से मुक्त कर दिया। खोज से यह ग्रंथ संवत् १६७३ का होना पाया जाता है। इसमें रंभावती व सूरकुमार की कथा बड़े विस्तार से वर्णन की गई है। ग्रंथ में व्रजभाषा और कहीं-कहीं प्राकृत मिश्रित भाषा का प्रयोग है। छंद बहुत प्रकार के हैं, परंतु दोहा एवं चौपाइयों की प्रधानता है। कुल २७६६ छंदों व ५५६ पृष्ठों में ग्रंथ समाप्त हुआ है। कविता अच्छी है। हम इनको छत्र की श्रेणी में रखते हैं। खोज (१६०२) से इनके एक और ग्रंथ नखशिख का पता चलता है।

उदाहरण—

चले मत्त मैमंत झूमंत मत्ता; मनौ बद्दला स्याम माथै चलंता।
बनी बागरी रूप राजंत दंता; मनौ बग्ग आषाढ़ पाँतैं उदंता।
लसैं पीत लालै सुढालैं ढलक्कैं; मनौं चंचला चौंधि छाया छलक्कैं।

कवित्त

चंद की उजारी प्यारी नैन न निहारी परै,
चंद की कला मैं दुति दूनी दरसाति है;
ललित लतानि मैं लतासी गहि सुकुमारि,
मालती-सी फूलै जब मृदु मुसुकाति है।
पुहकर कहै जित देखिए बिराजै तित,
परम बिचित्र चारु चित्र मिलि जाति है;
आवै मनमाहिं तब रहै मन ही मैं गड़ि,
नैननि बिलोके बाल बैननि समाति है।

इनकी पुस्तक हमने दरबार छतरपूर में देखी। (प्रथम त्रै० रि०) खोज से पता चलता है कि यह परतापपूर ज़िला मैनपुरी के थे।

(२६०) जोयसी कवि का रचनाकाल १६८८ है। ये महाशय तोष कवि की श्रेणी में हैं। इनका सिर्फ़ एक ही छंद मिलता है जो परम विशद है।

रुचि पाँय झवाँय दई मेंहँदी तेहि को रँगु होत मनो नगु है;
अब ऐसे मैं श्याम बुलावैं भटू कहु जाँउँ क्यों पंकु मयो मगु है।
अधराति अँध्यारी न सूझै गली भनि जोयसी दूतिन को सँगु है;
अब जाउँ तौ जात धुयो रँगुरी रँगु राखौं तौ जात सबै रँगु है।

(२६१) लूणसागर जैनी पंडित ने संवत् १६८६ में ज्ञान विषय का अंजनासुरीसंवाद-नामक ग्रंथ रचा।

(२६२) चिंतामणि त्रिपाठी

महाराज रत्नाकर के चार पुत्रों में ये महाशय सबसे बड़े थे। इनके तीन भाई भूषण, मतिराम और जटाशंकर थे। इनके ग्रंथों से इनकी उत्पत्ति के संवत् का ठीक पता नहीं लगता। भूषण की कविता से हमने निष्कर्ष निकाला है कि उनका जन्म-काल संवत् १६७० के लगभग था। इस विचार से चिंतामणि का जन्म-काल संवत् १६६६ के लगभग मानना चाहिए। हाल में इनका बनाया भाषा-पिंगल मिला है। उक्त ग्रंथ शिवाजी के पितामह के लिये रचा गया है। इससे इनका जन्म-काल और पहले जाता है।

ये महाशय तिकवाँपूर ज़िला कानपूर के वासी थे। इस मौज़े का वर्णन भूषण की समालोचना में है। ठाकुर शिवसिंहजी ने लिखा है कि "चिंतामणिजी बहुत दिन तक नागपूर में सूर्यवंशी भोंसला मकरंदशाह के यहाँ रहे और उन्हीं के नाम 'छंदविचार'-नामक पिंगल का बहुत भारी ग्रंथ बनाया, और 'काव्यविवेक', 'कवि-कुल-

कल्पतरु', 'काव्यप्रकाश', 'रामायण' ये पाँच ग्रंथ इनके बनाए हुए हमारे पुस्तकालय में मौजूद हैं। इनकी बनाई रामायण कवित्त और नाना अन्य छंदों में बहुत अपूर्व है। बाबू रुद्रसाहि सुलंकी, शाहजहाँ बादशाह, और जैनदी अहमद ने इनको बहुत दान दिए हैं। इन्होंने अपने ग्रंथ में कहीं-कहीं अपना नाम मणिमाल भी कहा है।" हमारे पुस्तकालय में इनका केवल 'कविकुलकल्पतरु' ग्रंथ है, जिसमें काव्य, गुण, श्लेष, अलंकार (शब्द एवं अर्थ), दोष, पदार्थनिर्णय, ध्वनि, भाव, रस, भावाभास, और रसाभास का विस्तारपूर्वक वर्णन है। इन्होंने इस ग्रंथ में लिखा है कि इनका एक पिंगल भी है। अतः इन्होंने प्रायः दशांग कविता पर रीति ग्रंथ लिखे हैं। खोज से [१६०२] इनके पिंगल-नामक ग्रंथ का पता चलता है। इनका बनाया पिंगल हमने देखा भी है और वह शिवसिंह सेंगर के पुस्तकालय में है। रसमंजरी-नामक एक और ग्रंथ इनका (प्र० त्रै० रि०) खोज में लिखा है। इनकी भाषा-साहित्य के आचार्यों में गणना है।

चिंतामणि की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है; केवल दो एक स्थानों पर इन्होंने प्राकृत में भी कविता की थी। ये महाराज बड़ी ही मधुर एवं सानुप्रास भाषा प्रयोग करने में समर्थ हुए हैं। इन्होंने बहुत विषयों पर रचना की है और ये सदैव उत्कृष्ट कविता रच सके हैं। ठाकुर शिवसिंहजी के सरोज में दिए हुए इनके अन्य ग्रंथों के उदाहरण देखने से विदित होता है कि कल्पतरु के अतिरिक्त इनके वे ग्रंथ भी बढ़िया हैं। इनका बड़े-बड़े महाराजाओं के यहाँ अच्छा मान रहा। इनको हम दासजी की श्रेणी में रखते हैं। इनकी कविता के उदाहरणार्थ कुछ छंद नीचे लिखे जाते हैं—

चिंतामणि कच कुच भार लंक लचकति,
सोहै तन तनक बनक छबि खान की;

चपल विलास मद आलस वलित नैन,
　　ललित बिलोकनि लसनि मृदु वान की।
नाक मुकुताहल अधर रंग संग लीन्हीं,
　　रुचि संध्या राग नखतन के प्रभान की;
बदन कमल पर अलि ज्यौं अलक लोल,
　　अमल कपोलनि झलक मुसक्यान की ॥ १ ॥

इक आजु मैं कुंदन बेलि लखी मनि मंदिर की रुचि वृंद भरै;
कुरबिंदु को पल्लव इंदु तहाँ अरबिंदन ते मकरंद झरै।
उत बुंदन के मुकुता गन ह्वै फल सुंदर द्वै पर आनि परै;
लखि यों दुति कंद अनंद कला नँदनंद सिलाद्रव रूप धरै ॥२॥

एइ उधारत हैं तिन्हैं जे परे मोह महोदधि के जल फेरे;
जे इनको पल ध्यान धरैं मन ते न परैं कबहूँ जम घेरे।
राजै रमा रमनी उपधान अभै बरदानि रहै जन नेरे;
हैं बलभार उदंड भरे हरि के भुज दंड सहायक मेरे ॥३॥

(२६३) बेनी

ये महाशय असनी के वंदीजन थे। इनका समय १६६० के आस-पास कहा जाता है। इनका एक ग्रंथ शिवसिंहजी ने देखा था, पर हमने नहीं देखा। स्फुट कवित्त इनके बहुतायत से देखने और सुनने में आए हैं। जान पड़ता है कि इन्होंने नखशिख अथवा पटऋतु पर ग्रंथ-निर्माण किया है। इनकी भाषा साधारण है और जमक का इन्हें विशेष ध्यान रहता था। ब्रह्म कवि की भाँति एक उपमा कहने के ही लिये यह भी कभी-कभी कवित्त बना डालते थे। यह गोस्वामी तुलसीदासजीके बड़े भक्त थे और उनके रामायण ग्रंथ की प्रशंसा में एक कवित्त इन्होंने बनाया है, जो उत्तम न होने पर भी विख्यात है। इसी नाम के एक अन्य वंदीजन महाशय भी हैं, जिनके दो ग्रंथ हमने देखे हैं और जो भँड़ौवा अधिक बनाते थे। पहले तो हमें संदेह था कि ये

दोनों महाशय एक ही होंगे, परंतु इन बेनी के छंद बेनी भँड़ौवाकार के ग्रंथों में नहीं पाए जाते और शिवसिंहजी ने भी इन्हें दो मनुष्य माना है। अतः हम भी इन्हें दो समझते हैं। दूसरे बेनी अपने को प्रायः बेनी कवि कहते थे।

भारतेंदु हरिश्चंद्रजी ने अपने 'सुंदरीतिलक' में पहला सवैया इन्हीं का देकर इनका आदर किया है। हम इन्हें पद्माकर की श्रेणी का कवि मानते हैं।

उदाहरण—

छहरैं सिर पै छवि मोर पखा उनकी नथ के मुकता थहरैं;
फहरैं पियरो पट बेनी इतै उनकी चुनरी के झबा झहरैं।
रसरंग भिरे अभिरे हैं तमाल दोऊ रस ख्याल चहैं लहरैं;
नित ऐसे सनेह सों राधिकाश्याम हमारे हिये में सदा ठहरैं ॥१॥
कवि बेनी नई उनई है घटा मोरवा बन बोलत कूकन री;
छहरै बिजुरी छिति मंडल छ्वै लहरै मन मैन भभूकन री।
पहिरौ चुनरी चुनि कै दुलही सँग लाल के झूलहु झूकन री;
ऋतु पावस यौंही बितावती हौ मरिहौ फिरि बावरी हूकन री ॥२॥

खोज में (१९०३) इनके पद-नामक ग्रंथ का पता चलता है।

(२६४) वनवारी संवत् १६९० के लगभग हुए। इन्होंने महाराजा जसवंतसिंह के बड़े भाई अमरसिंह की प्रशंसा की। शाहजहाँ के दरबार में सलावतख़ाँ ने अमरसिंह को गँवार कह दिया था। इसी पर क्रुद्ध होकर उन्होंने उसको दरबार ही में मार डाला, जिसकी तारीफ़ में वनवारी ने नीचे लिखे छंद कहे। इनकी शृंगार-रस की कविता भी बड़ी उत्तम तथा सानुप्रास होती थी। इनकी गणना पद्माकर कवि की श्रेणी में की जाती है।

उदाहरण—

धन्य अमर छिति छत्रपति अमर तिहारो मान;
साहजहाँ की गोद में हन्यो सलावत खान ॥ १ ॥

उत गकार मुख ते कढ़ी इत निकसी जमधार ;
वार कहन पायो नहीं कीन्हो जमधर पार ॥ २ ॥

आनि कै सलावति खाँ जोर कै जनाई बात,
तोरि धर पंजर करेजे जाय करकी ;
दिल्लीपतिसाह को चलन चलिबे को भयो,
गाज्यो गजसिंह को सुनी है बात वर की ।
कहै बनवारी बादसाहि के तखत पास,
फरकि फरकि लोथि लोथिन सों अरकी ;
करकी बड़ाई कै बड़ाई बाहिबे की करौं,
बाढ़ि कि बड़ाई कै बड़ाई जमधर की ॥ ३ ॥

नेह बरसाने तेरे नेह बरसाने देखि,
यह बरसानें वर मुरली बजावैंगे ;
साजु लाल सारी लाल करैं लालसा री,
देखिबे की लालसा री लाल देखे सुख पावैंगे ।
तूही उर बसी उरबसी नहिं और तिय,
कोटि उरबसी तजि तोसों चित लावैंगे ;
साजु बनवारी बनवारी तन आभरन,
गोरे तनवारी बनवारी आजु आवैंगे ॥ ४ ॥

(२६४/१) तोष

ये महाशय चतुर्भुज शुक्ल के पुत्र शृंगवेरपुर (सिंगरौर) ज़िला इलाहाबाद के रहनेवाले थे। इन्होंने सुधानिधि-नामक रस-भेद और भाव-भेद का १८३ पृष्ठों और ५६० छंदों का एक बड़ा ही बढ़िया ग्रंथ बनाया। उसी में कवि ने अपने विषय में उपर्युक्त बातें लिखी हैं। खोज की द्वितीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट में अयोध्या-नरेश के पुस्तकालय में सुधानिधि ग्रंथ की संवत् १६४८ की एक प्रति मिली है जिसमें सुधानिधि ग्रंथ का निर्माण-काल १६६१ लिखा है।

"संवत सोलह सै बरस गो इकानवे बीति ;
गुरु अषाढ़ की पूर्णमा रच्यो ग्रंथ करि प्रीति।

अतः सुधानिधि का निर्माण-काल १७९१ न होकर एक शतक पूर्व का अर्थात् १६९१ का होना त्रि० त्रै० खोज रिपोर्ट से सिद्ध है। विनयशतक और नखशिख-नामक इनके दो ग्रंथ खोज में मिले हैं। तोष अपनी श्रेणी के अगुवा हैं। आपने अपने ग्रंथ में आचार्यता भी प्रदर्शित की है एवं कई अन्य काव्यांगों पर अच्छे विचार प्रकट किए हैं। कुछ लोगों का यहाँ तक मत है कि इनका रचना-चमत्कार दासजी के समान है। इन्होंने अनुप्रास और यमक का प्रयोग किया है और भाव-पूर्ण गंभीर छंद आपकी रचना में बहुत पाए जाते हैं। सुधानिधि ऐसा विलक्षण बना है कि जिस एक ग्रंथ से ही ये सुकवि कहे जा सकते हैं।

यक दीनी अधीनी करैं बतियाँ जिनकी कटि छीनी छला मैं करैं ;
यक दोस धरैं अपसोस भरैं यक रोस कै नैन ललामैं करैं।
कहि तोष जुटी जुग जंघन सों उर दै भुज स्यामै सलामैं करैं ;
निज अंबर माँगैं कदंब तरे ब्रज बामैं कलामै मुलामैं करैं ॥१॥
तो तन मैं रबि को प्रतिबिंब परै किरनैं सो घनी सरसाती ;
भीतर हूं रहि जात नहीं अँखियाँ चकचौंधि ह्वै जाति हैं राती।
बैठि रहो बलि कोठरी मैं कहि तोष करौं बिनती बहु भाँती ;
सारसी नैन लै आरसी सो अँग काम कहा कढ़ि धाम मैं जाती ॥२॥

तोपनिधि, तोप से भिन्न कवि हैं और उनके बहुत बाद कालपी में हुए हैं। इनका पूरा वर्णन यथास्थान दिया गया है।

(२९५) जसवंतसिंह (महाराजा मारवाड़)

महाराजा जसवंतसिंह का जन्म संवत् १६८२ में हुआ था। ये महाराजा गजसिंह के द्वितीय पुत्र थे। इनके ज्येष्ठ भ्राता का नाम अमरसिंह था। संवत् १६९१ में महाराजा गजसिंह ने अपने बड़े—

पुत्र के उद्धत स्वभाव के कारण उसे अराजक करके देश से निकाल दिया। महाराजा जसवंतसिंह अपने पिता के स्वर्गवास होने पर संवत् १६६५ में सिंहासनारूढ़ हुए। महाराजा जसवंतसिंह के राज्य से मूर्खता और अज्ञान निकल गए और उसमें विद्या का पूर्ण सत्कार हुआ। इतिहास में लिखा है कि इनके लिये न-जाने कितनी पुस्तकें बनाई गईं। ये महाराज मध्य-प्रदेश में बादशाह की ओर से लड़े थे। फिर ये महाशय मालवा के गवर्नर बनाए गए। जब औरंगज़ेब ने राज्य पाने को विद्रोह किया, तब ये शाही दल के सेनापति नियत हुए। औरंगज़ेब ने शाही दल को पराजित करके जसवंतसिंह को गुजरात का गवर्नर कर दिया। फिर वहाँ से शाइस्ताख़ाँ के साथ ये महाराज शिवाजी से लड़ने को दक्षिण भेजे गए। वहाँ इन्होंने हिंदू-धर्म का पक्ष किया और छिपे-छिपे शिवाजी से मिलकर शाइस्ताख़ाँ के दल की दुर्गति करा डाली। वहाँ से ये औरंगज़ेब की ओर से अफ़ग़ानों को जीतने के निमित्त काबुल भेजे गए। वहीं संवत् १७३८ में इनका शरीरपात हुआ।

ये महाशय भाषा के बहुत अच्छे कवि थे। इनके भाषा-भूषण के अतिरिक्त निम्न-लिखित ग्रंथ (खोज १६०२) में हैं—१ अपरोक्ष-सिद्धांत, २ अनुभवप्रकाश, ३ आनंदविलास, ४ सिद्धांतबोध, ५ सिद्धांतसार, ६ प्रबोधचंद्रोदय नाटक। भाषाभूषण को छोड़कर इनके शेष ग्रंथ वेदांत के हैं। इन्होंने भाषाभूषण (प्र० त्रै० रि०) नामक २६१ दोहों में रीति का बड़ा ही उत्तम ग्रंथ बनाया। इसमें इन महाराज ने प्रथम भाव-भेद कहा, परंतु उसके अंगों के उदाहरण न देकर केवल लक्षण दिए। उसके पीछे अर्थालंकारों का ग्रंथ में बड़ा उत्तम वर्णन है। अर्थालंकारों में इन्होंने लक्षण और उदाहरण दोनों दिए हैं। सबसे प्रथम अलंकारों का ग्रंथ कृपाराम ने और फिर महाकवि केशवदास ने संवत् १६४८ में बनाया। यह ग्रंथ कविप्रिया

है। परंतु केशवदास भरत-मतानुसार नहीं चले। उनके पश्चात् सब-से प्रथम अलंकारों ही का वर्णन महाराजा जसवंतसिंह ने किया। जिस प्रकार इन्होंने अर्थालंकार कहे हैं, उसी रीति से वे अब भी कहे जाते हैं। इस ग्रंथ के कारण ये महाराज भाषालंकारों के आचार्य समझे जाते हैं। यह ग्रंथ अद्यावधि अलंकारों के ग्रंथों में बहुत पूज्य दृष्टि से देखा जाता है। मारवार (जोधपूर) के राजकवि मुरारिदान के जसवंतजसोभूषण से भी विदित होता है कि भाषाभूषण वास्तव में इन्हीं महाराज का बनाया हुआ है (देखिए उसका पृष्ठनं० १४)।

इस ग्रंथ की टीका दलपतिराय बंसीधर ने संवत् १७६२ में की। इस टीका का नाम अलंकाररत्नाकर है। जिज्ञासु के लिये अब भी यह प्रायः सर्वोत्तम ग्रंथ है। यह ग्रंथ इस समय हमारे पास मौजूद है। भाषाभूषण का दूसरा तिलक प्रसिद्ध कवि परताप साहि ने बनाया। यह अभी हमारे देखने में नहीं आया, परंतु परताप की काव्य-निपुणता से हमें निश्चय है कि यह टीका भी परमोत्तम होगी। भाषाभूषण की तृतीय टीका कवि गुलाब ने भूषणचंद्रिका ग्रंथ द्वारा बनाई। यह टीका भी हमारे पास वर्तमान है और बहुत अच्छी बनी है। भाषाभूषण पर "यशवंतयशोभूषण" में कविराजा मुरारिदानजी ने आधा प्रकाश डाला।

महाराजा जसवंतसिंह को अलंकारों का भारी आचार्य समझना चाहिए। इन्हीं की रीति पर अन्य कवि चले हैं। इनकी कविता भी परम मनोहर है। बड़े संतोष की बात है कि इन्होंने बड़े महाराज होकर भी भाषा का इतना आदर किया कि स्वयं काव्य-रचना की और भाषा-भूषण-सा उत्तम ग्रंथ रचा। यह हिंदी के लिये बड़े सौभाग्य की बात है।

उदाहरण—

मुख ससि वा ससि सों अधिक उदित जोति दिन राति ;
सागर ते उपजी न यह कमला अपर सुहाति ॥१॥

नैन कमल ए ऐन हैं और कमल केहि काम ;
गमन करत नीकी लगै कनक-लता यह बाम ॥२॥
धरम दुरै आरोप ते सुद्धापन्हुति होय ;
उर पर नाहिं उरोज ये कनकलता फल दोय ॥३॥
परजस्ता गुन और को और विषे आरोप ;
होय सुधाधर नाहिं यह बदन सुधाधर ओप ॥४॥

हम इन्हें दास की श्रेणी में रखते हैं।

नाम—(२६६) नीलकंठ त्रिपाठी उपनाम जटाशंकर, भूषण के भाई।

ग्रंथ—अमरेशविलास (१६६८)।

कविता-काल—१६६८

विवरण—इनका समय संदिग्ध है। अमरेशविलास का रचनाकाल १७६८ भी माना जाता है। इन्होंने जमकपूर्ण उत्तम कविता की है। हम इन्हें तोष की श्रेणी में रक्खेंगे। अपने भाइयों में ये सबसे छोटे थे।

(खोज १९०३)

उदाहरण—

तन पर भारतीन तन पर भारतीन,
तन पर भारतीन तन पर भार हैं ;
पूजैं देवदार तीन पूजैं देवदार तीन,
पूजैं देवदार तीन पूजैं देवदार हैं।
नीलकंठ दारुन दलेल खाँ तिहारी धाक,
नाकतीं न द्वार ते वै नाकतीं पहार हैं ;
आँधरेन कर गहे बहिरे न संग रहे,
बार छूटे बार छूटे बार छूटे बार हैं।

(२६७) ताज

ये कोई मुसलमान जाति की स्त्री थीं। इनके वंश, स्थान इत्यादि का कोई ठीक-ठीक पता नहीं लगा। कवि गोविंद गिल्ला भाई के यहाँ इनके सैकड़ों छंद विद्यमान हैं, पर इनके विषय में कुछ हाल उनको भी नहीं मालूम है। शिवसिंहसरोज में इनका संवत् १६५२ कहा गया है, और मुंशी देवीप्रसाद ने संवत् १७०० के लगभग इनका समय लिखा है। इनकी कविता बहुत ही सरस और मनोहर है। ये अपनी धुन की बहुत ही पक्की थीं। रसखानि की भाँति ये भी श्रीकृष्णचंद्रजी की भक्ति में ख़ूब रँगी थीं। इनकी भक्ति का परिचय इनकी कविता से मिलता है। इनकी भाषा पंजाबी और खड़ी बोली मिश्रित है, जो आदरणीय है। जान पड़ता है कि ये पंजाब के तरफ़ की थीं। इनको हम तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं। उदाहरणार्थ इनके दो छंद उद्धृत किए जाते हैं—

सुनो दिल जानी मेड़े दिल की कहानी,
तुम दस्त ही बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं;
देवपूजा ठानी मैं निवाज हू भुलानी,
तजे कलमा कुरान साड़े गुनन गहूँगी मैं।
स्यामला सलोना सिरताज सिर कुल्ले दिए,
तेरे नेह दाघ में निदाघ हो दहूँगी मैं;
नंद के कुमार कुरबान ताँड़ी सूरत पै,
ताँड़ नाल प्यारे हिंदुवानी हो रहूँगी मैं॥ १॥

छैल जो छबीला सब रंग में रँगीला बड़ा,
चित्त का अड़ीला कहूँ देवतों से न्यारा है;
माल गले सोहै नाक मोती सेत सोहै,
कान मोहै मन कुंडल मुकुट सीस धारा है।

दुष्ट जन मारे सतजन रखवारे ताज,
चित हित वारे प्रेम प्रीति कर वारा है ;
नंदजू का प्यारा जिन कंस को पछारा,
वह बृंदावन वारा कृष्ण साहेब हमारा है ॥२॥

नाम—(२६८) शिरोमणि ब्राह्मण ।

रचना— कई ग्रंथ ।

समय—१७०० के लगभग ।

विवरण—शाहजहाँ बादशाह के दरबार में थे । साधारण श्रेणी का काव्य है ।

उदाहरण—

सागर के पार जुद्ध मार्‌यो राम रावनहि,
सिरोमनि भारी घमसान यक बार भो ;
घुमत घायल जहाँ अलल-अलल बोलैं,
बलल-बलल बहै लोहू यक तार भो ;
छिन-छिन छूटत पनारे रतनारे भारे,
नारे खोरे मिलि कै समुद्र यक सार भो ;
बूड़ि गयो बैल ब्याल नायक निकरि गयो,
गिरि गई गिरिजा गिरीस पैरि पार भो ।

(२६८/१) हरिवल्लभ

इन्होंने भगवद्गीता का भाषानुवाद दोहों में किया । हमारे पास इसकी एक संवत् १८७९ की लिखी पुस्तक वर्तमान है । अतः इसका रचना-काल इसके प्रथम का होना अनुमान-सिद्ध है । खोज की द्वि० त्रै० रिपोर्ट में भगवद्गीता की एक प्रति मिली है जिसमें इसका निर्माण-काल १७०१ दिया है । यथा "सत्रह सै जो इकोतरा माघ मास तिथि ब्यास ।" यह अनुवाद अच्छा हुआ है । यद्यपि गीता-से ग्रंथ का अनुवाद करना और उसके एक श्लोक का अभिप्राय एक ही दोहे

में कह देना बड़ा ही कठिन काम है जो शायद हो ही नहीं सकता, तथापि इन्होंने जो अनुवाद किया है वह संतोषदायक है। यह गीता मूल, अनुवाद, अन्वय और वार्तिक अर्थ से अलंकृत करके लक्ष्मी—वेंकटेश्वर प्रेस के स्वामी ने प्रकाशित किया है। इसमें कहीं-कहीं दोहों में अशुद्धियाँ रह गई हैं, तो भी पुस्तक देखने और पढ़ने योग्य है। खोज १६०१ में इनका एक और ग्रंथ संगीत भाषा मिला है। काव्यके विचार से हम हरिवल्लभजी को साधारण श्रेणी में रखते हैं।

लरत मरें लहि है स्वरग जीते पुहुमी-भोग ;
उठि अर्जुन तूँ जुद्ध करि, यहै जु तोको योग ॥ १ ॥
लाभ हानि अरु दुःख सुख लाभ हानि सम जानि ;
ताते अर्जुन युद्ध करि: पाप लेहि जनि मानि ॥ २ ॥
सांख्य बुद्धि तोसों कही कहत योग बुधि तोहि ;
ता बुधि के संयोग तें रहै न कर्मनि मोहि ॥ ३ ॥
कर्म करे बिन कामना ताको होय न नास ;
अल्प किए हू धर्म यह काटत भव-भय-पास ॥ ४ ॥
बुद्धि जु निश्चयवंत को एकै है तू जानि ;
जिनके निश्चय नाहिनै तिनहि बुद्धि बहु मानि ॥ ५ ॥
गीता हरिवल्लभ कियो भाषा कृष्ण प्रसाद ;
भयो प्रथम अध्याय यह अरजुन कियो विषाद ॥ ६ ॥

इस समय के अन्य कवि गण

नाम—(२६६) केशवदास चारण।

ग्रंथ—(१) महाराज गजसिंह का गनरूपकबंध, (२) विवेक वार्ता (खोज १६०२)

रचना-काल—१६८१।

नाम—(३००) बल्लभदास साधु।

ग्रंथ—(१) सेवक बानी कौ सिद्धांत, (द्वि० त्रै० रि०) (२) स्फुट भजन ।

रचनाकाल—१६८१ के लगभग ।

विवरण—राधावल्लभी थे ।

नाम—(३०१) हेमराज ।

ग्रंथ—(१) नयचक्र, (२) भक्तस्तोत्र भाषा । (३) पंचास्तिकाव-चनिका ।

जन्म-संवत्—१६६० ।

रचना-काल—१६८४ ।

नाम—(३०२) खरगसेन कायस्थ ग्वालियरवाले ।

ग्रंथ—(१) दानलीला, (२) दीपमालिका-चरित्र ।

जन्म-संवत्—१६६० ।

रचनाकाल—१६८५ ।

नाम—(३०३) छेमराम ।

ग्रंथ—फ़तेहप्रकाश ।

जन्म-संवत्—१६५७ ।

रचनाकाल—१६८५ ।

विवरण—अलंकार तथा नायिका-भेद (खोज १९०३)

नाम—(३०४) जगतसिंह राणा ।

ग्रंथ—जगद्विलास ।

रचनाकाल—१६८५ से १७११ तक ।

विवरण—ये महाराजा-मेवाड़, कवियों के प्रेमी थे । जगद्विलास इनके समय में एक भाट ने बनाया, जिसका नाम नहीं मालूम है ।

नाम—(३०५) जगनंद वृंदावनवासी ।

जन्म-संवत्—१६५८ ।

रचनाकाल—१६८५ ।

विवरण—इनके कवित्त हज़ारा में हैं। निम्न श्रेणी ।

नाम—

ग्रंथ—वृंदावनस्तव ।

रचनाकाल—१६८६ ।

विवरण—यह ग्रंथ १११ दोहों का है। इसे हमने छत्रपूर में देखा है, पर इसके रचयिता का नाम नहीं मिला ।

नाम—(३०५/१) हेमचारण ।

ग्रंथ—महाराज गजसिंहजीरोगुणरूपक । [खोज १९०२]

रचनाकाल—१६८७ के पूर्व ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(३०६) जनमुकुंद ।

ग्रंथ—(१) भँवरगीत, (२) ध्रुवगीता ।

रचना-काल—१६८७ । [खोज १९०२]

विवरण—साधारण श्रेणी । याज्ञिकत्रय का कहना है कि संभवतः जनमुकुंद नंददासजी का दूसरा नाम है। कारण कि कुछ प्राचीन प्रतियों में दोनों नाम मिलते हैं ।

नाम—(३०/१) परशुराम महाराजा ।

ग्रंथ—(१) हरियशभजन, (२) बालनचरित्र, (३) बानी, (४) नखशिख, (५) परशुराम सागर ।

कविताकाल—१६८७ ।

विवरण—हरिव्यासदेव के शिष्य निंबार्क संप्रदाय के वैष्णव थे ।

नाम—(३०७) मुकुटदास ।

ग्रंथ—भगतविरदावली ।

रचना-काल—१६८७ ।

नाम—(३०८) मोहनदास कायस्थ कुरसट, हरदोई ।

ग्रंथ—(१) स्नेहलीला, (२) स्वरोदय-पवनविचार, [खोज १६००]; (३) पवन-विजय-स्वरशास्त्र (प्र० त्रै० रि०)

रचनाकाल—१६८७ ।

नाम—(३०६) रसराम ।

ग्रंथ—मददीपिका ।

रचनाकाल—१६८७ । [खोज १६०४]

नाम—(३१०) गोकुलविहारी ।

जन्म-संवत्—१६६० ।

रचनाकाल—१६६० ।

विवरण—निम्न श्रेणी ।

नाम—(३११) परशुराम ब्रजावसी ।

ग्रंथ—(१) वैराग्यनिर्णय, (२) ऊषाचरित्र ।

जन्म-संवत्—१६६० ।

रचनाकाल—१६६० ।

विवरण—साधारण श्रेणी [खोज १६००]

नाम—(३१२) हरिनाथ महापात्र ।

ग्रंथ—स्फुट छंद ।

रचनाकाल—१६६० ।

विवरण—यह कवि शाहजहाँ बादशाह का कृपापात्र था । ये नर-
हरि के पुत्र थे । इनके विषय में यह दोहा प्रसिद्ध है—

दान पाय दोई बढ़े की हरि की, हरिनाथ ;
उन बढ़ि नीचे कर कियो इन बढ़ि ऊँचे हाथ ।

इसी दोहे पर प्रसन्न होकर इन्होंने एक लाख से अधिक की संपत्ति दोहा बनानेवाले को दे दी थी ।

नाम—(३१३) रघुनाथराय ।

रचनाकाल—१६६१ ।

विवरण—राजा अमरसिंह जोधपुरवाले के यहाँ थे। साधारण कवि थे।

नाम—(३१४) चतुरदास।
ग्रंथ—एकादशस्कंध भाषा। [खोज १६००]
रचनाकाल—१६९२।
विवरण—ये राधावल्लभीय संप्रदाय के सोमसंतदास के चेले थे।

नाम—(३१५) मानसिंह।
ग्रंथ—अश्वमेध पर्व।
रचनाकाल—१६९२। [द्वि० त्रै० रि०]
विवरण—चौहान ठाकुर हरिगाँव (खीरी)।

नाम—(३१६) त्रिविक्रमसेन राजा।
ग्रंथ—(१) शालिहोत्र पृ० ८२ पद्य।
रचनाकाल—१६९४। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(३१६/१) बलभद्र क्षत्रिय।
ग्रंथ—वैद्यविद्याविनोद।
रचनाकाल—१६९५। [तृ० त्रै० रि०]
विवरण—केशवदास के पुत्र। हीन श्रेणी।

नाम— ३१७) बिहारीदास ब्रजवासी।
ग्रंथ—(१) संबोधिपंचाशिका, (२) वासुदेव की साठिका।
इनका ठीक नंबर अब (६१६/१) है।
जन्म-संवत्—१६७०।
रचनाकाल—१६९५।

नाम—(३१७) नामा
रचनाकाल १६९५।
ग्रंथ—फुटकल छंद।
विवरण—महाराष्ट्र में कविता करते थे।

नाम—(३१८) अहमद।
ग्रंथ—स्फुट काव्य। सामुद्रिक।
जन्म-संवत्—१६६०।
रचनाकाल—१६६६। च० त्रै० खोज में सामुद्रिक का रचना काल १६७८ दिया है।
विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(३१८) कुशल धीर गणि।
ग्रंथ—'वेलि' का गद्य बालबोध।
रचनाकाल—१६६६।
विवरण—गद्य लेखक।

नाम—(३१९) गोपनाथ।
जन्म-संवत्—१६७०।
रचनाकाल—१६६६।
विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(३२०) सदलवच्छ।
ग्रंथ—सादेवदिच्छ सावलग्या का दूहा।
रचनाकाल—१६६७। [खोज १६०२]

नाम—(३२१) शिरोमणि मिश्र इनका नाम नं० २६८ पर है।

नाम—(३२२) निधान।
रचनाकाल—१६६८। तृ० त्रै० खोज में जसवंतविलास १६७४ में रचा जाना लिखा है।

नाम—(३२३) अलिकृष्णावति।
ग्रंथ—स्फुट पद।
रचना-काल—१७०० के लगभग।

नाम—(३२४) कृष्णगिरिधरजी।
ग्रंथ—स्फुट पद।

रचनाकाल—१७०० के लगभग।

नाम—(३२५) जगन्नाथदास।

रचनाकाल—१७०० के क़रीब।

विवरण—इनके पद रागसागरोद्भव में हैं। निम्न श्रेणी।

नाम—(३२६) रायचंद नागर।

ग्रंथ—(१) गीतगोविंदादर्श, (२) लीलावती।

रचनाकाल—१७०० के क़रीब।

विवरण—मुर्शिदाबाद के जगत सेठ डालचंद के यहाँ थे।

नाम—(३२६/१) हितहरिलालजी गोस्वामी।

ग्रंथ—स्फुट पद।

रचनाकाल—१७०० के लगभग।

विवरण—राधावल्लभ संप्रदाय के आचार्य।

नाम—(३२७) कपूरचंद।

ग्रंथ—भाषा रामायण [खोज १९०३]

रचनाकाल—१७००।

नाम—(३२८) कलानिधि प्राचीन।

जन्म-संवत्—१६७२।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(३२९) कारे बेग फ़क़ीर।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(३३०) गोपालदास व्रजवासी।

ग्रंथ—(१) मोहविवेक, (२) परिचय स्वामी दादूजी की।

रचनाकाल—१७००। [खोज १९०२]

विवरण—इनके पद रागसागरोद्भव में हैं। इस नाम के दो कवि

खोज में लिखे हैं, परंतु हमें दोनों एक ही जान पड़ते हैं।

नाम—(३३१) गोविंद अटल।

जन्म-संवत्—१६७०।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—इनकी रचना हज़ारा में है।

नाम—(३३२) छबीले ब्रजबासी।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—इनके पद रागसागरोद्भव में हैं। साधारण श्रेणी। इनका नाम सूदन ने भी सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(३३३) छैल।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—इनके छंद हज़ारा में हैं। साधारण श्रेणी।

नाम—(३३४) ठाकुर प्राचीन।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—पद्माकर श्रेणी। इनके छंद कालिदास हज़ारा में हैं।

नाम—(३३५) तुलसीदास।

ग्रंथ—(१ कविमाला (१७००), (२) ध्रुवप्रश्नावली।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(३३६) धोंधे।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—इनके पद रागसागरोद्भव में हैं। निम्न श्रेणी।

नाम—(३३७) परमेश प्राचीन।

जन्म-संवत्—१६६८।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(३३८) प्रतापसहाय सिरोहिया उदैपूर तथा बूँदी।

ग्रंथ—स्फुट काव्य।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—ये पहले उदैपूर में राणा राजसिंह के यहाँ थे। वहाँ गड़बड़ हो जाने से बूँदी चले गए। वहाँ इनको जागीर तथा रावराजा का ख़िताब मिला और फिर ये वहीं रहे इनकी कविता साधारण श्रेणी की है।

नाम—(३३८/१) मिहिरचंद।

ग्रंथ—रुक्मिणीमंगल। तृ० त्रै० रि०।

रचनाकाल—१७००।

विवरण—शाहगंज वासी।

नाम—(३३६) रज्जबजी।

ग्रंथ—ग्रंथसर्वांगी। छप्पय [च० त्रै० रि०]।

रचनाकाल—१७००। [खोज ११०२]

विवरण—साधारण श्रेणी। ये महाशय दादूजी के शिष्य थे। इन्होंने खड़ी बोली लिए हुए भी कविता की है।

नाम—(३४०) सभाचंद।

ग्रंथ—कलिचरित्र ११२ पद्य। द्वि० त्रै० रि०।

रचनाकाल—१७००।

नाम—(३४१) रघुराम गुजराती (अहमदाबादवासी)

ग्रंथ—(१) सभासार, (२) माधवविलास।

रचनाकाल—१७०१।

नाम—(३४१/१) पीताम्बर।

ग्रंथ—रामविलास। तृ० त्रै० रि०।

रचनाकाल—१७०२।

विवरण—छिंदवाड़ा मध्यप्रदेश के निवासी तथा नंदलाल के पुत्र थे।

नाम—(३४१/२) दीनदत्त पदांकित मुकुंद।

रचनाकाल—१७०४।

ग्रंथ—आत्मचरित्र

विवरण—इन्होंने समग्र भारत का भ्रमण किया और प्रत्येक प्रांत का हाल उसी प्रांत की बोली में लिखा पर अपना आत्म-चरित्र हिंदी में लिखा है।

नाम—(३४१/३) शेख़ मुहम्मद बाबा।

रचनाकाल—१७०४।

विवरण—इन्होंने हिंदी और मराठी में कविता की है।

नाम—(३४२) ब्रजलाल।

रचनाकाल—१७०२।

विवरण—इनकी रचना हज़ारा में है। साधारण श्रेणी।

नाम—(३४३) हीरालाल कायस्थ (भोजमनवाले)

ग्रंथ—रुक्मिणीमंगल।

रचनाकाल—१७०४।

विवरण—मधुसूदनदास-श्रेणी। ग्रंथ देखा।

नाम—(३४४) अभिमन्यु।

जन्म-संवत्—१६७९।

रचनाकाल—१७०५।

विवरण—साधारण श्रेणी। इनके बनाए कुछ छंद ख़ानख़ाना की प्रशंसा के भी मिले हैं। यदि यह ख़ानख़ाना वही प्रसिद्ध पुरुष हो तो इनका कविताकाल पहले होगा।

नाम—(३४४/१) आनंद घन।

ग्रंथ—(१) आनंद घन बहत्तरीस्तवावली

रचनाकाल—१७०५ ।
विवरण—यशोविजय के समसामयिक थे ।

नाम—(३४५) गिरिधारी ।
ग्रंथ—भक्तिमाहात्म्य । पृ० १४४ पद्य ।
रचनाकाल—१७०५ । [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(३४५/१) धनमल जैन ।
रचनाकाल—१७०५ ।
विवरण— नं० ३४६ के समकालिक ।

नाम—(३४६) जगजीवन जैन आगरा ।
ग्रंथ—सत्यसार की टीका ।
रचनाकाल—१७०५ ।
विवरण—इनकी रचना हज़ारा में है । साधारण श्रेणी ।

नाम—(३४६/१) विनय विजय ।
ग्रंथ—विनयविलास (१७०५) ।
रचनाकाल—१७०५ ।
विवरण—कीर्तिविजय के शिष्य तथा संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे ।

उदाहरण—

घोरा झूँठा है रे तू मत भूलै असवारा ।
तोहि मुधा ये लागत प्यारा अंत होयगा न्यारा ।
चरै चीज अरु डरै कैद सों ऊवट चलै अटारा ;
जीन कसै तब सोया चाहै खाने को होशियारा ।
खूब खजाना खरच खिलाओ घो सब न्यामत चारा ;
असवारी का अवसर आवै गलिया होय गँवारा ।
छिन ताता छिन प्यासा होवे खिजमत बहुत करावनहारा ;
दौर दूर जंगल में डारै झूरै धनी विचारा ।

करहु चौकड़ा चातुर चौकस यो चाबुक दो चारा;
इस घोरे को 'विनय' सिखाओ ज्यों पावो भवपारा।

नाम—(३४६/२) मनोहरलाल जैन।

ग्रंथ—धर्मपरीक्षा।

रचनाकाल—१७०५।

नाम—(३४६/३) मुरारि जैन।
रचनाकाल—१७०५।
विवरण—नं० ३४६ के समसामयिक।
नाम—(३४६/४) यशोविजय जैन।

ग्रंथ—(१) जसविलास, (२) आनंदघन अष्टपदी।

जन्मकाल—१६८०। मृत्युकाल १७४५।

रचनाकाल—१७०५।

विवरण—नय विजय के शिष्य, संस्कृत, प्राकृत, गुजराती तथा हिंदी के ज्ञाता एवं कवि थे।

उदाहरण—

हम मगन भए प्रभु ध्यान में।
बिसर गई दुबिधा तन मन की अचिरा सुत गुन गान में।
हरि हर ब्रह्म पुरंदर की रिधि आवत नहिं कोउ मान में;
चिदानंद की मोज मची है समता रस के पान में।
इतने दिन तू नाहिं पिछान्यो जन्म गँवाय अजान में;
अब तो अधिकारी ह्वै बैठे प्रभु गुन अखय खजान में।
गई दीनता सभी हमारी प्रभु तुम्ह सम कोउ दान में;
प्रभु गुन अनुभव के रस आगे आवत नहिं कोऊ ध्यान में।
जिनही पाया तिनहि छिपाया न कहै कोऊ कान में;
ताली लगी जबहि अनुभव की तब जाने कोऊ शान में।

प्रभु गुन अनुभव चंद्रहास ज्यों सो तो न रहै म्यान में;
बाचक 'जस' कह मोह महा हरि जीत लियो मैदान में।

नाम—(३४७) रसिकाशिरोमणि।

रचनाकाल—१७०५।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(३४८) हीरामणि।

जन्म-संवत्—१६८०।

रचनाकाल—१७०५।

विवरण—इनके छंद हज़ारा में हैं। साधारण श्रेणी।

नाम—(३४९) क़ाजी क़दम।

ग्रंथ—साखी।

रचनाकाल—१७०६ से प्रथम (खोज १६०२)।

नाम—(३५०) मधुसूदन।

जन्म-संवत्—१६८१।

रचनाकाल—१७०६।

विवरण—साधारण श्रेणी।

इक्कीसवाँ अध्याय

बिहारी-काल (१७०७ से १७२० तक)

(३५१) महाकवि बिहारीलालजी

ये महाशय ककोर कुल के माथुर ब्राह्मण थे। इनका जन्म अनुमान से संवत् १६६० में ग्वालियर के निकट बसुवागोविंदपुर में हुआ था। इनकी बाल्यावस्था बुँदेलखंड में बीती और तरुणावस्था में ये मथुरा अपनी ससुराल में रहे। कहते हैं कि इनके टीकाकार कृष्ण कवि (खोज १६०१) इन्हीं के पुत्र थे। इनका मरण-काल अनुमान से संवत् १७२० समझ पड़ता है। ये महाशय जैपुर के मिर्ज़ा

महाराज जयसिंह के यहाँ रहा करते थे। कहते हैं कि एक समय जयसिंह एक नव वयस रानी के प्रेम में ऐसे मग्न हो गए थे कि कभी बाहर निकलते ही नहीं थे। इस पर निम्न-लिखित दोहा बिहारीजी ने किसी तरह से महाराज के पास भिजवाया—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास यहि काल;
अली कली ही सों बिध्यो आगे कौन हवाल।

इसको पाकर महाराज बाहर निकले और तभी से दरबार में बिहारी का बड़ा मान होने लगा। इसके बाद कहते हैं कि बिहारी को प्रति दोहा १ अशरफ़ी मिलती रही और ये महाशय समय-समय पर दोहे बनाकर महाराज को देते रहे। इसी तरह सात सौ दोहे एकत्र हो गए, जो पीछे क्रमबद्ध कर दिए गए। इनके कुल विषयक कुछ लोग संदेह उठाते और इन्हें भाट बतलाते हैं। हमने हिंदीनव-रत्न में इनके चौबे होने के विषय में कुछ प्रमाण दिए हैं। पीछे से यह निश्चयरूप से जान पड़ा कि ये महाशय चौबे थे। इनके वंशज अमरकृष्ण चौबे बूँदी दरबार के राजकवि हैं, जिनका कथन इस ग्रंथ में संवत् १९९३ के कवियों में किया गया है। उन्होंने दो छंदों द्वारा अपने पिता से लेकर बिहारीलाल तक सब पूर्व पुरुषों के नाम गिना दिए हैं। वह दोनों छंद उनके वर्णन में लिखे हैं।

सतसई में कुल ७१९ दोहे हैं और ७ दोहों में उसकी प्रशंसा की गई है। सतसई का रचना-काल १७०७ (खोज १९०३) में मिलता है। इस ग्रंथ पर बहुत-से कवियों ने टीकाएँ कीं और बहुतों ने इसी के प्रतिबिंब पर कुंडलियाँ, सवैया, श्लोक, शेर इत्यादि बनाए हैं। इनके टीकाकारों में सूरति, चंद्र (पठान सुल्तान अली), कृष्ण, सरदार और भारतेंदुजी सुकवि हैं। इनकी सतसई पर लगभग ३० टीका और प्रतिबिंब रचनेवाले कवियों के वर्णन स्थान-स्थान पर इसी इतिहास में मिलेंगे। इसका क्रम जो

आजकल देख पड़ता है, वह आज़म शाह ने कराया, अतः वह आज़मशाही कहलाता है।

सतसई के प्रथम, पंचम और सप्तम शतक बड़े ही उत्तम हैं। इसमें कोई क्रमबद्ध वर्णन नहीं किया गया, परंतु कितने ही विषय आ गए हैं। इनकी कविता में बहुत प्रकार और भाषाओं के शब्द मिलते हैं, पर वह सब मिलाकर ब्रज-भाषा और बुँदेलखंडी का मिश्रण और बहुत ही प्रशंसनीय है। इनका बोल-चाल बहुत ही स्वाभाविक तथा इबारतआराई बहुत ही उत्कृष्ट है। इन्होंने यमक तथा पद-मैत्री का बहुत प्रयोग किया है और शृंगार के कोमल वर्णन करने पर भी यह कविरत्न ज़ोरदार भाषा लिखने में भी समर्थ हुआ है। इन्होंने काव्यांग बड़े ही प्रकृष्ट कहे हैं और रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि बड़े चमत्कारी लिखे हैं। बिहारी ने रंगों के मिलाव के वर्णन बड़े ही विशद किए हैं, तथा प्रकृति-निरीक्षण का फल इनके बहुत से छंदों में देख पड़ता है। अंतिम गुण के साथ इनका काइयाँ-पन भी ख़ूब मिल जाता था और इन्होंने मानुषीय प्रकृति का वर्णन बड़ा ही उत्तम, सत्य और हृदयग्राही किया है। नागर वर्णनों में इन्होंने सुकुमारता की मात्रा बहुत रक्खी है, यहाँ तक कि ग्रामीण वर्णनों तक में वह प्रस्तुत है। बिहारी की कविता में चोज बहुत हैं और वह बढ़िया भी होते हैं। इनकी रचना में सुष्ठु छंदों की मात्रा बहुत अधिक है और उसमें बहुत-से ऊँचे और ख़ास इनके ख़यालात बहुतायत से हैं। बिहारी ने बारीक ख़याल भी बहुत अच्छे कहे हैं और दूर की कौड़ी भी यह ख़ूब लाए हैं। कलियुग के दानियों की इन्होंने बहुत निंदा की है और अपनी कविता में यत्र-तत्र मज़ाक भी अच्छे रक्खे हैं। हिंदी में बिहारीलाल ने उर्दू के ढंग की भी कविता की है और इसमें उन्हें कृतकार्यता भी हुई है। संभवतः इसी कारण यह आज़मशाह, पठान सुल्तान, आदि को बहुत पसंद पड़ी।

सतसई एक बड़ा ही मनोहर और चित्ताकर्षक ग्रंथ है। हम इनको परम प्रशंसनीय कवि समझते हैं और हिंदी में तुलसीदास, सूरदास तथा देव के बाद इन्हीं की गणना है। इनका विशेष वर्णन हमारे रचित नवरत्न में मिलेगा।

उदाहरण—

पति रितु औगुन गुन बढ़त मान माह को सीत;
जात कठिन ह्वै अति मृदौ रवनी मन नवनीत ॥ १ ॥

कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय;
वह खाए बौरात नर यह पाए बौराय ॥ २ ॥
तंत्री नाद कबित्त रस सरस राग रति रंग;
अन बूड़े बूड़े तिरे जे बूड़े सब अंग ॥ ३ ॥

बिरह बिकल बिनही लिखी पाती दई पठाय;
आँक बिहीनी ये सुचित सूनें बाँचत जाय ॥ ४ ॥
लिखन बैठि जाकी सबिह गहि गहि गरब गरूर;
भए न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ॥ ५ ॥

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय;
सौंह करै भौंहनि हँसै देन कहै नटि जाय ॥ ६ ॥
रनित भृंग घंटावली झरत दान मधुनीर;
मंद मंद आवत चल्यो कुंजर कुंज समीर ॥ ७ ॥
केसरि कैसरि क्यौं सकै चंपक कितक अनूप;
गात रूप लखि जात दुरि जातरूप को रूप ॥ ८ ॥

गोरी गदकारी परै हँसत कपोलनि गाड़;
कैसी लसति गँवारि यह सोनकिरवा की आड़ ॥ ९ ॥
वै न इहाँ नागर बड़े जिन आदर तो आब;
फूल्यो अनफूल्यो भयो गँवई गाँव गुलाब ॥ १० ॥

अनी बड़ी उमड़ी लखे असि बाहक भट भूप ;
मंगल करि मान्यो हिये भो मुँह मंगल रूप ॥११॥
यहि आसा अटक्यो रहै अलि गुलाब के मूल ;
ऐहैं बहुरि बसंत ऋतु इन डारन वै फूल ॥१२॥
मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोय ;
जा तन की झाँईं परे स्याम हरित दुति होय ॥१३॥
मिलि परछाहीं जोन्ह सों रहे दुहुन के गात ;
हरि राधा यक साथ ही चले गलिन मैं जात ॥१४॥
उन को हितु उनहीं बनै कोई करौ कितेक ;
फिरत काक गोलक भयो दुहू देह जिउ एक ॥१५॥
सुनत पथिक मुँह माह निसि लुवैं चलत वहि गाम ;
बिनु पूछे बिनही कहे जियत बिचारी बाम ॥१६॥
अंग अंग प्रतिबिंब परि दरपन से सब गात ;
दोहरे तेहरे चौहरे भूषन जाने जात ॥१७॥
पत्रा ही तिथि पाइए वा घर के चहु पास ;
नित प्रति पूनोई रहै आनन ओप उजास ॥ १८ ॥

(३५१/१) महाराज शिवाजी रचित एक कविता 'साहित्य-समालोचक' में छपी है। वह इस प्रकार है—

जय हो महराज गरीबनिवाज।
बंदा कमीना केह तो कतू साहेब तेरी ही लाज।
मैं सेवक बहु सेवा मागूँ इतना है सब काज।
छत्रपती तुम सेकदार सिव इतना हमारा अर्ज।

(३५१/२) शिवाजी के गुरु रामदास भी हिंदी के कवि थे। उनकी कविता का उदाहरण यह है—

सुनावे गैब क्या वार्ता ; गैबी मर्द उसे कहो।
बड़ा सो पीर वही ; खुदाई बाट काढवी।

ख़ुदा सो बोख सो ऐसा ; वेग खातिर ल्यावणा ।

इन्हीं के समय में सदानंद स्वामी, सेना नाई शेख सुल्तान और शेख फरीद ने भी महाराष्ट्र देश में हिंदी में कविता की। गंगेश कवि शिवाजी का आश्रित था। इस के अतिरिक्त गोविंद, मानसिंह, नाभास्वामी, केशवस्वामी, रंगनाथस्वामी, देवदास, दिनकर, गिरधर, बमाबाई, शिवराम, अज्ञानदास, तुलसीदास, आदि कई कवियों ने महाराष्ट्र देश में शिवाजी के समय हिंदी में कविता की है।

(३५२) शंभुनाथ सुलंकी राजा

ये महाशय शंभुनाथ सिंह सुलंकी, शंभु कवि, नाथकवि, नृप शंभु आदि कई नामों से विख्यात हैं। ये सितारागढ़ के राजा स्वयं कवि और कवियों के लिये कल्पवृक्ष थे। कहते हैं कि प्रसिद्ध कवि मतिराम इनके मित्र थे। इनका उत्पत्तिकाल सरोज में संवत् १७३८ लिखा है और खोज में इनका कविताकाल १७०७ दिया है। हमारे मत में मतिराम का जन्म १६७४ के लगभग हुआ और उनका कविता-काल १७१० के लगभग है। हमें नृप शंभु का कविता-काल खोज के अनुसार १७०७ के लगभग जँचता है। सरोज में लिखा है कि इनका एक नायिका भेद का ग्रंथ उत्कृष्ट है, पर हमारे देखने में वह नहीं आया। तथापि इनका ऐसा ग्रंथ होना अनुमान सिद्ध है, क्योंकि इनके नायिका भेद के बहुत छंद मिलते हैं। हमने इनका एक नखशिख मुद्रित देखा है। ऐसा चटकीला नखशिख हमने किसी दूसरे कवि का नहीं देखा। इस महाकवि में भाषा और भाव दोनों ही का अच्छा चमत्कार देख पड़ता है। इनके छंद बहुत ही टकसाली होते थे। हम इनको पद्माकर की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

फाग रच्यो नँद नंद प्रबीन बजैं बहु बीन मृदंग रबावैं ;
खेलतीं वै सुकुमारि तिया जिन भूखन हू की सहीं नहिं दावैं।

सेत अबीर के घुँघुर मैं इमि चालन की बिकसैं मुख आवैं ;
चाँदनी मैं नृप संभु मनौ चहुँ ओर विराजि रहीं महतावैं ॥१॥
नाम—(३५/१२) संभाजी उपनाम नृप शंभु, कवि, शंभु राव
ग्रंथ—नायिका भेद नखशिख।

Purshottam Vishram Mavaji of Bomby has full knowledge of the existence of these ना० भे० books with one of his poet friends.

दोऊ दुहू पहरावत चूनरि, दोऊ दुहू सिर बाँधत पागैं ;
दोउ दुहूँ को सिँगारत अंग, गरे लगि दोउ दुहू अनुरागैं।
शंभु सनेह समाय रहें रस ख्यालन मैं सिगरी निसि जागै ;
दोउ दुहून सों मान करें पुनि दोउ दुहून मनावन लागैं।

देखो चहै पिय को मुख पै अभिमान करै जिय की अभिलाषी ;
चाहति शंभु कहे मन मैं बतियाँ मुख सों पुनि जाति न भाखी
भेटिबकों फरके भुजपें नहिं जीभ तें जाद नहीं नहिं भाखी ;
लाज औ काम दुहू न वहू बसि आज दुराज प्रजा करि राखी।

न० शि०

घेर दार घागरे की घूमति अमोल मन,
मोल लेत देखत चलनि वह बाम की ;
अरुखि अरुसि नैन जात मोरवान बीच,
छबिनि नगीच है खरीद बिन दाम की।
कहै शंभुराज नंदलाल जब बास लख्यो,
भयो उर साल सुधि भूलि गई धाम ;
कंचन बटा से गोल अतिहि सुलुफ राधे,
रावरे गुलुफ सों कुलुफ खोली काम की।

संभाजी कृत "बुधभूषण" की ह० लि० प्रति Bombay Asiatic Society के Collection of old Hindi manuscripts में

प्रस्तुत है। इसमें इतर कविताओं को संगृहीत करके शंभु कवि ने अपनी संस्कृत कविता भी दी है जिसका नाम भवानी-स्तोत्र है। The friend of Mr. Mavaji also Possesses some poems of the poet कलूष कान्यकुब्ज who was a Friend of Sambhaji.

The seth is very soon going to publish the above named poems.

कौहर कौल जपा दल विद्रुम का इतनी जु बँधूक में कोति है;
रोचन रोरी रची मेहँदी नृप संभु कहै मुकुता सम पोति है।
पायँ धरै ढरै इंगुरई तिन मैं मनि पायल की घनी जोति है;
हाथ द्वै लीनिक चारिहुँ ओर लौं चाँदनि चूनरि के रँग होति है ॥२॥

नाम—(२५३) बारहट नर हरिदास टेलाग्राम जोधपूर निवासी।

ग्रंथ—(१) दशम स्कंध भाषा, (२) रामचरित्रकथा (कागभुशुंडी-गरुड़-संवाद), (३) अहिल्या-पूर्व-प्रसंग, (४) अवतार-चरित्र (अवतार-गीता), (५) वानी (६) नरसिंह अवतार कथा। [खोज १६०२]

कविताकाल—१७०७।

विवरण—ये महाशय सुकवि थे और इनकी गणना तोष श्रेणी में की जाती है। इन्होंने अपने सभी छंदों को उत्तम प्रकार से कहा है और प्रत्येक ग्रंथ में एक अच्छी कथा भी कही है। इन्होंने विषय चुनने में बड़ी पटुता दिखाई और वर्णन सफलता पूर्वक किए। आश्चर्य है कि इनके ग्रंथ संसार में भली भाँति प्रचलित नहीं हैं। क़थाप्रसंग के अनुरूप इन्होंने छंद भी उत्तम चुने हैं।

उदाहरण—

यहि प्रकार कौशल कुमार ऋषि नारि उधारिय;
इंद्र कोप पति शाप मोषि सिल देह सुधारिय।

पावन पदरज परस पाप परिहरि पुनीत भय ;
सुमन बरषि सुर गगन बानि जस गावत जय जय ।
जेहि चरन सरन नर हरि सुकवि विग्रह बंधन छेदि गनि ;
सोइ राम करन कारन समथ महाबाहु अवतार मनि ।
या धवला गिरि वास बेप बरणी हंसं वरं वाहनी ;
या धवलं अवतंस अंग अमलं कर वीण वाणी वरा ।
या धवलं बसना बिसाल नयनी स्यामं च सरलं कया ;
सा अनुकंप्य सरस्वती सुबदना विद्यावरं दायनी ।

नाम—(३५४) प्राणनाथ प्रसिद्ध पन्ना के धर्म-प्रचारक ।

ग्रंथ—(१) क़यामतनामा, (२) राजविनोद, (३) ब्रह्मबाणी, (४) कीर्तन, (५) प्रगट बानी, (६) बीस गरोहों का बाब, (७) पदावली । [प्र० त्रै० रि०]

समय—१७०७ ।

विवरण—इन्होंने १४ ग्रंथ बनाए । क़यामतनामा में फ़ारसी के शब्द बहुत हैं । ये महाराज पन्ना में थे और इन्हीं ने पन्ना के महराज को हीरा की खानि बताई । पन्ना में इनकी अब तक पूजा होती है । ये बड़े ही अच्छे साधु थे । इन्होंने बुंदेलखंड में जातीयता जागृत की थी । इनकी स्फुट कविता बहुत सुनी है जो बड़ी ही ज़ोरदार और भक्तिपूर्ण है ।

उदाहरण—

चंद बिन रजनी सरोज बिन सरवर,
तेज बिन तुरग मतंग बिन मद को ;
बिनु सुत सदन नितंबिनी सुपति बिन,
धन बिन धरम नृपति बिन पद को ।
बिनु हरि भजन जगत सो है जन कौन,
नोन बिनु भोजन पिटप बिना छद को ;

प्राननाथ सरस सभा न सोहै कवि बिनु,

बिद्या बिन बात न नगर बिना नद को ।

(३५४/१) द्वि० त्रै० रि० मे प्राणनाथ की पदावली प्राप्त हुई है जिसमें इनकी स्त्री इंद्रामती बाई की भी कविता है। हिंदी में लिखनेवाली यह दूसरी स्त्री कवि है।

(३५५) भरमी ने संवत् १७०८ के लगभग रचना की। रचना इनकी स्फुट देखने में आती है, जो अच्छी है। कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया। काव्य तोष कवि की श्रेणी का है।

उदाहरण—

जिन मुच्छन धरि हाथ कछू जग सुजस न लीनो ;

जिन मुच्छन धरि हाथ कछू परकाज न कीनो।

जिन मुच्छन धरि हाथ दीन लखि दया न आनी ;

जिन मुच्छन धरि हाथ कबौ पर पीर न जानी।

अब मुच्छ नहीं वह पुच्छ सम कवि भरमी उर आनिए ;

चित दया दान सनमान नहिं मुच्छ न तेहि मुख जानिए।

नाम—(३५५/१) जयराम।

कविता काल—१७१०।

विवरण—यह शाहजी का आश्रित कवि था। इसने राधामाधव विलास चंपू ग्रंथ बनाया था जिसमें हिंदी कविता भी है। इसने उक्त ग्रंथ में ४० और हिंदी कवियों का पता दिया है जो शाहजी के आश्रित थे। इसका पूरा विवरण 'साहित्य-समालोचक' में दिया है। जिन कवियों के नाम उसमें दिए हैं वे ये हैं—रघुनाथ, रघुनंदन, ठाकुर लक्ष्मीराम, श्याम गुसाईं, शिवदास, केहरिगंग, गुरुनारायण, भाट, गयंद, सुधार, द्वारकादास, देव, शेषव्यास, बलभद्र, सुखलाल, अलीखाँ, ख़लक, रामा-

नुज रघुनंदन, जदुराज, दुर्गा ठाकुर, सुबुद्धिराम, ढूँढारी, अकबर, वर्गी, लालमणि, घनस्याम तथा विश्वंभर भाट।

(३५६) भीष्म कवि

इन्होंने दशमस्कंध भागवत के प्रथमार्द्ध का परम मनोहर छंदोबद्ध उल्था 'बालमुकुंद-लीला' के नाम से किया। इनकी कविता सर्वथा प्रशंसनीय है, पर इनके समय, कुल, गोत्र, आदि के विषय में कोई पता नहीं लगता। चतुर्थ त्रैवार्षिक खोज रिपोर्ट में इनकी भागवत के तृतीय तथा नवम स्कंध भी मिले हैं। याज्ञिकत्रय के पास २, ४, ५, १०, ११, तथा १२ स्कंध भी हैं। सरोज में एक भीष्म का उत्पत्ति-काल १६८१ लिखा है और दूसरे का १७०८। जान पड़ता है ये दोनों भीष्म एक ही हैं। सरोज के उदाहरण की उत्तमता खोज [१६०३] के उदाहरण से समानता करती है। हम इनका कविता-काल १७१० मानते और इन्हें तोष की श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण—

थोथि थलकत झलकत बालबिधु भाल,
सेंदुर लसत मानो बानो बीर बेस को ;
मद जल झरत लसत अलि बृंद सुंड,
कुंडली करत मन हरत महेस को।
भीषम भनत ऐसो ध्यान जो धरत नर,
लेस न रहत उर कुमति कलेस को ;
साँकरे सहायक सकल सिधि दायक,
समत्थ सुभ सत्थ पगपूजिए गनेस को ॥ १ ॥

नंद बवा कि सौं मारिहौं साँटि उतारि कै तो गहने सब लैहौं ;
भौंह कमान तू काहे चढ़ावति नैनन डाटे ते हौं न डरैहौं।
देखत ही छिन एक में भीषम ग्वालन पै दधि दूध लुटैहौं ;
गूजरी गाल न मारु गँवारि हौं दान लिए बिन जान न दैहौं ॥२॥

(३५७) दामोदरदास

ये महाशय दादू के शिष्य जगजीवनदास के चेले थे। इससे इनका समय १७१५ संवत् के लगभग समझना चाहिए। इन्होंने गद्य में मार्कंडेय पुराण का उल्था बनाया। यह गद्य राजपूतानी भाषा में है। अतः इस कवि का भी नाम प्राचीन समय के गद्य-लेखकों में आता है [खोज १६०२]। कदाचित् नं० ४०८ पर आए हुए दामोदर दास और यह सज्जन एक ही हैं।

उदाहरण—

अथ वंदन गुरु देव कूं नमस्कार। गोविंद जीकूं नमस्कार। सर्व परकार कै सिध साध ऋषि मुनि जन सरबहीकूं नमस्कार। अहो तुम सब साध ऐसी बुधि देहु जा बुधि करि या ग्रंथ की वारतीक भाषा अरथ रचना करिए। सरब संतन की कृपा ते समस्त कारज सिधि होजी।

इन्होंने दोहे भी कहे हैं—

संगति सुरकै प्राणि सब च्यार वरण कुल सब्ब ;
हरि सुमरण हित सूं करै कारज होवै सब्ब।
कोटि कोटि कित कीजिए जो कीजै सत संग ;
सत संगत सुमरण विना चढ़ै न जिव के रंग।

(३५८) मणिमंडन मिश्र उपनाम मंडन।

यह कवि जैसपुर बुंदेलखंड में संवत् १६६० में उत्पन्न हुआ था। इनके तीन ग्रंथ सुने जाते हैं, पर हमारे देखने में एक भी नहीं आया, यद्यपि इनके स्फुट कवित्त बहुतेरे सुने और देखे गए हैं। इनके विषय में यह किंवदंती कुछ-कुछ प्रसिद्ध है कि ये भूषण और मतिराम इत्यादि के भाई थे, पर यह बात बिलकुल अशुद्ध है। यह बुंदेलखंडी थे और भूषण इत्यादि ज़िला कानपुर के रहनेवाले। हमने भूषण के वासस्थान तिकवांपुर (ज़िला कानपुर) में इसका पता

चलाया, तो मंडन को कोई भी इनका भाई नहीं बतलाता। मंडनजी भाग्यशाली कवि हैं, क्योंकि कविमंडली में इनका नाम खूब है, यहाँ तक कि कुछ लोग इन्हें बड़े ही ऊँचे दरजे का कवि मानते हैं। इनकी कविता सरस और मधुर होती थी। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी का कवि समझते हैं।

उदाहरण—

अलि हौं तौ गई जमुना जल को सु कहा कहौं बीर विपत्ति परी,
घहराय कै कारी घटा उनई इतने ही मैं गागरि सीस धरी;
रपट्यो पग घाट चढ्यो न गयो कवि मंडन ह्वै कै बिहाल गिरी,
चिरजीवहु नंद को बारो अरी गहि बाहँ गरीब ने ठाढ़ी करी ॥१॥
खेलन को रस छाँड़ि दियो दिन ह्वैकते राति कहाँ बसती हौ,
मंडन अंग सम्हारन को नित चंदन केसर लै घसती हौ;
छाती निहारि निहारि कछू अपनी अँगिया की तनी कसती हौ,
तो तन को अचरा उघरो कहो मो तन ताकि कहा हँसती हौ ॥२॥

मंडनजी के नाम से हमने कुछ पद भी सुने हैं, जैसे—

"अरे हाँ हाँ हाँ अरे हाँ हाँ हाँ, मकराकृत कुंडल कानन में;
हम देखे राम जनक पुर में।

इनके बनाए हुए रसरत्नावली, रसविलास, जनकपचीसी, जानकीजू का विवाह और नैनपचासा-नामक ५ ग्रं० त्रै० खोज में लिखे हैं। इन्होंने पुरंदरमाया १७१६ में रची।

नाम—(३५९) महाकवि मतिराम।

जन्मभूमि—तिकवाँपुर, ज़िला कानपूर।

जन्मकाल—संवत् १६७४ के लगभग (अनुमान से)।

ग्रंथ—(१) ललित ललाम, (२) छंदसार पिंगल, (३) साहित्य सार, (४) रसराज, (५) लक्षण श्रृंगार, (६) मतिराम सतसई।

कविता काल—१७१० ।

ये महाकवि तिकवाँपूर ज़िला कानपूर-निवासी रत्नाकर त्रिपाठी के पुत्र और प्रसिद्ध कवि भूषण के सगे भाई, कान्यकुब्ज ब्राह्मण त्रिपाठी वंश में सं० १६७४ के लगभग उत्पन्न हुए थे। इनका स्वर्गवास अनुमान से सं० १७७३ में होना समझ पड़ता है । मतिरामजी बूंदी के महाराज राव भाऊसिंह के यहाँ रहते थे और उन्हीं के यश-वर्णन में इन्होंने ललितललाम ग्रंथ अलंकार का बनाया । भाऊसिंह का राजत्वकाल सं० १७१६ से १७३८ तक है । इसी बीच में यह ग्रंथ बना होगा । काव्य प्रौढ़ता से यह मतिराम का प्रथम ग्रंथ समझ पड़ता है, परंतु फिर भी यह बड़ा ही विशद ग्रंथ है और इसमें अलंकारों के उदाहरण बहुत ही साफ़ तथा प्रतिभावान् हैं । इसमें शृंगार प्रधान तथा भाऊसिंह की प्रशंसा के छंद बराबर-बराबर हैं, तथा अन्य विषयों के भी कुछ छंद हैं । इसके कुछ बढ़िया छंद मतिराम ने रसराज में भी रख दिए हैं । यदि कोई मनुष्य बिना गुरु की सहायता के अलंकार का विषय जानना चाहे, तो वह इस ग्रंथ से जान सकता है । इन्होंने पहला ग्रंथ प्रायः ४५ वर्ष की अवस्था में बनाया । इससे जान पड़ता है कि इन्होंने विद्या कुछ देर को पढ़ी और बहुत काल तक केवल स्फुट कविता की । संभव है कि साहित्यसार इसके प्रथम का हो । इनका कविता-काल संवत् १७१० से समझना चाहिए । इनका प्रथम ग्रंथ इसी समय के लगभग से बनने लगा होगा ।

उदाहरण—

बारि के बिहार बर बारन के बोरिबे को,
बारिचर बिरची इलाज जयकाज की ;
कवि मतिराम बलवंत जलजंतु जानि,
दूरि भई हिम्मति दुरद सिरताज की ।

असरन सरन चरन की सरन गही,
त्योंहीं दीनबंधु निज नाम के इलाज की ;
धाए एते मान अति आतुर उताल मिली,
बीच ब्रजराज को गरज गजराज को ॥ १ ॥
सूबनि उमेड़ि दिलीदल दलिबे को चमू,
सुभट समूहनि सिवा की उमहति है ;
कहै मतिराम ताहि रोकिबे को संगर मैं,
काहू के न हिम्मति हिये में उलहति है ।
सत्रुसाल नंद के प्रताप की लहरि सब,
गरबी गनीम बरगीन को दहति है ;
पति पातसाह की इजति उमरावन की,
राखी रैया राव भावसिंह की रहति है ॥ २ ॥

यह ग्रंथ बनाने के पीछे जान पड़ता है कि मतिराम का संबंध बूँदी-दरबार से टूट गया, क्योंकि उन्होंने अपने शेष ग्रंथ छंदसार-पिंगल, साहित्यसार और रसराज बूँदी-नरेश के नाम नहीं बनाए। इनके साहित्यसार और लक्षणशृंगार ग्रंथ अभी हमारे देखने में नहीं आए, परंतु वे प्र० त्रै० खोज में मिले हैं। इसी प्रकार से 'साहित्य-समालोचक' में इनकी 'अलंकारपंचाशिका' का भी पता दिया है। छंदसार पिंगल-ग्रंथ मतिराम ने महाराजा शंभुनाथ सुलंकी के नाम पर बनाया। ये महाराज स्वयं अच्छे कवि थे और कवियों का सम्मान भी ख़ूब करते थे। छंदसार के थोड़े ही से पृष्ठ हमारे देखनें में आए हैं, क्योंकि हमारी प्रति अपूर्ण है। यह ग्रंथ भी परम मनोहर है। इसके बनाने के पीछे मालूम होता है कि महाराज शंभुनाथ का भी देहांत हो गया, क्योंकि इन्होंने अपना तीसरा ग्रंथ रसराज किसी को भी समर्पित नहीं किया। मतिराम का संबंध बूँदी सें राव बुद्ध के राज्यत्व काल में छूटा। यह समय सं० १७६९ के

लगभग है, सो रसराज इस समय के पीछे बना होगा। यह एक भावभेद का परमोज्ज्वल ग्रंथ है और इसमें भी उदाहरण बहुत ही साफ़ तथा मनोहर आए हैं। नायिकाभेद पढ़नेवाले प्रायः इसे और जगद्विनोद को पहले पढ़ते हैं। नायिकाभेद भावभेद का एक अंशमात्र है और भावभेद के अंतर्गत आलंबन-विभाव में आता है, परंतु मतिराम नें नायिकाभेद ही से ग्रंथ प्रारंभ किया और अंत में भावभेद का कथन किया। उस जगह पर इन्होंने भावभेदांतर्गत नायिकाभेद का उचित स्थान दिखला दिया है। रसराज की कविता बहुत प्रसादगुणपूर्ण है और भाषा की उत्तमता का चमत्कार इस समस्त ग्रंथ में देख पड़ता है। इसमें से थोड़े-से छंद तो ऐसे उत्कृष्ट हैं कि जिनकी बराबरी साहित्य-संसार में सिवा देवजी के छंदों के और किसी के छंद नहीं कर सकते। उत्तमता में रसराज का पूर्वार्द्ध उसके उत्तरार्द्ध से कुछ बढ़ा हुआ है।

मतिराम की भाषा शुद्ध व्रजभाषा है। सिवा देवजी के और कोई भी कवि ऐसी सुष्ठु और श्रुतिमधुर भाषा लिखने में समर्थ नहीं हुआ। इनको अनुप्रास का इष्ट न था, पर उचित रीति पर सभी भाषासंबंधी सद्गुण इनकी रचना में पाए जाते हैं। उपमाएँ भी इनकी बहुत अच्छी होती हैं और मानुषीय प्रकृति के भी कहीं-कहीं इन्होंने परमोत्कृष्ट चित्र खींचे हैं। इनके काव्य में मनोहर छंदों की मात्रा विशेषता से पाई जाती है और बुरे छंद खोज निकालना कठिन काम है। विहारी के बाद इन्होंने दोहे भी परम चमत्कारयुक्त बनाए हैं। दोहाकारों में विहारी की और दूसरे छंदों में देव की समानता इसी कविरत्न ने की है। मतिराम भाषासौंदर्य एवं भावगांभीर्य में परम प्रतिष्ठित हैं। इनकी आचार्यता भी ऊँचे दरजे की है। इनका एक ग्रंथ और मिला है, जिसका नाम सतसई मतिराम है। [द्वि० त्रै० रि०] 'फूलमंजरी'-नामक एक और ग्रंथ

मतिराम का बनाया मिला है। वह जहाँगीर के लिये बना है। इसी प्रकार से वृत्तकौमुदी ग्रंथ संवत् १७५८ का मिला है। परंतु हम इन दोनों 'मतिरामों' को भिन्न मानते हैं।

काव्य का उदाहरण—

गुच्छन को अवतंस लसै,
सिखिपच्छन अच्छ किरीट बनायो ;
पल्लव लाल समेत छरी कर,
पल्लव सों मतिराम सोहायो।
गुंजन को उर मंजुल माल,
निकुंजन ते कढ़ि बाहर आयो ;
आजु को रूप लखे नँदलाल को,
आजु ही आँखिन को फल पायो ॥ ३ ॥

वैसेई चितै कै मेरे चित को चुरावती हौ,
बोलती हौ वैसियै मधुर मृदु बानि सों ;
कबि मतिराम अंक भरत मयंक-मुखी,
वैसेई रहत गहि भुज लतिकानि सों।
चूमत कपोल पान करत अधर-रस,
वैसियै निहारी रीति सकल कलानि सों ;
कहा चतुराई ठानियत प्रानप्यारी तेरो,
मान जानियत रूखी मुख मुसुकानि सों ॥ ४ ॥

बलय पीठि तरिवन भुजन उर कुच कुंकुम छाप ;
तितै जाउ मनभावते जितै बिकाने आप ॥ ५ ॥

तरुन अरुन एड़ीन की किरन समूह उदोत ;
बेनी मंडन मुकुत के पुंज गुंज दुति होत ॥ ६ ॥

सकल सहेलिन के पाछे-पाछे डोलति है,
मंद-मंद गौन आजु हिय को हरत है ;

सनमुख होत सुख होत मतिराम जब,
पौन लागे घूँघुट को पट उघरत है।
जमुना के तट, बंसीबट के निकट,
नंदलाल को सकोचन ते चाह्यो न परत है;
तन तौ तिया को वर भाँवरैं भरत मन,
साँवरे बदन पर भाँवरैं भरत है॥ ७॥

मानहु पायो है राजु कहूँ,
चढ़ि बैठत ऐसे पलास के खोढ़े;
गुंज गरे सिर मोरपखा,
मतिराम यों गाय चरावत चोढ़े।
मोतिन को मम तोरयो हरा,
धरि हाँथन सों रही चूनरि पोढ़े;
ऐसेई डोलत छैल भए,
तुम्हैं लाज न आवति कामरो ओढ़े॥ ८॥

आई हौ पाँय देवाय महावर,
कुंजन ते करि कै सुख सेनी;
साँवरे आजु सँवारयो है अंजन,
नैनन को लखि लाजत एनी।
बात के बूझत ही मतिराम,
कहा करती भट्ट भौंह तनेनी;
मूँदी न राखति प्रीति अली यह,
गूँदी गोपाल के हाथ की वेनी॥ ६॥

दूसरे कि बात सुनि परति न ऐसी जहाँ,
कोकिल कपोतन की धुनि सरसाति है;
पूरि रहे जहाँ द्रुम बेलिन सों मिलि मतिराम,
अलि कुलनि अँध्यारी अधिकाति है।

तखत-से फूलि रहे फूलन के पुंज घन,
कुंजन मैं होति जहाँ दिन हू मैं राति है ;
ता वन के बीच कोऊ संग न सहेली कहि,
कैसे तू अकेली दधि बेचन को जाति है ॥१०॥

कुंदन को रँग फीको लगै,
झलकै अति अंगनि चारु गोराई ;
आँखिन मैं अलसानी चितौनि मैं,
मंजु बिलासन की सरसाई।
को बिनु मोल बिकात नहीं,
मतिराम लखे मुसुकानि मिठाई ;
ज्यों-ज्यों निहारिए नेरे ह्वै नैननि,
त्यों-त्यों खरी निसरै सी निकाई ॥ ११ ॥

मोरपखा मतिराम किरीट मैं,
कंठ बनी बनमाल सोहाई ;
मोहन की मुसकानि मनोहर,
कुंडल डोलनि मैं छबि छाई।
लोचन लोल बिसाल बिलोकनि,
को न बिलोकि भयो बस माई ;
वा मुख की मधुराई कहा,
कहौं मीठी लगै अँखियानि लोनाई ॥ १२ ॥

कोऊ नहीं बरजै मतिराम,
रहौ तितही जितही मन भायो ;
काहे को सौंहैं हजार करौ तुम,
तौ कबहूँ अपराध न ठायो।
सोवन दीजै न दीजै हमें दुख,
योंही कहा रसबाद बढ़ायो।

मान रह्योई नहीं मन मोहन,
मानिनी होय सो मानै मनायो ॥ १३ ॥
महावीर सत्रु साल नंद राव भावसिंह,
तेरी धाक अरि पुर जात भय भोय से ;
कहै मतिराम तेरे तेज पुंज लिए गुन,
मारुत औ मारतंड मंडल बिलोय से ।
बढ़त नवत टूटि फूटि मिटि फटि जात,
बिकल सुखात बैरी दुखन समोय से ;
तूल से तिनूका से तरोवर से तोयद से,
तारा से तिमिर से तमीपति से तोय से ॥ १४ ॥
जोर दल जोरि साहिजादो साहिजहाँ जंग,
जुरि मुरि गयो रही राव में सरम सी ;
कहै मतिराम देव मंदिर बचाए जाके,
बर बसुधा मैं बेद श्रुति बिधि यों बसी ।
जैसो रजपूत भयो भोज को सपूत हाड़ा,
वैसो और दूसरो भयो न जग मैं जसी ;
गाइन कौं बकसी कसाइन की आयु सब,
गाइन की आयु सो कसाइन को बकसी ॥ १५ ॥

इस कवि ने प्रत्येक छंद में मुख्य भाव को बहुत ही पुष्ट किया है, और इस पुष्टीकरण को छोड़कर अनावश्यक भाव प्रायः कहीं नहीं लिखे ।

(३६०) सबलसिंह चौहान

आपने सबसे पहले महाभारत की बृहत् कथा को क्रमबद्ध रीति से सवा आठ सौ पृष्ठों में दोहा-चौपाई में वर्णन किया । अधिकांश पर्वों में इन्होंने उनकी रचना का संवत् दे दिया है, जिससे ज्ञात हुआ कि संवत् १७१८ से १७८१ तक इस ग्रंथ का निर्माण हुआ । संवत् १७८१ की यथार्थता के विषय में संदेह उठ सकता है,

पर वास्तव में यह ठीक प्रतीत होता है। सबलसिंहजी प्रायः सभी ठौर संवत् लिखने में औरंगज़ेब एवं राजा मित्रसेन का नाम लिख दिया करते थे, पर स्वर्गारोहण पर्व में, जिसका निर्माण-काल संवत् १७८१ लिखा है, औरंगज़ेब अथवा मित्रसेन का नाम नहीं पाया जाता। वास्तव में संवत् १७८१ में औरंगज़ेब न था और शायद मित्रसेन भी न होंगे, सो यह संवत् ठीक जँचता है। जिन-जिन पर्वों का निर्माण-काल इन्होंने दिया है, उनका ब्योरा नीचे दिया जाता है—

१ भीष्म	पर्व मंगल माघ पूर्णिमा संवत्	१७१८
२ कर्ण	,, आश्विन शुक्ल ५ ,,	१७२४
३ शल्य	,, कार्तिक शु० १० ,,	१७२४
४ सभा	,, चैत्र शु० ६, गुरुवार, ,,	१७२७
५ द्रोण	,, आश्विन शु० १० (विजया दशमी)	१७२७
६ मुशल	,, भाद्रपद शु० ७ संवत्	१७३०
७ आश्रम वासिक	,, श्रावण शु० १० बुधवार ,,	१७५१
८ स्वर्गारोहण	,, अगहन शु० ११ बुधवार ,,	१७८१

सबलसिंह ने १८हों पर्व महाभारत के बनाए, जो सब हमारे पास मौजूद हैं, यद्यपि शिवसिंहसरोज में केवल १० पर्वों का हाल लिखा है। ऊपर लिखे हुए आठ पर्वों के अतिरिक्त कविजी ने और पर्वों का निर्माण-काल नहीं दिया है। इन संवतों के देखने से प्रतीत होता है कि कविजी का विचार संपूर्ण महाभारत बनाने का पहले न था, पर अंत में आपने उसे पूरा ही कर दिया। महाभारत के अतिरिक्त इन्होंने रूपविलास पिंगल, षट्ऋतु बरवै और भाषा ऋतुपसंहार और भागवत दशम भी बनाए हैं।

शिवसिंहसरोज में इनका जन्म-काल-संवत् १७२७ दिया है, जो स्पष्ट ही अशुद्ध है, क्योंकि १७१८ में इन्होंने महाभारत भीष्म-पर्व बनाया। यदि इस समय इनकी अवस्था केवल १६ वर्ष की मान ली

जाय, तो भी इनका जन्म १७०२ संवत् का ठहरेगा। स्वर्गारोहण पर्व संवत् १७८१ में बना, जब कि सबलसिंहजी की अवस्था कम-से-कम ७६ साल की थी। अतः इनकी अवस्था ८० या ८५ साल से कम न हुई होगी और संभव है कि ये ९०-९५ वर्ष तक के होकर गोलोकवासी हुए हों।

शिवसिंहजी ने लिखा है कि कोई इन्हें चंद्रगढ़ का राजा बतलाते हैं और कोई सबलगढ़ का, एवं कुछ लोग कहते हैं कि इनके वंश-वाले आज तक ज़िला हरदोई में मौजूद हैं, पर स्वयं शिवसिंहजी इनको ज़िला "इटावा के किसी ग्राम के ज़मींदार" बतलाते हैं। अस्तु, जो कुछ हो, सबलसिंहजी स्वयं राजा नहीं प्रतीत होते, क्योंकि ये आप ही लिखते हैं—

"औरंगसाह दिलीपति राजत; मित्रसेन भूपति तहँ गाजत।"
"ये नृप के पुरुषन महँ गाए; सबलसिंह चौहान गनाए।"

आश्रमवासिक पर्व

इससे अनुमान होता है कि हमारे कविजी राजा मित्रसेन के भाई-चारों में थे और वह राजा बादशाह औरंगज़ेब की सेवा में था, नहीं तो उसके दिल्ली में "गाजने" का क्या काम था? जान पड़ता है कि इसी कारण कविजी औरंगज़ेब का नाम प्रायः सभी ठौर प्रशंसा-सूचक शब्दों में लिखते हैं। सबलसिंहजी भी कदाचित् राजा मित्रसेन के साथ दिल्लीपति की सेवा में थे और शायद स्वयं युद्धों में सम्मिलित होने के कारण इन्हें भीष्मपर्व से प्रारंभ कर महाभारत बनाने का उत्साह हुआ। आपने युद्ध पर्वों से प्रारंभ किया और प्रायः सभी ऐसे पर्व पूर्ण हो जाने पर ग्रंथ पूरा करने की इनकी इच्छा हो उठी। इनको काव्य का शौक़-मात्र था। कविता बनाना इनका पेशा न था और न इन्होंने सिलसिलेवार काव्य ही किया। जब मौज आ जाती थी, तभी लिख डालते थे। इनकी कविता

साधारण थी। और ये मधुसूदनदासजी की श्रेणी के कवि थे। नमूना नीचे दिया जाता है—

गजमुख सुखकर दुखहरण तोहिं कहौं शिर नाय;
कीजै यश लीजै विनय दीजै ग्रंथ बनाय।
नृपहि दास दासहि नृपति पवि तृण तृणहि पषान;
जलधि अल्प सर लघु सरहि उदधि करै क्षण मान।
गुरु गोबिंद के चरण मनैये; जेहि प्रसाद उत्तम गति पैये।
शिव सनकादिक अंत न पावैं; नर मुख ते केहि विधि यश गावैं।

इनकी भाषा की प्रणाली श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी के ढंग की है और ये उन्हीं के अनुयायी कवि भी हैं।

(३६१) सरसदासजी की बानी [प्र० त्रै० रि०] सं० १७२० में बनी। वह १८ पृष्ठ के छोटे साइज़ में है। कविता साधारण श्रेणी की है। यह ग्रंथ हमें छत्रपूर-दरबार में देखने को मिला। ये महाशय टट्टी संप्रदाय के वैष्णव वृंदावनवासी थे। 'हरिदासवंशानुचरित' के आधार पर याज्ञिकत्रय का कहना है कि सरसदास १६८२ में स्वर्गवासी हुए, इसलिये उनकी बानी १७२० की नहीं हो सकती है।

उदाहरण—

राजत नव निकुंज बर जोरी।
सुंदर स्याम रसीले अँग-अँग नवल कुँवरि बर गोरी।
वदन माधुरी सुख सागर बर नागर कुँअरि किसोरी;
सरसदास नैननि सचुपावत कौतुक निपट निवोरी।

(३६२) अनन्य शीलमणि (सीताराम) गलते के महात्मा अग्रदास के गुरु-वंश में थे। यह इनके ग्रंथ में लिखा है। 'वर्षावर्णन' इन्होंने ११० छंदों में कहा है और 'अष्टयाम' में होरी और झूला का वर्णन किया है। इनका ग्रंथ प्रायः १०० पृष्ठों का है, जिसमें राधा-

कृष्ण की भाँति रामसीता का वर्णन श्रृंगारात्मक है। इनकी कविता साधारण श्रेणी की है। आपका समय जाँच से संवत् १७२० जान पड़ा। इनके ग्रंथ छत्रपूर में हैं।

उदाहरण—

जोबन जंग उमंग है फाग को रंग,
गुलाल को एक मिलोरी;
जोरी किसोर किसोरी मिले तस,
होरी बहार चढ़ी बरजोरी।
रोरी कपोल पै गोरी मले हँसै,
गारि बकैं नव छैल छकोरी;
दोऊ समाज सुमत्त महा सुख,
सीलमनी हिय छाय रहोरी।

इस समय के अन्य कविगण

नाम—(३६३) गरीबदास।

ग्रंथ—अध्यात्मबोध।

रचनाकाल—१७०७ के पूर्व। [खोज १६०२]

नाम—(३६४) गिरधरलाल बैसवाड़ा।

रचनाकाल—१७०७।

नाम—(३६५) गोवर्धन चारण।

ग्रंथ—कुंडलिया राजा पद्मसिंह जीरी।

रचनाकाल—१७०७। [खोज १६०२]

विवरण—राजपूतानी भाषा में रचना की है।

नाम—(३६६) गंभीर राय।

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—मऊवाले जगतसिंह शाहजहाँ से लड़े थे। उसका वर्णन किया है।

नाम—(३६७) चाँपादे रानी जैसलमेर बीकानेर।

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—महारानी बीकानेर रावल हरराज जैसलमेरवाले की पुत्री थीं।

नाम—(३६८) पंचम।

रचनाकाल—१७०७।

नाम—(३६९) वेदांग राय।

ग्रंथ—पारसीपरकास।

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—शाहजहाँ के यहाँ थे।

नाम—(३६९/१) भगवत मुदित।

ग्रंथ—(१) हितचरित्र, (२) सेवकचरित्र, (३) रसिक-अनन्यमाला, (४) वृंदावनशतक (१७०७) [द्वि० तथा तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—साधारण श्रेणी। राधावल्लभी संप्रदाय के थे।

नाम—(३७०) मनोहरदास निरंजनी।

ग्रंथ—(१) ज्ञानचूर्णवचनिका, (२) सतप्रश्ननिरंजन (शतिका), [खोज १९०२] (३) ज्ञानमंजरी (१७१६), (४) षट् प्रश्नी (१७१७), [खोज १९०१], (५) वेदांतपरिभाषा (१७०७), (६) शतप्रश्नोत्तरी [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—वचनिकां गद्य में हैं।

नाम—(३७१) सिंहीलाल।

ग्रंथ—गुरुप्रकासीभजन।

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—वैष्णवदास के शिष्य [खोज १६००]

नाम—(३७२) रसजानकीदास। इनका ठीक नं० ८२३४/५ है।

नाम—(३७३) रसिकदासजी स्वामी राधावल्लभी।

ग्रंथ—(१) बानी, (२) प्रसादलता, (३) भक्तिसिद्धांत-मणि (४) पूजाविलास, (५) एकादशी-माहात्म्य, (६) रसकदंब चूड़ामणि [द्वि० त्रै० रि०], (७) पूजाविभास, (८) कुंज कौतुक। तृतीय त्रैवार्षिक खोज की रिपोर्ट (९) माधुर्यलता (१७४४), (१०) रतिरंगलता (१७४९) (११) सुवा मैना चरितलता, (१२) आनंदलता, (१३) हुलासलता, (१४) अतनलता, (१५) रसलता, (१६) रहसिलता, (१७) कौतुकलता, (१८) अद्भुतलता, (१९) विलासलता, (२०) तरंगलता, (२१) विनोदलता, (२२) सौभाग्यलता, (२३) सौंदर्यलता, (२४) अभि-लाषलता, (२५) मनोरथलता, (२६) सुखसारलता, (२७) चारुलता, (२८) अष्टक, (२९) रससार, (३०) ध्यानलीला, (३१) वाराह-संहिता, (३२) अष्टक।

रचनाकाल—१७०७।

विवरण—नरहरिदास के शिष्य। इनकी बहुत बानी हैं।

नाम—(३७४) रसिक विहारिनिदास।

ग्रंथ—ब्याहलो [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७०७।

नाम—(३७५) राघवदास कायस्थ

ग्रंथ—ज्ञानप्रकाश। [प्र० त्रै० रि०]।

रचनाकाल—१७०७।

नाम—(३७६) राव रतन राठूर।

ग्रंथ—रायसा रावरतन ।

रचनाकाल—१७०७ ।

विवरण—राजा उदयसिंह राठूर रतलाम के पौत्र । किसी कवि ने यह रायसा इनके नाम पर बनाया ।

नाम—(३७७) हरीराम ।

उदाहरण में इनके दो चरण लिखे जाते हैं ।

अकबर बीर बर बीर कवि बर केसौ,
गंग की सुकविताई गाई रसपाथी ने ;
एक दल-सहित बिलाने एक पल ही में,
एक भए भूल एक मींजि मारे हाथी ने ।

ग्रंथ—(१) नखशिख, (२) पिंगल, (३) छंदरत्नावली [प्र० त्रै० रि०]

काव्य-संवत्—१७०८ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(३७८) हुसैन ।

रचनाकाल—१७०८ ।

विवरण—इनके छंद हज़ारा में हैं । निम्न श्रेणी ।

नाम—(३७८/१) हेमराज पाँडे ।

ग्रंथ—(१) प्रवचनसार टीका, (२) पंचास्तिकाय टीका, (३) भक्तामर भाषा, (४) गोम्मटसार, (५) नयचक्र वचनिका, (६) सितपट, (७) चौरासी बोल ।

रचनाकाल—१७०६ ।

विवरण—रूपचंद्र के शिष्य तथा गद्य हिंदी के अच्छे लेखक थे ।

नाम—(३७६) कमंच राजपूतानावाले ।

रचनाकाल—१७१० के पूर्व ।

विवरण—हीन श्रेणी । इनके संग्रह का वर्णन सरोज में है ।

नाम—(३८०) जेठामल कायस्थ नागौर ।

ग्रंथ—नरसीमहता की हुंडी ।

रचनाकाल—१७१० । [खोज १६०१]

नाम—(३८१) तत्त्ववेत्ता ।

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(३८२) दाराशाह ।

ग्रंथ—(१) दोहास्तवसंग्रह, (२) सारसंग्रह, [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७१० ।

नाम—(३८३) परसाद ।

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—तोष श्रेणी । महाराणा उदैपूर के यहाँ थे ।

नाम—(३८४) वल्लभ रसिक ।

ग्रंथ—(१) साँझी । (२) बारह बाट अठारह पैंडे, (३) सुरत उल्लास । [तृ० त्रै० रि०]

जन्म-संवत्—१६८१ । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७१० । [खोज १६००]

नाम—(३८५) मानदास ब्रजवासी ।

ग्रंथ—रामचरित्र ।

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(३८६) राजाराम ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(३८७) श्रीधर ।

ग्रंथ—भवानीचंद ।

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—राजपूताना के हैं ।

नाम—(३८८) सदानंददास ।

ग्रंथ—नंदजी की वंशावली । [द्वि० त्रै० रि०]

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(३८९) सुबंसराय कायस्थ सागर ।

ग्रंथ—नरसिंहपचासा ।

जन्म-संवत्—१६८० ।

रचनाकाल—१७१० ।

विवरण—सागर-नरेश उदयशाह के दरबार में थे ।

नाम—(३९०) आनंद ।

ग्रंथ—(१) कोकसार [खोज १९०२], (२) सामुद्रिक ।

रचनाकाल—१७११ ।

विवरण—खोज रिपोर्ट से इसके समय का पता संवत् १७९१ चलता है ।

नाम—(३९१) जदुनाथ शुक्ल ।

ग्रंथ—प्राणसुख ।

रचनाकाल—१७११ ।

नाम—(३६२) तुलसीदास ।
ग्रंथ—(१) रसकल्लोल, (२) रसभूषण। [प्र० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७११ ।

नाम—(३६२/१) हीरानंद शाहजहाँनाबाद-वासी ।
ग्रंथ—पंचास्तिकाय समरसार का पद्यानुवाद ।
रचनाकाल—१७११ ।
उदाहरण—

सुख दुख दीसै भोगतां सुख दुख रूप न जीव ;
सुख दुख जाननहार है ज्ञान सुधा रस पीव ।
संसारी संसार में करनी करै असार ;
सार रूप जाने नहीं मिथ्यापन को टार ।

नाम—(३६३) श्रीकवि ।
रचनाकाल—१७१२ के पूर्व ।

नाम—(३६४) श्रीहठ कवि ।
रचनाकाल—१७१२ के पूर्व ।

नाम—(३६५) साहब ।
रचनाकाल—१७१२ के पूर्व ।

नाम—(३६६) सिद्ध ।
रचनाकाल—१७१२ के पूर्व ।

नाम—(३६७) सुबुद्धि ।
रचनाकाल—१७१२ के पूर्व ।

नाम—(३६८) संख ।
रचनाकाल—१७१२ के पूर्व ।

नाम—(३६९) बारन ।
ग्रंथ—रत्नाकर ।
जन्म-संवत्—१६८६ ।

रचनाकाल—१७१२। [खोज १९०४]

विवरण—सैयद अशरफ़ कड़ा मानिकपुर के अध्यापक। सुल्तान-शुजा की तारीफ़ में कविता की है। साधारण श्रेणी।

नाम—(३९९/१) खड्गसेन।

ग्रंथ—त्रिलोकदर्पण।

रचनाकाल—१७१३।

विवरण—आगरा-वासी।

नाम—(३९९/२) रायचंद उपनाम 'चंद्र'।

ग्रंथ—सीताचरित।

रचनाकाल—१७१३।

नाम—(४००) आचार्य अचल कीर्ति।

ग्रंथ—विषापहार भाषा।

रचनाकाल—१७१४।

विवरण—जैन थे। [खोज १९००]

नाम—(४०१) गंगाराम।

ग्रंथ—(१) सारसंग्रह, पृष्ठ ११०, पद्य।

रचनाकाल—१७१४।

नाम—(४०२) गोपाल प्राचीन।

रचनाकाल—१७१५।

विवरण—केहरी कल्याणमित्रजीतसिंहजी के यहाँ रहे थे। निम्न-श्रेणी।

नाम—(४०३) चंद।

ग्रंथ—नागनौर की लीला (काली नाथना)। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७१५।

नाम—(४०४) जगोजी।

ग्रंथ—रतमहेशदासोतवचनिका।

रचनाकाल—१७१५। [खोज १६०२]

विवरण—गद्यकार।

नाम—(४०५) वीरभानु ब्रजबासी।

रचनाकाल—१७१५।

नाम—(४०६) बनमालीदास गोस्वामी।

जन्म-संवत्—१६६०।

रचनाकाल—१७१६।

विवरण—इनकी रचना वेदांतसंबंधी है। निम्न श्रेणी।

नाम—(४०७) शंकर मिश्र आगरा।

ग्रंथ—लीलावती का हिंदी अनुवाद।

रचनाकाल—१७१६। [खोज १६०४]।

विवरण—पिता का नाम रूप मिश्र था।

नाम—(४०८) दामोदर।

ग्रंथ—मार्कंडेयपुराण भाषा।

रचनाकाल—१७१७।

विवरण—साधारण श्रेणी। देखो नं० ३५७।

नाम—(४०९) भगवतीदास ब्राह्मण।

ग्रंथ—(१) नासकेतोपाख्यान (१७१७), (२) चेतनकर्म-चरित्र [खोज १६००] (१७३२)।

जन्म-संवत्—१६६०।

रचनाकाल—१७१७।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(४१०) मान कवीश्वर राजपूतानाº के।

ग्रंथ—राजविलास।

रचनाकाल—१७१७।

विवरण—साधारण श्रेणी। इन्होंने महाराणा मानसिंह का वर्णन

इस ग्रंथ में किया है। यह नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला में छप रहा है।

नाम—(४१०/१) महीपति।

रचनाकाल—१७१७।

विवरण—मराठी भाषा के प्रसिद्ध कवि हैं। हिंदी में भी कविता करते थे।

नाम—(४११) मेघराज प्रधान ओड़छा।

ग्रंथ—(१) मृगावती की कथा, (२) मकरध्वज की कथा, (३) सिंहासनबत्तीसी, (४) राधा-कृष्णजू कौ झगरौ।

रचनाकाल—१७१७। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—ओड़छा के महाराजा राज सुजानसिंह के दरबार में थे।

नाम—(४१२) सदाशिव।

ग्रंथ—राजरत्नाकर।

रचनाकाल—१७१७।

विवरण—महाराणा राजसिंह के यहाँ थे।

नाम—(४१३) सुखदेव, गोलापुर।

ग्रंथ—(१) बणिकप्रिया (वाणिज्य का विषय-वर्णन), [खोज १९०९] (२) वाणिज्य के भेद वर्णन।

रचनाकाल—१७१७।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(४१४) जानकीरासिकशरण।

ग्रंथ—रसिकसुबोधिनी (टीका भक्तमाल की)।

रचनाकाल—१७१६। खोज १९०४ में रचनाकाल १९१६ लिखा है।

नाम—(४१४/१) श्रीपति।

ग्रंथ—कर्ण पर्व। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७१६ ।

नाम—(४१४) रत्नाकर ।

रचनाकाल—१७१६ ।

विवरण—बागलान के मलहेर के रहनेवाले थे । मराठी के कवि थे । हिंदी में 'व्रज भागवत' ग्रंथ की रचना की जो 'धुलिया' में सुरक्षित है ।

नाम—(४१५) हरिवंश भट्ट बिलग्रामी ।

रचनाकाल—१७१६ ।

विवरण—राजा हनुमंतसिंह अमेठी के यहाँ थे । अब्दुलजलील बिलग्रामी को काव्य पढ़ाया । निम्न श्रेणी ।

नाम—(४१६) अनंत ।

ग्रंथ—अनंतानंद ।

जन्मकाल—१६९२ ।

रचनाकाल—१७२० ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(४१७) अमरसिंह राठौर, महाराज जोधपुर के बड़े पुत्र ।

जन्म-संवत्—१६९० ।

रचनाकाल—१७२० ।

विवरण—गुणग्राही और कवि थे । ये महाराज गजसिंह के पुत्र और महाराजा जसवंतसिंह भाषाभूषणकार के बड़े भाई थे । आपने सलावतख़ाँ को शाहजहाँ के दरबार में मारा । इन्होंने चंद के रायसा को खोजकर इकट्ठा कराया । ये अपने उद्धत स्वभाव के कारण राजा न हुए और इनके छोटे भाई ने राज पाया ।

इन्हीं की प्रशंसा में यह दोहा कहा गया—

धन्य अमर छिति छत्रपति अमर तिहारो मान ;
साहिजहाँ की गोद मैं हन्यो सलावत खान।

नाम—(४१८) ईश।

काव्यकाल—१७२०।

विवरण—इनकी कविता शांत और शृंगार की उत्तम है। इनकी गणना तोष कवि की श्रेणी में है।

नाम—(४१८/१) हरगोविंद।

कविताकाल—१७२०।

विवरण—इन्होंने गुजराती हिंदी मिश्रित भाषा में अहमदख़ाँ और भील कन्या तेजाबाई के ब्याह और अहमद नगर बसने का वर्णन किया है।

नाम—(४१६) घनराय।

जन्मकाल—१६६०।

रचनाकाल—१७२०।

नाम—(४२०) चुन्ना मोतीसर मारवाड़।

ग्रंथ—फुटकर गीत कविता।

रचनाकाल—१७२० के लगभग।

विवरण—आश्रयदाता महाराजा गजसिंह माड़वार।

नाम—(४२१) प्रवीण-कविराय।

जन्म-काल—१६६८।

रचनाकाल—१७२०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(४२२) त्रिलोकसिंह।

ग्रंथ—सभाप्रकाश। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७२० के लगभग।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(४२३) रामचंद्र साकी बनारसवाले ।

ग्रंथ—(१) रायविनोद, (२) जंबूचरित्र ।

रचनाकाल—१७२० । [खोज़ १९०१]

विवरण—जैन कवि । पद्मराग के शिष्य । इसी नाम के एक मिश्र कवि ने १६२० में नं० (१) नाम का ग्रंथ रचा था, पर ये दोनों पृथक्-पृथक् हैं ।

नाम—(४२४) सकल ।

जन्म-काल—१६९० ।

रचनाकाल—१७२० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४२५) हरिजन ।

जन्म-काल—१६९० ।

रचनाकाल—१७२० ।

विवरण—इनके छंद हज़ारा में हैं । इनकी रचना बड़ी उत्तम एवं चित्ताकर्षिणी है । इनकी गणना तोप कवि की श्रेणी में है ।

बाईसवाँ अध्याय

भूषणकाल (१७२१ से १७५० तक)

नाम—(४२६) महाकवि भूषण ।

जन्मभूमि—तिकवाँपूर, ज़िला कानपूर ।

जन्म-काल—संवत् १६७० (अनुमान से) ।

कविताकाल—१७०९ ।

ग्रंथ—(१) शिवराजभूषण, (२) भूषणउल्लास, (३) दूषण-उल्लास, (४) भूषण हज़ारा ।

ये महाशय कान्यकुब्ज ब्राह्मण तिकवाँपूर, ज़िला कानपूरवासी रत्नाकर त्रिपाठी के पुत्र थे । इनका जन्म अनुमान से संवत् १६७०

में हुआ था। चिंतामणि त्रिपाठी इनके ज्येष्ठ बंधु और महाकवि मतिराम एवं नीलकंठ छोटे भाई थे। इनका नाम कुछ और ही था, परंतु चित्रकूट के सुलंकी राजा रुद्र ने इनको भूषण की उपाधि दी, तब से इनका यही नाम प्रसिद्ध हो गया। भूषणजी कई राजाओं के यहाँ गए, परंतु सबसे अधिक मान इनका महाराज शिवाजी और महाराज छत्रसाल के यहाँ हुआ, और इनको इन्हीं दो महाराजों का कवि समझना चाहिए। भूषण ने कई-कई लख रुपए एक-एक छंद पर पाए। ये सदैव राजाओं की भाँति मान और प्रतिष्ठा-पूर्वक रहा किए और अंत में पुत्र-पौत्रवान् होकर प्रायः संवत् १७७२ में ये वैकुंठवासी हुए। भूषण का कविताकाल संवत् १७०५ से समझना चाहिए। परंतु इनके काल नायक होने से यह वर्णन यहाँ हुआ। इनकी अवस्था १०२ वर्ष के लगभग आती है।

इन्होंने शिवराजभूषण, भूषणउल्लास, दूषणउल्लास, और भूषण-हज़ारा-नामक चार ग्रंथ बनाए, परंतु इनके अंतिम तीन ग्रंथों का अब पता नहीं लगता। उनके स्थान पर शिवाबावनी, छत्रसाल-दशक और स्फुट छंद मिलते हैं। शिवराजभूषण और उपर्युक्त तीन ग्रंथों को मिलाकर भूषणग्रंथावली के नाम से इनकी कविता का ग्रंथ हमने नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला में प्रकाशित कराया है। शिवराजभूषण में अलंकारों का बहुत अच्छा वर्णन है, और प्रत्येक अलंकार के उदाहरण द्वारा शिवराज का यश कथन किया गया है। जान पड़ता है कि भूषणजी ने इसे ७ वर्ष में बनाया और संवत् १७३० [खोज १९०३ में भी इस ग्रंथ का १७३० में समाप्त होना मिलता है] में यह समाप्त हुआ। इस ग्रंथ में एवं भूषणजी की कविता में हर जगह वीर, भयानक, और रौद्र रसों का प्राधान्य है। शिवा-बावनी शिवराजसंबंधी ५२ छंदों का एक बड़ा ही ज़ोरदार संग्रह है। छत्रसालदशक में इनके दश बड़े ही उत्तम छंद लिखे गए हैं।

स्फुट काव्य में हमने इनके नौ छंद रक्खे हैं। इसके बाद हाल में इनके और कुछ छंद शृंगार के भी मिले हैं।

भूषण ने नायक चुनने में बड़ी पटुता से काम लिया है। इनके नायक शिवाजी और छत्रसाल हैं, जो समस्त भारत के श्रद्धा-भाजन थे। फिर भी प्रकट में तो इनके ये महाराज नायक हैं, परंतु वास्तव में इन्होंने हिंदू जाति को अपना नायक माना है। जातीयता का विचार इनकी कविता में सब हिंदी कवियों से अधिक है और इसी कारण इनकी रचना अधिक लोकप्रिय है। इनकी भाषा व्रजभाषा है, परंतु उसमें अन्य भाषाओं के बहुत-से शब्द मिल गए हैं। इनकी सत्यप्रियता और स्वतंत्रता प्रशंसनीय और प्रावल्य तथा उद्दंडता भी सराहनीय हैं। उत्तम छंदों की मात्रा इनकी रचना में विशेषता से पाई जाती है। इनका विशेष वर्णन हिंदीनवरत्न में मिलेगा और उससे भी बृहत् वर्णन देखने के वास्ते भूषणग्रंथावली की भूमिका देखनी चाहिए। इनकी गणना नवरत्न में पाँचवें नंबर पर है।

उदाहरण—

अजौ भूतनाथ मुंडमाल लेत हरखत,
भूतन अहार लेत अजहूँ उछाह है;
भूषन भनत अजौ काटे करवालन के,
कारे कुंजरन परी कठिन कराह है।
सिंह सिवराज सलहेरि के समीप ऐसो,
कियो कतलाम दिल्ली दल को सिपाह है;
नदी रनमंडल रुहेलन रुधिर अजौ,
अजौ रविमंडल रुहेलन की राह है॥ १॥

पंपा मानसर आदि अगन तलाव लागे,
जिनके परन मैं अकथ जुत गथ के;

भूषन यों साज्यो रायगढ़ सिवराज रहे,
देव चकचाहि कै बनाए राजपथ के।
बिन अवलंब कलिकान आसमान मैं है,
होत बिसराम जहाँ इंदु औ उदथ के;
महत उतंग मनिजोतिन के संग आनि,
कैयो रंग चकहा गहत रबि रथ के ॥ २ ॥

डाढ़ी की रखैयन की डाढ़ी-सी रहत छाती,
बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिंदुआने की;
कढ़ि गई रैयति के मन की कसक सब,
मिटिगई ठसक तमाम तुरकाने की।
भूषन भनत दिल्लीपति दिल धकधका,
सुनि-सुनि धाक सिवराज मरदाने की;
मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस,
खोटी भई संपति चकत्ता के घराने की ॥ ३ ॥

गढ़न गँजाय गढ़धरन सजाय करि,
छाँड़े केते धरम दुवार दै भिखारी से;
साहि के सपूत पूत बीर सिवराजसिंह,
केते गढ़धारी किए बन बनचारी से।
भूषन बखानै केते दीन्हे बंदीखाने,
सेख सैयद हजारी गहि रैयत बजारी से;
महता से मुगल महाजन से महाराज,
डाढ़ि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से ॥ ४ ॥

कीबे को समान प्रभु ढूँढ़ि देख्यो आन पै,
निदान दान जुद्ध मैं न कोऊ ठहरात है;
पंचम-प्रचंड भुजदंड को बखान सुनि,
भाजिबे को पंछी लौं पठान थहरात हैं।

संका मानि सूखत अमीर दिल्लीवारे जब,
चंपति के नंद के नगारे चहरात हैं;
चहूँ ओर चकित चकत्ता के दलन पर,
छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं॥ ५ ॥
निकसत म्यानते मयूखैं प्रलैभानु कैसी,
फारैं तम तोम से गयंदन के जाल को;
लागत लपटि कंठ वैरिन के नागिनि-सी,
रुद्रहि रिझावै दै-दै मुंडन के माल को।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहुबली,
कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को;
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि-काटि,
कालिका-सी किलकि कलेऊ देति काल को॥ ६ ॥
वेद राखे विदित पुरान राखे सार जुत,
राम नाम राखो अति रसना सुघर मैं;
हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की,
काँधे में जनेउ राखो माला राखी गर मैं।
मीड़ि राखे मुगल मरोड़ि राखे बादसाह,
वैरी पीसि राखे बरदान राखो कर मैं;
हिंदुन की हद्द राखी तेग बल सिवराज;
देव राखे देवल स्वधर्म राखो घर मैं॥ ७ ॥
काल करत कलिकाल मैं नहिं तुरकन को काल;
काल करत तुरकान को सिव सरजा करवाल॥ ८ ॥
सिव सरजा के कर लसति सो न होय किरवान;
भुज भुजगेस भुजंगिनी भखति पौन अरि प्रान॥ ९ ॥
आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तव नाँव;
वैरि नारि दृग जलन ते बूड़ि जात अरि गाँव॥१०॥

अहमदनगर के थान किरवान लैकै,
नवसेरीखान ते खुमान भिरयो बल ते;
प्यादेन सों प्यादे पखरैतन सों पखरैत,
बखतर वारे बखतर वारे हलते।
भूषन भनत एते मान घमसान भयो,
जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते;
सम-बेष ताके तहाँ सरजासिवा के बाँके,
बीर जाने हाँके देत मीर जाने चलते ॥११॥
सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग,
ताहि खरो कियो जाय जारन के नियरे;
जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धरि उर,
कीन्हीं न सलाम न बचन बोले सियरे।
भूषन भनत महाबीर बलकन लाग्यो,
सारी पातसाही के उड़ाय गए जियरे;
तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भए,
स्याह मुख नौरँग सिपाह मुख पियरे ॥१२॥

बीर बड़े बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को दल भारो;
भूषन आय तहाँ सिवराज लियो हरि औरँगजेब को गारो।
दीन्हो कुजवाब दिलीपति को अरु कीन्हों वजीरन को मुँह कारो;
नायो न माथहि दक्खिन नाथ न साथ मैं सैन न हाथ हथ्यारो॥१३॥

(४२७) गदाधर भट्ट का शुद्ध नंबर (१४२ अ) है। वहीं देखिए।

नाम—(४२८) कुलपति मिश्र आगराबासी।
जन्म-काल—संवत् १६७७ वि० (अनुमान से)।
कविताकाल—१७२७।
ग्रंथ—(१) रसरहस्य, (२) दुर्गाभक्तिचंद्रिका, (३)

द्रोणपर्व, (४) गुणरसरहस्य, (५) संग्रामसार, (६) युक्तितरंगिनी, (७) नखशिख।

कुलपति मिश्र माथुर ब्राह्मण अर्थात् चौबे थे। चतुर्वेदी ब्राह्मणों में मिश्र, शुक्ल आदि सभी आस्पद होते हैं, सो उनमें से ये महाशय मिश्र थे। इनके पिता का नाम परशुराम मिश्र था, और ये महाशय प्रसिद्ध विहारी सतसईकार के भानजे थे, ऐसा सुना गया है। ये आगरे के रहनेवाले थे और जयपुर के महाराजा जयसिंह के पुत्र महाराजा रामसिंह के यहाँ रहते थे। रामसिंहजी सन् १६६७ ई० में सिंहासनारूढ़ हुए। इन्हीं महाराज के पिता जयसिंह ने शिवाजी को विश्वास दिलाकर दिल्ली भेजा था, परंतु औरंगज़ेब ने विश्वास-घात करके उन्हें बंदी कर लिया। ऐसा होने पर रामसिंह ने अपने पिता का वचन स्थिर रखने के विचार से प्रयत्न करके छिपे-छिपे शिवाजी को दिल्ली से भाग जाने दिया।

कुलपति मिश्र का केवल एक ग्रंथ 'रसरहस्य' (खोज १९०२) देखने में आया है। यह बृहस्पतिवार, कार्त्तिक-बदी एकादशी संवत् १७२७ वि० में समाप्त हुआ था। इसको कुलपति मिश्र ने संस्कृत के बहुत-से रीति ग्रंथ पढ़कर बनाया, और इसकी कविता भी प्रौढ़ है, अतः जान पड़ता है कि इन्होंने इसे पचास वर्ष की अवस्था में बनाया होगा। सो अनुमान से इनके जन्म का संवत् १६७७ वि० समझ पड़ताहै। इनके मरण-काल का कुछ भी पता नहीं चला। ये महाराज भूषण त्रिपाठी के समकालिक थे। इनके विषय में निश्चित बातें जितनी लिखी गई हैं, वे सब 'रसरहस्य' में इन्होंने स्वयं लिखी हैं। तृ० त्रै० रि० में इनका दुर्गाभक्तिचंद्रिका-नामक ग्रंथ मिला है।

कुलपति मिश्र संस्कृत के अच्छे पंडित थे। आपने अपने ग्रंथ में काव्यप्रकाश और साहित्यदर्पण के मतों पर विचार किया है। काव्य-रीति पर चिंतामणि के पीछे सांगोपांग ग्रंथ पहलेपहल इन्हीं ने

बनाया। इनकी कविता में पूर्ण पांडित्य की झलक देख पड़ती है और उसके गौरव को देखकर इनकी साहित्य-प्रौढ़ता स्वीकार करनी पड़ती है। इनका ग्रंथ अन्य कवियों के ग्रंथों की अपेक्षा कुछ कठिन है। कुल बातों पर विचार करने से जान पड़ता है कि इनको केवल कवि की दृष्टि से न देखकर आचार्य की भी दृष्टि से देखना चाहिए।

कुलपति ने अपने ग्रंथ में मम्मट के मत का सारांश लिखा है, परंतु जहाँ इनका मम्मट से मतविरोध होता था, वहाँ ये महाराज उनका खंडन भी कर देते थे। इन्होंने कविता के लक्षण में ही मम्मट को न मानकर अपना स्वतंत्र लक्षण लिखा है, जो कई औरों से शुद्धतर प्रतीत होता है। अन्य आचार्यों के लक्षण प्रायः सभी अशुद्ध हैं। विदित होगा कि भाषा-कवियों में केवल कुलपति ने पहले-पहल काव्य का कुछ यथार्थ लक्षण लिखा। वह यह है—

जग ते अद्भुत सुख सदन शब्दरु अर्थ कवित्त;
यह लक्षण मैंने कियो समुझि ग्रंथ बहु चित्त।

इसका अर्थ यह करना चाहिए कि जिस वाक्य के अर्थ या शब्द या दोनों के सुनने से अलौकिक आनंद मिले, वह काव्य है।

काव्य-संबंधी छानबीन इन्होंने बहुत ही अच्छी की है। काव्य का प्रयोजन आपने यह कहा है—

जस संपति आनंद अति दुरितन डारै खोय;
होत कवित ते चतुरई जगत राम बस होय।

काव्य का कारण यह है—

शब्द अर्थ जिनते बनै नीकी भाँति कवित्त;
सुधि धावन समरत्थ तिन कारण कवि को चित्त।

काव्यांग ये हैं—

व्यंग्य जीव ताको कहत शब्द अर्थ हैं देह;
गुन गुन, भूषन भूषनै, दूषन दूषन येह।

काव्य तीन प्रकार का होता है, अर्थात् उत्तम, मध्यम और अधम। कुलपति के अनुसार उत्तम काव्य में रस और व्यंग्य की प्रधानता होती है, मध्यम में व्यंग्य और अर्थ की समता रहती है और अधम में व्यंग्य का अभाव एवं चित्र का प्राबल्य देख पड़ता है। रसरहस्य के द्वितीय अध्याय में शब्दार्थ-निर्णय है, और तृतीय में ध्वनि, रस और रसाभास आदि के कथन हैं। चौथे अध्याय में व्यंग्य और पाँचवें में दोष कहे गए हैं। दोषों का वर्णन बड़ा ही उत्तम है। छठे अध्याय में गुणों, सातवें में शब्दालंकारों और आठवें में अर्थालंकारों का वर्णन होकर ग्रंथ समाप्त हुआ है। कुलपति के मत में उपमा अलंकारों का प्राण है सो विदित होता है कि कुलपति ने केवल रसों ही का वर्णन नहीं किया है, वरन् कविता के कई अंगों का समावेश रसरहस्य में हुआ है। अतः इस ग्रंथ का नाम काव्य-रहस्य होता तो अधिक उपयुक्त होता।

अलंकारों के उदाहरणों में कुलपति ने प्रधानतः अपने महाराज रामसिंह की प्रशंसा के छंद कहे हैं, जिनमें से बहुत-से श्रेष्ठ हैं, परंतु यशवर्णन में इन्होंने वास्तविक घटनाओं का सहारा कम लिया है और कोरी प्रशंसा अधिक की है। इनकी प्रशंसा का मुख्यांश ऐसा है कि नाम बदलकर वही छंद किसी महाराज की प्रशंसा में कहा जा सकता है। आमेर गढ़ के शीशमहल का इन्होंने भी वर्णन किया है।

कुलपतिजी कहीं-कहीं प्राकृत-मिश्रित भाषा भी लिखते हैं और एक छंद (पृष्ठ ८७ नंबर ९२) में इन्होंने खड़ी बोली की भाँति उर्दू मिश्रित भाषा भी लिखी है।

हूँ मैं मुशताक़ तेरी सूरत का नूर देखि,
दिल भरि पूरि रहै कहने जवाब से ;
मेहर का तालिब फ़क़ीर है मेहरबान,
चातक ज्यों जीवता है स्वाति वारे आब से।

तू तो है अयानी यह ख़ूबी का ख़ज़ाना तिसै,
खोल क्यों न दीजै सेर कीजिए सवाब से ;
देर की न ताब जान होती है कबाब बोल,
हयातीकाश्राब बोलो मुख महताब से।

इनकी प्राकृत-मिश्रित भाषा का उदाहरण नीचे लिखा जाता है।

दुज्जन मद महन समथ्थ जिमि पथ्थ दुहुँनि कर ;
चढ़त समर डरि अमर कंप थरहर लग्गय धर।
अमित दान दै जस बितान मंडिय महि मंडल ;
चंडभान नहिं सम प्रभान खंडिय आखंडल।
राजाधिराज जयसिंह सुव जिप्ति कियड सब्ब जगत बस ;
अभिराम काम सम लसत महि रामसिंह कूरम कलस।

इस कवि की भाषा विशेषतया व्रजभाषा है, जो अच्छी है। इनकी व्रजभाषा के उदाहरणार्थ हम दो छंद नीचे लिखते हैं। इन्हीं छंदों को कुलपतिजी के उत्तम छंदों के भी उदाहरण समझना चाहिए।

देह धरी पर काजहि को जग माँझ है तोसी तुही सब लायक ;
दौरि थकी अँग स्वेद भयो समुझी सखि ह्वाँ न मिले सुखदायक।
मोहूँ सों प्यार जनायो भली बिधि जानी जु जानी हितून की नायक ;
साँच कि मूरति सील कि सूरति मंद किए जिन काम के सायक॥१॥
ऐसिय कुंज बने छबि पुंज रहैं अलि गुंजत यों सुख लीजै ;
नैन बिसाल हिये बनमाल, बिलोकत रूप सुधा भरि पीजै।
जामिन ज़ाम की कौन कहै जुग जात न जानिए ज्यों छिन छीजै ;
आनँद यों उमग्योई रहै पिय मोहन को मुख देखिबो कीजै॥२॥

रसरहस्य की एक शुद्ध हस्त-लिखित प्रति हमारे पास है, परंतु हमने पंडित बलदेवप्रसादजी मिश्र द्वारा इंडियन प्रेस में मुद्रित रस-रहस्य का हवाला दिया है। खोज में इनके द्रोणपर्व (द्वि०त्रै०रि०)[खोज १९००] (१७३७), गुणरसरहस्य(१७२४)और संग्रामसार (१७३३)-

नामक तीन ग्रंथों का नाम और लिखा है। हाल में [प्र० त्रै० रि०] युक्तितरंगिनी और नख-शिख-नामक इनके दो ग्रंथ और मिले हैं। युक्तितरंगिनी संवत् १७४३ में बनी। कुलपति की गणना दासवाली श्रेणी में है। इनकी रचना में परम प्रौढ़ काव्य है।

(४२६) भगवान हित ने संवत् १७२८ में ८८ भारी पृष्ठों का 'अमृतधारा'-नामक दोहा चौपाइयों में एक विशद ग्रंथ रचा, जो छत्रपूर में है। इसमें वैराग्य, योग, भक्ति आदि के वर्णन हैं। इन्होंने अपना स्थान चेत्रराज लिखा है। कहते हैं कि ये चेत्रवासा में रहते थे। आप अर्जुनदास के शिष्य थे। आपके और भी भर्तृहरिशत-वानी तथा रामायण ग्रंथ मिले हैं। इनकी गणना मधुसूदनदासीय श्रेणी में है।

उदाहरण—

लिंग देह मिलि करम कमावै ; तिन करमन की देह सुपावै।
पुन्य करम सुख रूप रहावै ; पाप नरक मिश्रित नर गावै।
पंचभूत हैं कारन रूपा ; तिनते कारज बिबिधि सरूपा।
दस अरु सात लिंग अभासैं ; पुनि अस्थूल पचीस प्रकासैं।

नाम—(४३०) कविराज सुखदेव मिश्र।

जन्म-भूमि—कंपिला।

जन्मकाल—अनुमान से १६६० के लगभग।

कविताकाल—१७२८।

ग्रंथ—(१) वृत्तविचार, (२) छंदविचार, (३) फ़ाज़िल-अलीप्रकाश, (४) रसार्णव, (५) शृंगारलता, (६) अध्यात्मप्रकाश, (७) दशरथराय, (८) नखशिख-(९) पिंगल।

ये महाशय भाषा-साहित्य के आचार्यों में गिने जाते हैं। इनके जन्म अथवा मरण के संवत् नहीं ज्ञात हो सके, परंतु अपने बनाए

हुए दो ग्रंथों के संवत् स्वयं इन्होंने १७२८ और १७३३ लिखे हैं। ये ग्रंथ प्रौढ़ कविता का पूरा परिचय देते हैं, अतः हमारा अनुमान है कि इनका जन्म संवत् १६६० के लगभग हुआ होगा और संवत् १७६० तक इनका जीवित रहना अनुमान-सिद्ध है। इन्होंने वृत्त-विचार में अपने जन्म-स्थान कंपिला का विस्तार-पूर्वक बढ़िया वर्णन किया है और इसी ग्रंथ में अपने पूर्वजों का भी पूरा हाल लिखा है। जान पड़ता है कि उस समय कंपिला अच्छा नगर था। ये महाशय कान्यकुब्ज ब्राह्मण हिमकर के मिश्र थे। कंपिला ही में इनका विवाह भी हुआ था और इनके जगन्नाथ और बुलाकीराम-नामक दो पुत्र हुए। इनके वंशधर दौलतपूर में अब भी वर्तमान हैं। उन्हीं लोगों के कथनानुसार पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती की पंचम संख्या के ३२७ पृष्ठ से ३३७ पर्यंत सुखदेव मिश्र का एक अच्छा जीवन-चरित्र लिखा है।

पहले इन्होंने कंपिला में विद्याध्ययन किया और फिर काशी में जाकर एक संन्यासी से तंत्र एवं साहित्य भले प्रकार पढ़े। मिश्रजी एक साधु पुरुष और महान् पंडित थे। काशी से इन महाशय ने असोथर ग्राम ज़िला फ़तेहपूर के राजा भगवंतराय ख़ीची के यहाँ जाकर बड़ा मान पाया। फ़तेहपुर के गज़ेटियर में इस भगवंतराय का हाल लिखा है। कुछ दिनों में वहाँ से असंतुष्ट होकर ये बकसर-नामक ग्राम को चले गए, जो दौलतपूर से दो मील पर है। वहाँ डौंड़ियाखेरे के राव मर्दनसिंह की इन पर विशेष श्रद्धा हुई। भगवंत-राय की भाँति ये भी सुखदेव के शिष्य हो गए। सुखदेवजी बहुत दिनों तक डौंड़ियाखेरे में रहते रहे। इसके पीछे कुछ दिन तक ये महाशय औरंगज़ेब के मंत्री फ़ाज़िलअली के यहाँ भी रहे। अर्जुन-सिंह के पुत्र राजसिंह गौर के भी यहाँ ये रहे और अमेठी के राजा हिम्मतसिंह बंधलगोती ने भी इनका आदर किया। राजा हिम्मत-

सिंह के छोटे भाई बाबू छत्रसिंह की भी इन्होंने बड़ी प्रशंसा की है। अंत में ये महाशय मुरारिमऊ रियासत के तत्कालिक राजा देवीसिंह के यहाँ गए और उनके हठ करने पर कंपिला से अपना कुटुंब मँगाकर दौलतपूर में रहने लगे। यहाँ राजा साहब ने इनके लिये मकान बनवा दिया और यह ग्राम भी इन्हीं के पुत्रों को दे दिया। पुत्रों को ग्राम देने का यह कारण था कि मिश्रजी ने स्वयं ग्राम लेना पसंद नहीं किया।

इस ग्राम की ज़मींदारी इनके वंशधरों के पास बहुत दिन रही, परंतु अब वह कालगति से उनके हाथ से निकल गई है।

सुखदेवजी को अलहयारख़ाँ एवं राजसिंह ने कविराज की उपाधि दी। फ़ाज़िलअली-प्रकाश में लिखा है कि यह उपाधि अलहयार-ख़ाँ की दी हुई है और वृत्तविचार में इसका राजसिंह द्वारा मिलना लिखा है। निष्कर्ष यह निकलता है कि इन दोनों महाशयों ने पृथक्-पृथक् समयों में इन्हें यह उपाधि दी।

ठाकुर शिवसिंहजी ने इनके बनाए हुए निम्न ग्रंथों के नाम लिखे हैं—

वृत्तविचार, छंदविचार, फ़ाज़िलअली-प्रकाश, अध्यात्म-प्रकाश और दशरथराय। [खोज १६०४]

पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी ने इनके निम्न ग्रंथ लिखे हैं—

रसार्णव, वृत्तविचार, शृंगारलता और फ़ाज़िलअली-प्रकाश। द्विवेदीजी ने शेष ग्रंथों के सुखदेव-कृत होने में संदेह प्रकट किया है। उन्होंने लिखा है कि रसार्णव, वृत्तविचार और फ़ाज़िलअली-प्रकाश उनके देखने में आए हैं, शेष नहीं। अतः दोनों नामावलियाँ मिलाने से मिश्रजी के सात निम्न ग्रंथ होते हैं—[प्र० त्रै० रि०] वृत्तविचार, छंदविचार, फ़ाज़िलअली-प्रकाश (१७३३), रसार्णव, शृंगारलता, अध्यात्म-प्रकाश और दशरथराय। हम इन सबको सुख-देव-कृत मानते हैं। इनके नखशिख-नामक एक और ग्रंथ [द्वि० त्रै० रि०]

का पता चला है। फ़ाज़िलअली-प्रकाश हस्त-लिखित हमारे पुस्त-कालय में है, वृत्तविचार और छंदविचार पंडित युगुलकिशोर ने हमारे पास भेज दिए हैं, और रसार्णव एवं अध्यात्म-प्रकाश [खोज ११०५] का देखना वे बताते हैं। शृंगारलता हमारे किसी मित्र ने नहीं देखी है, परंतु द्विवेदीजी ने मिश्रजी के वंशवालों से उसका बनाया जाना प्रामाणिक रीति से सुना है। अब केवल नखशिख और दशरथराय रह गए, सो उनके विषय में खोज एवं शिवसिंहसरोज के प्रामाणिक न मानने का कोई कारण नहीं है। अध्यात्म-प्रकाश हमने छत्रपूर में देखा है। यह संवत् १७५५ में बना। इसमें व्याससूत्र वेदांत की भाषा २२४ छंदों में है। वृत्तविचार संवत् १७२८ में राजसिंह गौड़ के नाम पर बना। यथा—

राजसिंह अरजुन तनै गौर गरीब नेवाज ;
दियो साज बहुतै कछू कियो जिन्है कविराज।

(यहाँ 'जिन्हैं' से स्वयं कवि का प्रयोजन है, जो प्रसंग से निकलता है।)

संवत सत्रह सै बरस अट्ठाइस अति चारु ;
जेठ सुकुल तिथि पंचिमी उपज्यो बृत्तबिचारु।

इस ग्रंथ में कंपिला का बड़ा उत्तम वर्णन है। इसमें प्रायः सब छंदों के लक्षण एवं उदाहरण दिए हुए हैं। ऐसे उदाहरणों में यह प्रधानता रक्खी गई है कि उन सबमें अधिकांश विराग अथवा देवताओं के विषय पर कविता की गई है। जहाँ कहीं एकाध छंद गोपिकाओं आदि के भी हैं, वे ऐसे भक्ति से डूबे हुए हैं कि उनके भी पढ़ने से मिश्रजी का ऋषिवत् आचरण प्रकट होता है। पिंगल-विषयक प्रायः सभी बातें इस ग्रंथ में पाई जाती हैं। इसमें लिखा है कि मिश्रजी ने संस्कृत तथा प्राकृत में भी कविता की है, परंतु उसका अब पता नहीं लगता। इस ग्रंथ

में मँझोली साँची के ८४ पृष्ठ हैं। इसके एवं छंदविचार के कारण मिश्रजी पिंगल के सर्वोत्कृष्ट आचार्य समझे जाते हैं। किसी कवि ने ऐसे अच्छे बड़े पिंगल नहीं बनाए हैं।

उदाहरण—

विघन बिनासन हैं, आछे आखु आसन हैं,
सेए पाकसासन हैं सुमति करन को;
आपदा के हरन हैं, संपदा के करन हैं,
सदा के धरन हैं सरन असरन को।
कंज कुल को है? नव पल्लव न जोहै सरि,
सुखदेव सोहै धरे अरुन बरन को;
बुद्धि के बिधायक सकल सुखदायक,
सुसेवो कवि नायक बिनायक चरन को ॥ १ ॥

छंदविचार में बड़ी साँची के ५० पृष्ठ हैं, जिनमें हमारी प्रति में प्रथम पृष्ठ के ११ छंद खंडित हैं। इस ग्रंथ में अमेठी के राजा हिम्मतसिंह के वंश का विस्तार-पूर्वक वर्णन है। यह इन्हीं महाराज की आज्ञानुसार बना है। यथा—

नृप हिम्मति के हुकुम ते मिश्र सुकवि सुखदेव;
न्यारे न्यारे कहत हैं पिंगल के सब भेव ॥ २ ॥

इसमें भी पिंगल का विषय सांगोपांग वर्णित है। इसमें उदाहरणों में बहुत-से छंद हिम्मतसिंह की प्रशंसा के पाए जाते हैं, और कुछ में शृंगारादि का वर्णन है। यह भी परम मनोहर ग्रंथ है और इसकी रचना देखने से इसके मिश्रजी-कृत होने में कोई संदेह नहीं रहता। हमारे ग्रंथ में कोई संवत् नहीं दिया है।

उदाहरण—

करत मगन भूमि संपति अनेक अरु,
यगन सलिल सुरसरि कैसो जस देत;

रगन अगिनि है करत जारि छार, पुनि,
सगन है जम जोरावरी जीव हरिलेत।
तगन अकास खाली करै देस औ अवास,
जगन दिनेस सब संकटन को निकेत;
भगन सुधानिधि सुधा सो बरखत, अरु,
नगन फनिंद सब संपति दै करै हेत॥ ३॥

फ़ाज़िलअली-प्रकाश में बड़ी साँची के ७० पृष्ठ हैं। इसमें नृपवंश, कविवंश, नृपयश, गणागण और रसभेद के वर्णन हैं। यह संवत् १७३३ में बना था। मिश्रजी ने उपमाएँ बहुत मार्के की कहीं और अनुप्रास, जमकादि का भी कुछ-कुछ प्रयोग किया। यह भी इनका उत्कृष्ट ग्रंथ है। इसमें भी कंपिला का वर्णन है।

ननँद निनारी, सासु माइके सिधारी अहै,
रैनि अँधियारी भरी सूझत न करु है;
पीतम को गौन कबिराज न सोहात भौन,
दारुन बहत पौन लाग्यो मेघझरु है।
संग ना सहेली, बैस नवल अकेली तन,
परी तलबेली महा लाग्यो मैन सरु है;
भई अधरात, मेरो जियरा डरात,
जागु जागु रे बटोही इहाँ चोरन को डरु है॥ ४॥

आभा की अवधि, गुन गन जाके निरवधि,
कबिराज सील निधि भाग भरो भालु है;
हिम्मति को हातिमु, महातिमु को महामदु,
रिपु तम ताको रबि जाको करवालु है।
कीरति धरे अतुल, उजियारो दुहु कुल,
फाजिलअली प्रबल परम कृपालु है;

साहिबी को सुर बरु, धरती को धराधरु,
दीनन को देवतरु, क्रूरन को कालु है ॥ ५ ॥

[खोज १९०३] रसार्णव आकार में मतिराम-कृत रसराज के बराबर है। यह डौंड़ियाखेरे के राव मरदनसिंह की आज्ञानुसार बना था। इसमें नवरस का बड़ा विलक्षण वर्णन है और द्विवेदीजी के मतानुसार यह मिश्रजी के सब ग्रंथों में श्रेष्ठ है। ग्रंथ बड़ा ही सराहनीय है।

कानन टूटैं बिघन के जानन ते यह ग्यान;
कज आनन की जाति मिटि गजआनन के ध्यान ॥ ६ ॥
मरदन राउ निदेस को सादर सीस चढ़ाय;
मिश्र सुकवि सुखदेव ने दीन्हों ग्रंथ बनाय ॥ ७ ॥

जोहैं जहाँ मगु नंद कुमार,
तहाँ चली चंदमुखी सुकुमार है;
मोतिन ही को कियो गहनो सब,
फूलि रही जनु कुंद की डार है।
भीतर ही जु लखी सुलखी अब,
बाहिर जाहिर होति न दार है;
जोन्ह-सी जोन्है गई मिलि यों,
मिलि जाति ज्यों दूध मैं दूध की धार है ॥ ८ ॥

यों कछु कीन्हीं अचानक चोट,
जु ओट सखी न सकी कै दुकूल है;
देह कँपै, मुँह पीरी परी,
सो कह्यो नहिं जो ह्वै गयो हियसूल है।
माँझ उरोज मैं आनि लग्यो,
अँगिरात जहीं उचक्यो भुज मूल है;
कौन है ख्याल ? खेलार अनोखे !
निसंक ह्वै ऐसे चलैयत फूल है ॥ ९ ॥

शृंगारलता इन्होंने मुरारिमऊ के राजा देवीसिंह के लिये बनाई थी। इस पुस्तक के विषय आदि का हाल हम कुछ नहीं जानते।

अध्यात्म-प्रकाश में विविध छंदों द्वारा वेदांत का विषय वर्णन किया गया है। इसके कुछ छंदों का अंतिम पद यही है कि—

"लामधि एक चिदानँद रूप;
सु आतम ब्रह्म प्रकाश करै है।"

दशरथराय के विषय में हम कुछ नहीं जानते। खोज १९०३ में इनके एक और ग्रंथ पिंगल का पता चलता है।

मिश्रजी ने ब्रजभाषा में कविता की और जमकादि का भी थोड़-थोड़ा प्रयोग किया। इनकी भाषा प्रशंसनीय है। हम इनको दास कवि की श्रेणी में रखते हैं। बहुत लोग इन्हें बड़े महात्मा और पहुँचे हुए मनुष्य मानते हैं। हमारा मत इसके प्रतिकूल है। ये महाशय साधु प्रकृति अवश्य थे, परंतु इनकी साधुता और महिमा उस ऊँचे दरजे की कदापि नहीं होगी जैसा कि सरस्वती से विदित होता है। यदि मरदनसिंह, हिम्मतसिंह आदि इनके दासों के समान थे, तो इन्होंने यह क्यों कहा है कि मैं उनका हुकुम शिरोधार्य मानकर ग्रंथ बनाता हूँ? फिर इन्होंने औरंगज़ेब-से परधर्मद्वेषी की स्तुति की है। जब महात्मा कुंभनदास को अकबर ने बुलाकर बड़ा सम्मान किया, तब भी उन्होंने अपनी असंतुष्टि प्रकट करके कहा कि—

संतन का सिकरी सन काम।
आवत जात पनहियाँ टूटीं बिसरि गयो हरि नाम;
जिनको मुख देखे दुख उपजत तिनको करिबे परी सलाम।

नाम—($\frac{४३०}{१}$) श्रीधर महाराष्ट्र कवि।

रचनाकाल—१७२६।

विवरण—शिवलीलामृत-नामक प्रसिद्ध मराठी ग्रंथ के रचयिता।

इनकी बनाई हिंदी फुटकर कविता भी मिलती है। इनके गुरु मानपुरीजी भी हिंदी भाषा के कवि थे।

(४३१) कालिदास त्रिवेदी (उपनाम महाकवि)

ठाकुर शिवसिंह सेंगर ने शिवसिंहसरोज में कालिदास का जन्म-संवत् १७९० माना है। इनके पुत्र उदैनाथ उपनाम कवींद्र और पौत्र दूलह भी अच्छे कवि हो गए हैं। ये महाशय त्रिवेदी (कान्य-कुब्ज) अंतरवेद के रहनेवाले थे। इनका ग्रंथ वारवधूविनोद हस्त-लिखित हमारे पास वर्तमान है। हमारी प्रति में सन्-संवत् का कोई ब्योरा नहीं दिया है, परंतु ठाकुर शिवसिंहजी ने उसी ग्रंथ का एक जयकरी छंद लिखा है जिसमें संवत् का वर्णन है।

संवत सत्रह सै उनचास;
कालिदास किय ग्रंथ विलास।

जान पड़ता है कि यह छंद हमारी प्रति में भूल से छूट रहा है। इन्होंने संवत् १७४९ में औरंगज़ेब के साथ रहकर गोलकुंडा की लड़ाई का वर्णन किया। उस समय शाह के साथ होने से जान पड़ता है कि इनकी कवित्वशक्ति बढ़ चुकी थी, सो उस समय इनकी ३९ वर्ष की अवस्था होनी अनुमान-सिद्ध है। अधिक अवस्था भी न थी, क्योंकि इनके सब ग्रंथ इस समय के पीछे बने। इससे प्रकट है कि कालिदास का जन्म संवत् १७१० वि० के लगभग हुआ होगा। ये महाशय औरंगज़ेब के दल में किसी राजा के साथ सं० १७४९ की बीजापुर तथा गोलकुंडावाली लड़ाई में गए थे। इन दोनों रियासतों को औरंगज़ेब ने इसी समय में पराजित करके ज़ब्त कर लिया। तब इन्होंने यह छंद बनाया—

गढ़न गढ़ी से गढ़ि महल मढ़ी से मढ़ि,
बीजापुर ओप्यो दलमलि सुघराई में;

कालिदास कोप्यो बीर औलिया अलमगीर,
तीर तरवारि गही पुहुमी पराई में।
बूँद ते निकसि महिमंडल घमंड मची,
लोहू की लहरि हिमगिरि की तराई में;
गाड़ि कै सुझंडा आड़ कीन्हीं पातसाह ताते,
डकरी चमुंडा गोलकुंडा की लराई में॥ १॥

इसके पीछे कालिदासजी राजा जोगाजीत सिंह जंबू-नरेश के यहाँ गए, जिनके नाम पर संवत् १७४४ में वारवधूविनोद बना। इसमें प्रथम सूक्ष्मतया त्रिभंगी इत्यादि छंदों में नायिकाभेद कहा गया है और फिर नखशिख के पश्चात् नायिकाभेद से मिले हुए विषय पर कविता की गई है। इसमें पाँच अध्याय हैं, जिनमें कुल मिलाकर दो सौ छंद हैं। कविता के गुणों में यह ग्रंथ साधारण है।

इनका जँजीराबंद-नामक बत्तीस घनाक्षरियों का एक मुद्रित ग्रंथ भी हमारे पास मौजूद है। इनका काव्य आदरणीय है। इनके बनाए हुए क़रीब ७० स्फुट छंद हमारे पास हैं और राधामाधव-बुधमिलन-विनोद-नामक एक और ग्रंथ का नाम खोज [१६०१] में मिलता है। इनका संग्रह किया हुआ हज़ारा-नामक एक और भी ग्रंथ है। यह ठाकुर शिवसिंहजी के पुस्तकालय में वर्तमान है, परंतु जहाँ तक हमें ज्ञात है अभी प्रकाशित नहीं हुआ है और न हमने इसे देखा है। शिवसिंहजी ने लिखा है कि इसमें सं० १४८१ से लेकर सं० १७७६ तक के २१२ कवियों के एक हज़ार छंद संगृहीत हैं। इनकी कविता सरस और भाषा सानुप्रास एवं सराहनीय है। इन्होंने अपना उपनाम महाकवि भी रक्खा है। ये महाशय पद्माकर की श्रेणी में रक्खे जा सकते हैं।

महाराज कालिदास ने हज़ारा रचकर हिंदी-काव्य का इतिहास-

संबंधी बड़ा उपकार किया है। पुराने संग्रहों से दो बहुत बड़े काम निकलते हैं, एक तो यह कि जिन कवियों के नाम उनमें आ जाते हैं उनके समय के विषय में इतना निश्चय अवश्य हो जाता है कि वे संग्रह के समय से पीछे के नहीं हैं। फिर जिन कवियों के ग्रंथ नहीं होते, केवल स्फुट छंद होते हैं, अथवा जिनके ग्रंथ इतने रोचक नहीं होते कि लोग उनकी बड़ी चाह करें, उनके नाम कुछ दिनों में बिलकुल भूल जाते हैं। ऐसे कवियों के नाम स्थिर रखने में पुराने संग्रह बड़े उपकारी होते हैं।

फिर सैकड़ों कवियों के नाम एकत्र मिल जाने से भविष्य संग्रह-कारों अथवा इतिहास-लेखकों का काम बहुत सुगम हो जाता है। यदि कालिदासजी के हज़ारा में २१२ कवियों के नाम एकत्र संगृहीत न मिल जाते, तो शायद शिवसिंहजी को उनका पता लगा लेने में बड़ी कठिनाई होती और फिर भी उन सबके नाम एकत्र न हो सकते। हमें दलपतिराय और वंशीधर-रचित संवत् १७९२ का एक संग्रह मिल गया, जो समय में कालिदास के हज़ारा से १६ वर्ष पीछे है। इसमें केवल ४४ कवियों के नाम आए हैं, परंतु तो भी कवियों के समय-निरूपण में हमें इससे बड़ी मदद मिली। शिवसिंह-जी ने यह ग्रंथ नहीं देखा था, सो इसी छोटी-सी सूची में से छः कवियों के नाम सरोज में नहीं हैं। इस विचार से हमें हज़ारा के कारण कालिदास को भाषा-काव्य का प्रथम इतिहाससहायक सम-झना चाहिए। यदि शिवसिंहजी इतना विशाल परिश्रम न कर गए होते, तो आज हमें भाषा के इतिहास लिखने का साहस ही शायद न होता। कालिदास की कविता का केवल एक और उदाहरण हम नीचे लिखकर इस प्रबंध को समाप्त करते हैं।

हाथ हँसि दीन्ह्यो भीति अंतर परसि प्यारी,
देखत ही छकी मति कान्हर प्रवीन की ;

निकस्यो झरोखा माँझ बिकस्यो कमल-सम,
ललित अँगूठी तामैं चमक चुनीन की।
कालिदास तैसी लाल मेहँदी के बुंदन की,
चारु नख चंदन की लाल अँगुरीन की;
कैसी छबि छाजत है छाप औ छलान की,
सुकंकन चुरीन की जड़ाऊ पहुँचीन की॥ २॥

(४३२) रामजी

शिवसिंहसरोज में इनका जन्म-संवत् १७०३ माना गया है और यह कहा गया है कि रामजी के छंद कालिदासहज़ारा में मिलते हैं। इनका कोई स्वतंत्र ग्रंथ सरोज में नहीं लिखा है। खोज में इनका बरवैनायिकाभेद ग्रंथ मिला है और यह भी लिखा है कि ये भट्ट फ़रु ख़ाबादी हैं और नवाब सियामख़ाँ के यहाँ थे। उसमें इनकी पैदायश का संवत् १८०३ तथा कविता का १८३० लिखा है। शायद ये दो व्यक्ति हों, क्योंकि खोज में राम भट्ट और सरोज में रामजी है। जो हो। हमारे पुस्तकालय में 'शृंगारसौरभ'-नामक इनका एक हस्त-लिखित ग्रंथ भी वर्तमान है, परंतु दुर्भाग्यवश इसमें कोई सन्-संवत् का ब्योरा नहीं है। इसमें क़रीब डेढ़ सौ के छंद हैं। यह नायिका-भेद का ग्रंथ है। रामजी की कविता देखने से विदित होता है कि ये एक अच्छे कवि हैं। इनकी कविता ललित और भाषा मधुर है। इनको हम तोष कवि का समकक्ष समझते हैं। उदाहरणार्थ इनके दो छंद नीचे लिखे जाते हैं—

चंचलताई तजी न अबै गति पायन हू न सिखाई मरालन;
छीनता नेकु लही न अबै कटि पीनता त्यों ही उरोज रसालन।
रामजी देखत हौ तुमही न लगी अबै सौतिन के उर सालन;
आनन ओप सुधाधर की न भट्ट केहि हेत लट्टू भए लालन॥ १॥

उमड़ि घुमड़ि घन छोड़त अखंड धार,
चंचला उठत तामैं तरजि-तरजि कै ;
बरही पपीहा भेक पिक खग टेरत हैं,
धुनि सुनि प्रान उठैं लरजि-लरजि कै ।
कहै कवि राम लखि चमक खदोतन की,
पीतम को रही मैं तो बरजि-बरजि कै ;
लागे तन तावन विना री मनभावन के,
सावन दुवन आए गरजि-गरजि कै ॥ २ ॥

नाम—(४३३) ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी, पीरनगर, ज़िला सीतापुर ।

ग्रंथ—रामविलास रामायण ।

कविताकाल—१७३० ।

विवरण—इन्होंने वाल्मीकीय रामायण का उल्था छंदोबद्ध किया है । इनकी रचना मनोहारिणी है । इनकी गणना तोष कवि की श्रेणी में है ।

उदाहरण—

लहत सकल रिधि सिधि सुख संपदाहि,
विद्या बुद्धि सुमिरि गनेस गौरि-नंदनै ;
सिंदुर बरन सुठि सोहत तिलक लाल,
चंद्रबालभाल नैन देत हैं अनंदनै ।
एकदंत भुजग बिभूषण परशु पानि,
चारि भुज अभय करत दास बृंदनै ;
सुंदर बिसाल तन ईसुरी सँभारु मन,
दया घन हरन बिखम दुख दंदनै ।

(४३४) महाराजा छत्रसाल

पन्ना-नरेश महाराजा छत्रसाल की वीरता एवं दानशीलता जगत्-

प्रसिद्ध है। आप बुँदेला क्षत्री चंपतिराय के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १७०६ में हुआ था। आपने एक साधारण घराने में जन्म ग्रहण करके केवल बाहुबल से दो करोड़ वार्षिक आय का विशाल राज्य उपार्जित किया। इन महाराज ने सदा औरंगज़ेब से ही युद्ध करते हुए राज बढ़ाया और बड़े-बड़े युद्धों में मुग़लों को परास्त किया।

महाशूर होते हुए आप बड़े दानी और साहित्यसेवी भी थे। आपने बड़े-बड़े कवियों का सम्मान किया और कहते हैं कि उमंग-वश एक बार भूषण कवि की पालकी का डंडा अपने कंधे पर रख लिया। बड़े-बड़े भारी कवियों ने इनका यश गान किया है।

आप स्वयं भी कविता करते थे। आपका रचनाकाल सं० १७३० से माना जा सकता है। इन महाराज का स्वर्गवास संवत् १७८८ में हुआ। आपके उत्साह से हिंदी-कविता को बड़ा लाभ पहुँचा। हाल में आपकी कविताओं का संग्रह वियोगी हरिजी ने छपवाया है।

उदाहरण—

इच्छा दै अच्छरनि सिषिय ब्रज माह बसाँइय ;
बाल बिलास दिषाइ रास रस रंग रमाइय।
अच्चर को परतच्छ धाम लीला दरसाइय ;
सषियन विरह जनाय जोग माया उड़साइय।
सुर मैं भ्रमाइ भ्रम नाल मैं लाल हेरि प्रेमनि पग्यउ ;
सषियन समेत छत्रसाल उर जुगल रूप जग-जग जग्यउ।

नाम—(४३५) नेणसीमूता बानिया (ओसवाल) जोधपुर।
ग्रंथ—मूतानेणसी की ख्यात।
कविताकाल—१७२२।
विवरण—इतिहास, श्लोक-संख्या ३५००। आश्रयदाता महाराजा जसवंतसिंह। यह राजपूताना का इतिहास डिंगल भाषा में है। इसके छापने का उद्योग हो रहा है।

(४३६) अनन्य अथवा अक्षर अनन्य ने ज्ञानबोध (१७ पृष्ठ), सिद्धांतबोध (१०१ छंद), ज्ञानयोग (८१ छंद), हरसंबाद भाषा और योगशास्त्रस्वरोदय-नामक ग्रंथ बनाए, जो हमने छत्रपूर में देखे हैं। खोज में इनका जन्म-काल संवत् १७१० लिखा है, जो अन्य जाँच से भी ठीक जँचता है। इनका कविताकाल सं० १७३५ के लगभग समझना चाहिए। ये कुँवर पृथ्वीराज के यहाँ थे। ये जाति के कायस्थ थे। इनकी कविता साधारणतया अच्छी होती थी। हम इनको साधारण श्रेणी में रखते हैं। इन्होंने विशेषतया धर्म-विषयों पर कविता की। आप दतिया-राज्यांतर्गत सेहुँड़ा ग्राम के निवासी थे और महाराजा दलपति राय दतिया-नरेश के पुत्र कुँवर पृथ्वीराज के गुरु थे। एक बार पन्ना-नरेश महाराजा छत्रसाल ने आपको बुलवा भेजा, परंतु आप ऐसे निवृत्तमार्गस्थ थे कि आपने जाना पसंद नहीं किया। इनके निम्न चार ग्रंथों का पता और चला है—(१) अनन्यप्रकाश, (२) विवेकदीपिका, (३) देवशक्तिपचीसी, (४) ब्रह्मज्ञान। [द्वि० त्रै० रि०]

कुछ ग्रंथों में इनका समय चंद के कुछ ही पीछे लिखा है, परंतु वह इनकी रचना एवं अन्य बातों से अशुद्ध जान पड़ता है। इनके अन्य ग्रंथ नीचे लिखे जाते हैं—

ग्रंथ—(१) अनन्ययोग, (२) राजयोग, (३) अनन्य की कविता, (४) दैवशक्तिपचीसी (शक्तिपचीसी, अनन्यपचीसी), (५) प्रेमदीपिका, (६) उत्तमचरित्र (श्रीदुर्गा भाषा) या सुंदरी चरित्र, (७) अनुभवतरंग, (८) ज्ञानबोध, (९) श्रीसरस-मंजावली, (१०) ब्रह्मज्ञान, (११) ज्ञानपचासा, (१२) भवानीस्तोत्र, (१३) वैराग्यतरंग, (१४) योगशास्त्र। [प्र० त्रै० रि०] [खो० ११०५]

उदाहरण—

जो अंतर सुमिरत सुरत आइ; तौ बाहेर करमन लगत नाइ।
जा मति सा गति यह कहत बेद; मन गत साधत यह ज्ञान भेद।
जो मत न सधै मन करम भोय; टोपीहि दिए नहिं मुक्त होय।

× × ×

असि ढाल लिए अति कोपि बढ़्यो; जनु कोपि प्रलै कहँ काल चढ़्यो।
इमि राज कढ़े सब नग्र कढ़े; रकसी अरु राकस पुंज बढ़े।

× × ×

पहिले तप तीरथ ब्रत्त करै करि संगति साधुन की हरसै;
पुनि भक्ति करै अवतारन की बर युक्ति सु योगिन की परसै।
पुनि आपुन तत्त्व बिचार करै परिपूरन ब्रह्म प्रभाकरसै;
क्रम सों यह रीति अनन्य भनै सरबस्व सरूप स्वयं दरसै।

नाम—(४३७) विजयहर्ष जैनी साधु विमलचंद्र का शिष्य।

ग्रंथ—सुरसुंदरी प्रबंध।

रचनाकाल—१७३६।

विवरण—सुरसुंदरी की कथा।

(४३८) घनश्याम शुक्ल

ये महाशय असनी ज़िला फ़तेहपुरवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण संवत् १७३७ के लगभग हुए। 'साहित्य-समालोचक' में इनके संबंध में लिखा है कि ये फतूहाबादी शुक्ल थे और असनी में रहते थे। कहा जाता है कि ये १८२९ तक वर्तमान थे। ये रीवाँ-नरेश के यहाँ थे और उन्हीं की प्रशंसा में इन्होंने कविता की। इनका एक छंद काशी-नरेश की प्रशंसा का भी सरोज में लिखा है। इनके एक छंद में कंपनी शब्द आया है, जिससे इनके आधुनिक कवि होने का भ्रम हो सकता है, पर ऐसा सोचना न चाहिए, क्योंकि अँगरेज़ लोग जहाँगीर के समय से ही भारत में आए थे, सो औरंगज़ेब के समय

में ऐसे शब्द के प्रयोग में कोई आश्चर्य नहीं है। इन्होंने दलेलख़ाँ का भी वर्णन किया है, जो औरंगज़ेब का सेनापति था। सरोज और खोज में एक घनश्याम का संवत् १६३५ लिखा है, पर यह दूसरा कवि जान पड़ता है, क्योंकि उस समय दलेलख़ाँ उत्पन्न भी नहीं हुआ था।

इनका कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया, पर सरोजकार ने इनके प्रायः २०० छंद देखे हैं। हमारे देखने में इनके थोड़े से ही छंद आए हैं, पर वह परम मनोहर हैं। वीर-रस का इन्होंने बड़ा लोम-हर्षण वर्णन किया है। ऐसी सबल कविता बहुत कम कविजन कर सके हैं। क्या वीर और क्या शृंगार इन्होंने हर एक कथन में अपना बल निभाया है। अनुप्रास पर भी इनकी दृष्टि विशेष रहती थी। हम इनको दास की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

प्रबल पठान तू दलेलखान बलवान,
दच्छिन ते दलहि दबायो मनो हासी ते;
बाँकुरो बहादुर बलीन बीर बरछी लै,
बापहि बचायो है बिलायत गिलासी ते।
कहै घनस्याम युद्ध कीन्हों मेघनाद जैसे,
गरुड़ गोबिंदहि छोड़ायो नागफाँसी ते;
कुमेदान कंपनी कुम्हेड़ा ककरी से काटि,
काढ़ि लायो काकहि कृपान करि कासी ते॥ १॥

पग मग धरत महीधर डिगत,
डगमगत पुहुमि चटकत फन सेस के;
उलटि पलटि खलभलत जलधि जल,
कंपत अवलि अलकेस के लँकेस के।
कहै घनस्याम कच्छ मच्छ को कहल होत,
हहल हहल होत महल सुरेस के;

गढ़न दलत मृगराजन मलत मद,
　　भरत चलत गज बाँधव नरेस के ॥ २ ॥
बैठी चढ़ि चाँदनी में चंद्रमा बिलोकन को,
　　उन्नत उरोजन ते उछरे हरा परैं ;
दमा छमा केतिक तिलोत्तमा है घनस्याम,
　　रमा रति रूप देखि धसकी धरा परैं ।
जेवर जड़ाऊ मोर जगमगै अंगन तें,
　　नेवर जड़ाऊ तेज तरनि तरा परैं ;
राधे मुख मंडल मयूखन ते महाराज,
　　छूटि कै छपाकर के ऊपर छरा परैं ॥ ३ ॥
उमड़ि घुमड़ि घन आवत अटान चोट,
　　घन घन जोति छटा छटकि-छटकि जात ;
सोर करैं चातक चकोर पिक चहुँओर,
　　मोर ग्रीव मोरि-मोरि मटकि-मटकि जात ।
सावन लौं आवन सुनो है घनस्याम जू को,
　　आँगन लौं आय पाँय पटकि-पटकि जात ;
हिये बिरहानल की तपनि अपार उर,
　　हार गजमोतिन के चटकि-चटकि जात ॥ ४ ॥
चंद अरबिंद बिंब विद्रुम फनिंद सुक,
　　कुंदन गयंद कुंद कली निदरति है ;
चंपा संपा संपुट कदलि घनस्याम कहाँ,
　　कुंकुम को अंगराग अंगना करति है ।
केहरी कपोत पिक पल्लव कलिंदी घन,
　　दरके निरखि दारयो छतिया धरति है ;
मेरे इन अंगन की नकल बनाई बिधि,
　　नकल बिलोके मोहिं न कल परति है ॥ ५ ॥

नाम—(४३८/१) भारती विश्वनाथ ।

रचनाकाल—१७३२ ।

विवरण—इन्होंने १००० पदों का मराठी में 'नाथिकपुराण'-नामक बड़ा ग्रंथ बनाया जिसका अंतिम अध्याय हिंदी में है ।

(४३९) नेवाज

इस नाम के तीन कवि हुए हैं, जिनमें से एक ने भगवंतराय खीची का यश वर्णन किया है । हमारे इस लेख के नायक नेवाज कवि छत्रसाल के समय में हुए जैसा कि भगवंत कवि ने कहा है—

भली आजुकलिह करत हौ छत्रसाल महराज ;
जहँ भगवतगीता पढ़ी तहँ कवि पढ़त नेवाज ।

यह दोहा भगवत के स्थान पर नेवाज के मुक़र्रर हो जाने पर बना था । इनका नाम दासजी ने भी लिखा है, जिससे स्पष्ट है कि ये संवत् १८०० से प्रथम के हैं ।

नेवाज कवि तेवारी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे । इनका कोई ग्रंथ सिवा शकुंतला-नाटक के हमने नहीं देखा है और इनके स्फुट छंद भी बहुत थोड़े मिलते हैं, परंतु छंद जितने मिले वे सब अनमोल हैं । आपके किसी छंद में हमने निष्प्रयोजन अथवा भर्ती के शब्द नहीं पाए, तथा सब छंद टकसाली एवं परमोत्तम समझ पड़े । इनके छंदों में न कहीं भावों की कमी है और न वाक्यशैथिल्य । इनकी भाषा औवल दरजे की है । इस कवि की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है । ये महाशय सेनापति की श्रेणी के हैं । यह कवि बड़ा ही आशिक़मिज़ाज और सच्चे भावों का वर्णन करनेवाला है । इन्होंने सुरतांत के अच्छे-अच्छे छंद कहे हैं । उदाहरणार्थ इनके केवल दो छंद यहाँ लिखे जायँगे । इनके भावों में अश्लीलता की मात्रा विशेष है, परंतु शब्द एक भी अश्लील नहीं है । इनका समय अठारहवीं शताब्दी के

प्रथमार्द्ध का है। यह भी ठाकुर की भाँति स्वाभाविक और सच्चा कवि था और बड़ा ही प्रेमी हो गुज़रा है। संयोग शृंगार में इसने क़लम तोड़ दी है। [खोज १६०३ [चतुर्थ त्रैवार्षिक रिपोर्ट में इनके विरुदावली-नामक ग्रंथ का पता चलता है।

उदाहरण—

छतियाँ छतियाँ सों लगाए दुवौ दुवौ जी मैं दुहूँ के समाने रहैं ;
गई बीति निसा पै निसा न भई नएनेह में दोऊ बिकाने रहैं।
पट खोलैं नेवाज न भोर भए लखि द्योस को दोऊ सकाने रहैं ;
उठि जैबे को दोऊ डेराने रहैं लपटाने रहैं पट ताने रहैं॥ १॥
देखि हमैं सब आपुस मैं जो कछू मन भावै सोई कहती हैं ;
ए घरहाई लोगाई सबै निसि द्योस नेवाज हमैं दहती हैं।
बातैं चबाव भरी सुनि कै रिस आवत पै चुप ह्वै रहती हैं ;
कान्ह पियारे तिहारे लिये सिगरे ब्रज को हँसिबो सहती हैं॥ २॥

नाम—(४४०) मोहन विजय जैन जती अणहलपुर पट्टण।
ग्रंथ—मानतुंग-मानवती।
कविताकाल—१७४०।
विवरण—श्लोक-संख्या १४७०। विषय वैराग्य।

नाम—(४४१) रसिक।
ग्रंथ—चंद्र कुँवर की वार्ता।
कविताकाल—१७४०।
विवरण—कथा।

(४४२) वृंद कवि

ये महाशय संवत् १७४२ के लगभग हुए। भावपंचाशिका, वृंदसतसई [१७६१] और शृंगारशिक्षा [१७४८]-नामक इनके तीन ग्रंथ खोज में लिखे हैं। खोज १६०२ से सतसई का रचनाकाल १७६१ तथा शृंगारशिक्षा का १७४८ आता है। [द्वि० त्रै० रि०] में

भावपंचाशिका का रचनाकाल १७४३ लिखा है। इनका "वृंदसतसई"-नामक सात सौ दोहों का नीति-संबंधी एक श्लाघ्य ग्रंथ हमारे पास है। इसमें ब्रजभाषा में दोहों द्वारा प्रायः नीति के श्लोकों का अनुवाद किया गया है, अथवा जनश्रुतियों या कहावतों के आधार पर दोहों की रचना की गई है। भाषा इस ग्रंथ की अच्छी है और यह ग्रंथ शिक्षाप्रद एवं देखने योग्य है। याज्ञिकत्रय ने इनके एक 'प्रताप-विलास' ग्रंथ का पता 'साहित्य-समालोचक' में दिया है। हम इस कवि को तोष की श्रेणी में रखते हैं। उदाहरणार्थ कुछ दोहे नीचे देते हैं—

फीकी पै नीकी लगै कहिए समय विचारि;
सबको मन हरखित करैं ज्यौं बिबाह मैं गारि॥ १ ॥
सो ताके औगुन कहै जो जेहि चाहै नाहिं;
तपित कलंकी बिष भरयौ बिरहिनि ससिहि कहाहिं॥२॥
सुखदाई जो देत दुख सो सब दिन को फेर;
ससि सीतल संयोग मैं तपत बिरह की बेर॥ ३ ॥
भले बुरे सब एक सम जौलौं बोलत नाहिं;
जानि परत है काग पिक रितु बसंत के माहिं॥ ४ ॥
हितहूकी कहिए न तेहि जो नर होय अबोध;
ज्यों नकटे को आरसी होत दिखाए क्रोध॥ ५ ॥
सबै सहायक सबल के कोउ न निबल सहाय;
पवन जगावत अगिनि को दीपहिं देत बुझाय॥ ६ ॥
उद्यम कबहुँ न छोंड़िए पर-आसा के मोद;
गागरि कैसे फोरिए उनये देखि पयोद॥ ७ ॥
छल बल समय बिचारि कै अरि हनिए अनयास;
कियो अकेले द्रोनसुत निसि पांडव कुल नास॥ ८ ॥
बिपति बड़ेही सहि सकैं इतर बिपति तैं दूर;
तारे न्यारे रहत हैं गहत राहु ससि सूर॥ ९ ॥

नाम—(४४२) बालअली ।

ग्रंथ—(१) नेहप्रकाश, (२) सीताराम-ध्यानमंजरी ।

कविताकाल—१७४६ ।

विवरण—इन्होंने नेहप्रकाश में १६१ दोहों, एवं सोरठों में रामचंद्र तथा जानकी का यश वर्णन किया है और सीताराम-ध्यानमंजरी में पुर एवं राज-भवन तथा राम-जानकी का बड़ी ही योग्यता से मनोहर काव्य में हाल कहा है। इनकी गणना तोष की श्रेणी में की जाती है। इन ग्रंथों पर जनकलाढ़िलीशरण ने टीका की है। हमने ये ग्रंथ छतरपूर-दरबार में देखे।

उदाहरण—

नेह सरोवर कुँवर दोउ रहे फूलि नव कंजु ;
अनुरागी अलि अलिन के लपटे लोचन मंजु ॥ १ ॥
स्याम बरन तन सीस जरकसी पाग रही फबि ;
नव नीरज ते निकसि प्रात जनु जात भयो रवि ॥ २ ॥
श्री मुख पर लिय झलक अलक अस लस घुँघुरारे ;
रहे घेरि नव कंज मधुप सौरभ मतवारे ॥ ३ ॥
केसरि तिलक ललाट पटल छबि परत बिसेखै ;
ललित कसौटी उपर मनहु नव कुंदन रेखै ॥ ४ ॥

इस काल के अन्य कविगण

नाम—(४४३/१) जगतराय।

ग्रंथ—(१) आगमविलास (२), सम्यक्तत्त्व कौमुदी, (३) पद्मनंदपचीसी ।

रचनाकाल—१७२१ ।

नाम—(४४३/२) जोधराज गोदी का ।

ग्रंथ—(१) प्रीतंकरचरित्र (१७२१), (२) कथाकोश

(१७२२), (३) सम्यक्तत्त्व कौमुदी (१७२४), (४) धर्मसरोवर, (५) प्रवचनसार (१७२६), (६) भावदीपिका वचनिका, (७) ज्ञानसमुद्र ।

कविताकाल—१७२१ ।

विवरण—साँगानेर रियासत जयपूरवासी अमर के पुत्र थे ।

नाम—(४४४) दोलू ।

ग्रंथ—गुणसागर ।

कविताकाल—१७२१ ।

नाम—(४४५) परवते सोनार ओड़छा ।

ग्रंथ—(१) दशावतारकथा (१७२१), (२) रामरहस्य-कलेवा ।

कविताकाल—१७२१ । [प्र० त्रै० रि०] ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४४६) बलिजू ।

जन्म-काल—१६९४ ।

कविताकाल—१७२२ ।

विवरण—इस नाम के कवि सरोजकार ने दो लिखे हैं, परंतु जान पड़ता है कि थे दोनों एक थे ।

नाम—(४४७) बुधराम ।

कविताकाल—१७२२ ।

विवरण—हज़ारा में इनकी रचना है । साधारण श्रेणी ।

नाम—(४४७/१) भगवानदास निरंजनी ।

ग्रंथ—अमृतधारा [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७२२ ।

नाम—(४४८) बंसी कायस्थ, ओड़छा-निवासी ।

ग्रंथ—सज्जनबहोरा । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७२३ ।

विवरण—लालमणि के पुत्र। साधारण श्रेणी। याज्ञिकत्रय इनका समय १७८० बतलाते हैं।

नाम—(४४८/१) जिन हर्ष, पाटनवासी ।

ग्रंथ—श्रेणिक चरित्र ।

रचनाकाल—१७२४ ।

नाम—(४४८/२) प्राणनाथ ।

ग्रंथ—प्रश्नोत्तर । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७२४ ।

विवरण—गोस्वामी दामोदरदास के शिष्य थे ।

नाम—(४४८/३) रसिक सुजान ।

ग्रंथ—करुणानंद भाषा ।

रचनाकाल—१७२४ ।

विवरण—गोस्वामी दामोदर के शिष्य थे ।

नाम—(४४९) जिन चंद सूरि ।

ग्रंथ—श्रीधन्ना चौपाई ।

कविताकाल—१७२५ ।

नाम—(४५०) चंद्रसेन ।

ग्रंथ—माधवनिदान ।

कविताकाल—१७२६ के पूर्व। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(४५१) कल्यान ।

कविताकाल—१७२६ ।

विवरण—इनकी रचना हज़ारा में है। साधारण श्रेणी।

नाम—(४५१/१) गोपालराय ।

ग्रंथ—(१) रससागर, (२) भूषणविलास, (३) दंपति वाक्य-विलास ।

जन्म-काल—१७०० के लगभग।

रचनाकाल—१७२६।

विवरण—गौड़ संप्रदाय के वैष्णव थे।

नाम—(४५२) जन अनाथ।
ग्रंथ—(१) सर्वसार [द्वि० त्रै० रि०], (२) उपदेश, पृष्ठ ११२, (३) विचारमाला [प्र० त्रै० रि०] (४), प्रबोधचंद्रोदय नाटक (१७२६)। [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७२६।

विवरण—वेदांत। इनका वर्णन नं० ५२० पर है।

नाम—($\frac{४५२}{१}$) टहकन पंजाबी।

ग्रंथ—जैमिनि अश्वमेध।

रचनाकाल—१७२६।

विवरण—जलालपुरवासी रंगीलाल के पुत्र।

नाम—($\frac{४५२}{२}$) बारण भूपालवाले।

ग्रंथ—रसिकविलास।

रचनाकाल—१७२६। [खोज १६०५]

विवरण—सुजाउलशाह राजगढ़ के यहाँ थे।

नाम—(४५३) बालकृष्ण नायक।
ग्रंथ—(१) ध्यानमंजरी, (२) ग्वालपहेली, (३) प्रेमपरीक्षा, (४) परतीतपरीक्षा [प्र० त्रै० रि०], (५) नेहप्रकाशिका (१७४६) [च० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७२६।

विवरण—चरणदास के शिष्य। कदाचित् नं० ८६४वाले बाल-कृष्ण और ये एक ही हैं।

नाम—(४५४) मौनीजी।
ग्रंथ—विचारमाल सटीक।

कविताकाल—१७२६।

नाम—(४५४/१) हरिदेव।

ग्रंथ—(१) रसचंद्रिका, (२) काव्यकुतूहल।

रचनाकाल—१७२६।

जन्म-काल—१७००।

विवरण—माध्वसंप्रदाय के वैष्णव थे।

नाम—(४५४/२) ज्ञानसागर कवि।

ग्रंथ—रास।

कविताकाल—१७२६।

विवरण—शेपपुर-निवासी जैन थे।

उदाहरण—

सकल सुरासुर जेहना पूजइ भावे पाय ;
पुरी सादागी पास जी ते प्रणमूँ चितलाय।
सत्तर छवीसानी आसो बदी आठम दिनसार ;
सिद्धि योग कीयो रास संपूरण पुष्यनक्षत्र गुरुवार।
शेप पुर में सरस संबंधए ज्ञानसागर कहियो रँगे ;
धन्या सिरिमें ढाल चालिसमी सुणज्यो सहू चितचंगे ;

नाम—(४५५) अभू चौबे, आगरा।

ग्रंथ—गुणरहस्य।

कविताकाल—१७२७।

विवरण—श्लो० सं० २६००। विषय शृंगार।

नाम—(४५५/१) लक्ष्मीधर उपनाम लाल कवि।

ग्रंथ—भारतसार।

रचनाकाल—१७२७। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—महाराजा रामसिंह जयपूर-नरेश के यहाँ थे।

नाम—(४५६) विष्णुदास, कायस्थ पन्ना।

ग्रंथ—एकादशी-माहात्म्य [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७२७ ।

विवरण—साधारण ।

नाम—(४५७) सितकंठ ।

ग्रंथ—तत्त्वमुक्तावली । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७२७ ।

विवरण—बरेली-वासी ।

नाम—(४५८) त्रिलोकदास ।

ग्रंथ—(१) भजनावली [द्वि० त्रै० रि०], (२) मानबत्तीसी ।

कविताकाल—१७२६ के पूर्व ।

विवरण—मेंड़ता जोधपुर-वासी [खोज १६०२] ।

नाम—(४५६) सुदर्शन कायस्थ, हमीरपुर ।

ग्रंथ—(१) चिकित्सादर्पण, (२) भिषजप्रिया [खोज १६०५] [१७२६]

कविताकाल—सुजानसिंह ओड़छा-नरेश के यहाँ थे। निम्न श्रेणी।

नाम—(४६०) कृष्णदास, दतिया ।

ग्रंथ—(१) दानलीला [खोज १६०३], (२) तीजा की कथा [प्र० त्रै० रि०] (१७३०), (३) पद, (४) महालक्ष्मी की कथा (१७२३), (५) ऋषिपंचिमी-कथा, (६) एकादशी-माहात्म्य, (७) हरिश्चंद्र-कथा ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(४६१) कुंभकरण चारण, मारवाड़ ।

ग्रंथ—रतनमासा, श्लो० सं० ३१५० ।

रचनाकाल—१७३० लगभग ।

विवरण—राठोर रतनसिंह के औरंगज़ेब से लड़ने का हाल ।

नाम—(४६२) चतुरसिंह राना ।

जन्म-संवत्—१७०१ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—खड़ी बोली में रचना की है, जो निम्न श्रेणी की है ।

नाम—(४६३) छीव कवि ।

जन्म-संवत्—१७०५ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४६४) देवदत्त, कुसवारा कन्नौज के पास ।

ग्रंथ—योगतत्त्व ।

जन्म-संवत्—१७०३ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४६५) पतिराम ।

जन्म-संवत्—१७०१ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—निम्न श्रेणी । इनके छंद हज़ारा में हैं ।

नाम—(४६६) प्रह्लाद ।

जन्म-संवत्—१७०१ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४६७) बलदेव प्राचीन ।

जन्म-संवत्—१७०४ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—हज़ारा में इनके छंद हैं । साधारण श्रेणी ।

नाम—(४६८) मुकुंद प्राचीन ।

जन्म-संवत्—१७०५ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी । इनके छंद हज़ारा में हैं ।

नाम—(४६९) लघराज ।

ग्रंथ—(१) प्रस्तावसत ग्रंथ, (२) सरतसी भाषा ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—जोधपुर के महाराज जसवंतसिंह के मंत्री थे ।

नाम—(४७०) शशिशेखर ।

जन्म-संवत्—१६९९ ।

रचनाकाल—१७३० ।

नाम—(४७१) श्याम ।

जन्म-संवत्—१७०५ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४७२) श्यामलाल ।

जन्म-संवत्—१७०५ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४७३) श्रीगोविंद ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी । महाराजा शिवाजी के यहाँ थे ।

नाम—(४७४) हुलासराम ।

जन्म-संवत्—१७०८ ।

रचनाकाल—१७३० ।

विवरण—निम्न श्रेणी ।

नाम—(४७५) जगतानंद ।

ग्रंथ— (१) व्रजपरिक्रमा, (२) भागवत। [च० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७३१।

नाम—(४७४/१) भगवतीदास 'भय्या' आगरा-वासी।
ग्रंथ—ब्रह्मविलास।
रचनाकाल १७३१।
विवरण—ओसवाल जैन। इन्होंने ६७ स्फुट छंद रचे।
उदाहरण—

सुनिरे सयाने नर कहा करै घर घर,
तेरो जो सरीर घर घरी ज्यों तरतु है;
छिन छिन छीजें आय जल जैसे घरी जाय,
ताहू को इलाज कछु उरहु धरतु है।
आदि जे सहे हैं ते तौ यादि कछू नाहिं तोहि,
आगे कहा गति ह्वैहै काहे उछरतु है;
घरी एक देखो ख्याल घरी की कहाँ है चाल,
घरी घरी घरयाल शोर यों करतु है।

लाइ हौं लालन बाल अमोलक देखहु तो तुम कैसी बनी है;
ऐसी कहूँ तिहुँ लोक में सुंदर और न नारि अनेक घनी है।
याहि ते तोहि कहूँ नित चेतन याहू कि प्रीति जो तोसों सनी है;
तेरी औ राधे की रीझ अनंत सो मोपै कहूँ यह जात गनी है।

नाम—(४७५) श्रीपति भट्ट।
ग्रंथ—हिम्मतप्रकाश [प्र० त्रै० रि०]।
रचनाकाल—१७३१।
विवरण—बाँदा के नवाब सैयद हिम्मतख़ाँ के दरबार में थे। औदीच्य गुजराती ब्राह्मण थे।

नाम—(४७५/१) अतिवल्लभ।
ग्रंथ—(१) मंत्रध्यानपद्धति, (२) वृंदावनअष्टक। [तृ०त्रै०रि०]

रचन-काल—१७३२ के लगभग।

नाम—(४७६) दरियाव।

ग्रंथ—दरियावजी की बानी।

रचनाकाल—१७३२ से १८४४ तक कभी।

नाम—(४७७) पीरदान आसिया (मारवाड़ की एक जाति) मारवाड़।

ग्रंथ—फुटकर गीत मरुभाषा।

रचनाकाल—१७३२।

विवरण—आश्रयदाता महाराना राजसिंह।

नाम—(४७८) व्रजनाथ ब्राह्मण, कंपिला।

ग्रंथ—पिंगल [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७३२।

नाम—(४७८) शिरोमणिदास।

ग्रंथ—धर्मसार।

रचनाकाल—१७३२।

विवरण—गंगादास के शिष्य थे।

नाम—(४७९) बलिराम।

ग्रंथ—(१) रसिकविवेक [खोज १९०४], (२) झूलना [खोज १९०३]।

जन्म-संवत्—१७०५।

रचनाकाल—१७३३।

विवरण—कविता में पंजाबी लहजा है।

नाम—(४८०) बाजींद्र।

ग्रंथ—(१) राजकीर्तन [खोज १९०२], (२) गुण श्रीमुख-नामो।

जन्म-संवत्—१७०८।

रचनाकाल—१७३३ ।

नाम—(४८१) लालदास आगरावाले ।

ग्रंथ—(१) इतिहाससार समुच्चै, (२) अवधविलास [खोज १९०१] (१७३४), (३) बारहमासा, (४) भरत की बारामासी । [प्र० त्रै० रि०] ।

रचनाकाल—१७३४ ।

विवरण—अवधविलास हमने देखा है । साधारण कविता उसमें है । इसी नाम के एक वैश्य कवि आगरे में १६४३ में हो गए हैं । दोनों के ग्रंथों में समय लिखे हैं ।

नाम—(४८२) कसनेह, राजपूताना ।

रचनाकाल—१७३५ के प्रथम ।

नाम—(४८३) तेगपाणि ।

जन्म-संवत्—१७०८ ।

रचनाकाल—१७३५ ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(४८४) मीर रुस्तम ।

रचनाकाल—१७३५ ।

विवरण—साधारण श्रेणी । इनके छंद कालिदासहजारा में हैं ।

नाम—(४८५) मीरी माधव ।

रचनाकाल—१७३५ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४८६) सहीराम ।

जन्म-संवत्—१७०८ ।

रचनाकाल—१७३५ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(४८७) जैनदीन (जैनुद्दीन) महम्मद ।

कविताकाल—१७३६ ।

विवरण—साधारण श्रेणी। एक पीठ का छंद प्रख्यात है।

नाम—(४८७) लालचंद्र ।

ग्रंथ—लीलावती भाषाबंध ।

रचनाकाल—१७३६ ।

विवरण—सोभाग सूरि के शिष्य तथा बीकानेर-नरेश अनूपसिंह के कोठारी नेणसी के आश्रित थे। [खोज ११०२]

नाम—(४८८) ओसवाल देखो नं० ४३५ ।

नाम—(४८६) कोविद मिश्र (चंद्रमणि मिश्र) ओड़छा ।

ग्रंथ—(१) भाषाहितोपदेश, (२) राजभूषण । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७३७ ।

विवरण—महाराजा पृथ्वीसिंहजी दतिया-नरेश तथा उद्योतसिंह के यहाँ थे। आप सुकवि थे। याज्ञिकत्रय इनका समय संवत् १७७६ बतलाते हैं।

नाम—(४६०) दानिशमंदखाँ ।

ग्रंथ—स्फुट ।

रचनाकाल—१७३७ ।

विवरण—औरंगज़ेब के दरबार में थे।

नाम—(४६१) प्रद्युम्नदास ।

ग्रंथ—काव्यमंजरी ।

रचनाकाल—१७३७ । [खोज ११०४]

विवरण—नागौड़ के राजा दलेलसिंह के यहाँ थे।

नाम—(४६२) वैकुंठमणि शुक्ल, बुंदेलखंडी ।

ग्रंथ—(१) वैसाखमाहात्म्य, (२) अगहनमाहात्म्य [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७३७।

विवरण—दोनों गद्य ब्रजभाषा के ग्रंथ हैं।

नाम—(४६३) रघुराम कायस्थ, ओड़छा।

ग्रंथ—कृष्णामोदिका। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७३७।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(४६४) रणछोर।

ग्रंथ—राजपट्टन।

रचनाकाल—१७३७।

विवरण—मेवाड़ के राजघराने का इतिहास लिखा।

नाम—(४६५) आसिफ़ख़ाँ।

रचनाकाल—१७३८।

नाम—(४६५/१) ताराचंद।

ग्रंथ—ज्ञानार्णव।

रचनाकाल—१७३८।

नाम—(४६५/२) विश्वभूषण भट्टारक

ग्रंथ—जिनदत्तचरित्र।

रचनाकाल—१७३८।

नाम—(४६६) बिहारी।

जन्म-काल—१७१३।

रचनाकाल—१७३८।

विवरण—हज़ारा में इनकी रचना मिलती है।

नाम—(४६७) महाराना जैसिंह, मेवाड़।

ग्रंथ—जैदेवविलास।

रचनाकाल—१७३८ से १७५७ तक।

विवरण—ये महाराज मेवाड़ उदयपुर के महाराणा और

कवियों के आश्रयदाता थे। इन्होंने अपने वंश के वर्णन में यह ग्रंथ बनाया है।

नाम—(४६७/१) यशोविजय जैन।

ग्रंथ—श्रीपाल चौपाई।

रचनाकाल—१७३८।

उदाहरण—

कल्प बेलि कवियन तणी सरसति करि सुपसाय ;
सिद्ध चक्र गुण गावनां, पूर मनोरथ माय।
संबत सतर अढ़तीस बरसे रही रानेर चौमासे जी ;
संघ तणा आग्रह थी मांड्यो रास अधिक उल्लासे जी।

नाम—(४६८) सामंत।

रचनाकाल—१७३८।

विवरण—साधारण श्रेणी। औरंगज़ेब बादशाह के यहाँ थे।

नाम—(४६६) सूजा बंदीजन, माड़वार।

रचनाकाल—१७३८।

विवरण—महाराजा जसवंतसिंह के यहाँ थे।

नाम—(५००) गंगाधर (गंगेश)।

ग्रंथ—विक्रमविलास। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७३६।

विवरण—माथुर चौबे थे।

नाम—(५०१) उदैनाथ बंदीजन, बनारस।

जन्म-काल—१७११।

रचनाकाल—१७४०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(५०१/१) कल्याण मिश्र।

रचनाकाल—१७४०।

ग्रंथ—अमरकोष भाषा

नाम—(५०२) काशीराम ।

ग्रंथ—कनकमंजरी । [खोज १९०३]

जन्म-संवत्—१७१५ ।

रचनाकाल—१७४० ।

विवरण—साधारण कवि । औरंगज़ेब के सूबेदार निज़ामतख़ाँ के यहाँ थे ।

नाम—(५०३) ग्वाल प्राचीन ।

जन्म-संवत्—१७१५ ।

रचनाकाल—१७४० ।

विवरण—इनकी कविता हज़ारा में है । साधारण श्रेणी ।

नाम—(५०३/१) जिनहर्ष सूरि ।

ग्रंथ—(१) श्रीपालरास (१७४०), (२) श्रीपालनृपरास । (१७४२)

कविताकाल—१७४० ।

उदाहरण—

श्री अरि हंत अनंत गुण धरिये हियडै ध्यान ;
केवल ज्ञान प्रकाश कर दूरि हटै अज्ञान ।
संवत सतरेसे चालिसे चैत्रादिक सुजगी सैरे ;
सातम सोमवार सुभ दिवसै पाटण बिसवा बीसैरे ।
श्रीखरतरगछा महिमाधारी जिन चंद सूरिपटधारीरे ;
शांति हर्ष वाचक सुखकारी तास सीस सुविचारीरे ।
कहै जिन हर्ष भविक नर सुणज्यो नवपद महिमा शुनज्योरे ;
उनपचासे ढाले गुण ज्यो निज पातिक बन लुण ज्योरें ।

नाम—(५०४) प्राणनाथ ।

जन्म-संवत्—१७१४ ।

रचनाकाल—१७४० ।
विवरण—साधारण श्रेणी । राजा कोटा के यहाँ थे ।
नाम—(५०५) विचित्र (फफूँद-निवासी)
ग्रंथ—दानविलास ।
रचनाकाल—१७४० । [प्र० त्रै० रि०]
नाम—(५०६) भृंग ।
जन्म-संवत्—१७०८ ।
रचनाकाल—१७४० ।
नाम—(५०७) मोतीराम ।
ग्रंथ—माधोमल ।
रचनाकाल—१७४० ।
विवरण—साधारण श्रेणी । इनके छंद हज़ारा में हैं ।
नाम—(५०८) मोहन ।
ग्रंथ—रामाश्वमेध ।
जन्म-संवत्—१७१५ ।
रचनाकाल—१७४० ।
विवरण—तोष श्रेणी के कवि । ये सवाई राजा जैसिंह जयपुर महाराज के यहाँ भी गए थे ।
नाम—(५०९) रघुनाथ प्राचीन ।
जन्म-संवत्—१७१० ।
रचनाकाल—१७४० ।
विवरण—साधारण श्रेणी ।
नाम—(५१०) रूपनारायण ।
जन्म-संवत्—१७११ ।
रचनाकाल—१७४० ।
विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(५११) लोधे।

जन्म-संवत्—१७१४।

रचनाकाल—१७४०।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(५१२) श्रीधर।

ग्रंथ—कविविनोद।

रचनाकाल—१७४०।

विवरण—मुरलीधर के साथ यह ग्रंथ बनाया।

नाम—(५१३) हरखचंद साधू।

ग्रंथ—श्रीपालचरित्र।

रचनसकाल—१७४०।

नाम—(५१४) हरिचंद।

रचनाकाल—१७४०।

विवरण—पन्ना में राजा छत्रसाल के यहाँ थे।

नाम—(५१५) काकरेजीजी राजपूतानी।

जन्म-संवत्—१७१६।

रचनाकाल—१७४१।

विवरण—अग्रानी दयाधार गुजरात की बेटी माड़वार में ब्याही थीं।

नाम—(५१६) जिनरंग सूरि साधू।

ग्रंथ—सौभाग्यपंचमी।

रचनाकाल—१७४१।

नाम—(५१७) धर्ममंदिर गणि।

ग्रंथ—(१) प्रबोधचिंतामणि [खोज १६००], (२) चोपी-मुनिचरित्र।

रचनाकाल—१७४१-१७५०।

विवरण—जैन कवि।

नाम—(५१८) बलबीर, क़न्नौज।
ग्रंथ—(१) पिंगलमनरहण (१७४१) [खोज १९०१]
(२) उपमालंकार नखशिख वर्णन, [खोज १९०२]
(३) दंपतिविलास [खोज १९०२] (१७५६)।
रचनाकाल—१७४१।

नाम—(५१९) रघुनाथराम।
ग्रंथ—कृष्णमोदिका।
रचनाकाल—१७४१।

नाम (५२०) अनाथदास दादूपंथी।
ग्रंथ—(१) विचारमाला, (२) रामरत्नावली [प्र० त्रै० रि०] (३) सर्वसारउपदेश या प्रबोधचंद्रोदय नाटक (१७२०)
जन्म-संवत्—१७१६।
रचनाकाल—१७४२। खोज १९२०-२२ में रचनाकाल १७२० दिया है।
विवरण—साधारण श्रेणी। दादूपंथी। देखो नं० ४५२।

नाम—(५२१) देवीदास, बुँदेलखंडी।
ग्रंथ—(१) प्रेमरत्नाकर, (२) राजनीति [खोज १९०२], (३) दामोदरलीला।
रचनाकाल—१७४२।
विवरण—राजा रतनपालसिंह करौली-नरेश के यहाँ के साधारण श्रेणी के कवि थे। नीति-संबंधी कविता इनकी कुछ अच्छी है।

नाम—(५२२) भगवानदासजी।
ग्रंथ—नल राजा की कथा।
जन्म-काल—१७१५।

रचनाकाल—१७४२ ।

नाम—(५२२/१) विनोदीलाल ।
ग्रंथ—(१) परमार्थ गारी, (२) नेमिनाथ राजल विवाह, पंच मेरु
जयमाल । [च० त्रै० रि०], (३) नेमिनाथ के रेख्ता ।

रचनाकाल—१७४२ ।

विवरण—हीन श्रेणी । करौली-नरेश के यहाँ थे । देवादास
इनके आश्रित थे ।

नाम—(५२३) रतनपाल भैया ।
ग्रंथ—(१) रामरत्नाकर, [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७४२ ।

नाम—(५२४) गंगाराम ।

ग्रंथ—सभाभूषण पृष्ठ ३४ । द्वि० त्रै रि० ।

रचनाकाल—१७४४ ।

विवरण—राग रागिनियाँ । राजा रामसिंह के दरबार में थे ।

नाम—(५२५) नंदराम ।
ग्रंथ—नंदराम पच्चीसी ।

रचनाकाल—१७४४ ।

विवरण—निम्न श्रेणी [खोज १९००]

नाम—(५२५/१) भूपति ।
ग्रंथ—भागवत दशम स्कंध । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७४४ ।

नाम—(५२६) इंद्रजी त्रिपाठी, वनपुरा अंतरवेद ।

जन्म-काल—१७१६ ।

रचनाकाल—१७४२ ।

विवरण—ये औरंगज़ेब के नौकर थे । इनकी रचना उत्तम और पद्माकर
के ढंग की है । हम इनको तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं ।

नाम—(५२७) जनार्दन ।
जन्म-काल—१७१८ ।
रचनाकाल—१७४५ ।
विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(५२८) रतनजी भट्ट तैलंग ब्राह्मण नरवर ।
ग्रंथ—(१) रतनसागर, (२) सामुद्रिक, [प्र० त्रै० रि०] (३) गणेशस्तोत्र ।
रचनाकाल—१७४५ ।
विवरण—नरवर-निवासी । पिता का नाम कृष्ण भट्ट । गुरु का नाम मोहनलाल ।

नाम—($\frac{528}{1}$) धरणीधरदास ।
ग्रंथ—चौरासी सटीक । [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७४६ के पूर्व ।

नाम—(५२९) चरणदास ।
ग्रंथ—(१) नेहप्रकाशिका (१७१६) (खोज १९००), (२) बिहारी सतसई की टीका ।
रचनाकाल—१७४६ ।

नाम—($\frac{529}{1}$) कृष्णदास ।
ग्रंथ—समयप्रबंध [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७५० ।

नाम—(५३०) दीपचंद ।
ग्रंथ—(१) परमात्मापुराण, (२) चिद्विलास, (३) ज्ञान-दर्पण (१७५०) ।
रचनाकाल—१७५० ।

नाम—($\frac{530}{1}$) कल्यानदास ।
रचनाकाल—१७५० ।

ग्रंथ—(१) छंदभास्कर, (२) रसचंद्र, (३) दशमस्कंध भागवत, (४) अर्जुनगीता, (५) प्रस्ताविक कुंडलियां हैं। ये डाकोर-निवासी थे।

नाम—(५३०) सैयद रहमतुल्ला।

कविताकाल—१७५०।

विवरण—बिलग्राम के रहनेवाले और जाजमऊ के शाही दीवान थे। हिंदी के कवि थे और चिंतामणि के आश्रयदाता थे। इनकी मृत्यु सं० १७५७ में हुई। इनका हाल 'साहित्य-समालोचक' में दिया है।

नाम—(५३१) बलिरामजी।

ग्रंथ—स्फुट पद।

रचनाकाल—१७५० के लगभग।

नाम—(५३२) श्रीनिवास।

ग्रंथ—(१) रससागर, (२) सद्गुरुमहिमा (१६६ पद), (३) माधुरीप्रकाश (६२ पद)।

रचनाकाल—१७५०।

विवरण—छत्रपुर में देखे। साधारण श्रेणी। निंबार्क संप्रदाय के।

नाम—(५३२) सौभाग्य विजय जैन, आगरावासी।

ग्रंथ—तीर्थमाला स्तवन।

रचनाकाल—१७५०।

तेईसवाँ अध्याय।

आदिम देव-काल (१७५१ से १७७१ तक)

(५३३) महाकवि देवजी

देवदत्त उपनाम देव कवि इटावा के रहनेवाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण

द्विवेदी थे। देवजी के प्रपौत्र भोगीलाल ने अपनी वंशावली वखत विलासग्रंथ में इस प्रकार लिखी है—

कास्यप गोत्र द्विवेदि कुल कान्यकुब्ज कमनीय;
देवदत्त कवि जगत में भए देवरमनीय।

इनका जन्म संवत् १७३० में हुआ था। संवत् १८२५ में इनका देहांत होना अनुमान-सिद्ध है। ये केवल १६ वर्ष की बाल्यावस्था से उत्कृष्ट कविता करने लगे थे। इनको कभी कोई उदार आश्रयदाता नहीं मिला और इसी के खोज में अथवा अन्य किसी कारण से ये प्रायः समस्त भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत में घूमे। इसका प्रभाव इनकी कविता पर बहुत ही अच्छा पड़ा और प्रत्येक स्थान के निवासियों का इन्होंने सच्चा वर्णन किया। अपने समस्त आश्रयदाताओं में भोगीलाल का हाल इन्होंने सबसे विशेष श्रद्धायुक्त लिखा। कोई-कोई इन्हें ५२ ग्रंथों का और कोई ७२ ग्रंथों का रचयिता मानते हैं। हमको इनके निम्न-लिखित २७ ग्रंथों के नाम मालूम हुए हैं, जिनमें प्रथम १५ ग्रंथ हमने देखे भी हैं—

(१) भावविलास (खोज १९०३), (२) अष्टयाम (खोज १९०० तथा १९०२ व १९०३), (३) भवानीविलास, (४) सुंदरीसिंदूर, (५) सुजानविनोद (खोज १९०३), (६) प्रेमतरंग (खोज १९०३), (७) रागरत्नाकर, (८) कुशलविलास [प्र० त्रै० रि०], (९) देवचरित्र, (१०) प्रेमचंद्रिका, (११) जातिविलास, (१२) रसविलास, (१३) काव्यरसायन या शब्द-रसायन (खोज १९०५), (१४) सुखसागरतरंग, (१५) देव-मायाप्रपंचनाटक, (१६) वृक्षविलास, (१७) पावसविलास,(१८) देवशतक अथवा वैराग्यशतक (१९) नीतिशतक (२०) रसानंदलहरी, (२१) प्रेमदीपिका, (२२) सुमिलविनोद, (२३) राधिकाविलास, (२४) नखशिखप्रेमदर्शन, (२५) खोज १९०४

में इनके एक और ग्रंथ कृष्ण गुण कर्म सूक्ष्म सूदन का पता चलता है। (२६) इनका एक संस्कृत में नायिकाभेद का ग्रंथ नागरी-प्रचारिणी सभा काशी में है। (सं० १७४१)

सुखसागरतरंग में नायिकाभेद का विस्तारपूर्वक वर्णन है और काव्यरसायन एक उत्तम रीति-ग्रंथ है, जिसमें प्रधानतया पदार्थ-निर्णय, रस, पात्रविचार, अलंकार और पिंगल के वर्णन हैं। देव-मायाप्रपंच नाटक कोई नाटक नहीं है, परंतु कुछ-कुछ नाटक की भाँति लिखा गया है। रसविलास और जातिविलास में जातियों का वर्णन प्रधान है और यह बहुत ही उत्तम ग्रंथ हैं। प्रेमचंद्रिका में प्रेम का एक अनूठे प्रकार से वर्णन किया गया है और वह सर्वतो-भावेन प्रशंसनीय है। देवचरित्र में कृष्णचंद्रजी की कथा कंस-वध पर्यंत कुछ विस्तार से और उसके पीछे नितांत सूक्ष्मरूप से कही गई है। सुंदरीसिंदूर एक संग्रह-मात्र है जो भारतेंदुजी ने देव की कविता से एकत्रित किया था। रागरत्नाकर में राग-रागिनियों का अच्छा बयान है। अष्टयाम में दिन के प्रत्येक पहर और घड़ी पर कविता की गई है। भावविलास, भवानीविलास, सुजानविनोद, प्रेमतरंग, कुशलविलास आदि भी अच्छे रीति-ग्रंथ हैं।

देवजी की कविता में उत्तम छंद बहुत अधिकता से पाए जाते हैं। इनकी भाषा शुद्ध व्रजभाषा है और वह भाषा-संबंधी प्रायः सभी आभूषणों से सुसज्जित है। इन्होंने तुकांत भी बड़े ही मनोहर रक्खे हैं, बड़े-बड़े विशेषणों एवं लोकोक्तियों की अपनी कविता में अच्छी छटा दिखलाई है और क्रमसे भी खूब खिलाई हैं। नायिकाओं के वर्णनों में इन्होंने स्थान-स्थान पर तसवीरें-सी खींच दी हैं। देवजी ने ऊँचे ख़यालात भी ख़ूब बाँधे हैं और अमीरी ठाठ सामान का वर्णन इनके बराबर कोई भी नहीं कर सका है। इन्होंने उप-माएँ बहुत ही विलक्षण दी हैं और इनके रूपक बहुत अच्छे बने हैं।

जान पड़ता है कि इन्होंने रामायण पर भी कोई ग्रंथ रचा है, क्योंकि रामायण विषयक इनके स्फुट छंद बहुत मिलते हैं। तुलसीदास और सूरदास के बाद देव का तीसरा नंबर है और ये तीनों महाशय शेष भाषा-कवियों से कहीं बढ़े-चढ़े हैं। इनका विशेष वृत्तांत हमारे रचित और गंगा-पुस्तकमाला, लखनऊ द्वारा प्रकाशित नवरत्न में मिलेगा।

उदाहरण—

उज्जल अखंड खंड सातएँ महल महा,
मंदिर सँवारो चंदमंडल के चोटहीं;
भीतर हू लालन की लालन बिसाल जोति,
बाहर जुन्हाई जगी जोतिन के जोट हीं।
बरनत बानी चौर ढारत भवानी कर,
जोरे रमा रानी राजैं रमन के ओटहीं;
देव दिगपालन की देवी सुखदायनि ते,
राधे ठकुरायनि के पायन पलोटहीं॥ १॥

केतकी के हेत कीन्हें कौतुक कितेक तुम,
भीजि परिमल मैं गए हौ गड़ि गात ही;
मिले मल्लि बल्लिन लवंगन सों हिले दुरि,
दाड़िमन पिले पुनि पाँड़र के घात ही।
कीन्ही रस केली साँझ चूमत चमेली बाँझ,
देव सेवतीन माँझ भूले भभरात ही;
संग लै कुमोदिनि बिनोद मान्यो चहूँ कोद;
छपद छिपे हौ पदुमिनि मैं प्रभात ही॥ २॥

अनुराग के रंगनि रूप तरंगनि अंगनि ओप मनो उफनी;
कवि देव हिये सियरानी सबै सियरानी को देखि सोहाग सनी।
बर धामन बाम चढ़ी बरसैं मुसुकानि सुधा घनसार घनी;
सखियान के आनन इंदुन ते अँखियान की बंदनवार तनी॥ ३॥

छपद छबीले रस पीवत सदीव छीव,
लंपट निपट नेह कपट ढुरे परत ;
भंग भए मध्य अंग डुलत खुलत साँस,
मृदुल चरन चारु धरनि धरे परत।
देव मधुकर ढूक ढूकत मधूक धोखे,
माधवी मधुर मधु लालच लुरे परत ;
दुहु कर जैसे जलरुह परसत इहाँ,
मुँह पर झाइं परे पुहुप झरे परत ॥ ४ ॥

कालिह ही साँझ उद्यो कर माँझ ते देव खरो तब ते चित साल्यो ;
एक भली भई बाग तिहारेई श्रीफल औ कदली चढ़ि हाल्यो।
बंचक बिंबन चंचु चुभावत कुंज के पिंजर मैं गहि घाल्यो ;
हौं सुक हू नहिं राखि सकी सुकहूँ सुन्यो तैहीं परोसिनि पाल्यो ॥५॥

देव पुरैनि के पात निचान ते हैं बिवि चक्र सिचान गहेरी ;
चंगुल चीते के मैं परिकै करसायल घायल ह्वै निबहेरी।
मींजि कै मंजु दली कदली लरि केहरि कुंजर लुंज लहे री ;
हेरि सिकार रहेरी कहूँ ब्रजराज अहेरी ह्वै आजु अहेरी ॥ ६ ॥

नाहिनै नंद को मंदिर ह्याँ वृषभानु को भौन कहा जकती हौ ;
हौंही अकेली तुही कबिदेव जू घूँघट कै किनको तकती हौ।
भेंटती मोहिं भटू केहि कारन कौन सी धौं छबि सों छकती हौ ;
काह भयो है कहा कहौ कैसी हौ कान्ह कहाँ हैं कहा बकती हौ ॥७॥

अंतर पैठि दुवौ पट के कवि देव निरंतर ता उर आनै ;
देति मिलाय घने अपने गुन चारु सुई किधौं दूती सुजानै।
ताहि लिए कर मैं बरमै हिय जासु सियै मरमै सो बखानै ;
कीन्ही करेजन की दरजै दरजी की बहू बरजी नहिं मानै ॥ ८ ॥

मूढ़ कहैं मरिकै फिर पाइए ह्याँ जु लुटाइए भौन भरे को ;
ते खल खोय खिस्यात खरे अवतार सुन्यो कहुँ छार परे को।

जीवत सौ व्रत नेम सुखौत सरीर महा सुररूख हरे को;
ऐसी असाधु असाधुन की मति साधन देत सराध मरे को ॥ ६ ॥
आवत आयु को द्यौस अथौत गए रवि ज्यों अँधियारियै ऐहै;
दाम खरे दै खरीद करौ गुर मोह की गोनी न फेरि बिकैहै ।
देव छितीस की छाप बिना जमराज जगाती महा दुख दैहै;
जात उठी पुर देह की पैठ अरे बनिये बनियै नहिं रैहै ॥ १० ॥

मोंहि तुम्हैं अंतर गनैं न गुरुजन तुम,
मेरे हौं तिहारी पै तऊ न पिघलत हौ;
पूरि रहे या तन मैं मन मैं न आवत हौ,
पंच पूछि देखे कहूँ काहू न हिलत हौ।
ऊँचे चढ़ि रोई कोई देत न देखाई देव,
गातन की ओट बैठे बातन गिलत हौ;
ऐसे निरमोही महा मोही मैं बसत अरु;
मोही ते निकसि फिरि मोही न मिलत हौ ॥ ११ ॥

नाम—($५\frac{३३}{१}$) अमृतराय ।
कविताकाल—१७५२ ।
विवरण—हिंदी और मराठी में कविता की है ।

नाम—($५\frac{३३}{२}$) केवलराम ।
कविताकाल—१७५६ ।
ग्रंथ—बाबीविलास ।

(५३४) छत्रसिंह कायस्थ ।

इन्होंने संवत् १७५७ में [प्र० त्रै० रि०] विजयमुक्तावली-नामक ग्रंथ अनेक छंदों में बनाया । ये महाशय अंटेर गाँव के रहनेवाले श्रीवास्तव कायस्थ थे । अंटेर ग्वालियर के भदावर-नामक देश में है । छत्र ने लिखा है कि बटेश्वर क्षेत्र वहाँ से निकट है । इनके आश्रय-दाता कल्याणसिंह अमरावती में रहते थे ।

विजयमुक्तावली में महाभारत की कथा सूक्ष्मतया वर्णित है, परंतु इस कवि ने बहुत स्थानों पर संस्कृत की कथा से भिन्न अपनी कथा कही और कौरव दल के योद्धाओं का महत्त्व कई अंशों में बहुत घटाकर कहा। कथा वर्णन करनेवाले कवियों में इनका पद अच्छा है। इन्होंने केशवदास की परिपाटी का अनुसरण किया और प्रायः रायल अठपेजी के दो सौ पृष्ठों के ग्रंथ को एक रस निर्वाह कर दिया। इनकी भाषा में मुख्यांश व्रजभाषा का है, जो साधारणतया अच्छी है। इन्होंने बहुत स्थानों पर भद्र काव्य किया है और इनका ग्रंथ बहुत रोचक है। उदाहरणार्थ इनके कुछ छंद नीचे उद्धृत किए जाते हैं—

कैटभ मधु मुर हरन धरन नख अग्र शैल बर;
हिरनाकुश हिरनाच्छ हरन प्रभु रदन धरनि धर।
संखासुर संहरन हरन हरि अंध कबंधहि;
खरदूखन बपु भंजि गंजि भंजन दसकंदहि।
गजराज काज प्रहलाद ध्रुव दयासिंधु असरन सरन;
प्रभु नमो नमो कवि छत्र कहि नारायण जग उद्धरन॥ १॥

निरखत ही अभिमन्यु को विदुर डुलायो शीस;
रच्छा बालक की करौ ह्वै कृपाल जगदीस॥ २॥
आपुन कॉंधो युद्ध नहिं धनुष दियो भुव डारि;
पापी बैठे गेह कत पांडु पुत्र तुम चारि॥ ३॥
पौरुष तजि लज्जा तजी तजी सकल कुल कानि;
बालक रनहिं पठाय कै आपु रहे सुख मानि॥ ४॥
दीरघ तनु दीरघ भुजा दीरघ पौरुष पाय;
कातर ह्वै बैठे सदन बहु बलवंत कहाय॥ ५॥
कवच कुंडल इंद्र लीने बाण कुंती लै गई;
भई बैरिनि मेदिनी चित करण के चिंता भई॥ ६॥

ब्रज रच्छन भच्छन अनल पच्छन गोधन ग्वाल ;
भुज वर कर वर सुभुज पर गिरिवर धरन गोपाल ॥ ७ ॥

नाम—(५३५) अनन्यअली राधावल्लभी ।

रचना—अनन्य अली का काव्य ।

समय—१७५६ ।

विवरण—इनके रचित छोटे-छोटे अष्टक तथा लीला आदि के लगभग १०० ग्रंथ हैं, जिनके नाम अलग-अलग विस्तार-भय से नहीं लिखे गए । इनकी कविता साधारण श्रेणी की है । कुल ६८४ पृष्ठों में इनकी रचना है ।

नाम—(५३५/१) कलश कवि । देखो अज्ञातकालिक प्रकरण नं० १३२२ ।

नाम—(५३६) लोकनाथ चौबे बूँदी राधावल्लभी ।

ग्रंथ—(१) रसतरंग, (२) हरिवंश चौरासी का भाष्य । [प्र० त्रै० रि०]

समय—१७६० ।

विवरण—ये महाशय दरबार बूँदी में राव राजा बुद्धसिंहजी के आश्रित थे, और इन्होंने उन्हीं के नाम से यह ग्रंथ बनाया । एक बार राव राजा काबुल जाते थे । उस समय कविजी को भी साथ चलने का हुक्म हुआ । तब इनकी स्त्री ने जो कवि थीं इनके पास एक छंद लिख भेजा, जिसे राव राजा को दिखाकर इन्होंने वहाँ जाने से छुट्टी पाई । इनका काव्य साधारण श्रेणी का है । उदाहरण लीजिए—

भूषण निवाज्यो जैसे सिवा महाराज जू ने,
बारन दै बावन धरा पै जस छाव है ;

दिल्लीसाह दिलिप भए हैं खानखाना जिन,
गंग से गुनी को खासे मौज मन भाव है।
अब कविराजन पै सकल समस्या हेत,
हाथी घोड़ा तोड़ा दै बढ़ायो बहु नाव है;
बुद्धजू दिवान लोकनाथ कविराज कहै,
दियो इकलौरा पुनि धौलपुर गाँव है।

नाम—(५३७) कविरानी चौबे लोकनाथ की स्त्री, बूँदी।
रचना—स्फुट।
समय—१७६०।
विवरण—इनके पति राव राजा बुद्धसिंह के साथ काबुल जाने-वाले थे, तब इन्होंने निम्न छंद उनके पास लिख भेजा था, जिस पर राव राजा ने उनका काबुल जाना बंद कर दिया। इनका काव्य साधारण श्रेणी का है।

मैं तौ यह जानी ही कि लोकनाथ पाय पति,
संग ही रहौंगी अरधंग जैसे गिरजा;
एते पै बिलच्छन ह्वै उत्तर गमन कीन्हों,
कैसे कै मिटत जो बियोग बिधि सिरजा।
अब तौ जरूर तुमैं अरज किए ही बनै,
वेऊ दुज जानि फ़रमायहैं कि फिर जा;
जो पै तुम स्वामी आजु कटक उलंघि जैहौ,
पाती माहिं कैसे लिखूँ मिश्र मीर मिरजा।

नाम—(५३८) पृथीसिंह दीवान (रसनिधि)।
ग्रंथ—रतनहज़ारा (२८०० दोहे देखे), पद व स्फुट कविता।
समय—१७६०।
विवरण—ये दतिया-राज्य के अंतर्गत जागीरदार थे। इनकी

कविता प्रशंसनीय है। इनकी गणना पद्माकर की श्रेणी में की जाती है। ८८६ पर भी इन्हीं का वर्णन है।

उदाहरण—

रसनिधि मोहन दरस को नैन खरे पल पौरि;
कहा करैं बिन पगन ए आगे सकैं न दौरि॥ १॥
ज्यों बिधि मोहन दरस की दीनी चाह बढ़ाय;
त्यों इन लोभी दृगन के दिए न पंख लगाय॥ २॥
धरत जहाँ नँदलाड़िलो चरन कमल सुखपुंज;
गोपिन के दृग भँवर ह्वै करत फिरत तहँ गुंज॥ ३॥
रसनिधि आवत जानि कै मन मोहन महबूब;
उमँगि दीठि बरुनीन की दृगनि बँधाई दूब॥ ४॥

इनके ग्रंथ ये हैं—(१) विष्णुपद और कीर्तन, (२) कवित्त, (३) बारहमासी, (४) गीतसंग्रह, (५) स्फुट दोहा, (६) रसनिधि की कविता, (७) रसनिधि की कविता, (८) रसनिधि के दोहे, (९) विष्णुपद, (१०) अरिल्ल, (११) कवित्त, (१२) हिंडोरा, (१३) दोहा, (१४) रसनिधिसागर। [प्र० त्रै० रि०]

(५३९) बैताल बंदीजन

ठाकुर शिवसिंह सेंगर ने इनका जन्म-काल संवत् १७३४ माना है और यह भी लिखा है कि ये महाशय विक्रमशाह के दरबार में थे। यह कथन यथार्थ भी है, क्योंकि इन्होंने अपने सब छंद विक्रम को संबोधन करके कहे हैं। इनके किसी ग्रंथ का नाम हमें ज्ञात नहीं है, परंतु स्फुट छप्पय बहुत मिले हैं। बैताल कवि ने शृंगार-रस पर एक भी छंद न बनाकर विविध विषयों पर रचना की है। इन्होंने अधिकतर नीति, कहीं-कहीं पहेली और कहीं मर्दुमी, चुप, एवं ऐसे ही ऐसे अन्य विषयों पर कविता की। एक स्थान पर इन्होंने यह भी कहा कि अब तो ऐसा बुरा समय आया कि मोची, मल्लाह,

भड़भूजे, धोबी, नाई आदि सभी कोई कवित्त पढ़ने लगे। इनके विचार में नीच मानी हुई जातियों के मनुष्यों को कवित्त पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त न होना चाहिए था।

इनकी कविता में अवध और व्रज की भाषाओं का मिश्रण है। आपकी भाषा गिरधरराय के देखते बहुत परिपक्व है, वरन् यों कहना चाहिए कि वह अच्छी है, केवल एकाध स्थान पर उसमें ग्राम्य-भाषा मिल गई है।

इनकी कविता में अद्वितीय उद्दंडता एक अनुपम गुण है। भाषा-साहित्य में किसी भी भले या बुरे कवि में इतनी उद्दंडता नहीं पाई जाती। भाषा में बहुत-से कवियों में उद्दंडता अधिकता से है, परंतु उसकी मात्रा सबसे अधिक इसी कवि में है। गिरधरराय की भाँति इन्होंने भी नीति और अन्योक्ति का प्राधान्य रक्खा है। इन्होंने भी गिरधरराय के समान रोज़ की काम-काज-संबंधिनी सर्वप्रिय बातों पर कविता की है। जितने गुण गिरधरराय में हैं प्रायः वे सब इनमें भी वर्तमान हैं, परंतु उनमें से अधिक बातों में इनका पद उनसे बढ़ा हुआ है। इनकी भी कविता सर्वप्रिय एवं प्रशंसापात्र है। इनके समान सीधे-सादे यथार्थ वर्णन करने में बहुत कम कविजन समर्थ हुए हैं। इनको भी हम पद्माकर की श्रेणी में समझते हैं। इनकी कविता दुष्प्राप्य होने के कारण हम इनके सात छंद नीचे लिखते हैं—

जीभि जोग अरु भोग जीभि बहु रोग बढ़ावै;
जीभि करै उद्योग जीभि लै कैद करावै।
जीभि स्वर्ग लै जाय जीभि सब नरक देखावै;
जीभि मिलावै राम जीभि सब देह धरावै।
निज जीभि ओंठ एकत्र करि बाँट सहारे तोलिए;
बैताल कहै विक्रम सुनो जीभि सँभारे बोलिए॥ १॥

टका करै कुल हूल टका मिरदंग बजावै;
टका चढ़ै सुखपाल टका सिर छत्र धरावै।
टका माय अरु बाप टका भाइन को भैया;
टका सासु अरु ससुर टका सिर लाड़ लड़ैया।
अब एक टके बिनु टकटका लगो रहत नित राति दिन;
बैताल कहै बिक्रम सुनौ धिक जीवन जग टके बिन ॥ २ ॥
मरै बैल गरियार मरै वह अड़ियल टट्टू;
मरै करकसा नारि मरै वह खसम निखट्टू।
बाँभन सो मरि जाय हाथ लै मदिरा प्यावै;
पूत वही मरिजाय जु कुल में दाग लगावै।
अरु बे-नियाउ राजा मरै तबै नींद भरि सोइए;
बैताल कहै बिक्रम सुनो एते मरे न रोइए ॥ ३ ॥
राजा चंचल होय मुलुक को सर करि लावै;
पंडित चंचल होय सभा उत्तर दै आवै।
हाथी चंचल होय समर में सूँड़ि उठावै;
घोड़ा चंचल होय झपटि मैदान दिखावै।
हैं ये चारो चंचल भले राजा, पंडित, गज, तुरी;
बैताल कहै बिक्रम सुनो तिरिया चंचल अति बुरी ॥ ४ ॥
दया चट्ट ह्वै गई धरम धँसि गयो धरन मैं;
पुन्य गयो पाताल पाप भो बरन-बरन मैं।
राजा करै न न्याउ प्रजा की होत खुवारी;
घर-घर भे बेपीर दुखित भे सब नर नारी।
अब उलटि दान गजपति मँगै सील सँतोष किते गयो;
बैताल कहै बिक्रम सुनो अब कलजुग परगट भयो ॥ ५ ॥
मर्द सीस पर नवै मर्द बोली पहिचानै;
मर्द खिलावै खाय मर्द चिंता नहिं मानै।

मर्द देय औ लेय मर्द को मर्द बचावै ;
गाढ़े सँकरे काम मर्द के मर्दै आवै।
पुनि मर्द उनहिं को जानिए दुख सुख साथी दर्द के ;
बैताल कहै बिक्रम सुनौ ए लच्छन हैं मर्द के ॥ ६ ॥
चोर चुप्प ह्वै रहै रैनि अँधियारी पाए ;
संत चुप्प ह्वै रहै मढ़ी में ध्यान लगाए।
बधिक चुप्प ह्वै रहै फाँसि पंछी लै आवै ;
छैल चुप्प ह्वै रहै सेज पर तिरिया पावै।
बर पिपर पात हस्ती श्रवन कोइ कोइ कवि कुछु कुछु कहैं ;
बैताल कहै बिक्रम सुनौ चतुर चुप्प कैसे रहैं ॥ ७ ॥

(५४०) रूप रसिक। इनका कविताकाल जाँच से १७६० सं० के लगभग जान पड़ा है। इनका रचा हुआ 'व्यासदेव जसामृत-सागर'-नामक ६२ मँझोले पृष्ठों का ग्रंथ हमने छत्रपूर में देखा है। इनकी कविता अच्छी होती थी। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण—

इति श्रीमत हरि व्यासदेव जस अमृत सागर लहरी ;
सुभग सवैया बंध मनोहर महा अरथ की गहरी।
या लहरी दूजी सुखदाई लागति महा सुहाई ;
रूप रसिक गाई छबि छाई निज पूरनता पाई ॥ १ ॥

बृंदावन जमुना तीर रम्य ; हरि व्यास सरन बिन सो अगम्य ;
तहँ नव निकुंज महँ मन सुरंज ; वह त्रिबिधि पौन अलि पुंज गुंज ॥ २ ॥

प्र० त्रै० खोज में इनकी 'बृंदावन माधुरी' का भी पता चला है।

नाम—(५४१) रामप्रिया शरण सीताराम,मिथिलावासी।
ग्रंथ—सीतायन।
समय—१७६०।

विवरण—प्रायः ४०० पृष्ठों में सीताजी की कथा वर्णित है। मधुसूदनदास श्रेणी का काव्य है। यह पुस्तक हमें दरबार छतरपूर में देखने को मिली। समय जाँच से लिखा है।

उदाहरण—

पितु दरसन अभिलाख जुगुल कुँवरन मन आई;
गुरु सनमुख कर जोरि भाँति बहु बिनय सुहाई।
पुलके गुरु लखि सील राम को अति सुख पाए;
ताहि समै सब सखा संग लछिमी निधि आए।

(५४२) जानकीरसिक शरणजी ने 'अवधसागर'-नामक एक भारी ग्रंथ राम यश-गान में बनाया, जिसमें १४ अध्याय और ६१६ छंद हैं। इसमें अष्टयाम विस्तृत रूप से हैं और वनविलास, जलकेलि, रास, सभा, भोजन, शयन आदि के सविस्तर वर्णन अच्छे हैं। यह ग्रंथ छत्रपूर में है। इनका कविता-काल जाँच से सं० १७६० जान पड़ा।

उदाहरण—

रथ पर राजत रघुवर राम।
क्रीट मुकुट सिर धनुप बान कर सोभा कोटिन काम।
स्याम गात केसरिया बानो सिर पर मौर ललाम;
वैजंती बन माल लसै उर पदिक मध्य अभिराम।
मुख मयंक सरसीरुह लोचन हैं सबके सुख धाम;
कुटिल अलक अतरन मैं भीनी दुहुँ दिसि छुटी स्याम।
कंबु कंठ मोतिन की माला किंकिनि कटि दुति दाम;
रस माला यह रूप रसिक वर करहु हिये अभिराम॥ १॥

झुकी लता द्रुम डार भूमि परसत सुखरासी;
मनहु भए द्रुम लता इहाँ के तीरथ-बासी।

उड़ि-उड़ि परति विहार थली की अँग रज तिनके ;
लगे सुभग फल गुच्छ नवल दल पर हित जिनके ।

इनकी कविता परमोत्तम है। हम इनको तोष की श्रेणी में समझते हैं ।

नाम—(५४३) संतन ब्राह्मण पाँडे जाजमऊ उन्नाववाले।

उत्पत्तिकाल—१७२८ ।

कविताकाल—१७६० ।

विवरण—साधारण श्रेणी । इनका बनाया हुआ एक छंद यहाँ उद्धृत किया जाता है—

वै धन देत लुटाय भिखारिन यै विधि पूरब दान गऊ के ;
वै चितवैं अँखियाँ जुग सों अरु यै चितई अँखियाँ थकऊ के ।
वै उपमन्यु दुबे जग जाहिर पाँडे वनस्थी के यै मधऊ के ;
वै कवि संतन हैं बेंदुकी हम हैं कवि संतन जाजमऊ के ।

नाम—(५४४) संतन दुबे बेंदुकी ।

उत्पत्तिकाल—१७३० ।

कविताकाल—१७६० ।

विवरण—साधारण श्रेणी के कवि थे । संतन जाजमऊवाले ने इनका वर्णन अपने उपर्युक्त कवित्त में किया है ।

(५४५) मोहन भट्ट

ये महाशय बाँदा-निवासी कवि पद्माकर के पिता थे । इनका हाल पद्माकरवाले लेख में मिलेगा । इन्होंने भी उत्कृष्ट कविता की और अनुप्रास का समादर अच्छा किया । हम इन्हें साधारण श्रेणी में रक्खेंगे ।

उदाहरण—

दावि दल दक्खिन सु सिक्खन समेत दीन्हे,
लीन्हे वेगि पकरि दिलीस दहलनि में ;

रूम रुहिलान खुरासान हबसान तचे,
तुरुक तमाम ताके तेज तहलनि में।
मोहन भनत यों बिलाइति नरेश ताहि,
सेर रतनेस घेरि ल्यायो सहलनि में;
जेहिं अँगरेज रंज कीन्हें नृपजाल तेहिं,
हाल करि सुवस मचायो महलनि में।

इनका कविताकाल १७६० के आसपास था।

(५४६) आलम

इनका समय अकबर के राजत्व काल में था। शिवसिंहजी ने इनका बनाया हुआ मुअज़्ज़म की प्रशंसा का एक छंद लिखा है। यदि यह मुअज़्ज़म औरंगज़ेब के पुत्र से भिन्न थे तब तो कोई बात नहीं, नहीं तो ऐसा संभव जान पड़ता है कि आलम नाम के दो कवि हों। आलम ब्राह्मण थे, परंतु शेख़ कवि-नामक रँगरेज़िन के प्रेम में फँसकर मुसल्मान हो गए और उसके साथ विवाह करके सुखपूर्वक रहते रहे। इनके जहान-नामक एक पुत्र भी था। इनके चरित्रों का कुछ वर्णन शेख़ के हाल में आवेगा। कुछ लोगों का विचार है कि आलम का दूसरा नाम शेख़ है।

इस कवि का हमने कोई ग्रंथ नहीं देखा, परंतु प्रायः ३० स्फुट छंद हमारे देखने में आए हैं। स्वर्गीय मुंशी देवीप्रसादजी ने लिखा था कि उनके पास आलम और शेख़ के क़रीब ५०० छंद थे। इनके छंद देखने से हमें जान पड़ता है कि इन्होंने नखशिख का भी कोई ग्रंथ लिखा होगा। आलम एक स्वाभाविक कवि था और इसकी कविता बड़ी मनोहर है। खोज में आलमकेलि, [खोज १६०३] आलम की कविता [द्वि० त्रै० रि०] तथा माधवानल कामकंदला [खोज १६०४]-नामक इनके ग्रंथ भी मिले हैं। याज्ञिकत्रय के पास इनका श्यामसनेही ग्रंथ है। कविता में यह कवि बड़ा कुशल है

और इस कौशल का कारण भी इसका अविचल इश्क़ है। जान पड़ता है कि शेख़ इन्हीं के सामने मर गई थी, क्योंकि उसके विरह में इन्होंने एक बड़ा ही टकसाली छंद कहा है। इस छंद के रचयिता होनें से भाषासाहित्य के किसी भी कवि को अभिमान हो सकता था। इनकी भाषा अत्युत्तम और भाव गंभीर हैं। हम इनकी गणना पद्माकर कवि की श्रेणी में करते हैं।

कैधौं मोर सोर तजि गए़री अनत भाजि,
कैधौं उत दादुर न बोलत हैं ये दई;
कैधौं पिक चातक महीप काहू मारि डारयो,
कैधौं बक पाँति उत अंत गति ह्वै गई।
आलम कहत आली अजहूँ न आए मेरे,
कैधौं उत रीति विपरीति बिधि ने ठई;
मदन महीप की दोहाई फिरिबे ते रही,
जूझि गए मेघ कैधौं बीजुरी सती भई॥ १॥

जा थर कीन्हें विहार अनेकन ता थर काँकरी बैठि चुन्यो करैं;
जा रसना सों करी बहु बातन ता रसना सों चरित्र गुन्यो करैं।
आलम जौन से कुंजन मैं करी केलि तहाँ अब सीस धुन्यो करैं;
नैनन मैं जे सदा रहते तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करैं॥ २॥

(५४७) शेख़ रँगरेजिन

इनके मातापिता का कुछ हाल हमें नहीं मालूम है, केवल इतना ज्ञात है कि इनकी प्रीति आलम-नामक एक ब्राह्मण कवि से हो गई थी। इन्हीं के इश्क़ में पड़कर वे मुसल्मान हो गए और तब इन दोनों का विवाह भी हुआ। इन दोनों का साक्षात्कार भी विचित्र प्रकार से हुआ। कहते हैं कि आलम कवि ने एक बार इसे एक पगड़ी रँगने को दी, जिसके एक खूँट में भूल से एक काग़ज़ का टुकड़ा बँधा रह गया था। इसने खोलकर देखा तो उसमें निम्न

पद लिखा पाया—"कनक-छरी-सी कामिनी काहे को कटि छीन ?" यह आधा दोहा आलम ने बनाया था, परंतु शेष न बनने से फिर विचार करने को पगड़ी में उसे बाँध दिया था। शेख़ ने पगड़ी रँग-कर और दोहा पूरा करके उसी प्रकार उसी खूँट में बाँध दिया। शेख़ का पद यह था—

"कटि को कंचन काटि विधि कुचन मध्य धरि दीन।"

आलम ने अपनी पगड़ी ले जाकर जब यह पद पढ़ा तो उसे रँगाई देने गए और उससे पूछा कि "इस दोहे को किसने पूरा किया ?" उत्तर पाया कि "मैंने।" बस आलम ने एक आना पगड़ी की रँगाई और एक सहस्र मुद्रा दोहे की बनवाई शेख़ को दिए। उसी दिन से इन दोनों में प्रेम हो गया और अंत में आलम ने मुसल्मानीमत ग्रहण करके इसके साथ निकाह कर लिया। कहते हैं कि शेख़ ने अपने पुत्र का नाम जहान रक्खा था। एक बार आलम के आश्रय-दाता शाहज़ादा मुअ़ज्ज़म ने हँसी करने के विचार से शेख़ से पूछा—"क्या आलम की औरत आप ही हैं ?" इस पर उसने तुरंत उत्तर दिया—"हाँ जहाँपनाह ! जहान की माँ मैं ही हूँ।" मुंशी देवीप्रसाद-जी ने उपर्युक्त दोहे के स्थान पर एक कवित्त के तीन पद लिखे हैं और शेख़ द्वारा उसके चौथे पद का बनना लिखा है। वह कवित्त यह है—

प्रेम रँग पगे जगमगे जगे जामिनि के,
जोबन की जोति जगि जोर उमँगत हैं;
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत हैं,
झूमत हैं झुकि-झुकि झँपि उघरत हैं।
आलम सो नवल निकाई इन नैनन की,
पाँखुरी पदुम पै भँवर थिरकत हैं;
चाहत हैं उड़िबे को देखत मयंक मुख,
जानत हैं रैनि ताते ताहिमैं रहत हैं।

मुंशी देवीप्रसादजी शेख़ का अकबर के समय में होना लिखते हैं, परंतु ठाकुर शिवसिंहजी ने इनके पति आलम का मुअज़्ज़म के यहाँ होना कहा है। बादशाह औरंगज़ेब के द्वितीय पुत्र का नाम भी मुअज़्ज़म था। आलम-कृत एक छंद में मुअज़्ज़मशाह का यश वर्णित है। शिवसिंहजी ने यह भी लिखा है कि शेख़ के छंद कालिदास-कृत हज़ारा में मिलते हैं। इस हज़ारा में संवत् १७७५ तक के कवियों के छंद संगृहीत हैं, अतः यह निश्चय है कि आलम और शेख़ उस समय या उससे पहले अवश्य थे। मुअज़्ज़म का भी समय हज़ारा के प्रतिकूल नहीं पड़ता है। कुछ लोग शेख़ और आलम को एक ही समझते हैं और इनका समय अकबर के राजत्व काल में मानते हैं।

शेख़ के छंद परम मनोहर होते थे। मुंशी देवीप्रसादजी ने लिखा था कि शेख़ और आलम के पाँच सौ छंद उनके पास संगृहीत हैं। हमने इनका कोई ग्रंथ नहीं देखा, परंतु स्फुट छंद संग्रहों में बहुत पाए हैं। इनकी भाषा व्रजभाषा है। इनकी कविता से इनके प्रेमी होने का प्रमाण मिलता है। इनकी गणना हम तोष कवि की श्रेणी में करते हैं। उदाहरणार्थ इनका केवल एक छंद यहाँ लिखते हैं—

रति रन बिषे जे रहे हैं पति सनमुख,
तिन्हैं बकसीस बकसी है मैं बिहँसि कै;
करन को कंकन उरोजन को चंद्रहार,
कटि माहिं किंकिनी रही है अति लसि कै।
सेख कहै आनन को आदरसों दीन्हों पान,
नैनन में काजर बिराजै मन बसि कै;
पूरे बैरी बार ये रहे हैं पीठि पाछे,
ताते बार बार बाँधति हौं बार बार कसि कै।

नाम—(५४७/१) भगवान मिश्र मैथिल (१७६०) बस्तर राज्यांतर्गत दंतावारा ग्राम के एक हिंदी शिला-लेख के लेखक।

दंतावाला देवी जयति। देववाणी मह प्रशस्ति लिखाए राजा दिक्पाल देव के कलियुग महँ संस्कृत के बचवैया थोर हो हैं तें पांइ भाषा लिखे हैं । सोमवंशी पांडव अर्जुन के संतान तुरुकान हस्तिं-नापुर छाड़ि ओरंगल के राजा भए। ते वंश महँ काकती प्रताप रुद्र नाम राजा भए जे राजा शिव के अंश नउ लाख धानुक के ठाकुर जे के राज्य सुवर्न वर्षा भै ते राजा के भाई अन्नमराज वस्तर महँ राजा भए ओरंगल छाड़ि कै। ते के संतान हंमीरदेव राजा भए। ताके पुत्र भैरवराजदेव राजा । ताके पुत्र पुरुसोत्तमदेव महाराजा ताके पुत्र जैसिंहदेव राजा ताके पुत्र नरसिंहराय देव महाराजा जेकर महा-रानी लछिमादेई अनेक ताल बाग करि सोरह महादान दीन्हें। ताके पुत्र जगदीश राय देव राजा। ताके पुत्र वीरसिंह देव नाम धर्म अवतार, पंडित-दाता, सर्वगुन-सहित, देव ब्राह्मन पालक चंदेलिन वदन कुमरि महारानी विषैं दंतावली के प्रसाद तें दिक्पालदेव पुत्र पाए। शत-सठि वर्ष राज्य करि दिक्पालदेव कहँ राज सौंपि कै वैशाषी पूर्णिमा महँ प्राणायाम समाधि वैकुंठ गए। ताके पुत्र स्वस्ति श्री महाराजा-धिराज सक प्रशस्ति सहित पृथुराज के अवतार, बुद्धिगणेश, बल-भीम, सोभाकाम, पन परशुराम, दानकर्ण, (वान) अर्जुन अचल सुमेरु, सीलसागर, रीझेकुबेर, तेजपैन, खीझे यम, प्रताप अगिनि, षांडा धरे निहरति, सेहधी धेर वरुण, सेना सरदार इंद्र, बध (दे) त महादेव, आचार ब्रह्मा, विद्या सेस नाग एहूँ भाँति दस दिक्पाल के गुन जानि "पंडित वामन" दिक्पाल देव नाम धरे। ते दिक्पाल-देव बिआह कीन्हें बरदी के चंदेलराव रतन राजा के कन्या अजब-कुमरि महारानी विषैं अठारहें वर्ष रक्षपाल देव नाम युवराज पुत्र भए। तब इन्हातें "नवरंगपुर" गढ़ टोरि फारि सकल बंद करि जगन्नाथ बस्तर पठै के फेरि नवरंगपुर देकै ओढिया राजा थापे(र) बाजे। पुनि सकल पुरवासी लोग समेत दंतावालां के 'कुटुम जात्रा'

संवत् सत्रह सै साठि १७६०. चैत्र सुदी १४ आरंभ. वैशाख बदी ३ ते संपूर्न भै जात्रा। कतेकौ हजार भैंसा बोकरा मारे तेकर रकत प्रवाह वह पाँच दिन संषिनी नदी लाल कुसुम वर्न भए। ई अर्थ मैथिल भगवान मिश्र राजगुरु पंडित भाषा औ संस्कृत दोउ पाथर महि लिखाए। अस राजा श्री दिक्पालदेव समान। कलियुग न होहै आन राजा।

(५४८) गुरु गोविंदसिंह

ये महाशय सिक्खों के अंतिम दसवें गुरु थे। इनका जन्म संवत् १७२३ में हुआ था और स्वर्गवास १७६५ में। ये महाराज गुरु होने के अतिरिक्त प्रचंड युद्धकर्त्ता भी थे। इन्होंने सिक्खों में जातीयता का बीज बोया। ये महाशय सुहावनी कविता भी करते थे और कविता की। जो लाभ इनसे पंजाब को पहुँचा उस पर ध्यान देने से ये महाशय किसी भी श्रेणी में रक्खे जा सकते हैं। इनका कविता-काल संवत् १७६१ समझना चाहिए। इन्होंने सुनीतिप्रकाश, सर्वलोहप्रकाश, प्रेमसुमार्ग, बुद्धिसागर और चंडीचरित्र (खोज १९०३)-नामक ग्रंथ लिखे और सिक्ख ग्रंथ का भी कुछ भाग बनाया।

उदाहरण—

आदि अपार अलेख अनंत,
अकाल अभेख अलेख्य अनासा;
कै शिव शक्ति दए स्तुति चारि,
रजोत्तम सत्त जिहँइ पुरवासा।
द्योस निसा ससि सूर कै दीपक,
सृष्टि रची पचि तत्त प्रकासा;
वैर बढ़ाइ लराइ सुरासुर,
आपुहि देखत आपु तमासा।

(५४९) चंद व पठान सुल्तान

ये महाशय राजगढ़ भूपाल के नवाब थे। कविता के ये परम प्रेमी संवत् १७६१ के इधर-उधर हो गए हैं। इनके नाम पर चंद्र कवि ने बिहारी सतसई के दोहों पर कुंडलियाएँ लगाईं। चंद्र ने यें कुंडलियाँ आदरणीय कही हैं। इनकी अन्य रचनाएँ भी परम मनोहर हैं। हम इनको तोप कवि की श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण—

नासा मोरि नचाय दृग करी कका की सौहँ;
काँटे लौं कसकति हिये गड़ी कटीली भौहँ।
गड़ी कटीली भौहँ केस निरवारति प्यारी;
तिरछी चितवनि चितै मनो उर हनति कटारी।
कहि पठान सुलतान विकल चित देखि तमासा;
वाको सहज सुभाव और को बुधि बल नासा।

खोज में एक चंद द्वारा 'महाभारत भाषा' का निर्माण होना लिखा है, पर उनका समय नहीं दिया है। जान पड़ता है कि इन्हीं चंद ने महाभारत भाषा बनाई। शिवसिंहसरोज में दो और चंद लिखे हैं, पर उनका कोई समय नहीं लिखा है और न उनके छंदों हीं से जान पड़ता है कि वे लोग इस चंद से पृथक् हैं। हमारे विचार में इस एक ही महाशय का नाम सरोज में तीन जगहों पर लिखा है।

(५५०) उदयनाम उपनाम कवींद्र

ये महाशय बनपुरा निवासी कान्यकुब्ज तेवारी महाकवि कालिदास के पुत्र और दूलह के पिता थे। दूलह और राजा गुरुदत्तसिंहजी के वर्णन में इनका कुछ हाल मिलेगा। सरोज में इनके विषय में यह लिखा है कि ये अमेठी के राजा हिम्मतसिंह और तत्पुत्र राजा गुरुदत्तसिंह के यहाँ रहे। राजा हिम्मतसिंह ने ही इन्हें रसचंद्रोदय-

नामक ग्रंथ बनाने पर कवींद्र की उपाधि दी। इस ग्रंथ में भी इन्होंने अपने नाम उदैनाथ और कवींद्र दोनों लिखे हैं, जिससे जान पड़ता है कि ये महाशय यह ग्रंथ प्रारंभ करने के समय में ही कवींद्र की उपाधि पा गए थे। सरोज में लिखा है कि इसी एक ग्रंथ के रतिविनोदचंद्रिका, रतिविनोदचंद्रोदय, रसचंद्रिका और रसचंद्रोदय, नाम हैं। खोज [१६००] में जोगलीला-नामक इनके एक और ग्रंथ का नाम लिखा है। खोज १६०५ में रसचंद्रोदय का रचनाकाल १८०४ होना तथा इसका विनोदचंद्रिका से भिन्न होना लिखा है। यहाँ के पीछे ये महाशय भगवंत राय खीची एवं बूंदी के राव राजा बुद्धसिंह के यहाँ भी गए और इन्होंने अच्छा सम्मान पाया। शिवसिंहजी ने लिखा है कि ये जैपुर के महाराजा गजसिंह के यहाँ भी गए थे, और इनका कूर्मवंशी राजा गजसिंह की प्रशंसा का छंद भी शिवसिंहसरोज में लिखा है, परंतु जैपुर में गजसिंह-नामक कोई भी महाराजा नहीं हुआ। जान पड़ता है कि ये गजसिंह जैपुर के महाराजाओं की ठकुराइस में होंगे। दूलह कवि के वर्णन में हम कवींद्र का जन्म-काल संवत् १७३६ माना है। इनके बनाए हुए गुरदत्तसिंह, भगवंतसिंह, गजसिंह, और रावबुद्ध की प्रशंसा के प्रकृष्ट छंद मिलते हैं। राजा गुरदत्तसिंह ने संवत् १७६१ में सतसई बनाई थी। इससे भी कवींद्र के संवत् का परिचय मिलता है। इनके ग्रंथ अब तक दो ही मिले हैं, परंतु इन्होंने और ग्रंथ अवश्य बनाए होंगे। खोज [१६०२] से इनके विनोदचंद्रिका-नामक एक और ग्रंथ का पता चलता है। इन्होंनें व्रजभाषा में कविता की जो बहुत ही प्रसंनीय है। इन्होंने अनुप्रास का भी आदर किया। इनकी श्रृंगार-रस की कविता बहुत आदरणीय है। इनकी गणना पद्माकर की श्रेणी में की जा सकती है।

उदाहरण लीजिए—

कुंजन ते मग आवत गावत राग बनावत देवगिरी को,
सो सुनिकै वृषभानु सुता तलफै जिमि पंजर जीवचिरीको ;
तार थकै नहिं नैनन ते सजनी अँसुवान की धार झिरी को,
मार मनोहर नंदकुमार के हार हिये लखि मौलसिरी को ॥१॥

रन-वन-भू मैं तव भुज लतिका पै चढ़ी,
कढ़ी स्यान बाँबी ते विपम विप भरी है ;
जा रिपु को डसै सोतौ तजै प्रान ताही छन,
गारुड़ी अनेक हारे झारे ते न झरी है ।
भनत कविंद रावबुद्ध अनिरुद्ध तनै,
जुद्ध वीरता सों एक तू ही बस करी है ;
तरल तिहारी तरवारि पन्नगी को कहूँ ।
मंत्र है न तंत्र है न जंत्र है न जरी है ॥२॥

(५५१) श्रीधर उपनाम मुरलीधर

ये महाशय प्रयाग के रहनेवाले थे । बाबू राधाकृष्णदास ने इनका जंगनामा नागरी-प्रचारिणी-ग्रंथ-माला में प्रकाशित कराया । उसकी भूमिका में उन्होंने इनके ग्रंथों और जन्मकाल का वर्णन किया है । उससे जान पड़ता है कि श्रीधर के बहुत-से ग्रंथ बाबू साहेब के पास मौजूद थे । इस भूमिका से विदित होता है कि श्रीधर ने राग-रागिनियों का ग्रंथ, नायिका-भेद, जैन मुनियों का वर्णन, श्रीकृष्णचरित्र की स्फुट कविता, चित्रकाव्य, जंगनामा और बहुत-सी स्फुट कविता बनाई । बाबू राधाकृष्णदास ने इनका जन्म-काल संवत् १७३७ के लगभग माना है । मुद्रित जंगनामा में ६६ पृष्ठ हैं जिनमें जहाँदार एवं फ़रुंख़सियर का युद्ध वर्णित है । फ़रुंख़सियर बहादुरशाह के बड़े बेटे का पुत्र और बादशाही का उचित उत्तराधिकारी था, परंतु जहाँदारशाह ज़बरदस्ती सिंहासनारूढ़ हो गया था । फ़रुंख़सियर ने उसे पराजित करके हिंद का राज्य

प्राप्त किया। इस ग्रंथ में कई छंदों में कथा वर्णित है और दोहा-चौपाइयों की रीति का अनुसरण नहीं हुआ है। इसमें ब्रजभाषा और खड़ी बोली का मिश्रण, कविता साधारण, और वीरों के साज-सामान एवं युद्धार्थ तैयारी का वर्णन बहुतायत से है। हम कथा प्रासंगिक कवियों में इन्हें मध्यम अर्थात् छत्र कवि की श्रेणी में रखते हैं। इनका एक कवित्त नीचे लिखा जाता है।

इत गलगाजि चढ़यो फरुख सियर साह,
उत मौजद्दीन करि भारी भट भरती;
तोप की डकारनि सों वीर हहकारनि सों,
धौंसा की धुकारनि धमकि उठी धरती।
श्रीधर नवाब फरजंद खाँ सु जंग जुरे,
जोगिनी अघाई जुग जुगन की बरती;
हहरयो हिरौल भीर गोल पै परी ही तू न,
करतो हरौली तौ हिरौलै भीर परती।

नाम—(५५२) महाराजा राजसिंह कृष्णगढ़।

ग्रंथ—(१) राजप्रकाश, (२) रसपायनायक [खोज १९०२], (३) बाहुविलास [खोज १९०२]।

राजकाल—१७६३ से १८०५ तक।

विवरण—ये महाशय कृष्णगढ़ के राजा प्रसिद्ध कवि महाराजा सावंतसिंह (नागरीदास) के पिता थे। इनकी कविता साधारण श्रेणी की थी।

उदाहरण—

श्री गोपाल सहाय ह्वै राधावर रस पुंज;
केलि कुतूहल रास रस कीने कुंज निकुंज।
तपी जपी जे संयमी निसि दिन सोधत ताहि;
भानु सुता के दरस की सो हरि करत जु चाहि।

(५५३) लाल कवि मऊवाले

इस महाकवि ने संवत् १७६४ के लगभग छत्रप्रकाश-नामक दोहा-चौपाइयों में एक अनमोल ग्रंथ बनाया, जिसे काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने अपनी ग्रंथमाला में प्रकाशित किया है। इनका द्वितीय ग्रंथ 'विष्णुविलास' है, जिसमें बरवै छंदों द्वारा कविता की गई है। इसमें नायिकाभेद का वर्णन है और इसकी कविता साधारण है। इनका पूरा नाम गोरेलाल था। यह पता हमें छत्रपुर में लगा। इनका नाम शिवसिंहसरोज में नहीं दिया गया है, परंतु उसमें लिखा है कि बूँदी के महाराजा छत्रसाल के यहाँ एक लाल कवि थे। छत्र-प्रकाश के रचयिता लाल महेवा एवं पन्ना के महाराजा छत्रसाल के यहाँ थे। महेवा छत्रपुर के अंतर्गत मऊ से मिला हुआ अब एक छोटा-सा ग्राम है। इन्होंने अपने कुल, निवास-स्थान आदि के विषय में कुछ भी नहीं कहा है। बीकानेर-निवासी भट्ट उत्तमलाल गोस्वामी तैलंग ने निम्न-लिखित सूचना कवि गोरेलाल उपनाम लाल कवि के विषय में लिख भेजी है—

लाल कवि का जन्म संवत् १७१९ के लगभग हुआ था। इनके पूर्वज आंध्र देश में राजमहेंद्री ज़िले के नृसिंह क्षेत्र धर्मपुरी में रहते थे। ये मुद्गल गोत्री भट्ट तैलंग ब्राह्मण थे। इनके पूर्वज भट्ट काशीनाथ की पूर्णा नाम की कन्या श्रीजगद्गुरु वल्लभाचार्यजी को ब्याही गई थी। भट्ट काशीनाथ के पुत्र जगन्नाथ के ६ पुत्र हुए। इनको बहलोल लोदी दिल्ली सम्राट् ने ६ ग्राम दिए थे। अतः ये लोग भी इन्हीं ग्रामों के नाम से प्रसिद्ध हुए तथा उनके नाम लुप्त हो गए। ग्रामों के नाम गिट्टा, लंबुक, जोगिया, तिघरा, गिरधन तथा भरस थे। इनमें श्रीगिट्टा के नागनाथ पुत्र हुए। नागनाथ के १० पीढ़ी पश्चात् कविलाल उपनाम गोरेलाल तथा दीनानाथ हुए। इन्हीं गिट्टा आदि छै भाइयों की संतान छवैया अर्थात् छ-भैया कहलाती

है। गंगाधर शास्त्री तैलंग के पुत्र कृष्ण शास्त्री ने अपना परिचय वल्लभ दिग्विजय में इस प्रकार दिया है—

बह्वृक्मौद्गल्यगोत्रे प्रथिततर यशा नागनाथान्वयेभूत्।
बुंदेलाधीश पूज्यः कविकुलतिलको गौरिलालाख्य भट्टः॥
शास्त्री गंगाधरस्तत्कुलजनिरभवत् तत्कुले शास्त्रि कृष्णः।
तेनेदं लिख्यते श्रीगुरुवर चरितं स्रग्धराणां मतेन॥

इससे स्पष्ट है कि गोरेलाल भट्ट नागनाथ के वंशज एवं बुंदेलाधीश्वर से सम्मानित तैलंग ब्राह्मण थे। संवत् १५३५ में बुँदेलखंड की रानी दुर्गावती ने नागनाथ को हटा दमोह के पास संकोलि-नामक ग्राम दिया था। तभी से ये तथा इनके वंशज बुँदेलखंड में आए। इन्हीं नागनाथ के वंश में लाल कवि हुए। महाराजा छत्रसाल ने लाल कवि को बढई, पठारा, अभानगंज, सगेरा तथा दग्धा-नामक पाँच ग्राम दिए। लाल कवि दग्धा में रहने लगे और अब भी उनके वंशज वहाँ रहते हैं। लाल कवि ने (१) छत्र प्रशस्ति, (२) छत्र छाया, (३) छत्र कीर्त्ति, (४) छत्र छंद, (५) छत्रसाल-शतक, (६) छत्र हज़ारा, (७) छत्रदंड, (८) छत्र प्रकाश, (९) राजविनोद तथा (१०) विष्णु विलास-नामक १० ग्रंथ रचे। राजविनोद का एक कवित्त इस प्रकार है—

पलँग की पाटी गहे हाल हाल हुलसत,
बाजत नूपुर जब सुनत हैं पाँय को;
लाल कहै ललित खिलौना लहें हरखत,
निरखत सुमन सुभाय सिरनाय को।
नंद जू के मंदिर अनंदमय ब्रह्म देखो,
खेलत स्वरूप धरे बालक सुभाय को;
हूँ करत हाँ करत गूँ करत गाँ करत,
ता करत ताकत किलकि मुख माय को।

लाल कवि के वंशज बीकानेर, अजयगढ़, बनारस, टीकमगढ़, बिजावर, दगधा, कोटा तथा कांवन (कामा) में रहते हैं। भट्ट उत्तमलालजी भी लाल कवि के प्रपौत्र के प्रपौत्र अर्थात् लाल कवि से सातवीं पीढ़ी में हैं। लालजी ने लिखा है कि छत्रप्रकाश स्वयं छत्रसाल की आज्ञा से बनाया गया। इस ग्रंथ में सं० १७६४ विक्रमीय तक छत्रसाल की जीवनी का वर्णन किया गया है, पर उसके पीछे ग्रंथ अपूर्ण जान पड़ता है। संभव है कि लाल कवि छत्रसाल के पूर्व ही स्वर्गवासी हो गए हों, अथवा नागरी-प्रचारिणी सभा को अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई हो। छत्रसाल का स्वर्गवास संवत् १७९० के लगभग हुआ था। उनके जीवन-संबंधी २७-२८ साल का हाल इसमें नहीं मिलता है। लाल ने लिखा है कि छत्रसाल का जन्म संवत् १७०६ में हुआ।

यथा—

संवत् सत्रहसै लिखे आठ आगरे बीस ;
लगत बरस बाईसई उमड़ि चल्यौ अवनीस।

यह संवत् बुंदेलखंड गज़ेटियर से मिलता है। लाल ने कुल कथा सच्ची-सच्ची लिखी है, यहाँ तक कि एक युद्ध में छत्रसाल के भागने का भी वर्णन किया है। इनकी कथा सब तरह बुँदेलखंड गज़ेटियर से मिलती है, इसलिये उसे सच्ची मानने में कोई शंका नहीं हो सकती। इनके अनुसार बुँदेला क्षत्री महाराजा रामचंद्रजी के पुत्र कुश के वंश में हैं, और उनकी काशीश्वर एवं गहिरवार उपाधियाँ हैं। इस वंश में पंचमसिंह एक बड़े प्रतापी राजा हुए। उन्हीं के पुत्र महाराजा बुँदेला उपनाम "वीर" थे और जिस देश में इनके वंशज बसे उसी को लोग बुँदेलखंड कहते हैं। उस समय बुँदेला लोग महेवा और ओड़छा में राज्य करते थे। लाल ने बुँदेला के पूर्वजों में हरिब्रह्म से लेकर छत्रसाल पर्यंत सबके नाम लिखे हैं। ओड़छा

के मधुकर शाह इत्यादि का नाम भी इसी वंशावली में आ जाता है। लाल ने चंपतिराय की विजयों का वर्णन बड़ा ही उत्तम और विस्तार-पूर्वक किया है और अपनी कविता में दिखला दिया है कि तत्कालिक भारतवर्ष के इतिहास पर चंपतिराय का कितना प्रभाव पड़ा। चंपतिराय चार भाई थे। अतः इन्होंने चार पर अपनी कविता में बहुत कुछ कहा है। यथा—

चारिउ भैया उद्भट जानौ; चारिउ भुजा विष्णु की मानौ।
चारिउ चरन पुन्य छवि छायौ; चारिउ फलन देन जनु आयौ।
हिंदुवान सुरगज उर आनौ; ताके चारौ दंत बखानौ।
चारौ अंग चमू जिन राखी; चारौ समुद जीति अभिलाखी।
अंतःकरन चारि हुलसाए; चारिउ चक्र सुजस बगराए।
हरि के आयुध चारि गनाए; ते जनु छिति रच्छन हित आए।

चंपति के विजयों का हाल निम्न-लिखित छंदों से कुछ विदित होगा—

गनै कौन चंपति की जीतैं; गनपति गनैं तऊ जुग बीतैं।
साहिजहाँ उमड्यो घन घोरा; चंपति झंझा पौन झकोरा।
साहि कटक झकझोरि झुलायौ; गिल्यौ बुँदेलखंड उगिलायौ।
धनि चंपति फिरि भूमि बहोरी; भुजन पातसाही झकझोरी।

प्रलै पयोद उमंड मैं ज्यौं गोकुल जदुराय;
त्यौं बूड़त बुंदेल कुल राख्यौ चंपतिराय।

× × × ×

कीनो कूच राति उठि जागे; चंपति भयो सबन के आगे।
उमड़ि चल्यौ दारा के सौहैं; चढ़ी उदंड जुद्धरस भौहैं।
चंपतिराय जगत जसु छायौ; ह्वै हरौल दारा बिचलायौ।
धनि चंपति राख्यो तुम पानी; धनि धनि लाल कुँवरि ठकुरानी।
धनि चंपति जिन खल दल खंडे; धनि चंपति निज कुल जिन मंडे।
धनि चंपति निरबल जिन थापे; धनि चंपति जिन सबल उथापे।

धनि चंपति सज्जन मन भाए; धनि चंपति जिन जस बगराए।
धनि चंपति की कठिन कृपानी; धनि चंपति की रुचिर कहानी।

× × × ×

तब तौ चंपति भयौ सहाई; गिली भूमि भुज बल उगिलाई।
चंपतिराय कहाँ अब पैये; कैसे अपनो बंस बचैये।
जब ते चंपति करयौ पयानो; तबतें परयो हीन हिंदुवानो।
लख्यो होन तुरकन कौ जोरा; को राखै हिंदुन को तोरा।
चंपतिराय तेग कर लीनी; ओप बुँदेलखंड कौ दीनी।
भुजन पातसाही झकझोरी; गई भूमि जुरि जुद्ध बहोरी।

पंचम उदयाजीत के कुल को यहै सुभाउ;
दलै दौरि दिल्लीस दल ज्यौं दुरदनि बनराउ।

चंपतिराय के मरने के समय समस्त राज्य मुग़लों के क़ब्ज़े में आ गया था। अतः छत्रसाल को, जो चंपतिराय के तीसरे पुत्र थे, फिर से बादशाह का सामना करना पड़ा। उन्होंने केवल पाँच सवार और २५ पियादों को लेकर औरंगज़ेब से बादशाह के साथ लड़ाई का साहस किया। इन्होंने अपनी पालिसी को इस प्रकार अपने चचेरे भाई से कहा है, कि जिससे इनकी हिम्मत का पूरा परिचय मिलता है—

"जे भुमियाँ हम मैं मिलि रैहैं; तेई संग फौज के ह्वै हैं।
जे न लागिहैं संग हमारे; दोपु न लागै तिनके मारे।
जे उमराव चौथि भरि देहैं; तेई अमलु देस को पैहैं।
जिनमें ऐंड युद्ध की पावौ; तिनपै उमँगि अस्त्र अजमावो।

"तेग छाइहै देस में देस आइहैं हाथ;
शत्रु भागिहैं मानि भय लोग लागिहैं साथ।"

छत्रसाल ने पहले दो-चार छोटी-छोटी लड़ाइयाँ लड़कर और अपना बल बढ़ाके एक-एक करके दाग़ी, रणदूलह, रूमी, तहौवरख़ाँ,

शैख़अनवर, सदरुद्दीन, अब्दुल्‌समद, शेरअफ़ग़ानख़ाँ और शाहकुली को परास्त किया। ये सब दिल्ली के अफ़सर थे और इन सबके साथ बड़ी-बड़ी शाही फ़ौजें थीं, यहाँ तक कि अकेले रणदूलह के साथ ३० हज़ार फ़ौज थी। इन सबका युद्ध छत्रप्रकास में बहुत उत्तम रीति से वर्णित है और इनमें भी सदरुद्दीन एवं अब्दुल्‌समद का युद्ध बड़ा ही विशद है। इन सबमें केवल शेरअफ़ग़ान के सामने से एक बार छत्रसाल को भागना पड़ा था। इस समय संवत् १७६३ में औरंगज़ेब की मृत्यु हो गई और उनके पुत्र बहादुरशाह ने छत्रसाल को मित्रभाव से बुलाकर उनसे लोहागढ़ जीत देने की प्रार्थना की। इसपर छत्रसाल ने बादशाह को लोहागढ़ जीत दिया। तब बादशाह ने इन्हें दो करोड़ रुपए वार्षिक आय के राज्य का (जो इनके क़ब्ज़े में था) स्वतंत्र राजा मान लिया। इसी स्थान पर छत्रप्रकाश समाप्त हो गया है। इसके कुछ पहले किसी ब्याज से लाल ने कृष्ण-कथा का १० पृष्ठ में उत्तम वर्णन किया है। छत्रसाल के युद्धों के अतिरिक्त लाल ने पंचम और छठे अध्याय में बहुत उत्तम वर्णन किए हैं। छत्रसाल की प्रशंसा के कुछ छंद नीचे लिखे जाते हैं।

लखत पुरुष लच्छन सब जानै; पच्छी बोलत सगुन बखानै।
सत कबि कबित सुनत रस पागै; बिलसत मति अरथन मैं आगै।
रुचि सों लखत तुरँग जे नीके; बिहँसि लेत मुजरा सब ही के।
कह्यो धन्य छिति छत्र छतारे; तुम कुलचंद हिंदुगन तारे।

चौंकि चौंकि सब दिसि उठैं सूबा खान खुमान;
अब धौं धावै कौन पर छत्रसाल बलवान।

× × × ×

रूमी भगे साहि त्यौं जाने; कारीपरी कुहि तुरकाने।
छत्ता कह्यौ रच्छक सो जानौं; सोइ बलवंत सहायक मानौं।

जो प्रभु तिहूँ लोक को स्वामी; घट घट व्यापक अंतरजामी।
जहाँ सेवकहिं निद्रा लागै; साहेब तहाँ संग ही जागै।
गरबीलेन के गरबन ढाहै; गरब प्रहारी बिरद निबाहै।
केतिक मिरजा की रिस खोटी; प्रभु के हाथ सबन की चोटी।

इन पूर्वोक्त छंदों से छत्रसाल की भक्ति भी पूर्ण-रूप से प्रकट होती है। कई स्थानों पर छत्रसाल के बड़े ही विलक्षण व्याख्यान इस ग्रंथ में वर्णित हैं। शिवाजी और छत्रसाल का मिलना इस ग्रंथ का बहुत ही उत्तम भाग है। छत्रसाल की शिवाजी पर श्रद्धा देखकर यह जान पड़ता है कि अनुपम वीर होने के अतिरिक्त वे शूरवीरों के बहुत बड़े भक्त भी थे।

लाल ने केवल दोहा-चौपाइयों में कविता की है, और १९० पृष्ठों के इस ग्रंथ में कोई भी तीसरा छंद नहीं लिखा, परंतु फिर भी वे ऐसी मनोहर कविता रचने में समर्थ हुए हैं कि कहना पड़ता है कि तुलसीदासजी के अतिरिक्त किसी और का उन्हीं के समान दोहा-चौपाई बनाना प्रायः असंभव है। इनकी भाषा गोस्वामीजी की भाषा से पृथक् है और इन्होंने व्रजभाषा, बुँदेलखंडी और अवधी बोली का मिश्रण किया है। इनको यमक, अनुप्रास आदि का बिलकुल शौक़ न था, फिर भी इनकी भाषा बड़ी मधुर है। इन्होंने दिखा दिया है कि कवि यमकादि बाह्याडंबरों को छोड़कर एक छोटे-से छंद में भी उत्कृष्ट कविता कर सकता है। इनकी कहावत ऐसी मधुर है कि इनके कितने ही पद किंवदंतियों के रूप में परिणत हो गए ; यथा—

ज्ञान गनंता पौरुख हारै; सो जीतै जो पहिले मारै
रीती भरै भरी ढरकावै; जो मन करै तो फेरि भरावै

सत्कवियों का एक यह भी गुण है कि वे अपने नायकों के वर्णन करने में सर्वमान्य यथार्थ बातों का कथन करके उनके साथ

अपने नायक के गुणों और कर्मों को उनके उदाहरण स्वरूप दिखला देते हैं। लाल में यह बात पूर्ण रूप से पाई जाती है। यथा—

दान दया घमसान मैं, जाके हिये उछाह ;
सोई बीर बखानिए, ज्यौं छत्ता छितिनाह।

तिन मैं छिति छत्री छबि छाए ; चारिहुँ जुगन होत जे आए।
भूमिभार भुज दंडनि थंभे ; पूरन करैं जु काज अरंभे।
गाय बेद द्विज के रखवारे ; जुद्ध जीति के देत नगारे।
छत्रिन की यह बृत्ति बनाई ; सदा तेग की खाँय कमाई।
गाय बेद विप्रन प्रतिपालै ; घाउ ऐंड़धारनि पर घालै।
उद्यम ते संपति घर आवै ; उद्यम करै सपूत कहावै।
उद्यम करै संग सब लागै ; उद्यम ते जग मैं जसु जागै।
समुद उतरि उद्यम ते जैये ; उद्यम ते परमेसुर पैये।
जब यह सृष्टि प्रथम उपजाई ; तेग बृत्ति छत्रिन तब पाई।
यह संसार कठिन रे भाई ; सबल उमड़ि निरबल को खाई।
छनिक राज संपति के काजै ; बंधुन मारत बंधु न लाजै।
कछू काल गति जानि न जाई ; सब ते कठिन काल गति भाई।
सदा प्रबुद्ध बुद्धि है जाकी ; तासों कैसे चलै कजाकी।
साहस तजि उर आलस माँड़ै ; भाग भरोसे उद्यम छाँड़ै।
ताहि तजै जग संपति ऐसे ; तरुणी तजै बृद्ध पति जैसे।
बिपति माहँ हिम्मत ठिक ठानै ; बढ़ती भए छिमा उर आनै।
बचन सुदेस समनि मैं भाखै ; सुजसु जोरिबे मैं रुचि राखै।
जुद्धनि जुरै अकेले सैसें ; सहज सुभाय बड़ेन के ऐसे।
जाकी धरम रीति जग गावै ; जो प्रसिद्ध बलवंत कहावै।
जाहि जोट मैयन की भावै ; करत अनारबीन बनि आवै।
लै अवतार बड़े कुल आवै ; जुद्धन जुरै जगत जस गावै।
सत्य बचन जाके ठिक ठाए ; प्रीति जोग ए सात गनाए।

इस कवि की उद्दंडता सभी स्थानों पर सूर्यवत् प्रकाशमान् है। भाषा-साहित्य में किसी भी सत्कवि की रचना में इतनी उद्दंडता नहीं पाई जाती। दो-एक उदाहरणों से इसका बोध नहीं कराया जा सकता, परंतु स्थानाभाव से हम यहाँ दो ही एक उदाहरण दे सकते हैं।

उमड़ि चल्यौ दारा के सौंहैं; चढ़ी उदंड जुद्ध रस भौंहैं।
सब दारादिल दहसति बाढ़ी; चूमन लगे सबन की दाढ़ी।
को भुजदंड समर महि ठौंकै; उमड़्यौ प्रलय सिंधु को रोकै।
छत्रसाल हाड़ा तहँ आयो; अरुन रंग आनन छवि छायो।
भयो हरौल बजाय नगारो; सार धार को पहिरन हारो।

× × ×

दौरि देस मुगलनि के मारौ; दपटि दिली के दल संघारौ।
ऐंड़ एक सिवराज निवाही; करै आपने चित की चाही।
आठ पातसाही झकझोरै; सूबनि पकरि दंड लै छोरै।

× × ×

काटि कटक किरवान बल; बाँटि जंबुकनि देहु;
ठाटि जुद्ध यहि रीति सों; बाँटि धरनि धरि लेहु।

लाल ने युद्ध का प्रायः सभी स्थानों पर उत्तम वर्णन किया है, परंतु वे सब वर्णन बड़े हैं, अतः यहाँ उद्धृत नहीं किए जा सकते; इसलिये एक छोटा-सा वर्णन यहाँ लिखते हैं।

चहूँ ओर सों सूबनि घेरो; दिसनि अलातचक्र सो फेरो।
पजरे सहर साहि के बाँके; धूम धूम मैं दिनकर ढाँके।
कबहूँ प्रगटि जुद्ध मैं हाँकै; मुगलनि मारि पुहुमि तल ढाँकै।
बाननि बरखि गयंदनि फोरै; तुरकनि तमकि तेग तर तोरै।
कबहूँ जुरै फौज सों आछे; लेइ लगाइ चाउंदै पाछे।
बाँके ठौर ठौर रन मंडे; हाहा करे डाँड़ लै छंडे।

कबहूँ उमड़ि अचानक आवै; घन सम घुमड़ि लोह बरसावै।
कबहूँ हाँकि हरौलनि कूटै; कबहूँ चापि चँदालनि लूटै।
कबहूँ देस दौरिकै लावै; रसदि कहूँ की कढ़न न पावै।
चौकी कहैं कहाँ ह्वै जैहौ; जित देखौ तित चंपति ह्वैहौ।
चौंकि चौंकि चौकी उठैं, दौकि दौकि उमराय;
फाके लसगर मैं परे, थाके सबै उपाय।

लाल कवि ने उपमाएँ बहुत कम स्थानों पर दी हैं और जहाँ कहीं वे हैं भी, वहाँ अन्य कवियों की भाँति कोरी उपमा न कह-कर मुख्यार्थ विवर्द्धक उपमाएँ रूपक, उत्प्रेक्षा, आदि कहीं हैं और कहीं-कहीं उपमाएँ आदि न कहकर अन्य रीति से उसी प्रकार मुख्यार्थ को वर्द्धमान किया है।

कटि अरु मुंड उछालत कैसे; बटन खेल खेलत नट जैसे।
कढ़ि सरदार गोल ते गाजे; आनन मनौं मजीठनि माँजे।
कौतुक देखि जोगिनी गाईं; खप्पर जटनि मोंजती धाईं।

इस कवि ने यह दिखा दिया है कि अलंकारों की सहायता न लेकर भी कवि उत्तम कविता कर सकता है। लाल ने स्तुति के साथ मुख्य विषय के मिला देने में बड़ी पटुता दिखाई है। इसके उदाहरण ग्रंथ के द्वितीय, तृतीय और पंचम पृष्ठों पर मिलेंगे। इनकी कविता में रस बहुतायत से आए हैं।

लाल ने छत्रप्रकाश, विष्णुविलास और राजविनोद-नामक तीन ग्रंथ रचे। अंतिम ग्रंथ में विविध छंदों द्वारा ब्रजवासी कृष्ण का वर्णन है। यह पूरा ग्रंथ हमारे देखने में नहीं आया। (प्र० त्रै० रि०)

कुल बातों पर विचार करके हम लालजी को सेनापति की श्रेणी का कवि मानते हैं। इन्होंने तुलसीदासजी की भाँति कथा-प्रणाली पर कविता की है और कथा प्रासंगिक कवियों में इनको प्रथम श्रेणी में रखना चाहिए। लाल ने अपनी रचना बहुत ही

सर्वांग सुंदर बनाई और जिस विषय पर कविता की उसी को परमोत्तम रीति से कहा। बुँदेलखंड में प्रसिद्ध है कि लालजी महाराजा छत्रसाल के साथ युद्धों में स्वयं लड़ते भी थे। कथा प्रासंगिक युद्ध कविता में इनके जोड़ का कोई भी कवि देखने में नहीं आता। कहते हैं कि लाल का शरीर-पात भी किसी युद्ध ही में हुआ।

(५५४) अब्दुल् रह्मान (रह्मान)

ये महाशय दिल्ली के रहनेवाले और मोअज्ज़म शाह (क़ुतुब-द्दीन शाह आलम बहादुर शाह) के मनसबदार थे। इन्होंने यमक-शतक-नामक ग्रंथ बनाया, जिसमें कुल १०७ दोहे हैं, और श्लेष-मय, यमकपूर्ण एकाक्षरी इत्यादि दोहे कहे गए हैं, परंतु किसी क्रम से नहीं। *भाषा इसकी कठिन है, जिसका कारण शायद चित्र-काव्य* हो। इस ग्रंथ से विदित होता है कि ये महाशय भाषा पूर्ण रीति से जानते थे और संस्कृत भाषा भी इनकी कुछ अवश्य देखी होगी। इन्होंने ग्रंथ-निर्माण का संवत् दिया है, परंतु वह ऐसा अशुद्ध लिखा है कि उससे संवत् नहीं जान पड़ता। बहादुर शाह का राज्य-काल संवत् १७६३ से १७६८ तक है, अतः इसी समय में यह ग्रंथ लिखा गया होगा। इन्होंने अपना परिचय यों दिया है —

मोजम छत्रपती सुपति दिल्लीपति जु प्रवीन ;
चकता आलमगीर सुत कुतुबदीन पद लीन ॥ १ ॥
ताको मनसबदा जगत कवि अबदुल रहमान ;

हम इनको तोष कवि की श्रेणी में समझते हैं। उदाहरणार्थ इनके कुछ छंद नीचे दिए जाते हैं—

पलकन में राखौ पियहिं पलक न छाँड़ौं संग ;
पुतरी सो तै होहिं जिन उरपत अपने अंग ॥ २
करकी करकी चूरियाँ बरकी बरकी रीति ;
दरकी दरकी कंचुकी हरकी हरकी प्रीति ॥ ३ ॥

१९०३ के खोज में इनका एक ग्रंथ नखशिख लिखा है।

(५५५) सूरति मिश्र

ये महाशय कान्यकुब्ज ब्राह्मण मिश्र आगरा-निवासी थे, जैसा कि ये स्वयम् लिखते हैं—"सूरति मिश्र कनौजिया नगर आगरे वास।" इन्होंने (१) अलंकार-माला [खोज १९०३]-नामक अलंकार ग्रंथ संवत् १७६६ में लिखा और संवत् १७९४ में (२) अमर-चंद्रिका-नामक बिहारी सतसई की टीका बनाई। आपने (३) कवि-प्रिया की टीका भी रची जिसमें संवत् नहीं दिया है, परंतु हमारे पास जो पुस्तक है, वह संवत् १८५६ की लिखी हुई है। इनका (४) नखशिख हमने ठाकुर शिवसिंहजी काँथा-निवासी के पुस्तकालय में देखा। उसमें भी संवत् नहीं दिया है, परंतु वह प्रति संवत् १८९३ की लिखी है। इसके अतिरिक्त शिवसिंह सरोज में इनके बनाए (५) रसिकप्रिया [प्र० त्रै० रि०] का तिलक और (६) रस-सरस-नामक दो ग्रंथ और लिखे हैं। ये हमने नहीं देखे। याज्ञिकत्रय ने इनके बनाए (१) प्रबोध चंद्रोदय नाटक, (२) भक्ति विनोद, (३) रामचरित्र, (४) कृष्ण चरित्र-नामक और भी ग्रंथ देखे हैं। अतः अनुमान से कहा जा सकता है कि सूरतिजी संवत् १७४० के लगभग उत्पन्न हुए होंगे। खोज में इनकी (७) रस-ग्राहक-चंद्रिका तथा रसरत्नमाला [खोज १९०१] का भी पता चला है। सरस-रस का (१७९१) रचनाकाल १७९४ लिखा है। च० त्रै० रि० में जोरावर प्रकाश तथा भक्त विनोद-नामक ग्रंथ मिले हैं।

ये महाशय अच्छे कवि थे और भाषा इनकी मधुर थी। सतसई, व कवि प्रिया के तिलकों से इनके पांडित्य का पूर्ण परिचय मिलता है। ऐसे उत्तम तिलक बहुत ही थोड़े विद्वान कर सके हैं। सतसई पर कम-से-कम पैंतीस-चालीस तिलक हुए हैं, परंतु सूरतिजी के तिलक की समानता एक भी नहीं कर सकता। इन्होंने अपने तिलक

में शंकाएँ करके उनका समाधान बड़ी उत्तमता से कर दिया है। इनकी कवित्वशक्ति तथा पांडित्य प्रशंसनीय हैं। इनके ग्रंथों का परिचय नीचे दिया जाता है—

(१) "अलंकारमाला" अलंकार का ग्रंथ कुल २१७ दोहों में है। इसमें अलंकारों का वर्णन उत्तम रीति से किया गया है और प्रायः लक्षण तथा उदाहरण एक ही दोहे में दे दिए गए हैं।

"हिम सो हर के हास सो जस मालोपम ठानि" (मालोपमा)।

"बिधु सो कंज सुकंज सो मंजु बदन यहि बाम" (रसनोपमा)।

"सु असंगति कारन अवर कारज भिन्न सुथान ;
चलि अहि श्रुति आनहि डसत नसत और के प्रान" (असंगति)।

(२) "नखशिख" में राधा-कृष्ण का अच्छा नखशिख ४१ छंदों में कहा गया है।

त्रिभुवनपति के हरत दुख देखत ही ,
सहज सुबास ऊँचे बास सोभरस है ;
नेह जुत सरसे यहाई सुख सरसे वे ,
तीनिहूबरन को प्रगट सुदरस है।
सब दिन एक सों महातम है सूरति यों ,
नागर सकल सुखसागर परस है ;
एरी मृगनैनी पिकबैनी सुख देनी अति ,
तेरी यह बेनी तिरबेनी ते सरस है॥ १॥
तेरे ए कपोल बाल अति ही रसाल मन ,
जिनकी सदाई उपमा विचारियत है ;
कोऊ न समान जाहि कीजै उपमान अरु ,
बापुरे मधूकनि की देह जारियत है।
नेकु दरपन समता की चाह करी कहूँ ,
भए अपराधी ऐसे चित्त धारियत है ;

सूरति सुयाही ते जगत बीच आजु हू लौं,
उनके बदन पर छार डारियत है ॥ २ ॥

(३) "अमरचंद्रिका" सतसई के दोहों की टीका इन महाशय ने सं० १७९४ में बनाई। यह महाराजा अमरसिंहजी जोधपूर के नाम से बनाई गई। इसके समान कोई भी टीका सतसई की अब तक नहीं बनी। इसमें बहुत-से अर्थ कहे गए हैं और अलंकार लक्षणा, व्यंजना, इत्यादि भी ख़ूब साफ़ करके दिखलाई गई हैं। इस पर प्रसन्न होकर महाराज ने इनकी बड़ी ख़ातिर की और कविकुलपति की पदवी दी। वास्तव में यह ग्रंथ ऐसा ही प्रशंसनीय बना भी है।

(४) "कविप्रिया का तिलक" भी इन महाशय ने बनाया, परंतु इसमें संवत् इत्यादि नहीं दिए गए हैं। यह भी तिलक उत्कृष्ट बना है। इसमें कुल छंदों का तिलक नहीं किया गया है, परंतु जो-जो स्थल कठिन और विवादपूर्ण हैं उन पर शंकारहित टीका की गई है, जो सर्वतोभावेन प्रशंसनीय है। इससे केसवदास का क्लिष्टकाव्य पाठक सहज में अच्छी तरह समझ सकते हैं।

(५) इन ग्रंथों के अतिरिक्त इन्होंने वैतालपंचविंशति का संस्कृत से गद्य ब्रज भाषा में अनुवाद किया। यह उल्था महाराजा जैसिंह सवाई की आज्ञा से किया गया था।

खोज प्र० त्रै० में इनके बनाए हुए काव्य-सिद्धांत, रसरत्नाकर-माला और रसिकप्रिया की टीका रस-गाहकचंद्रिका-नामक ग्रंथ लिखे हैं।

उदाहरण—

कमल नयन कमल से हैं नैन जिनके कमलद बरन कमलद कहिए मेघ को वरण है श्याम स्वरूप है कमल नाभि श्रीकृष्ण को नाम ही है कमल जिनकी नाभितै उपज्यौ है कमलाप कमला लक्ष्मी

ताके पति हैं तिनके चरण कमल समेत गुन को जाप क्यों मेरे मन में रह्यो-।

इन पद्य कविताओं, टीकाओं और गद्य-काव्य का विचार करने से सूरतिजी एक उत्कृष्ट कवि ठहरते हैं। हम इनको पद्माकर की श्रेणी में रखते हैं। इनकी टीकाओं का पांडित्य विना पूर्ण ग्रंथावलोकन किए विदित नहीं हो सकता, अतः हम पाठकों से उनके देखने का अनुरोध करते हैं।

(४५६) महाराजा अजीतसिंह

ये महाराजा जोधपुर के प्रसिद्ध महाराजा भाषा-भूषण के रचयिता जसवंतसिंह के पुत्र थे और संवत् १७३७ में इनका जन्म काबुल में अपने पिता के मरने के कुछ महीने पीछे हुआ था। उस समय इनके सब भाई मर चुके थे, सो जन्म लेते ही ये महाराज हुए। औरंगज़ेब ने इन्हें उसी समय गिरफ़्तार करने का पूरा प्रयत्न किया, पर राठौरों ने तीस वर्षों तक युद्ध करके अपने बालक महाराज को बचाया। इनकी बाल्यावस्था इस प्रकार दौड़ने, भागने आदि में व्यतीत हुई थी कि आश्चर्य होता है कि इन्होंने किस प्रकार विद्या पढ़ी और किस प्रकार कविता सीखी ? आपने संवत् १७८१ तक राज किया। मुग़ल साम्राज्य की ओर से इन्होंने सरबलंदख़ाँ को परास्त कर गुजरात प्रांत को जीता और बादशाह ने इन्हें वहाँ का शासक भी नियत किया। अंत में इनका बल बहुत बढ़ते देख शाह ने संवत् १७८१ में इनके पुत्रों ही को मिलाकर धोखेबाज़ी से इनका वध करवा डाला। इन्होंने निम्न-लिखित ग्रंथ बनाए— दुर्गा पाठ भाषा (खोज १९०२), गुणसागर (खोज १९०२), राजा रूप का ख़्याल, निर्वाणी दोहा (खोज १९०२), महाराज श्री अजीतसिंह जीरा कह्या दोहा (खोज १९०२), महाराज श्री अजीतसिंहजी-कृत दोहा श्रीठाकुरांरा (खोज १९०२) और भवानी-

सहस्र नाम [खोज १६०२]। आपकी भाषा व्रजभाषा है, जिसमें राजपूतानी का भी कुछ अंश है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में हो सकती है।

उदाहरण—

पीतांबर कछनी कछे उर बैजंती माल ;
अँगुरी पर गिरवर धरयो संग सबै व्रज बाल।
जब लग सूर सुमेर चंद्रमा शंकर उड़गन ;
जब लगि पवन प्रताप जगत मधि तेज अगिनि तन।
जब लगि सात समुद्र संयुगत धरा बिराजैं ;
जब लगि सुर तेंतीस कोटि आनंद समाजैं।
तब लग्गि यही भाषा सुकृत सहस नाम जग में रहौ ;
अगजीत कहै इनको पढ़त सुनत सकल सुख को लहौ।

(५५७) प्रियादासजी ने संवत् १७६६ में भक्तमाल की टीका बनाई। इनका हाल नाभादासजी के वर्णन में देखिए [खोज १६०१]।

इस समय के अन्य कविगण

नाम—(५५८) कुंदन बुँदेलखंडी।
ग्रंथ—नायिकाभेद।
कविताकाल—१७५२।
विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(५५९) गुलालसिंह बकसी, पन्ना।
ग्रंथ—दफ़्तरनामा।
कविताकाल—१७५२ [खोज १६०५]
विवरण—साधारण श्रेणी। जमा-ख़र्च वग़ैरह के क़ायदों का वर्णन किया है। इनके १८५२ संवत् में होने का संदेह है।

नाम—(५६०) गोपाल, रतनपूर बिलासपूर ।

ग्रंथ—(१) श्रीसुदामाशतक [प्र० त्रै० रि०], (२) राम-प्रताप, (३) ख़ूब-तमाशा ।

कविताकाल—१७५३ के पूर्व ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

उदाहरण—

सोई नैन नैन जो बिलोकै हरि मूरति को,
सोई बैन बैन जो सुजस हरि गाइए ;
सोई कान कान जामैं सुनिए गुनानबाद,
सोहि नेह नेह हरि जू सों नेह लाइए ।
सोई देह देह जामैं पुलकित रोम होत,
सोई पाँव पाँव जासों तीरथन जाइए ;
सोई नेम नेम जे चरन हरि प्रीति बाढ़ै,
सोई भाव भाव जो गोपाल मन भाइए ।

नाम—(५६१) केशवराज, बुँदेलखंडी ।

ग्रंथ—जैमुनी की कथा भाषा ।

कविताकाल—१७५३ । [खोज १६०५]

विवरण—साधारण श्रेणी । महाराज छत्रसाल के दरबार में थे ।

नाम—(५६२) करीम ।

कविताकाल—१७५४ के पूर्व ।

विवरण—इनका नाम सूदन कवि ने लिखा है ।

नाम—(५६३) कंचन ।

कविताकाल—१७५४ के पूर्व ।

विवरण—इनका नाम सूदन कवि ने लिखा है ।

नाम—(५६४) कुँवर ।

कविताकाल—१७५४ के पूर्व ।

विवरण—इनका नाम सूदन ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५६५) खगपति।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम सूदन ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५६६) गयंद।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम सूदन कवि ने लिखा है।

नाम—(५६७) चिरंजीव।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सूदन ने इनका नाम लिखा है।

नाम—(५६८) छबीले।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

नाम—(५६९) जीव।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम सूदनजी ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५७०) टीकाराम।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम सुजानचरित्र में सूदन कवि ने दिया है।

नाम—(५७१) तिलोक।

ग्रंथ—स्फुट काव्य।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सुजानचरित्र में इनका नाम दिया हुआ है।

नाम—(५७२) तुरत।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सुजानचरित्र में इनका नाम है।

नाम—(५७३) तेज।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—इनका नाम सूदन ने लिखा है ।

नाम—(५७४) दयादेव ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—साधारण श्रेणी । सूदन ने सुजानचरित्र में इनका नाम कहा है ।

नाम—(५७५) दूनाराय ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—सूदन कवि ने इनका नाम लिखा है ।

नाम—(५७६) धीरधर ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—सूदन कवि ने इनका नाम लिखा है ।

नाम—(५७७) नायक ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—निम्न श्रेणी के हैं । इनका नाम सूदनजी ने सुजान-चरित्र में लिखा है ।

नाम—(५७८) नाहर ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—इनका नाम सूदन कवि ने लिखा है ।

नाम—(५७९) नित्यानंद ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—सुजानचरित्र में सूदन ने इनका नाम लिखा है ।

नाम—(५८०) परम शुक्ल ।

कविताकाल—१७२४ के पूर्व ।

विवरण—इनका नाम सूदन ने लिखा है ।

नाम—(५८१) पीत ।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सूदन कवि ने इनका नाम लिखा है।

नाम—(५८२) बसंत।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सूदन कवि ने इनका नाम लिखा है।

नाम—(५८३) मनिकंठ।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सूदन ने इनका नाम लिखा है।

नाम—(५८४) मान।

ग्रंथ—(१) महावीरजी को नखशिख, (२) हनुमानपचीसी, (३) रामकूटविस्तार, (४) हनू नाटक।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम सूदनजी ने निजकृत सुजानचरित्र में दिया है।

नाम—(५८५) मित्र।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम सूदन ने लिखा है।

नाम—(५८६) मुनीश।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—सूदन कवि ने इनका नाम लिखा है।

नाम—(५८७) रमापति।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण—मैथिल कवि हैं। इनका नाम सूदन ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५८८) राधाकृष्ण।

कविताकाल—१७९४ के पूर्व।

विवरण— इनका नाम सूदन कवि ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५८९) रामकृष्ण चौबे।
ग्रंथ—विनयपचीसी।
कविताकाल—१७५४ के पूर्व।
विवरण—साधारण श्रेणी के हैं। इनका नाम सूदनजी ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५९०) लच्छीराम।
कविताकाल—१७५४ के पूर्व।
विवरण—इनका नाम सूदन कवि ने सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५९१) लीलापति।
कविताकाल—१७५४ के पूर्व।
विवरण—इनका नाम सूदन ने लिखा है।

नाम—(५९२) सबसुख।
कविताकाल—१७५४ के पूर्व।
विवरण—इनका नाम सूदन ने लिखा है।

नाम—(५९३) केशवराय, बघेलखंडी।
ग्रंथ—(१) नायिकाभेद, (२) रसलतिका। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१७५४।
विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(५९३) बुलाकीदास।
ग्रंथ—पांडवपुराण भाषा।
रचनाकाल—१७५४।
विवरण—आगरावासी नंदलाल के पुत्र थे।

नाम—(५९४) लोकमणि।
ग्रंथ—वैद्यक।
कविताकाल—१७५४।

विवरण—सूदन ने इनका नाम सुजानचरित्र में लिखा है।

नाम—(५६५) इच्छाराम अवस्थी, पचरुआ (ज़िला बाराबंकी)

ग्रंथ—ब्रह्मविलास।

कविताकाल—१७९९।

विवरण—इन्होंने वेदांत का ग्रंथ ब्रह्मविलास बनाया है। साधारण श्रेणी।

नाम—(५६५) गनदेव।

कविताकाल—१७९९।

ग्रंथ—नवसनेह।

नाम—(५६६) गुरुप्रसाद।

ग्रंथ—(१) रससागर, (२) अर्जुनगीता।

कविताकाल—१७९९। [खोज १९०९]

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(५६७) गोध।

कविताकाल—१७९९।

नाम—(५६८) गोधूराम।

ग्रंथ—(१) दशभूषण, (२) यशरूपक।

कविताकाल—१७९९। [खोज १९०२]

विवरण—ये ग्रंथ इन्होंने अपने भाई बागीराम के साथ बनाए हैं।

नाम—(५६९) बागीराम।

ग्रंथ—(१) यशभूषण, (२) यशरूपक।

कविताकाल—१७९९। [खोज १९०२]

विवरण—ये ग्रंथ इन्होंने अपने भाई गोधूराम के साथ बनाए हैं।

नाम—(५६९) बेनीप्रसाद।

ग्रंथ—रसशृंगारसमुद्र। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७९९।

नाम—(६००) व्रजदास प्राचीन।

कविताकाल—१७९९।

विवरण—साधारण श्रेणी। इनके छंद हज़ारा में हैं।

नाम—(६००/१) व्रजनिधि वल्लभ।

ग्रंथ—संजीवने चरितावली। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७९९।

विवरण—हित हरिवंशजी की पाँचवीं पीढ़ी में हुए।

नाम—(६०१) रत्नसागर।

ग्रंथ—रत्नपत्रिका।

कविताकाल—१७९९।

नाम—(६०२) लालबिहारी।

जन्म-काल—१७३०।

कविताकाल—१७९९।

नाम—(६०३) जैसिंह सवाई महाराजा आमेर।

ग्रंथ—जैसिंह कल्पद्रुम।

कविताकाल—१७९६ से १८०० तक।

विवरण—ये महाराज आमेर के राजा बड़े विद्वान् और कवि-कोविदों के आश्रयदाता हुए हैं।

नाम—(६०४) दिग्गज।

ग्रंथ—भारतविलास।

कविताकाल—१७९६। [खोज १६०३]

विवरण—दीवान पृथ्वीसिंह के यहाँ थे।

नाम—(६०५) भगवानदास।

ग्रंथ—भाषामृत।

जन्म-काल—१७२५ ।

कविताकाल—१७५६ । [खोज १९००]

नाम—(६०५/१) किशोरीदास ।

ग्रंथ—(१) राधारमण रससागर, (२) वंशावली वृषभानुराय की, (३) बारहखरी, (४) पद ।

रचनाकाल—१७५७ ।

विवरण—राधावल्लभी ।

नाम—(६०६) गोपाल ।

ग्रंथ—१ प्रह्लादचरित्र ।

कविताकाल—१७५७ । [खोज १९००]

विवरण—दादूदास के संप्रदाय में थे ।

नाम—(६०७) घनराम कायस्थ, ओरछा ।

ग्रंथ—लीलावती । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७५७ ।

विवरण—राजा उदोतसिंह के यहाँ थे ।

नाम—(६०८) जीवनमस्ताने ।

ग्रंथ—पंचकदुहाई ।

कविताकाल—१७५७ । [खोज १९०५]

विवरण—प्राणनाथ के शिष्य । हीन श्रेणी ।

नाम—(६०९) जैदेव, कंपिलावासी ।

ग्रंथ—अमृतमंजरी । [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७५६ ।

विवरण—ये सुखदेव मिश्र के शिष्य थे और फ़ाज़िलअली के यहाँ थे । साधारण श्रेणी ।

नाम—(६१०) नाथ ।

कविताकाल—१७५७ से १८१७ तक ।

विवरण—राजा भगवंतराय खीची तथा फ़ाज़िलअलीख़ाँ मंत्री औरंगज़ेब के यहाँ थे। तोष की श्रेणी के कवि हैं। इनका अस्तित्व संदिग्ध है। २७वें अध्याय के नाथ देखिए।

नाम—(६१०/१) निर्मलप्रकाश।

ग्रंथ—भगवतबानी। [पं० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७५७।

नाम—(६११) मनोहर।

कविताकाल—१७५७। [द्वि० त्रै० रि०]

ग्रंथ—(१) राधारमण सागर, (२) नाम-लीला (पृष्ठ ३८), (३) धर्मपत्रिका।

नाम—(६१२) राजाराम।

ग्रंथ—पदपंचाशिका। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७५७ के पूर्व।

नाम—(६१३) शारदा पुत्र।

ग्रंथ—कोकसार।

कविताकाल—१७५७ [खोज १९०३]

नाम—(६१४) शिवदास, अकबरपुर।

ग्रंथ—शालिहोत्र [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७५७।

विवरण—इनके आश्रयदाता राजा दलपतिराय दतिया के थे।

नाम—(६१४/१) शिवप्रसाद राय।

ग्रंथ—लोकोक्ति रहस्य युक्ति। [पं० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७५७।

नाम—(६१४/२) अज्ञात।

ग्रंथ—भागवत दशम की पोथी।

प्रतिलिपिकाल—१७९७।

विवरण—इस प्रति के लेखक चंदेरी-वासी मिश्र नाथूराम हैं। ग्रंथकर्ता का नाम प्रति में लिखा नहीं है।

नाम—(६१५) कुँवर गोपालसिंह, बुँदेलखंडी।

ग्रंथ—रागरत्नावली। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७९८।

विवरण—बुँदेला ठाकुर तिलोकसिंह के पुत्र।

नाम—(६१५/१) नंदकिशोर।

ग्रंथ—पिंगलप्रकाश। [पं० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७९८।

नाम—(६१६) कृपाराम गूदड़।

ग्रंथ—भागवत दशम स्कंध भाषा।

कविताकाल—१७९८। इनका ठीक नंबर ८६८/१ है।

विवरण—चित्रकूट के महंत।

नाम—(६१६/१) बिहारीदास ब्रजवासी।

ग्रंथ—संबोधिपंचाशिका, (२) वासुदेव की साठिका। [खोज १९००]

रचनाकाल—१७९८।

नाम—(६१७) ईश्वर कवि।

जन्म-काल—१७३०।

कविताकाल—१७६०।

विवरण—ये औरंगज़ेब के यहाँ थे। इनकी रचना तोष कवि की श्रेणी की है।

नाम—(६१७/१) उत्तमचंद।

ग्रंथ—दिलीपरंजन। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६०।

नाम—(६१७) दत्तलाल।

ग्रंथ—(१) बारहखड़ी [१७६०], (२) स्वरोदय। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६० ।

नाम—(६१८) दामोदर।

ग्रंथ—स्फुट पद।

कविताकाल—१७६० ।

विवरण—श्रीहित राधावल्लभी संप्रदाय के।

नाम—(६१९) भावन, बुँदेलखंडी।

कविताकाल—१७६० ।

नाम—(६२०) मुहम्मदशाह।

ग्रंथ—(१) बारहमासा, (२) स्फुट। [प्र० त्रै० रि०]

जन्म-काल—१७३५ ।

कविताकाल—१७६० ।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६२१) रसलाल, बुँदेलखंडी।

जन्म-काल—१७३३ ।

कविताकाल—१७६० ।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६२२) रामराय भगवानजू राधावल्लभी।

ग्रंथ—स्फुट पद।

कविताकाल—१७६० ।

विवरण—ये महाशय कहीं के राजा थे।

नाम—(६२३) जनभोला।

ग्रंथ—भगवद्गीता का हिंदी अनुवाद।

रचनाकाल—१७६२ ।

कविताकाल—१७६२ के पूर्व। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(६२३/१) जीवराज, बड़नगरवासी।
ग्रंथ—परमात्मप्रकाश वचनिका।

रचनाकाल—१७६२।

नाम—(६२४) अब्दुल्जलील, बिलग्राम।

ग्रंथ—स्फुट।

जन्म-काल—१७३८।

कविताकाल—१७६५।

विवरण—औरंगज़ेब के दरबार में थे।

नाम—(६२५) कनक।

जन्म-काल—१७४०।

कविताकाल—१७६५।

नाम—(६२५/१) खड्गराय, ओरछावासी।
ग्रंथ—(१) रासदीपक, (२) नायिकादीपक। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६५।

नाम—(६२६) प्राणनाथ त्रिवेदी।

ग्रंथ—कल्किचरित्र।

कविताकाल—१७६५। [खोज १६०३]

नाम—(६२७) बारण भूपालवाले।
ग्रंथ—रसिकविलास। इनका ठीक नंबर (४५४/१) है।

जन्म-काल—१७४०।

कविताकाल—१७६५।

विवरण—ये सुजाउलशाह राजगढ़ के यहाँ थे। साधारण श्रेणी।

नाम—(६२८) बंसीधर कायस्थ।
ग्रंथ—दस्तूर मालिका (३४ पृष्ठ), मित्रमनोहर [खोज १६०५]
राजनीति [१७७४]

कविताकाल—१७६५ ।

विवरण—हिसाब की रीति ।

नाम—(६२९) रतन ।

ग्रंथ—(१) रसमंजरी, (२) बुद्धिचातुरीविचार, (३) चूक-विवेक, (४) दोहे, (५) विष्णुपद । [खोज १९०४]

जन्म-काल—१७३८ ।

कविताकाल—१७६५ ।

विवरण—साधारण श्रेणी । सभाशाह पन्ना-नरेश के यहाँ थे । खोज से विदित होता है कि ओरछा के दीवान हिंदूसिंह इनके आश्रयदाता थे ।

नाम—(६३०) चंद्रलाल गोस्वामी राधावल्लभी ।

ग्रंथ—(१) वृंदावन प्रकाशमाला, (२) उत्कंठा माधुरी, (३) भगवत-सारपचीसी, (४) वृंदावनमहिमा, (५) भावनासुबोधिनी, (६) अभिलापबत्तीसी,(७) समय-पचीसी, (८) स्फुट कवित्त, (९) समयप्रबोध, (१०) भावनापचीसी ।

कविताकाल—१७६७ ।

विवरण—साधारण श्रेणी । इनका ठीक नंबर ६३९/१ है ।

नाम—(६३०/१) किशन गुजरात खंभात में बोरसद गाँव के रहनेवाले जैन कवि थे । इन्होंने अपनी बहन 'रतनबाई' के लिये 'किशन बावनी' या 'उपदेश बावनी' ग्रंथ बनाया ।

रचनाकाल—१७६७ ।

नाम—(६३१) हरिसेवक केशवदास के भाई कल्यानदास के प्रपौत्र ।

ग्रंथ—(१) कामरूप की कथा [खोज १९०५], (२) हनुमानजी की स्तुति । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७६७।

विवरण—कुमार पृथ्वीसिंह महाराज उदयसिंह ओरछा-नरेश के यहाँ थे।

नाम—(६३२) जगन्नाथदास।

ग्रंथ—(१) मनबत्तीसी [प्र० त्रै० रि०] व गुरुमहिमा, (२) गुरुचरित्र। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७६८।

विवरण—तुलसीदास की शिष्य-परंपरा में थे।

नाम—(६३३) मदनकिशोर।

कविताकाल—१७६८।

विवरण—साधारण कवि। बहादुरशाह के यहाँ थे।

नाम—($\frac{६३३}{१}$) गुणसागर वैष्णव।

ग्रंथ—गुणसागर। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६९।

विवरण—विट्ठलनाथ के शिष्य थे।

नाम—(६३४) प्रिया सखी बख़्त कुँवरि महारानी।

ग्रंथ—(१) बानी, (२) प्रिया सखीजी की गारी। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७६९।

विवरण—राधावल्लभी संप्रदाय। ईसवी सन् और विक्रमी संवत् के झमेले में पड़कर इनका समय यहाँ पर अशुद्ध हो गया है। असल में इनका समय संवत् १८४८ चाहिए।

नाम—($\frac{६३४}{१}$) खेम रसिक।

रचनाकाल—१७६९ के पूर्व।

विवरण—इनका नाम भक्तमाल की टीका में है।

नाम—(६३५) चैनराय। देखो नं० १०७२/२

ग्रंथ—भक्तिसुमिरनी।

कविताकाल—१७६६। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—प्रियादास के चेले थे।

नाम—(६३६) गड्डू राजपूताने के।

कविताकाल—१७७०।

विवरण—कूट काव्य व छप्पै इत्यादि अच्छे हैं। साधारण श्रेणी।

नाम—(६३६/१) दर्शन।

ग्रंथ—एकादशी माहात्म्य। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७७०।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६३७) मनसुख।

जन्म-काल—१७४०।

कविताकाल—१७७०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६३८) मिश्र।

जन्म-काल—१७४०।

कविताकाल—१७७०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६३९) मुरलीधर उपनाम मुरली।

ग्रंथ—(१) कविविनोद, (२) रसविनोद, (३) श्रीसाहबजी की कविता। नलोपाख्यान (१८१४)

जन्म-काल—१७४०।

कविताकाल—१७७०।

विवरण—साधारण श्रेणी। इन्होंने श्रीधर के साथ रसविनोद बनाया।

नाम—(६४०) रविदत्त ।

जन्म-काल—१७४२ ।

कविताकाल—१७७० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—($\frac{६४०}{१}$) रत्नजीत

ग्रंथ—भाषाशब्दसिंधु, भाषान्याकरण, भाषाधातुमाल, रत्नमाल रौप्र रत्नमालिका ग्रंथों की रचना की ।

कविताकाल—१७७०

नाम—($\frac{६४०}{२}$) मीर अब्दुल वाहिद जौकी ।

रचनाकाल—१७७० ।

विवरण—ये बिलग्राम के रहनेवाले थे । इनके बनाए शकरिस्तान ख़याल में हिंदी की कविता है । इनका देहांत १७७३ में हुआ । इनका हाल 'साहित्य-समालोचक' में है ।

चौबीसवाँ अध्याय

माध्यमिक देवकाल (१७७१ से १७९० तक)

(६४१) घनआनंद

(आनंद घन)

ये महाशय जाति के कायस्थ दिल्ली-वासी थे । नादिरशाह द्वारा मथुरा विजय के समय संवत् १७९६ में ये मारे गए । इनका कविता-काल संवत् १७७१ से १७९६ तक समझना चाहिए । इन्होंने सुजानसागर, कोकसार, घनानंद कवित्त, रसकेलिवल्ली, वियोगबेली और कृपाकंद-निबंध-नामक ग्रंथ बनाए, जो [सन् १९०० तथा १९०३] खोज में मिले हैं । सरदार कवि ने अपने संग्रह में इनके प्रायः डेढ़-सौ छंद लिखे हैं, और इनके ४२५ छंदों का एक स्फुट संग्रह और हमने

देखा है। इनके अतिरिक्त हमको इनका ४४२ बड़े पृष्ठों का एक भारी ग्रंथ संवत् १८८२ का लिखा हुआ दरबार छतरपूर के पुस्तकालय में देखने को मिला, जिसमें १८११ विविध छंदों तथा १०४४ पदों द्वारा निम्न-लिखित विषय वर्णित हैं—प्रियाप्रसाद, व्रजव्योहार, वियोगवेली, कृपाकंद-निबंध, गिरिगाथा, भावनाप्रकाश, गोकुलविनोद, व्रजप्रसाद, धामचमत्कार, कृष्णकौमुदी, नाममाधुरी, वृंदावनमुद्रा, प्रेमपत्रिका, व्रजवर्णन, रसवसंत, अनुभवचंद्रिका, रंगबधाई, परमहंसवंशावली और पद। इनमें पदों की रचना साधारण है और उनमें भक्ति तथा व्रज-लीलाओं का वर्णन किया है। दूसरे वर्णन विविध छंदों में किए गए हैं, जिनमें कवित्त तथा सवैयाओं की अधिकता है। इनमें कथित विषयों का ज्ञान उनके नामों ही से प्रकट होता है। इनमें व्रज-व्योहार, वियोगवेली, भावनाप्रकाश, धामचमत्कार, कृष्णकौमुदी, वृंदावनमुद्रा, मुरलिकामोद, प्रेमपत्रिका आदि पर कविता है। यह साहित्य सरस और प्रशंसनीय है। इनकी भाषा एवं कविता बहुत ही शुद्ध तथा रसीली होती थी। इस भारी ग्रंथ में हर स्थान पर भक्ति का चमत्कार देख पड़ता है। घनआनंद को लोग वैसिक समझते हैं। यह विचार इनकी स्फुट रचना देखने से उठता है, परंतु जान पड़ता है कि उमर ढलने पर इनके चित्त में ग्लानि होकर निर्वेद उत्पन्न हुआ, जिससे यह श्रीवृंदावनधाम जाकर निंबार्क संप्रदाय में दीक्षित होकर व्रजवास करने लगे। यह भाव इनकी इस रचना से दृढ़ होता है। तृतीय त्रैवार्षिक खोज से इनके सुजान-हित तथा इश्क़लता-नामक दो और ग्रंथों का पता चलता है। तथा चतुर्थ त्रैवार्षिक रिपोर्ट में इनका प्रीतपावस-नामक ग्रंथ मिला है।

गुरनि बतायौ राधामोहन हू गायौ सदा,
सुखद सुहायो वृंदावन गाढ़े गहिरे;

अद्भुत अभूत महिमंडन परेते परे,
जीवन कों लाहु हा हा क्यौं न ताहि लहिरे।
आनँद को घन छायो रहत निरंतर ही,
सरस सुदेस सों पपीहा पन बहिरे;
यमुना के तीर केलि कोलाहल भीर ऐसी,
पावन पुलिन पै पतित परि रहिरे॥ १॥

ऊधौ विधि ईरित भई है भागकीरति,
लही रति जसोदा सुत पावन परसकी;
गुलम लता ह्वै सीस धरयो चाहैं धूरि जाकी,
कहिए कहा निकाई महिमा सरस की।
झूम्योई रहत सदा आनँद को घन जहाँ,
चातकी भई है मति माधुरी बरस की;
आँखिन लगी है प्रीति पूरन पगी है अति,
आरति जगी है ब्रजभूमि के दरस की॥ २॥

इनके इस ग्रंथ से दो-एक उदाहरण नीचे देते हैं—

सरस सुगंध भाँति-भाँति भाव फूल बिछे,
समरस रीति जामैं कसरि की झोलना;
बिसद सुवासना बसन सौं सुधारि सज्यो,
चौकस गुननि गस्यौ गूढ़ गाँस खोलना।
राधा ब्रजमोहन बिलास को सुखासन है,
दोऊ एक बानक सलोने मिठबोलना;
तनक हू क्यौं न बसौ बसन तनक मेरो,
मन ब्रजमंडल को उड़न खटोलना॥ ३॥

जात नए-नए नेह के भार बिधे डर ओर, घनी बरुनी के;
आनँद मैं मुसकानि उदोत मैं होत हैं बोलत सोत अमी के।

भोर की आवनि आन अकोर किए नितही चलि आए जही के ;
ढारिए जू तिन तोरि कै लालन और दिनान तैं लागत नीके ॥ ४ ॥

बिरह बिसूरे पीर पूरे मन सबन के,
रति द्यौस भयो जिन्हैं पलकौ कलन को ;
औध आस ओसनि सहारैं हाय कैसे करि,
जिनको दुसह दीसै परिबो पलन को ।
या विधि वियोग बावरो भयो है ब्रज सब,
बाढ़त उदेग महा अंतर दलन को ;
आनँद पयोद के पपीहनि पै छायो अब,
दीरघ दुसह घाम स्याम के चलन को ॥ ५ ॥

आँखिन को जो सुख निहारे जमुना के होत,
सो सुख बखाने न बनत देखिबेई है ;
गौर स्याम रूप आदरस है दरस जाको,
गुपित प्रगट भावना बिसेखिबेई है ।
जुगकूल सरस सलाका दीठि परस ही,
अंजन सिंगार रूप अवरेखिबेई है ;
आनँद के घन माधुरी को झर लागि रहै,
तरल तरंगिनि की गति लेखिबेई है ॥ ६ ॥

धुनि पूरि रहै नित काननि मैं ब्रज को उपराजिबोई सी करै ;
मन मोहन गोहन जोहन के अभिलाख समाजिबोई सी करै ।
घनआनँद तीखिये ताननि सों सर से सुर साजिबोई सी करै ;
कित तैं यह बैरिनि बाँसुरिया बिन बाजेई बाजिबोई सी करै ॥ ७ ॥

तब तौ छबि पीवत जीवत हे अब सोचन लोचन जात जरे ;
हित पोष के तोष सुप्रान पले बिललात महादुख दोष भरे ।
घनआनँद मीत सुजान बिना सब ही सुख साज समाज हरे ;
तब हार पहार-से लागत हे अब आनि कै बीच पहार परे ॥ ८ ॥

पहिले अपनाय सुजान सनेह सों क्यौं फिरि नेह को तोरिए जू ;
निरधार अधार दै धार मँझार दई गहि बाँह न बोरिए जू।
घनआनँद आपने चातिक को गुन बाँधि कै मोहन छोरिए जू ;
रस प्याय कै ज्याय बढ़ाय कै आस बिसास मैं यों बिस घोरिए जू ?॥ १ ॥

नाम—(६५१) कुमारमणि भट्ट ।

ग्रंथ—रसिकरसाल ।

रचनाकाल— १७७६ ।

विवरण—यह कवि हिंदी-कविता में परम विज्ञ था। इसने संवत् १७७६ में रसिकरसाल-नामक रीति का एक उत्कृष्ट ग्रंथ आकार में प्रायः काव्य-निर्णय के बराबर काव्य-प्रकाश के आधार पर बनाया। उक्त ग्रंथ का निर्माण-काल विषयक दोहा इस प्रकार है—

६ ७ ७ १
रस सागर रबि-तुरँग बिधु संबत मधुर बसंत ;
बिकस्यो रसिकरसाल लखि हुलसत सुहृद बसंत ।

यह ग्रंथ हमने देखा था ; परंतु दुर्भाग्यवश हमारी प्रति के आदि और अंत के दो-चार पृष्ठ फट चुके थे, अतः कवि के सन्-संवत् का निश्चय न हो सका था । सरोजकार ने इन्हें गोकुलवासी मानकर इनका संवत् १८०३ के लगभग होना लिखा था। सुयोग से इन्हीं कवि के वंशज पं० कंठमणि शर्मा कोटा-निवासी से इनके विषय में सच्ची बातें ज्ञात हो गईं । वत्सगोत्री तैलंग ब्राह्मण सप्तशतीकार गोवर्धनाचार्य के कनिष्ठ भ्राता बलभद्रजी की छठवीं पीढ़ी में हरिवल्लभ शास्त्री हुए। इनके दो पुत्र थे, कुमारमणि भट्ट तथा वासुदेव। हरिवल्लभजी मध्यप्रदेशांतर्गत सागर ज़िले के गढ़मंडला-नामक राज्य में रहते थे। इनकी विद्वत्ता से प्रसन्न होकर रानी दुर्गावती ने कनेरा तथा धर्मसी-नामक दो ग्राम इनको प्रदान किए थे, जो आजकल भी इनके वंशजों के अधिकार में हैं । कुमारमणि भट्ट

संस्कृत के उद्भट विद्वान् तथा कवि भी थे। सूक्तिसंग्रह तथा सप्तशती-नामक दो ग्रंथ इन्होंने संस्कृत में रचे थे, जिनमें से केवल प्रथम ग्रंथ मिलता है। क्षेमनिधि ने अपने ग्रंथ संक्षेप भागवतामृत में जो १७६२ में समाप्त हुआ था, कुमारमणि भट्ट का गुरु-रूप से परिचय दिया है। इनकी कविता श्रेष्ठता के बहुत अंगों को लिए हुए परम मनोहर है। अनुप्रास भी इन्होंने अच्छे कहे हैं, तथा भाव-मनोहरता की भी अच्छी छटा दिखाई है। हम इन्हें पद्माकर की श्रेणी में रक्खेंगे। इनका ग्रंथ छपवाने योग्य है।

गावैं वधू मधुरै सुर गीतनि प्रीतम संग न बाहेर आई;
छाई कुमार नई छिति मैं छवि मानों बिछाई नई दरियाई।
ऊँचे अटा चढ़ि देखि चहूँ दिसि बोली यों बाल गरो भरि आई;
कैसी करौं हहरे हियरा हरि आए नहीं उलही हरियाई।

नाम—(६४२) रामश्याम कायस्थ (पंचोली) मेड़ता मारवाड़।

ग्रंथ—ब्रह्मांडवर्णन।

कविताकाल—१७७७।

विवरण—श्लोक-संख्या २७००। आश्रयदाता अजीतसिंह।

(६४३) श्रीपति कान्यकुब्ज ब्राह्मण

ये महाशय भाषा-साहित्य के आचार्यों में गिने जाते हैं। इन्होंने संवत् १७७७ में काव्यसरोज-नामक ग्रंथ बनाया, जिसे श्रीपतिसरोज भी कहते हैं। इस ग्रंथ से एवं अन्य प्रकार से इनके कई ग्रंथों के नाम ज्ञात हुए हैं, जो नीचे लिखे जाते हैं। काव्य सरोज (श्रीपतिसरोज), [द्वि० त्रै० रि०] विक्रमविलास, कविकल्पद्रुम, सरोज-कलिका, कल्पद्रुम, रससागरअनुप्रास विनोदय [द्वि० त्रै० रि०], अनूपरास और अलंकार-गंगा इनके ग्रंथों के नाम हैं। इन महाशय ने दशांग काव्य पर रीति-ग्रंथ बनाए हैं और सब अंगों का भली भाँति वर्णन

किया है। दूषणों के उदाहरणों में इन्होंने केशवदास की कविता के छंद भी रक्खे हैं। काव्यरीति जाननेवालों में दासजी एक प्रधान कवि हैं। उन्होंने काव्यरीति परम गंभीरतापूर्वक कही है, पर उन्होंने भी श्रीपति महाराजवाले अनेकानेक भाव बहुतायत से अपनी कविता में जैसे-के-तैसे चुराकर रख लिए हैं और रक्खे भी हैं अपने प्रधान ग्रंथ काव्यनिर्णय में। तिस पर तुर्रा यह कि कवि नामावली में श्रीपति का नामोल्लेख भी नहीं किया। इससे श्रीपति महोदय का महत्त्व प्रकट होता है। इनकी कविता अत्यंत गंभीर, निर्दोष एवं मनोहर है। इन्होंने अनुप्रास और यमक को बहुत आदर नहीं दिया और उचित रीति से इनका प्रयोग किया। आपने अपनी रचना में काव्य-प्रणाली को ऐसा साफ़ किया है कि चित्त प्रसन्न हो जाता है। हम को इनके ग्रंथों में केवल श्रीपतिसरोज के देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, पर इसी एक ग्रंथ से इनकी आचार्यता भली भाँति झलकती है। हम इन्हें दास कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

घूँघुट उदय गिरिवर ते निकसि रूप-
सुधा सो कलित छबि कीरति बगारो है;
हरिन डिठौना स्याम सुख सील बरषत,
करषत सोक अति तिमिर बिदारो है।
श्रीपति बिलोकि सौति वारिज मलिन होति,
हरषि कुमुद फूलै नंद को दुलारो है;
रंजन मदन मनगंजन बिरह बिबि,
खंजन सहित चंद बदन तिहारो है॥ १॥
भौंरन की भीर लैकै दच्छिन समीर धीर,
डोलति है मंद अब तुम धौं किते रहे;
कहै कवि श्रीपति हो प्रबल बसंत मति,

मंत मेरे कंत के सहायक जितै रहे ।
जागत विरहज्वुर जोर तें पवन ह्वै कै,
पर धूम भूमि पै सन्हारत नितै रहे ;
रति को विलाप देखि करुना अगार कछू,
लोचन को मूँदि कै तिलोचन चितै रहे ॥ २ ॥

श्रीपति महाराज ने रूपक और उपमाएँ बहुत सुंदर कही हैं और जो विषय उठाया है उसी पर पीयूष-वर्षा की है। इनका निवास-स्थान कालपी था। इनके विषय में उपर्युक्त बातें इनके ग्रंथ से ही ज्ञात हुई हैं।

(६४४) महाराजा विश्वनाथसिंह। इनका ठीक नंबर (१७८४/१) है।

(६४५) वीर

ये महाशय श्रीवास्तव कायस्थ दिल्ली-निवासी थे। इन्होंने कृष्ण-चंद्रिका-नामक नायिकाभेद का ग्रंथ संवत् १७७९ में बनाया, जिसमें ४२१ दोहा, सवैया, घनाक्षरी इत्यादि द्वारा नायिकाभेद एवं रस-भेद कहा गया है। भाषा इनकी व्रजभाषा है और वह सराहनीय है। हम इनको साधारण श्रेणी का कवि समझते हैं। उदाहरणों पर निगाह कीजिए—

अरुनबदन और फरकैं बिसाल बाहु,
कौन को हियो है करै सामुहे जु रुख को ;
प्रबल प्रचंड निसिचर फिरैं धाए धूरि,
चाहत मिलाए दसकंध अंधमुख को ।
चमकैं समरभूमि बरछी सहस फन,
कहत पुकारे लंक अंक दीह दुख को ;
बलकि-बलकि बोलैं बीर रघुबीर धीर,
महि पर मीड़ि मारौं आजु दसमुख को ॥ १ ॥

कंज-कली मुख खोलति भानु सों देखो प्रतच्छ नहीं कछु ओलौ ;
दामिनि हू घन सौंह से देखौ तौ राखति नाहिनै लाज को ओलौ ।

हौसैं रहैं मनभावन के मन मैं तुम नेकु नहीं मुख खोलौ ;
नाहीं बलाय ल्यौं ऐसी न कीजिए नीकेई कान्हर सों हँसि बोलौ ॥२॥

(६४६) सीतल

ये महाशय स्वामी हरिदासवाली टट्टी संप्रदाय के एक प्रसिद्ध महंत थे। इनके संप्रदाय के महंत इनका समय १७८० के लगभग बतलाते हैं। पंडित नंदकिशोरजी मिश्र (लेखराज) गँधौली-वाले हमारे भाई होते थे। उनका जन्म सं० १८८७ में हुआ था। वे कहते थे कि उन्होंने सीतल की कविता सुनी थी और यह भी सुना था कि ये प्राचीन कवि हैं। इससे भी जान पड़ता है कि इनका कविताकाल प्राचीन है।

इनके विषय में यह किंवदंती कहीं-कहीं सुन पड़ती है कि ये ज़िला हरदोई-शाहाबाद के समीप किसी ग्राम के निवासी ब्राह्मण थे और लालबिहारी-नामक किसी लड़के पर आसक्त थे। हमारे पास इनका तीन हिस्सा "गुलज़ार चमन" छपा हुआ प्रस्तुत है, जिसमें २५७ छंद हैं और इनके कुछ स्फुट छंद भी हमारे पास हैं। सुन पड़ता था कि सीतल ने इसी प्रकार के चार चमन बनाए थे। द्वि० त्रै० खो० में गुलज़ार चमन की संपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है, जिसमें चारों चमन वर्तमान हैं। गुलज़ार चमन के पढ़ने से विदित होता है कि सीतल का लालबिहारी-नामक बालक पर आसक्त होना भ्रममूलक है, क्योंकि इन्होंने लालबिहारी के नाम से ईश्वर का वर्णन किया है, जैसा कि निम्न-लिखित छंदों से प्रकट होता है—

मेरे उर बीच समाय रहे वे चिन्ह अहिल्या-तारी के ;
दुखहरन कलुप के नासकरन बारिज पद लालबिहारी के।

× × ×

शिव विष्णु ईश बहु रूप तुई नभ तारा चारु सुधाकर है ;
अंबा धारानल शक्ति स्वधा स्वाहा जल पवन दिवाकर है।

इम अंशाअंश समझते हैं सब ख़ाक जाल से पाक रहें ;
सुन लालविहारी ललित ललन हम तो तेरेई चाकर हैं ॥१॥
कारन कारज लै न्याय कहै जोतिस मत रवि गुरु ससी कहा ;
ज़ाहिद ने हक्क़ इसन यूसुफ़ अरहंत जैन छवि बसी कहा ।
रत राज रूप रस प्रेम इश्क़ जानी छवि शोभा लसी कहा ;
लाला हम तुमको वह जाना जो ब्रह्म तत्त्वत्वम्‌असी कहा ॥२॥

उपर्युक्त छंदों को देखकर कोई भी विचारवान् पुरुष यह नहीं कह सकता कि सीतल का चालचलन ख़राब था। उपर्युक्त आक्षेप किसी ने सीतल के दो-चार स्फुट छंदों को देखकर भ्रमवश कर दिया है, क्योंकि इनके कुछ छंदों का भाव दूसरी तरफ़ भी लगाया जा सकता है। इनके ग्रंथ को आजकल के महंत ने बड़े आदर से छपवाया है। इसमें गुलज़ारचमन, आनंदचमन और विहारचमन-नामक तीन भाग हैं, जिनमें १२१, ११२ और २४ छंद हैं। तीनों चमनों में प्रधानतया नख-शिख का विषय है, यद्यपि और-और विषयों के भी छंद हैं।

सीतल के चमन वास्तव में भाषा-साहित्योद्यान के अलंकार हैं। इसके सब छंद प्रेम से परिपूर्ण हैं। इसमें मुख्यतया नख-शिख कहा गया है और पोशाकों एवं पगड़ियों का विस्तार-पूर्वक वर्णन है। इनकी पूरी रचना में एक छंद भी शिथिल या नीरस नहीं है और वह बड़ी ही ज़ोरदार एवं चित्ताकर्षिणी है। इनके सब छंद खड़ी बोली में हैं। खड़ी बोली के कवियों में सीतल का नंबर प्रथम जान पड़ता है, क्योंकि इनके पहले का और कोई खड़ी बोली का पद्य ग्रंथ अब तक दृष्टिगोचर नहीं हुआ, केवल किसी-किसी कवि के दो-एक ऐसे छंद मिलते हैं। खड़ी बोली में अद्यावधि जितने कवियों ने रचनाएँ की हैं, वे इनकी रचना के सामने आदरणीय नहीं हैं। जो लोग खड़ी बोली पर यह दोष आरोपित करते हैं कि

इसमें उत्तम कविता नहीं हो सकती उनको सीतल की रचना देख-कर अपना दुराग्रह अवश्यमेव छोड़ देना चाहिए। बात यह है कि उत्तम कवि किसी भी भाषा में मनमोहिनी कविता कर सकता है; उसके वास्ते किसी भाषा एवं किसी विषय का अवलंबन आवश्यक नहीं।

सीतल की कविता में शब्द-वैचित्र्य का भी बल है। इन महा-शय की रचना देखने से जान पड़ता है कि ये भाषा के विद्वान् होने के अतिरिक्त फ़ारसी तथा संस्कृत के भी पूर्ण ज्ञाता थे और ज्योतिष का भी अभ्यास रखते थे। इन्होंने बड़ी ही उड़ती हुई भाषा में रचना की है और उर्दू के कवियों की भाँति बड़े-बड़े तलाज़िमे बाँधे हैं। इनकी रचना में हर स्थान पर लालबिहारी में ईश्वरीय भाव स्थापन से ईश्वर में कुछ लघुता आ सकती है, परंतु कष्ट-कल्पना से हक़ीक़ी अर्थ अवश्य हो सकता है। इनकी रचना में स्वच्छंद उमंग, उपमा, रूपक और अनूठेपन की ख़ूब बहार है और ख़यालात की बलंद-परवाज़ी तथा बारीकियाँ अच्छी हैं। इनकी गणना हम पद्माकर की श्रेणी में करते हैं। कुछ छंद नीचे उद्धृत किए जाते हैं—

मुख सरद-चंद्र पर ठहर गया जानी के बुंद पसीने का ;
या कुंदन कमल-कली ऊपर झमकाहट रक्खा मीने का।
देखे से होश कहाँ रहवै जो पिदर बूझली सीने का ;
या लालबदख़्शाँ पर खींचा चौका इलमास नगीने का ॥ १ ॥

हम ख़ूब तरह से जान गए जैसा आनँद का कंद किया ;
सब रूप सील गुन तेज पुंज तेरे ही तन में बंद किया।
तुझ हुस्न प्रभा की बाकी ले फिर विधि ने यह फरफंद किया ;
चंपकदल सोनजुही नरगिस चामीकर चपला चंद किया ॥ २ ॥

मुख सरद-चंद्र पर स्रम-सीकर जगमगैं नखतगन जोती-से ;
कै दल गुलाब पर शबनम के हैं कनके रूप उदोती-से।

हीरे की कनियाँ मंद लगैं हैं सुधाकिरन के गोती-से ;
आया है मदन आरती को धर कनक थार में मोती-से ॥३॥
वरनन करने को क्या वरनूँ बरनूँगा जेती बानी है ;
ग्रह तीन उच्च के पड़े हुए जानी यह यूसुफ़ सानी है।
ससि भवन जीव सफरी में गुर कन्या बुध जोतिप ज्ञानी है ;
इस लालबिहारी की सीतल क्या अर्ध-चंद्र पेशानी है ॥४॥
चंदन की चौकी चारु पड़ी सोता था सब गुन जटा हुआ ;
चौके की चमक अधर बिहँसन मानों यक दाड़िम फटा हुआ।
ऐसे में ग्रहन समै सीतल यक ख्याल बड़ा अटपटा हुआ ;
भूतल ते नभ नभ ते अवनी अगु उछलै नट का वटा हुआ ॥५॥

(६४७) ऋषिनाथ

ये महाशय असनी के वंदीजन प्रसिद्ध कवि ठाकुर के पिता और सेवक के प्रपितामह थे। ये स्वयं भी प्रसिद्ध कवि थे और इनके स्फुट छंद बहुत विशद मिलते हैं। काशिराज के दीवान सदानंद तथा रघुवर कायस्थ के आश्रय में संवत् १८३१ में इन्होंने अलंकारमणि-मंजरी-नामक एक उत्तम ग्रंथ भी बनाया। इसके ४८३ छंदों में दोहे विशेष हैं, पर कहीं-कहीं घनाक्षरी, छप्पय आदि भी हैं। इनकी कविता व्रजभाषा में है। इनकी भाषा स्वच्छ और गंभीर है और दोहों में इनके भावों का अनोखापन देख पड़ता है। इनका कविता-काल १७८० से प्रारंभ होना अनुमान-सिद्ध है, क्योंकि ठाकुर का कविताकाल १८०० के लगभग समझ पड़ता है (ठाकुर का हाल देखिए) । हम इन्हें तोप कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

श्रीनँदलाल तमाल सो, स्यामल तन दरसाय ;
ता तन सुबरन-बेलि-सी राधा रही समाय ॥ १ ॥

छाया छत्र ह्वैकरि करत महिपालन को,
पालन को पूरो फैलो रजत अपार है;
सुकृत उदार ह्वै लगत सुख श्रौनन मैं,
जगत जगत हंस हाँसी हीसहार है।
ऋषिनाथ सदानंद सुजस बिलंद तम-
बृंद को हरैया चंदचंदिका सुढार है;
हीतल को सीतल करत घनसार है,
महीतल को पावन करत गंग-धार है ॥ २ ॥

(६४८) घाघ कवि, क़न्नौज-निवासी

ये महाशय १७९३ में उत्पन्न हुए और १७८० में इन्होंने कविता की। मोटिया नीति आपने बड़ी ज़ोरदार ग्रामीण भाषा में कही है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है।

मुए चाम ते चामु कटावैं सकरी भुँइ माँ स्वावैं;
घाघ कहैं ई तीनिउ भकुहा उढ़रि गए पर रूवावैं ॥ १ ॥
चन्ना पहिरे हरु ज्वातैं औ बोझु धरे अँठिलायँ;
घाघ कहैं ई तीनिउ भकुहा पीसत पान चबायँ ॥ २ ॥
उधारु काढ़ि बेउहारु चलावैं छप्पर डारैं तारो;
सारे के सँग बहिनी पठवैं तीनिउ का मुँह कारो ॥ ३ ॥
कुचकट पनही बतकट जोय; जो पहिलौठी बिटिया होय।
पातरि कृपी बौरहा भाय; घाघ कहै दुख कहाँ समाय ॥ ४ ॥

नाम—(६४९) महात्मा नागरीदास महाराजा।

जन्म-काल—१७५६।

कविताकाल—१७८०।

इस नाम के चार-पाँच कवि व्रज-मंडल में हुए हैं। इनमें से एक श्रीवल्लभाचार्य संप्रदाय के, एक स्वामी हरिदासजी की संप्रदाय के, एक गोस्वामी हितहरिवंशजी की संप्रदाय के और

एक हमारे चरित्र-नायक महाराजा नागरीदासजी वल्लभीय संप्रदाय के थे। इन कविवर का वर्णन सरोजकार ने किया है, परंतु सं० १६४८ दिया है। उसी के अनुसार डॉक्टर ग्रियर्सन साहब ने भी सन् १५६१ लिख दिया, परंतु शिवसिंहजी तथा डॉक्टर साहब का मत असमूलक है। इन लोगों ने विना किसी आधार के यह संवत् मान लिया है, जो कि नागरीदासजी के स्वरचित ग्रंथों ही के समय से अशुद्ध ठहरता है। नागरीदासजी की सर्वप्रथम रचना मनोरथ-मंजरी है, जो संवत् १७८० में बनी।

संबत सत्रह सै असी, चौदसि मंगल वार;
प्रगट मनोरथमंजरी, वदि आसू अवतार।

नागरीदास के जीवन-चरित्र में इनका जन्म-काल सं० १७५६ पौष कृ० १२ दिया हुआ है, जो वर्तमान महाराज कृष्णगढ़ की आज्ञा से लिखा गया और संवत् १६५९ में मुद्रित हुआ। इसके विषय में किसी तरह का संदेह नहीं किया जा सकता।

हमारे चरित्र-नायक का नाम महाराज सावंतसिंहजी था और ये कविता में अपना नाम नागर, नागरि, नागरिया और नागरीदास रखते थे। आपके पिता महाराजा राजसिंह, पितामह महाराजा मानसिंह और प्रपितामह महाराजा रूपसिंहजी थे। इनकी राज-धानी कृष्णगढ़ राजपूताना के अंतर्गत है। नागरीदासजी का जन्म राठौर कुल के क्षत्रियों में हुआ था। पहले कृष्णगढ़ राजधानी नहीं थी, वरन् इसकी जगह राजधानी रूपनगर में थी, जो अब तक इनके वंशधरों के राज्य में है। महाराजा नागरीदासजी का जन्म-स्थान और राजधानी यही रूपनगर था, परंतु अब राजधानी कृष्णगढ़ में है, इसी कारण ये कृष्णगढ़ के महाराजा कहे गए हैं, जिसमें स्थान जानने में किसी को भ्रम न पड़े।

इनका जन्म-संवत् १७५६ पौष कृ० १२ को और ब्याह १७७७

में भावनगर के राजावत् यशवंतसिंह की कन्या से हुआ। आपका प्रथम पुत्र मर गया और द्वितीय पुत्र सरदारसिंहजी आपके उत्तराधिकारी हुए। ये महाराज संस्कृत, फ़ारसी, हिंदी और डिंगल भाषाओं के अच्छे पंडित थे, और भी कई प्रांत की भाषाएँ, यथा गुजराती, पंजाबी, गढ़वाली इत्यादि का भी अभ्यास इन्हें था, जैसा कि इनकी रचना से प्रकट होता है। संभव है कि आपने सं० १७८० से पहले काव्य करना प्रारंभ कर दिया हो, क्योंकि आपका पहला ग्रंथ "मनोरथमंजरी" सं० १७८० में समाप्त हुआ।

कवि होने के साथ ही साथ ये महाशय वीर भी थे। इन्होंने केवल दस वर्ष की बाल्यावस्था में एक उन्मत्त हाथी का सामना करके एक ही बार में उसे विचलित कर दिया था। १३ वर्ष की अवस्था में इन्होंने बूँदी के राजा जैतसिंह का समर में वध किया। सं० १७७४ में आपने थूण के उस सरदार को पराजित किया, जो जयपुर तथा कोटा के महाराजाओं से जीता न जा सका था। बीस वर्ष की अवस्था में आपने अकेले ही एक सिंह को मारा। मल्हारराव से भी इनसे युद्ध हुआ था और घोर संग्राम होने पर भी इन्होंने उन्हें कर नहीं दिया। और भी अनेक युद्ध इन्होंने किए जिनका वर्णन यहाँ अप्रासंगिक है।

ये महाराज वल्लभीय संप्रदाय के श्रीगोस्वामी रणछोरदासजी के शिष्य और ब्रज तथा ब्रजवासी कृष्ण के पूर्ण भक्त थे।

सं० १८०४ में ये दिल्ली के बादशाही दरबार में थे। उस समय अकस्मात् इनके पिता का स्वर्गवास हुआ। अहमदशाह ने वैशाख शु० ६ को इन्हें कृष्णगढ़ का राजा बनाया। ये अपनी राजधानी को जाया चाहते थे कि इन्हें ख़बर मिली कि इनके भाई बहादुरसिंह ने राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया है, अतः ये बादशाही दल सहायक लेकर कृष्णगढ़ गए, परंतु अपने भाई से न जीत सके। उधर

बहादुरसिंह ने महाराजा जोधपूर से मेल कर लिया था, सो इन्हें दुबारा मदद देने से बादशाह ने इनकार कर दिया। ये वहाँ से ब्रज को चले गए और वहाँ रहकर इन्होंने मरहटों से संधि करके बहादुरसिंह को परास्त किया और अपना राज पाया। उपर्युक्त घराऊ झगड़ों से इनके चित्त में राज्य से घृणा हो गई, अतः ये स्वयं राज्य न लेकर सं० १८१४ में आश्विन शु० १० के दिन अपने पुत्र को राज्य पर प्रतिष्ठित करके आप राज-पाट, घर-द्वार छोड़ श्रीवृंदावन जाकर भगवद्भक्ति में निमग्न हुए, जैसा कि इनकी कविता से भी जान पड़ता है।

जहाँ कलह तहँ सुख नहीं कलह सुखन को सूल ;
सबहि कलह यक राज में राज कलह को मूल ॥ १ ॥
मैं नित या मन मूढ़ तें डरत रहत हौं हाय ;
वृंदावन की ओर तें मति कबहूँ फिरि जाय ॥ २ ॥
लेत न सुख हरि-भगति को सकल सुखनि कौ सार ;
कहा भयो नृपहू भए ढोवत जग बेगार ॥ ३ ॥
और मौन देखौं न अब देखौं वृंदा भौन ;
हरि सौं सुधरी चाहिए सबही बिगरै क्यों न ॥ ४ ॥
ब्रज मैं ह्वै ह्वै कढ़त दिन किते दिए लै खोय ;
अबकै अबकै कहत ही वह अबकै कब होय ॥ ५ ॥

पाठक महाशय! देखिए इस कविता से कैसा निर्वेद टपकता है? ब्रज में पहुँचने पर ये कैसे प्रसन्न हुए थे, सो निम्न पद से झलकता है—

हमारी सबही बात सुधारी।
कृपा करी श्रीकुंजबिहारिनि अरु श्रीकुंजबिहारी।
राख्यो अपने वृंदावन मैं जिहि को रूप उँज्यारी;
नित्त केलि आनंद अखंडित रसिक संग सुखकारी।

कलह कलेस न व्यापै यहि ठाँ ठौर विश्व ते न्यारी ;
नागरिदासहि जनमि जिवायो बलिहारी बलिहारी ॥ १ ॥
गौर साँवरे रसिक दोउ यह दीजै सुखरास ;
कबहुँ नागरीदास अब तजै न व्रज को वास ॥ २ ॥

और भी इनकी कविता में स्थान-स्थान पर व्रज की प्रशंसा मिलती है । वहीं भाद्र शु० ३ सं० १८२१ को ये ६४ वर्ष ८ महीने की अवस्था में इस असार संसार को छोड़ गोलोक-वासी हुए ।

महात्मा नागरीदासजी ने सं० १७८० से लेकर सं० १८१९ पर्यंत अखंड साहित्य-स्रोत बहाया । इनकी कविता की ख्याति इनके जीवन-काल ही में विशेषरूप से हो गई थी और उसे वृंदावनवासी गृहस्थ तथा संसारत्यागी साधु-महात्मा सभी पसंद करते थे । एक बार ये श्रीवृंदावन में गए । जब लोगों ने जाना कि राजा कृष्णगढ़ आए हैं, तो कोई साधु-महात्मा इनके पास न गया, परंतु जब उन लोगों को यह विदित हुआ कि ये सुकवि नागरीदासजी हैं ; तब क्या पूछना था, सब बड़ी प्रसन्नता और प्रेम से इनके समीप दौड़-दौड़कर आने लगे और आग्रहपूर्वक इनके पद तथा अन्य कविता सुनकर आनंद उठाने लगे, जिसका वर्णन स्वयं नागरीदासजी ने यों किया है—

सुनि व्यवहारिक नाम मों ठाढ़े दूरि उदास ;
दौरि मिले भरि नैन सुनि नाम नागरीदास ।
यक मिलत भुजन भरि दौरि-दौरि ; यक टेरि बुलावत औरि-औरि ।
केउ चले जात सहजै सुभाय ; पद गाय उठत मोगहि सुनाय ।
जे परे धूरि मधि मत्त चित्त ; तेउ दौरि मिलत तजि रीति नित्त ।
अतिसय विरक्त जिनके सुभाव ; जे गनत न राजा रंक राव ।
ते सिमिटि सिमिटि फिरि आय आय ; फिरि छाँड़त पद पढ़वाय गाय ।

ऊपर की कविता से विदित होता है कि इनके काव्य पर लोगों का कितना प्रेम था ? फ़ारसी में शायरों का मत है कि "क़द्र मर्दुम बाद मर्दुम।"

"जितने शायर हैं फ़ना के बाद है उनकी नमूद ;
ख़ल्क़ से मादूम जब उनका हुआ, शोहरत हुई।"

इन कहावतों को नागरीदास की कविता ने ग़लत साबित कर दिया। महाराज नागरीदासजी के रचित छोटे-बड़े ७५ ग्रंथ हैं, जिनमें से ७३ को छोटी साँची के तीन भागों में विभक्त करके वैराग्य-सागर, सिंगारसागर और पदसागर के नाम से ज्ञानसागर यंत्रालय के मालिक श्रीधर शिवलालजी ने महाराजा साहब कृष्णगढ़ की आज्ञानुसार मुद्रित करके प्रकाशित किया है। छपाई व काग़ज़ अच्छा है और विषय-सूची, पद-सूची और जीवन-चरित्र इत्यादि लगाकर उत्तम रीति से ग्रंथ छापा गया है। आदि में छप्पन भोग-चंद्रिका-नामक ५२ पृष्ठ का एक ग्रंथ जयकवि-रचित भी है। अंत में महाराज नागरीदासजी की उपपत्नी बनी-ठनी उपनाम रसिक-बिहारी के भी ६१ पद संगृहीत हैं। नागरीदासजी के विनयविलास तथा गुसरसप्रकाश नहीं मिलते।

"वैराग्यसागर" १९३ पृष्ठों में समाप्त हुआ है। इसमें नागरी-दासजी-कृत वैराग्य और भक्ति-संबंधी छोटे-छोटे ग्रंथों का संग्रह है।

सिंगारसागर २२१ पृष्ठों का ग्रंथ है जिसमें श्रीकृष्ण और राधाजी के शृंगार-संबंधी बहुत-से ग्रंथ सम्मिलित हैं।

"पदसागर" में २२० पृष्ठ हैं और इसमें विशेषतया पदों के ग्रंथ संगृहीत हैं, परंतु कहीं-कहीं दोहा था और छंद भी हैं। नागरी-दासजी की भाषा विशेषतया व्रजभाषा है और कहीं-कहीं इन्होंने संस्कृत मिश्रित तथा फ़ारसी मिश्रित भाषा का भी प्रयोग किया है। खड़ीबोली की भी कविता इन्होंने कहीं-कहीं की है। इश्क़चमन

में फ़ारसी मिश्रित दोहे बहुत ही उत्तम हैं। गद्य काव्य भी कहीं-कहीं आपने किया है। "पदप्रसंगमाला" में वार्तिक वर्णन कई जगह हैं। गुजराती, मारवाड़ी तथा पंजाबी भाषा मिश्रित कविता भी इन्होंने यत्र-तत्र की है। व्रज की महिमा वर्णन करने में ये महाराज बहुत विमल जाते थे और जहाँ-जहाँ व्रज या वृंदावन के वर्णन इनकी कविता में आए हैं वे बहुत ही प्रेमपूर्ण हैं। वृंदावन से इनको इतना अधिक प्रेम था कि एक दफ़ा ये कहीं से श्रीवृंदावन आ रहे थे, परंतु यमुनाजी के किनारे पहुँचते-पहुँचते रात हो गई। उस जगह नाव इत्यादि का कोई साधन पार उतरने का न था और न इनको यमुनाजी के किनारे श्रीवृंदावन से अलग रात-भर पड़ा रहना सह्य हुआ, अतः ये जान पर खेलकर यमुनाजी में कूद पड़े और पार होकर श्रीवृंदावन पहुँचे, जैसा इन्होंने स्वयं लिखा है—

देख्यो श्री वृंदा विपिन पार ; बिच बहत यहाँ गंभीर धार।
नहिं नाव नहीं कछु और दाव ; हे दई कहा कीजै उपाव।
रहे वार लगनि को लगै लाज ; गए पारहि पूरै सकल काज।
प्रेम पंथ को पीठि दै यह जीबो न सुहाय ;
मंगल दिन है आजुको प्रिय सनमुख जिय जाय।
यह चित्त माँझ करिकै बिचार ; परे कूदि कूदि जल मध्य धार।
वार रहे रहे वार ते पार भए भय पार ;
दरसे वृंदा बिपिन बिच राधा नंदकुमार।

रासलीला का वर्णन इन्होंने बड़े विस्तार और उत्तमता से किया है। आपने रामायण की कथा भी कही है, तथा होली के वर्णन कई स्थानों में बड़े ही मनोहर किए हैं। होली को ये बहुत ही पसंद करते थे। इन्होंने एक जगह कहा है कि—

"स्वर्ग बैकुंठ मैं होरी जो नाहिं तौ कोरी कहा लै करैं ठकुराई।"

इनकी कविता बड़ी ही सरस, हृदयग्राहिणी और श्रीराधाकृष्ण की भक्ति से पूर्ण तल्लीनता-युक्त है। ये महाशय सुकवि और व्रज-वासी कृष्ण के अखंड भक्त थे। हम इनकी कविता का अनुभव पाठकों को इनके छंद उदाहरण-स्वरूप देकर नहीं करा सकते, न इस लेख में इतना स्थान ही है। हम पाठकों से प्रार्थना करते हैं कि वे इनकी मनमोहिनी कविता को अवश्यमेव देखें और अपने हृदय तथा जिह्वा को पावन करें। अब हम इनके दो-चार उदाहरण देकर इस लेख को समाप्त करते हैं। इनकी गणना सेनापति की श्रेणी में की जाती है।

उदाहरण—

उज्जल पच्छ की रैन चैन उज्जल रस दैनी;
उदित भयो उड़राज अरुन दुति मन हरि लैनी।
महा कुपित ह्वै काम ब्रह्म अस्त्रहि छोंड़्यो मनु;
प्राची दिसि ते प्रज्वलित आवत अगिनि उठी जनु।
दहन मानपुर भए मिलन को मन हुलसावत;
छावत छपा अमंद चंद ज्यों-ज्यों नभ आवत।
जगमगाति बन जोति सोत अमृतधारा-से;
नव द्रुम किसलय दलनि चारु चमकत तारा-से।
सेत रजत की रैन चैन चित मैन उमहनी;
तैसी मंद सुगंध पौन दिनमनि दुख दहनी।
मधि नायक गिरिराज पदिक वृंदावन भूषन;
फटिक सिला मनि शृंग जगमगत दुति निर्दूषन।
सिला-सिला प्रति चंद चमकि किरननि छबि छाई;
बिच-बिच अंब कदंब झंब झुकि पायनि आई।
ठौर-ठौर चहुँ फेर ढेर फूलन के सोहत;
करत सुगंधित पवन सहज मन मोहत जोहत।

विमल नीर निरझरत कहूँ झरना सुख करना ;
महा सुगंधित सहजबासु कुमकुम मद हरना।
कहुँ-कहुँ हीरन खचित रचित मंडल सुरास के ;
जटित नगन कहुँ जुगुल खंभ झूलनि विलास के।
ठौर-ठौर लखि ठौर रहत मनमथ सो भारी ;
विहरत विविध विहार तहाँ गिरि पर गिरिधारी।

× × ×

भ्रुव धनु कच धुरवा छुटे दसन दामिनी बूंद ;
रूपघटा राधे अटा गान गरज धुनि मंद।

× × ×

उमगि मिली इत उत दुहुँ दिसि तैं गौरघटा अरु श्याम ;
गरजनि मधुर किंकिनी नूपुर चातक बचन रचन सुख बाम।
श्रम जल बरषत फुही सुही फबि हसन दसन दामिनि अभिराम ;
उड़ि-उड़ि चलत मनौ बक पंगति त्रिलुलित मुकता दाम।
कुसुम सेज अवनी विचलित भइ अति आनंद हिए नृप काम ;
नागरिया यहि विधि नित पावस बृंदावन सुख धाम।

× × ×

उस हुस्न के मुक़ाबिल करना बयान क्या है ;
फिर चश्म बिन बिचारी शायर ज़बान क्या है।
कंजन हू ते डहडहे बिन अंजन छबि ऐन ;
खंजन गति गंजन महा पिय मनरंजन नैन।
कीनी मृग मद आड़ रचि गोरे वदन मयंक ;
मनु पिय मोहन मंत्र की राजत अवली अंक।
इश्क़ उसी की झलक है ज्यों सूरज की धूप ;
जहाँ इश्क़ तहँ आप है कादर नादर रूप।

आया इश्क़ लपेट में खाई चश्मचपेट;
सोई आया खलक में और भरैं सब पेट।
रस उरझी निसि श्याम सों आरस उरझे वैन;
तेरी उरझी अलक मैं मेरे उरझे नैन।
नींदभरे तन लटपटे छुके दृगन की हेर;
नागरिया के उर बसौ कुंज भुरहरी बेर।

× × ×

किते दिन बिन वृंदावन खोए।
योंही वृथा गए ते अबलौ राजस रंग समोए।
छाँड़ि पुलिन फूलन की सज्जा सूलसरन पर सोए;
भीने रसिक अनन्य न दरसे विमुखन के मुख जोए।
हरि विहार की ठौर रहे नहिं अति अभाग्य बल बोए;
कलह सराय बसाय भिठारी माया राँड़ विगोए।
इकसर ह्याँ के सुख तजि कै ह्वाँ कबहुँ हँसे कहुँ रोए;
कियो न अपनो काज पराए भार सीस पर ढोए।
पायो नहीं अनंद लेस मैं सबै देस टकटोए;
नागरिदास बसे कुंजनि मैं जब सब विधि सुख भोए।

× × ×

भादौं की कारी अँध्यारी निसा झुकि बादर मंद फुही बरसावै;
स्यामाजु आपनी ऊँची अटा पै छकी रस रीति मलारहि गावै।
ता समै मोहन के दृग दूरि ते आतुर रूप की भीख यों पावै;
पौन मया करि घूँघुट टारै दया करि दामिनि दीप दिखावै।

× × ×

हम ब्रज सुखी ब्रज के जीव।
प्रान तन मन नैन सरबस राधिका को पीव।

कहाँ आनँद मुक्ति मैं यह कहाँ मृदु मुसकान ;
कहाँ ललित निकुंज लीला मुरलिका कल गान ।
कहाँ पूरन सरद-रजनी जोन्ह जगमग जोत ;
कहाँ नूपुर बीन धुनि मिलि रासमंडल होत ।
कहाँ पाँति कदंब की झुकि रही जमुना बीच ;
कहाँ रंग-बिहार फागुन मचत केसरि कीच ।
कहाँ श्रवनन कीरतन जगमगनि दृसधा रंग ;
कंठ गद्‌गद रोम हरखन प्रेम पुलकित अंग ।
दास नागर चहत नहिं सुख मुक्ति आदि अपार ;
सुनहुँ ब्रज बसि श्रवन मैं ब्रज बासिनिन की गार ।

हमारैं मुरलीवारो श्याम ।
बिन मुरली बनमाल चंद्रिका नहिं पहिचानत नाम ।
गोप रूप बृंदावनचारी ब्रजजन पूरन काम ;
योंही सों हित चित्त बढ़ो नित दिन-दिन पल छिन जाम ।
नंदगाँव गोवरधन गोकुल बरसानो बिसराम ;
नागरिदास द्वारिका मथुरा इनसों कैसो काम ।

इन महाराज ने अपनी कविता में कहीं-कहीं अन्य कवियों के छंद भी रख दिए हैं ; परंतु वहाँ पर लिख दिया है कि अन्य कवि के पद ।

इनके रचित ग्रंथों की सूची नीचे दी जाती है—

१ सिंगारसार	७ प्रातरसमंजरी
२ गोपीप्रेमप्रकाश (१८००)	८ बिहारचंद्रिका (१७८८)
३ पदप्रसंगमाला	९ भोजनानंदाष्टक
४ ब्रजबैकुंठतुला (१८०१)	१० जुगुलरसमाधुरी
५ ब्रजसार (१७९९)	११ फूलबिलास
६ भोरलीला	१२ गोधनआगमन

१३ दोहनआनंद
१४ लग्नाष्टक
१५ फागविलास
१६ ग्रीष्मविहार
१७ पावसपचीसी
१८ गोपीवैनबिलास
१९ रासरसलता
२० रैनरूपरस
२१ शीतसार
२२ इश्क़चमन
२३ मजलिसमंडन
२४ अरिल्लाष्टक
२५ सदा की माँझ
२६ वर्षा ऋतु की माँझ
२७ होरी की माँझ
२८ कृष्णजन्मोत्सव कवित्त
२९ प्रियाजन्मोत्सव कवित्त
३० साँझी के कवित्त
३१ रास के कवित्त
३२ चाँदनी के कवित्त
३३ दिवारी के कवित्त
३४ गोवर्धनधारन के कवित्त
३५ होरी के कवित्त
३६ फाग गोकुलाष्टक
३७ हिंडोरा के कवित्त
३८ वर्षा के कवित्त
३९ भक्तिमगदीपिका (१८०२)
४० तीर्थानंद (१८१०)
४१ फागविहार (१८०८)
४२ बालविनोद (१८०९)
४३ सुजनानंद (१८१०)
४४ वनविनोद (१८०९)
४५ भक्तिसार (१७९९)
४६ देहदशा
४७ वैरागवल्ली
४८ रसिकरत्नावली (१७८२)
४९ कलिवैरागवल्लरी (१७९५)
५० अरिल्लपचीसी
५१ छूटकविधि
५२ पारायणविधिप्रकाश (१७९९)
५३ शिखनख
५४ नखशिख
५५ छूटक कवित्त
५६ चरचरियाँ
५७ रेखता
५८ मनोरथमंजरी (१७८०)
५९ रामचरितमाला
६० पदप्रबोधमाला
६१ जुगुलभक्तिविनोद (१८०८)
६२ रसानुक्रम के दोहे
६३ शरद की माँझ

६४ साँझी फूल बीनन समेत संवाद
६५ वसंतवर्णन
६६ फाग खेलन समेतानुक्रम कवित्त
६७ रसानुक्रम के कवित्त
६८ निकुंजविलास (१७९४)
६९ गोविंदपरचई
७० बनजनप्रशंसा (१८१६)
७१ छूटक दोहा
७२ उत्सवमाला
७३ पदमुक्तावली
७४ बैनविलास
७५ गुप्तरसप्रकाश

ये दोनों अंतिम ग्रंथ अब कृष्णगढ़ में नहीं मिलते, केवल सूची में लिखे हैं।

इनके दो ग्रंथ 'धन्य-धन्य' [प्र० त्रै० रि०] तथा व्रजसंबंधिनाममाला [१९०१ खो०] खोज में लिखे हैं। प्रथम त्रैवार्षिक खोज में इनके और ग्रंथ पदप्रसंगमाला का पता चलता है।

नाम—(६५०) रसरंगजी।

ग्रंथ—बानी।

कविताकाल—१७८०।

विवरण—इनकी रचना व्रजभाषा तथा खड़ी बोली में है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में की जाती है। यह पुस्तक हमने दरबार छतरपूर में देखी है। रसरंगजी मुसलमान थे। ये पहले धामियों के पीछे वैष्णव संप्रदाय के शिष्य हो गए। इनका स्थान झाँसी था। इनके समय आदि जाँच से जान पड़े हैं।

उदाहरण—

तेरे महबूब बाँके ने चसम की चोट मारी है;
खड़ा है सामने ही में जरा नहिं पलक टारी है।
जिलाया उनीने मुझको जिनों यह गाँस मारी है;
तड़पता कभी ना जीता बिछोहा दर्द भारी है।

(६५१) भूधरदासजी जैन

इन्होंने जैन-शतक-नामक एक ग्रंथ में अपने विषय में एक कवित्त लिखा है, जिससे विदित होता है कि ये महाशय आगरे के रहने-वाले खंडेलवाल जैन थे। इन्होंने महाराजा जयसिंह सवाई के कर्म-चारी हरीसिंह के कहने से जैन-शतक ग्रंथ १७८१ संवत् में बनाया। इसमें १०७ मनोहर छंद हैं। इन्होंने १७८९ में पार्श्वपुराण-नामक प्रायः १६० पृष्ठों का बहुत करके दोहा चौपाइयों में द्वितीय उत्तम जैन-ग्रंथ लिखा, जिसकी जैनधर्म में पुराणों की भाँति पूजा होती है। ये दोनों ग्रंथ हमारे पास वर्तमान हैं। इनके तृतीय ग्रंथ भूधर-विलास का एक अंश जैन-पद-संग्रह तृतीय भाग हमारे पास है, जिसमें ६८ पृष्ठ हैं। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की है और कहीं-कहीं खड़ी बोली भी कह दी है। इनके पार्श्वपुराण की भाषा में अवधी भाषा का भी बहुत मेल है। इनका काव्य उत्कृष्ट और सबल है। इन्होंने उपदेशों और जैन-कथाओं का विशेष वर्णन किया है। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

जोगी तो जंगम से बड़ा बहलाल कपड़े पहिरता ;
उस रंग से महरम नहीं कपड़े रँगे से क्या हुआ।
पोथी के पन्ना बाँचता घर-घर कथा कहता फिरै ;
निज ब्रह्म को चीन्हा नहीं ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ।

× × ×

तुम जिन जोति सरूप दुरति अँधियार निवारी ;
सो गनेस गुरु कहैं तत्त्वविद्या धन धारी।
मेरे चित घर माहिं बसौ तेजोमय यावत ;
ताप तिमिर: अवकास तहाँ सो क्यों कर पावत।

× × ×

आगे जैन ग्रंथन के करता कवींद्र भए,
करी देव भाषा महा बुद्धि फल लीनो है ;
अच्छर मिताई तथा अरथ गँभीरताई,
पद ललिताई जहाँ आई रीति तीनो है।
काल के प्रभाव तिन ग्रंथन के पाठी अब,
दीसत अलप ऐसो आयो दिन हीनो है ;
तातैं यहि समै जोग पढ़ैं बाल बुद्धि लोग,
पारस पुरान पाठ भाषा बद्ध कीनो है।

× × ×

बीर हिमाचल ते निकरी गुरु गौतम के मुख कुंड ढरी है ;
मोह महाचल भेदि चली जग की जड़तातप दूरि करी है।
ज्ञान पयोनिधि माँहि रली बहु भंग तरंगनि सों उछरी है ;
ता सुचि सारद गंग नदी प्रति मैं अँजुली निज सीस धरी है।

× × ×

कैसे कर केतकी कनेर एक कहे जायँ,
आक दूध गाय दूध अंतर घनेर है ;
पीरी होत रीरी पै न रीस करै कंचन की,
कहाँ काग बानी कहाँ कोयल की टेर है।
कहाँ भान भारो कहाँ आँगिया बिचारो कहाँ,
पूलो को उजारो कहाँ मावस अँधेर है ;
पच्छ छोर पारखी निहारो नेक नीके करि,
जैन बैन और बैन इतनो ही फेर है।

(६५२) कृष्ण

ये महाशय ककोर-कुलोत्पन्न मथुरावासी माथुर ब्राह्मण थे। कहते हैं कि आप प्रसिद्ध कवि बिहारी के पुत्र थे। आप महाराजा सवाई जयसिंह जयपूर-नरेश के मंत्री राजा आयामल्ल के आश्रय में

रहते थे और उन्हीं की आज्ञा से इन्होंने कविवर बिहारीलाल की सतसई पर प्रति दोहे पर एक-एक सवैया या घनाक्षरी कही तथा सूक्ष्मतया गद्य व्रजभाषा में प्रति दोहे के कुछ गुण दोष और अर्थ भी कहे हैं। कृष्ण कवि ने अपने विषय में उपर्युक्त बातों का कहना अलम् समझा और अपनी रचना का समय तक नहीं लिखा। हाल में हमें याज्ञिकत्रय से मालूम हुआ कि उनके पास सतसई टीका की जो प्रति है उसमें उक्त टीका के निर्माण-काल का दोहा दिया हुआ है। वह इस प्रकार से है—

सत्रह सत द्वै आगरे असी बरष रबिबार;
कातिकबदि चौदसि भए कवित सकल रससार।

बिहारीसतसई संवत् १७१६ में बनी थी और सवाई जयसिंह ने संवत् १७५५ से सं० १७६६ तक राज्य किया था। ये महाशय इन महाराजा साहब के विषय वर्तमानकाल की क्रिया का प्रयोग करते हैं और उन्हीं के मंत्री की आज्ञानुसार यह ग्रंथ बनना कहते हैं, अतः निश्चय है कि यह ग्रंथ इन्हीं महाराज के राजत्व-काल में बना। बिहारीलाल ने अपने आश्रयदाता मिरज़ा राजा जयसिंह की प्रशंसा के दोहे लिखे हैं; उन पर छंद लिखने में कृष्ण कवि ने सवाई जयसिंह की प्रशंसा की है। उनमें इन्होंने जयसिंह द्वारा जज़ीया के छुटने तक का हाल लिखा है। यह घटना संवत् १७८० के लगभग की है। फिर संवत् १७८७-८८ की बड़ी-बड़ी घटनाओं तक का इन्होंने वर्णन नहीं किया, यद्यपि प्रथम की छोटी-छोटी घटनाएँ भी लिखी हैं। इससे अनुमान होता है कि यह टीका संवत् १७८५ के लगभग बनी। कृष्ण की वार्तिक टीका से विदित होता है कि ये महाशय काव्यांगों को भली भाँति समझते थे, क्योंकि इन्होंने बिहारी की टीका में काव्यांगों को ही दिखाया है। इनका काव्य बड़ा ही संतोष-दायक और भाषा बहुत मधुर है।

दोहों पर छंद कहने में इन्होंने मूल का आशय तो रक्खा ही है, किंतु अपनी ओर से भी बहुत कुछ मिलाकर टीका को अत्यंत मनोहर कर दिया है। इनके छंद उल्था से नहीं देख पड़ते हैं और उनमें स्वतंत्र कविता का पूरा स्वाद मिलता है। इन्होंने व्रजभाषा में रचना की और अनुप्रास यमकादि का बहुत आदर नहीं किया। हम इनको तोप कवि की श्रेणी में रखते हैं। खोज १६०५ में इनके एक और ग्रंथ विदुर प्रजागर (१७६२) का पता चलता है।

उदाहरण—

छवि सों फवि सीस किरीट बन्यो रुचि साल हिये बनमाल लसै ;
कर कंजहि मंजु रली मुरली कछनी कटि चारु प्रभा बरसै।
कवि कृष्ण कहै लखि सुंदरि मूरति यों अभिलाष हिये सरसै ;
वह नंदकिशोर बिहारी सदा यहि ब्रानिक मो हिय माँझ बसै ॥१॥
ह्वै अति आरत मैं बिनती बहुबार करी करुनारस भीनी ;
कृष्ण कृपानिधि दीन के बंधु सुनी असुनी तुम काहेक कीनी।
रीझते रंचकही गुन सों वह बानि बिसारि मनौ अब दीनी ;
जानि परी तुम हू हरि जू कलिकाल के दानिन की गति लीनी ॥२॥

नाम—(६५३) चरणदास धूसर ब्राह्मण, अलवर।

ग्रंथ—(१) अष्टांगयोग, (२) नासकेत, (३) संदेहसागर, (४) भक्तिसागर (१७८१) [तृ० त्रै० रि०], (५) हरिप्रकाश टीका (१८३४), (६) अमरलोक खंड धाम, (७) भक्तिपदारथ, (८) शब्द, (९) दानलीला, (१०) मनविरक्तकरन गुटका, (११) राममाला, (१२) ज्ञानस्वरोदय (१८१७) [खोज १९०१ तथा १९०३]।

उत्पत्तिकाल—१७६०।

मरणकाल—१८३८।

विवरण—साधारण श्रेणी। ये अलवर में पैदा हुए और देहली में मरे। ये व्यास-पुत्र शुकदेवजी के शिष्य माने गए थे। सरोज ने इनका समय १९३७ दिया है और केवल ज्ञानस्वरोदय इनका रचित लिखा है। यहाँ खोज का संवत् दिया गया है। द्वितीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट से इनके एक और ग्रंथ कुरुक्षेत्र की लीला का पता चलता है तथा ब्रह्मज्ञानसागर तृतीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट में मिला है।

उदाहरण—

नमो नमो सुकदेवजी करूँ प्रनाम अनंत ;
तव प्रसाद स्वरभेद को चरनदास बरनंत ॥ १ ॥
चरनदास सो सुक कहत थिरकत स्वर पहिचान ;
थिर कारज को चंद्रमा चर को भानु सुजान ॥ २ ॥

(६५४) जोधराज

इस कविवर ने हम्मीर काव्य-नामक एक १६९ पृष्ठों का मनोहर ग्रंथ नीवागढ़ के राजा चंद्रभान चहुवान के कहने से बनाया। इसके निर्माण-काल के विषय में थोड़ा-सा संदेह पड़ गया है। सरोज में इनका नाम नहीं है। ग्रियर्सन साहब ने इनका समय संवत् १४२० लिखकर इसकी शुद्धता पर संदेह भी प्रकट किया है। बाबू श्याम-सुंदरदास ने इसका संवत् १७८५ माना है। उक्त बाबू साहब को खवा (जयपुर) के महाराज कुमार ने एक पत्र में लिखा कि नीमराणा (नीवागढ़) के वर्तमान महाराज श्री १०८ जनकसिंह राजा चंद्रभान की दसवीं या ग्यारहवीं पीढ़ी में हैं। एक पीढ़ी लगभग बीस वर्ष की पड़ती है, सो इस हिसाब से भी १७८५ संवत् ग्रंथ-निर्माण का ठीक जान पड़ता है। स्वयं जोधराज ने ग्रंथ समाप्ति का समय यों लिखा है—

चंद्र नाग वसु पंच गिनि संवत माधव मास ;
शुक्ल सु त्रतिया जीव जुत ता दिन ग्रंथ प्रकास ।
भूपति नीवागढ़ प्रगट चंद्रभान चहुवान ;
साम दाम अरु भेद जुत दूंढहि करत खलान ।

यहाँ नाग की गिनती से सात का अर्थ लेने से संवत् १७८५ आता है, पर नागों की संख्या साधारणतया आठ की है। यथा—

अनंतो वासुकिः पद्मो महापद्मश्च तक्षकः ;
कुलीरः कर्कटः शंखश्चाष्टौ नागाः प्रकीर्तिताः ।

नागों के अर्थ आठ के लेने से संवत् १८८५ हुआ जाता है, ज़ो उपर्युक्त महाराज कुमार के लेख के प्रतिकूल पड़ता है। जान पड़ता है कि अनंत को ईश्वर समझकर उनको नागों की गणना से निकालकर जोधराज ने नाग से सात का बोध कराया है। जो हो, यथार्थ संवत् १७८५ ही जँचता है।

जोधराज के ग्रंथ के आदि में अपने को गौड़ ब्राह्मण बालकृष्ण का पुत्र लिखा है।

इन्होंने हम्मीररासो बड़े समारोह के साथ कहा है और प्रत्येक घटना का बहुत सच्चा और विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। आपने चंद बरदाई का ढंग कुछ-कुछ लिए हुए कविता की है। आपकी रचना बहुत सराहनीय है। महर्षि वाल्मीकि की भाँति जोधराज ने भी प्रत्येक घटना विस्तारपूर्वक याथातथ्य प्रकार से कही है। इस कवि की रचना से जान पड़ता है कि इसने राजदर्बार देखे हैं और नज़र भेट आदि का हाल यह भली भाँति जानता है। महिमा-संगोल का हम्मीरदेव से मिलना इस कथन का प्रमाण है। इन्होंने अपना कथन दो-एक स्थानों को छोड़कर इतिहास के प्रतिकूल भी नहीं किया है। समस्त वर्णन तो जोधराज ने पद्य में किया है, पर यत्र तत्र गद्य में भी इन्होंने वचनिकाएँ कही हैं, जो ब्रज-भाषा में हैं। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में समझते हैं।

उदाहरण—

पुंडरीक-सुत सुता तासु पद कमल मनाऊँ;
बिसद बरन बर बसन बिसद भूपन हिय ध्याऊँ।
बिसद जंत्र सुर सुद्ध तंत्र तुंबर जुत सोहै;
बिसद ताल इक भुजा दुतिय पुस्तक मन मोहै।
गति राज हंस हंसह चढ़ी रटी सुरन कीरति बिमल;
जै मातु सदा बरदायिनी देहु सदा बरदान बल।

(६५५) रसिकसुमति

ये महाशय ईश्वरदास के पुत्र संवत् १७८५ में हो गए हैं। इन्होंने दोहों में अलंकारचंद्रोदय [द्वि० त्रै० रि०]-नामक ग्रंथ कुवलयानंद के आधार पर बनाया।

इनकी कविता साधारण है और यें साधारण श्रेणी के कवि हैं।

उदाहरण—

सोहत जुगुलकिसोर के मधुर सुधा से बैन;
बदन चंद सम करत है निरखत सीतल नैन ॥१॥
प्रत्यनीक अरि सों न बस अरि हितूहि दुख देय;
रबि सों चलै न कंज की दीपति ससि हरि लेय ॥२॥

(६५६) गंजन

गंजन कवि काशी के रहनेवाले थे। इन्होंने संवत् १७८५ में क्रमरुद्दीनख़ाँ हुलास-नामक ग्रंथ बनाया [खोज १६०३]। इनका नाम शिवसिंहसरोज में नहीं लिखा है। इन्होंने अपने ग्रंथ में लिखा है कि इनके वृद्ध प्रपितामह महाराज मुकुटराय भी अच्छे कवि थे, यहाँ तक कि स्वयं अकबर बादशाह ने उनका बड़ा आदर किया था। मुकुटराय का कोई छंद इन्होंने नहीं लिखा और न हमीं ने उनका कोई छंद देखा है। शिवसिंहसरोज में भी उनका नाम

नहीं है। मुकुटराय के मानसिंह, उनके गिरिधर, उनके मुरलीधर और मुरलीधर के गंजनराय पुत्र उत्पन्न हुए। ये महाशय गुर्जर गौड़ ब्राह्मण थे। ये सब बातें इन्होंने अपने ग्रंथ में लिखी हैं। ये महाराज कहते हैं कि क़मरुद्दीनख़ाँ ने इनका बड़ा आदर किया और इनको बहुत-सा धन देकर यह ग्रंथ पान देकर इनसे बनवाया। इसमें ३२७ छंद हैं। इस ग्रंथ में क़मरुद्दीनख़ाँ की प्रशंसा के बहुत-से छंद हैं। ये महाशय दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह के वज़ीर थे। मुसलमान होने पर भी इन्हें हिंदी-साहित्य से इतना प्रेम था कि एक ब्राह्मण कवि को हज़ारों रुपए देकर भाषा का ग्रंथ इन्होंने बनवाया। जिस प्रकार से गंजन ने इनकी प्रशंसा की है, उससे विदित होता है कि कवि इनसे बहुत प्रसन्न था। इससे जान पड़ता है कि उसे इनसे बहुत धन मिलता था, और गंजन ने ऐसा लिखा भी है। इस बात से क़मरुद्दीनख़ाँ की गुण-ग्राहकता प्रकट होती है, क्योंकि एक तो उन्होंने भाषा कवि का सत्कार किया और दूसरे सत्कार भी किया, तो ऐसे-वैसे का न करके एक वास्तविक सुकवि का किया।

इस ग्रंथ के चतुर्थांश में एतमादुद्दौला, वज़ीर क़मरुद्दीनख़ाँ का यश वर्णित है और शेष में भाव-भेद एवं रस-भेद कहा गया है। गंजन ने छओं ऋतुओं का रूपकमय अच्छा वर्णन किया है और इन्होंने सामान अच्छा दिखाया है जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि यह कवि अमीर आदमियों में रहा है। इसकी भाषा मधुर है। अन्य सुकवियों की भाँति उसमें मिलित वर्ण बहुत कम लाए गए हैं। इनको अनुप्रास का इष्ट न था, परंतु इनकी कविता में जहाँ-तहाँ अनुप्रास का कुछ-कुछ प्रयोग हो भी गया है। इस कविता में उत्कृष्ट छंद बहुत देख पड़ते हैं। इनको हम पद्माकर की कक्षा में रक्खेंगे। उदाहरणार्थ इनके कुछ छंद नीचे लिखते हैं—

मीना के महल जरबाफ दर परदा हैं,
हलबी फनूसन में रोसनी चिराग की;
गुलगुली गिलम गरकआब पग होत,
जहाँ बिछी मसनद लालन के दाग की।
केती महताब मुखी खचित जवाहिरन,
गंजन सुकवि कहै बोरी अनुराग की;
एतमाददौला कमरुद्दींखाँ की मजलिस,
सिसिर मैं ग्रीषम बनाई बड़ भाग की ॥ १ ॥

ऐल परी अलका मैं खलभल खलका मैं,
एतो बल कामैं जे रहत निज थान हैं;
गंजन सुकबि कहै माल मुलकनि तजि,
रज रजपूती तजि तजत गुमान हैं।
रानी तजि पानी तजि कर किरवानी तजि,
अति बिह्वल मन आनत न आन हैं;
ह्वै करि किसान भूप भाजत दिसान जब,
कमरुद्दींखान जू के बाजत निसान हैं ॥ २ ॥

काजर-से कारे औ दतारे भारे मतवारे,
ऊँचे अति बिंध हू ते सोहत सुरद हैं;
नवल नबाब मनि कमरुद्दींखान सुनि,
आपने बलन करैं ऐरावत रद हैं।
गंजन सुकबि कहै चलत डुलत मही,
सुंडन सों अलका को करत गरद हैं;
जाके मद-जल ही सों नदी नद उमड़त,
भादौं के जलद सम रावरे दुरद हैं ॥ ३ ॥

नाम—(६५६/१) अहमदुल्लाह उपनाम 'दक्षण' कवि।
रचनाकाल—१७८९।

मृत्युकाल—१८०९ ।

ग्रंथ—दूषणविलास ।

विवरण—यह मुहम्मदशाह बादशाह के वज़ीर मुहम्मद फ़ाज़िल उर्फ़ क़मरुद्दीनख़ाँ का आश्रित था और अहमदशाह अब्दाली के हाथों इसका वध हुआ था । इसके दूषणविलास ग्रंथ में रसों का वर्णन है और प्रायः ६०० छंद हैं ।

उदाहरण—

नाभी ते नागिनि चली सुधासिंधु मुख गैल ;
कलकंठी पाटी डटी हठी उरोजन सैल ।

नाम—(६५६/२) केवलराम, अहमदाबाद-वासी ।

ग्रंथ—बाबी विलास ।

जन्म-काल—१७९६ ।

मृत्युकाल—१८३६ ।

कविताकाल—१७८६ ।

विवरण—केशवराम नागर के पुत्र थे । जूनागढ़ के बाबी नवाब के आश्रित थे । इन्हीं बाबी नवाबों की प्रशंसा में इन्होंने उपर्युक्त ग्रंथ रचा ।

उदाहरण—

गजबी गरूर गाज दिल्ली ते दलन साज,
लूटिबे के काज पंथ गुज्जर को लीन्हो है ;
बूँदी को बिडारी मारी हाड़ा गाढ़ा जोरन के,
और राव राजा ताके बाँह बल छीनो है ।
प्रबल पठानन सों भिरयो रन जीतबे को,
भारत सो कीन्हों जुद्ध बीर रस भीनो है ;
नवल नवाब जवाँमर्दख़ाँ बहादुर ने,
फकरूँ नवाब को फ़क़ीर करि दीन्हो है ।

नाम—(६५७) कुँवर मेदिनी मल्लजू (म० छत्रसाल के पौत्र, पन्ना)

ग्रंथ—श्रीकृष्णप्रकाश (हरिवंश की भाषा)

कविताकाल—१७८७ [खोज १६०५]

विवरण—साधारण श्रेणी । इनकी कविता बड़ी मधुर और सरस है ।

उदाहरण—

बेद औ पुरान कहैं शंभु शेष ध्यान लहैं,
जाकी दुति नख आगे कहा दुति हंस की ;
पंडित समुझि लीजो चूको सो सुधारि दीजो,
हरि रस सुधा पीजो कीजो कबि अंस की ।
मल्ल महाराज ब्रजराज के बिसद गुन,
गावै को रिझावै कामैं बुद्धि अवतंस की ;
इच्छा ग्रंथ रचन की सिच्छा व्यास बचन की,
भाखा करि भाखी न्याय साखी हरिबंस की ॥ १ ॥

(६५८) महबूब

खोज में इनका जन्म-काल संवत् १७६१ दिया हुआ है । इनका कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया, पर छंद बहुत देखे गए हैं । इनकी कविता अनुप्रास को लिए हुए ज़ोरदार होती थी और वह पूर्णतया प्रशंसनीय है । हम इन्हें तोष की श्रेणी में रक्खेंगे । प्र० त्रै० रि० में इनके कवित्त-नामक ग्रंथ का पता चलता है ।

उदाहरण—

मृगमदगंध मिलि चंदन सुगंध बहै,
केसरि-कपूर धूरि पूरत अनंत है ;
मौर मद गलित गुलाबन बलित भौर,
भनै महबूब तौर और दरसंत है ।

रच्यो परपंच सरपंच पंचसरजू ने,
कर लै कमान तानि विरही हनंत है ;
छीनि छिति लई ऋतु राजत समाज नई ,
उनई फिरत भई सिसिर बसंत है ।

(६५६) रासिकविहारी (बनीठनीजी)

ये महाशया महाराज नागरीदासजी की उपपत्नी थीं और उनके साथ श्रीवृंदावन में वास करती थीं। इनकी कविता सरस और भक्तिभाव से पूर्ण है। वह ब्रजभाषा और राजपूतानी मिश्रित भाषा में है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में की जाती है। इनके पद नागरसमुच्चय के अंत में संगृहीत हैं। किसी-किसी ने रसिकबिहारी नाम होने से इन्हें भ्रम से पुरुष माना है। इनका कविताकाल संवत् १७८७ समझना चाहिए, क्योंकि ये नागरीदासजी के साथ थीं।

उदाहरण—

फागुणियारो घुमड़ि रह्यो छैय्याल ;
कुंज भूमि सों लाल हुइ हुआ लाल तमाल ।
उड़ि गुलाल की लाल धुँधरि मैं झलकै बैणा भाल ;
सखी लाल अरु लालबिहारिनि रसिकबिहारी लाल ॥ १ ॥
फूलन के सिर सेहरा फाग रगमगे बेस ;
भाँवर ही मैं चलत दोउ लै गति सुलय सुदेस ॥ २ ॥
भीजे केसरि रंग सों रँगे अरुन पर पीत ;
डोलैं चाँचर चौक मैं गहि बहियाँ दोउ मीत ।

(६६०) अली मुहिब्बखाँ उपनाम प्रीतम

ये आगरा के रहनेवाले थे। अपना परिचय इन्होंने यों दिया है—"नगर आगरे बसतु है अली मुहिबखाँ नाम" और संवत् का परिचय ये यह देते हैं—रिषि वसु दीपक चंद शुभ संवत भादौं मास ; कृष्ण पक्ष रंबि सप्तमी रच्यो ग्रंथ रसहास। इनका यह

ग्रंथ "खटमलबाईसी" चंद्रप्रभा प्रेस, काशी में सन् १८९६ का छपा है। इन महाशय का नाम शिवसिंहसरोज में नहीं दिया है। इनके लिखित दोहे से इस ग्रंथ के रचने का समय संवत् १७८७ विदित होता है। और कोई ग्रंथ इन महाशय का हमने नहीं देखा। इस छोटे-से हास्य-ग्रंथ की कविता उत्कृष्ट है और भाषा व्रजभाषा। हम इनको साधारण श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरणार्थ दो छंद नीचे देते हैं—

जगत के कारन करन चारौ बेदन के,
　　कमल में बसे वै सुजान ज्ञान धरिकै;
पोखन अवनि दुख सोखन तिलोकन के,
　　समुद मैं जाय सोए सेससेज करिकै।
मदन जरायो औ सँवारै दृष्टि ही मैं सृष्टि,
　　बसे हैं पहार वेहू भाजि हरबरिकै;
बिधि हरि हर और इनते न कोऊ तेऊ,
　　खाट पै न सोवैं खटमलन को डरिकै॥ १॥

बाघन पै गयो देखि बनन मैं रहे छिपि,
　　साँपन पै गयो तौ पताल ठौर पाई है;
गजन पै गयो धूलि डारत हैं सीस पर,
　　बैदन पै गयो काहू दारु न बताई है।
जब हहराय हम हरि के निफट गए,
　　हरि मोसों कही तेरी मति भूल छाई है;
कोऊ न उपाय भटकत जिन डोलै सुनै,
　　खाट के नगर खटमल की दोहाई है॥ २॥

(६६१) हरिकेश कवि सेहुँड़ा बुँदेलखंड-वासी का रचना-काल १७८८ के लगभग है। इनका कोई ग्रंथ हमें नहीं मिला, परंतु इन्होंने वीररस की रचना बड़ी उत्तम और ज़ोरदार की है। आप

महाराज छत्रसाल बुँदेलखंडवाले के यहाँ थे। इनको हम सेना-पति की श्रेणी का कवि समझते हैं।

उदाहरण—

ढहढहे ढंकन को सबद निसंक होत,
वहबही सत्रुन की सेना आनि सरकी;
हाथिन को झुंड मारू राग को उमंड इतै,
चंपति को नंद चढ़्यो उमड़ि समर की।
कहै हरिकेस काली ताली दै नचत ज्यों-ज्यों,
लाली परसत छत्रसाल मुख वर की;
फरकि-फरकि उठैं बाहु अस्त्र बाहिबे को,
करकि-करकि उठैं कड़ी बखतर कीं ॥ १ ॥
दौरे काल किंकर कराल करतारी देत,
दौरी काली किलकत छुधा की तरंग ते;
कहै हरिकेस दाँत पीसत खवीस दौरे,
दौरे मंडलीक गीध गीदर उमंग ते।
चंपति के नंद छत्रसाल आजु कौन पर,
फरकाई भुज औ चढ़ाई भौंह भंग ते;
भंग डारि मुख ते भुजान ते भुजंग डारि,
दौरे हर कूदि डारि गौरी अरधंग ते ॥ २ ॥

खोज [प्र० त्रै० रि०] में ब्रजलीला और महाराज जगतसिंह दिग्विजय-नामक इनके दो ग्रंथ लिखे हैं। हरिकेश की कविता में अनुप्रास का परमोत्तम प्रयोग हुआ है। ऐसी उमंगोत्पादिनी रचना करने में दो-तीन कवियों को छोड़कर कोई भी समर्थ नहीं हुआ है। इनकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है।

(६६२) बखशी हंसराज श्रीवास्तव कायस्थ सं० १७८६ में पन्ना में हुए। इनका ३०८ पृष्ठों का सनेहसागर [खोज १९००]

ग्रंथ हमने छत्रपूर में देखा, जिसमें राधाकृष्ण की लीलाओं का वर्णन है। इस ग्रंथरत्न में ६ अध्याय हैं, और इसकी कविता बड़ी ही सरस और लुभावनी है। हम इनको पद्माकर की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

लोचन ललित प्रीति रस पागे पुतरिन स्याम निहारे;
मानौ कमल-दलन पर बैठे उड़त न अलि मतवारे।
चुभति चारु चंचल नैननि की चितवनि अति अनियारी;
अति सनेहमय प्रेम सरस लखि को न होत मतवारी।
दमकति दिपति देह दामिनि-सी चमकत चंचल नैना;
घूँघट बिच खंजन-से खेलत उड़ि-उड़ि डीठि लगै ना।
लचकति ललित पीठि पर बेनी बिच-बिच सुमन सँवारी;
देखे ताहि मैर सों आवति मनौ भुजंगिनि कारी।

खोज में [प्र० त्रै० रि०] इनके श्रीकृष्णजू की पाती (-१७८६), श्रीजुगुलस्वरूपविरह-पत्रिका (१७८६), फागतरंगिनी और चुरिहारिनलीला-नामक और ग्रंथ मिले हैं। आप सखी संप्रदाय के वैष्णव विजयसखी के शिष्य थे। आप पन्ना-नरेश हृदयशाह, सभासिंह और अमानसिंह-नामक महाराजाओं के यहाँ थे, जिन्होंने सं० १७८६ से १८१५ तक राज्य किया।

नाम—(६६३) नागरीदासजी, वृंदावनवासी।

ग्रंथ—बानी।

समय—१७६०।

विवरण—इसमें कुल १६१ पद हैं। यह ग्रंथ हमने दरबार छतरपूर में देखा है। इनकी कविता साधारण श्रेणी की है। समय जाँच से मिला है। खोज १६०९ से भी इस ग्रंथ का पता चलता है। चतुर्थ त्रैवार्षिक रिपोर्ट में इनका भागवत-नामक ग्रंथ मिला है।

इस समय के अन्य कविगण

नाम—(६६३/१) दलेलसिंह।
ग्रंथ—शिवसागर। [पं० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७७१।

नाम—(६६३/२) किशनसिंह।
ग्रंथ—(१) रात्रिभोजनकथा (१७७३), (२) क्रिया-कोश (१७८४), (३) भद्रबाहुचरित्र (१७८९)।
रचनाकाल—१७७३।
विवरण—साँगानेर-निवासी सुखदेव के पुत्र थे।

नाम—(६६३/३) गोप।
ग्रंथ—रामालंकार।
रचनाकाल—१७७३।
विवरण—महाराज पृथ्वीसिंह ओरछा-नरेश के यहाँ थे।

नाम—(६६३/४) दयाराम।
ग्रंथ—दयाविलास। [खोज १९०१]
रचनाकाल—१७७३।
विवरण—लछीराम के पुत्र थे।

नाम—(६६४) तीखी।
कविताकाल—१७७४ के पूर्व।
विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६६५) तेही।
कविताकाल—१७७४ के पूर्व।
विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६६६) हिम्मतसिंह कायस्थ, पन्ना।
ग्रंथ—दफ़्तरनामा।
कविताकाल—१७७४। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—कायस्थ बुँदेलखंडी। ग्रंथ फ़ारसी का उल्था।

नाम—(६६७) दिलाराम।

कविताकाल—१७७५ के प्रथम।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(६६८) रामरूप।

कविताकाल—१७७५ के पूर्व।

नाम—(६६९) कृष्ण सनाढ्य ब्राह्मण, ओरछा।

ग्रंथ—धर्मसंवाद। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७७५।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६७०) गोपालशरण राजा।

ग्रंथ—(१) प्रबंधघटना, (२) सतसई की टीका, (३) पद।

जन्म-काल—१७४८।

कविताकाल—१७७५।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६७०/१) दशसीस।

ग्रंथ—कोकसार। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७७५।

नाम—(६७१) देवी बंदीजन।

ग्रंथ—सूमसागर।

जन्म-काल—१७५०।

कविताकाल—१७७५।

विवरण—सूमसागर भँडौआ का ग्रंथ बनाया है जिसमें सूमों के लक्षण और उनके भेदांतर वर्णन किए हैं। साधारण श्रेणी।

नाम—(६७२) मूकजी बंदीजन, राजपूताना।

ग्रंथ—खीचीवंशावली सजीवन-चरित्र।

जन्म-काल—१७५० ।

कविताकाल—१७७५ ।

नाम—(६७३) याकूबखाँ ।

ग्रंथ—(१) टीका रसिकप्रिया, (२) रसभूषण [खोज १६०५] (१७७५) (अलंकार-ग्रंथ) ।

कविताकाल—१७७५ । [खोज १]

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६७३/१) रूपलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—(१) मानसिक सेवा (१७७५), (२) सिद्धांत के पद, (३) मन शिक्षावत्तीसी, (४) प्रियाध्यान, (५) वृंदावनरहस्य, (६) नित्य विहार जुगुल ध्यान, (७) सिद्धांतसार, (८) रसरत्नाकर, (९) वाणीविलास । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७७५ ।

विवरण—गोस्वामी हीरालाल के शिष्य वल्लभी वैष्णव थे ।

नाम—(६७४) श्यामराम ।

ग्रंथ—ब्रह्मांड-वर्णन ।

कविताकाल—१७७५ । [खोज १६०२]

नाम—(६७५) गंगापति ।

ग्रंथ—विज्ञानविलास ।

कविताकाल—१७७६ ।

विवरण—वेदांत ग्रंथ ।

नाम—(६७६) जगन्नाथ प्राचीन ।

ग्रंथ—मोहमदराज की कथा ।

कविताकाल—१७७६ । [खोज १६०२]

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६७६/१) रामदास।

ग्रंथ—(१) उषा अनिरुद्ध की कथा, (२) प्रह्लादलीला।

रचनाकाल—१७७७ के पूर्व। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—मनोहरदास के पुत्र तथा मालती ग्राम मालवा प्रांत के निवासी थे।

नाम—(६७७) कृपाराम, उज्जैन वा जैपूरवाले।

ग्रंथ—समयबोध।

कविताकाल—१७७७।

विवरण—ये महाशय जयसिंह के यहाँ ज्योतिषी थे। ग्रंथ भी इनका ज्योतिष का है।

नाम—(६७८) जयकृष्ण भवानीदास के पुत्र।

ग्रंथ—(१) छंदसार पिंगल, (२) तामरूप पिंगल [खोज १९००] (१७७७), (३) जयकृष्ण कृत कवित्त [खोज १९०२] (१८१७), (४) शिवमाहात्म्य भाषा [खोज १९०२] (१८२९), (५) शिवगीता भाषार्थ [खोज १९०२] (१८२४) (६) रूपदीपपिंगल (१७७७) [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७७७ से १८२९ तक।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६७९) भोज मिश्र प्राचीन।

ग्रंथ—मिश्रश्रृंगार।

जन्म-काल—१७५०।

कविताकाल—१७७७।

विवरण—राजा बुद्ध राव के यहाँ थे।

नाम—(६७९/१) अहमदउल्ला।

ग्रंथ—दक्षिणविलास। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७७६ ।

नाम—(६८०) दयाराम ब्राह्मण दिदभीवाले, लछिराम के पुत्र ।

ग्रंथ—दयाविलास पृ० २२० पद्य ।

कविताकाल—१७७६ । [खोज १६०२]

विवरण—वैद्य । एक दयाराम तेवारी सं० १७६५ में भी हैं। संभव है कि ये दोनों महाशय एक ही हों ।

नाम—(६८१) वेनीराम ।

ग्रंथ—जैनरस ।

कविताकाल—१७७६ । [खोज १६०१]

नाम—(६८१/१) रामप्रसाद कायस्थ ।

ग्रंथ—कृष्णचंद्रिका । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७७६ ।

नाम—(६८२) रहीम ।

कविताकाल—१७८० के पूर्व ।

विवरण—इनकी कविता के उदाहरण में सरोज में कवि अनीस का छंद लिखा है । ये रहीमख़ाँ ख़ानख़ाना से पृथक् हैं ।

नाम—(६८२/१) खुशालचंद काला ।

ग्रंथ—(१) हरिवंशपुराण (१७८०), (२) यशोधरचरित्र (१७८९), (३) पद्मपुराण (१७८३), (४) उत्तरपुराण (१७९९), (५) धन्यकुमारचरित्र, (६) व्रतकथाकोश, (७) जंबूचरित्र, (८) चौबीसी पूजा-पाठ, (९) सद्भापितावली ।

रचनाकाल—१७८० ।

विवरण—साँगानेर जयपूर वासी खंडेलवाल जैन थे ।

नाम—(६८३) गुणदेव, बुँदेलखंडी ।

जन्म-काल—१७५२ ।

कविताकाल—१७८० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६८४) जुगुल ।

जन्म-काल—१७५५ ।

कविताकाल—१७८० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६८५) देवीराम ।

जन्म-काल—१७५० ।

कविताकाल—१७८० ।

नाम—(६८६) द्विजचंद ।

जन्म-काल—१७५५ ।

कविताकाल—१७८० ।

विवरण—निम्न श्रेणी ।

नाम—(६८७) वेचू कवि ।

जन्म-काल—१७५० ।

कविताकाल—१७८० ।

विवरण—भक्ति पक्ष की कविता की है । निम्न श्रेणी ।

नाम—(६८८) वंसी ।

ग्रंथ—पद । [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७८० ।

नाम—(६८९) श्यामदास ।

ग्रंथ—शालग्राममाहात्म्य ।

जन्म-काल—१७५५ ।

कविताकाल—१७८० ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(६६०) श्यामशरण ।

ग्रंथ—स्वरोदय ।

जन्म-काल—१७५३ ।

कविताकाल—१७८० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६६०/१) आत्मादास ।

ग्रंथ—हरिरस । [खोज १६०२]

रचनाकाल—१७८१ के पूर्व ।

नाम—(६६१) दलसिंह राजा, बुँदेलखंड ।

ग्रंथ—प्रेमपयोनिधि ।

कविताकाल—१७८१ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६६१/१) भूधर मिश्र ।

ग्रंथ—(१) चर्चा समाधान, (२) पुरुषार्थ सिद्धिउपाय की टीका ।

रचनाकाल—१७८१ ।

विवरण—शाहगंज वासी जैनमतावलंबी थे ।

नाम—(६६२) आतम, मारवाड़ ।

ग्रंथ—हरिरस (भक्ति) ।

कविताकाल—१७८२ ।

नाम—(६६३) खंडन कायस्थ, दतिया ।

ग्रंथ—(१) सुदामासमाज [प्र० त्रै० रि०]; (२) राजा मोहमर्दन की कथा, (३) भूषणदाम [खोज १६०५], (४) नामप्रकाश, (५) जैमिनि अश्वमेध ।

कविताकाल—१७८२ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६६४) जुल्फ़िकारखाँ इनका ठीक नंबर (६६६/१) है ।

नाम—(६९५) पंचमसिंह ।

ग्रंथ—कवित्त । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७८२ ।

विवरण—महाराजा छत्रसाल पन्ना-नरेश के भतीजे ।

नाम—(६९६) मीनराज कायस्थ ।

ग्रंथ—हरितालिका-कथा ।

कविताकाल—१७८३ के पूर्व । [प्र० त्रै० रि०]

नाम—(६९७) विश्वनाथ अताई, बघेलखंडी ।

कविताकाल—१७८४ ।

विवरण—इनके छंद सत्कविगिराविलास में हैं । निम्न श्रेणी ।

नाम—(६९८) अनवरख़ाँ के आश्रित शुभकरण ।

ग्रंथ—अनवरचंद्रिका ।

कविताकाल—१७८५ । [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—कहा जाता है कि अनवरख़ाँ पठान सुलतान के भाई थे । याज्ञिकत्रय का कहना है कि अनवरचंद्रिका संवत् १७७१ में बनी ।

नाम—(६९९) आदिल ।

जन्म-काल—१७६० ।

कविताकाल—१७८५ ।

विवरण—स्फुट काव्य । तोष कवि की श्रेणी ।

नाम—(७००) किशोरसूर ।

जन्म-काल—१७६१ ।

कविताकाल—१७८५ ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(७०१) निरंजनदास, अनंदपुर ।

ग्रंथ—(१) हरिनाममाला [प्र० त्रै० खो०], (२) कृष्णकांड ,

कविताकाल—१७८९ ।

विवरण—पिता का नाम बसंत, गुरु का पीतांबर ।

नाम—(७०२) ब्रजचंद राधावल्लभी ।

जन्म-काल—१७६० ।

कविताकाल—१७८९ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(७०३) आज़मख़ाँ मुसलमान, दिल्ली ।

ग्रंथ—शृंगारदर्पण पृष्ठ ९४ (पद्य) । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—प्र० सं० १७८६ ।

विवरण—नायिकाभेद । साधारण श्रेणी । दिल्लीश्वर मुहम्मद-शाह की आज्ञा से पुस्तक बनाई ।

नाम—(७०४) करनी दान चारन ।

ग्रंथ—(१) सूर्यप्रकाश (राठौरों का इतिहास),(२) विरद-सीणसागर । [खोज १९०१]

कविताकाल—१७८७ ।

विवरण—महाराजा अभयसिंह जोधपुर के दरबार में थे ।

नाम—(७०५) माधवराम ।

ग्रंथ—(१) शाक्तभक्तिप्रकाश, (२) शंकरपच्चीसी, (३) माधवराम कुंडली । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१७८७ ।

विवरण—मारवाड़ के महाराजा अभयसिंह के समय में थे ।

नाम—(७०६) रसपुंजदास ।

ग्रंथ—(१) प्रस्तारप्रभाकर, (२) वृत्तविनोद, (३) कवित्त श्रीमाता जीरों । [खोज १९०२]

कविताकाल—१७८७ ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(७०७) शिवराम वैष्णव।

ग्रंथ—भक्तिजयमाल पृष्ठ ४६०।

कविताकाल—१७८७।

नाम—(७०८) सुखदेव कायस्थ, मैनपुरी।

ग्रंथ—मानसहंस रामायण पृष्ठ ३६०।

कविताकाल—१७८८।

विवरण—गद्य-पद्य में।

नाम—(७०९) गोसाईं।

ग्रंथ—अरिल्ल।

कविताकाल—१७८९ के पूर्व।

नाम—(७०९/१) सहज राम वैश्य।

ग्रंथ—रघुवंशदीपक। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७८९।

नाम—(७१०) हंसराज कायस्थ राठ, ज़ि० हमीरपुर।

ग्रंथ—महाभारत भाषा (१७८९)।

कविताकाल—१७८९।

विवरण—संभव है कि ये और बख़्शी हंसराज पन्नावाले एक ही हों।

नाम—(७११) आनंदराम।

ग्रंथ—भगवद्गीता।

कविताकाल—१७९०। [खोज १९०१]

विवरण—रिपोर्ट से इनका समय १७२७ निकलता है। [खोज १९०१]

खोज १९०१.........१७६१..........

नाम—(७१२) द्यानतिराय अग्रवाल जैनी।

ग्रंथ—(१) धरमविलास, (२) एकीभौन भाषा, (३) एकीभाव भाषा। [खोज १९००]

कविताकाल—१७६० ।

नाम—(७१२/१) मोरो पंत ।

रचनाकाल—१७६० ।

विवरण—मराठी भापा के बहुत बड़े कवि थे। इनकी बनाई कुछ हिंदी कविता भी मिली है ।

नाम—(७१२/२) दयालनाथ ।

रचनाकाल—१७६१ ।

विवरण—महाराष्ट्र कवि हैं। देवनाथ के शिष्य थे। हिंदी में भी कविता करते थे ।

उत्तरालंकृत प्रकरण

(१७६१ से १८८६ तक)

पच्चीसवाँ अध्याय

उत्तरालंकृत हिंदी

सूर, तुलसी, भूषण और देव का समय हिंदी-साहित्य के लिये जैसी प्रतिष्ठा और गौरव का हुआ वैसा फिर देखने को हिंदी के भाग्य में अब तक नहीं बदा था। इस दास और पद्माकरवाले काल में उस समय के देखते संख्या में कविगण अधिक हुए, और उत्कृष्ट कवि भी विशेषता से पाए जाते हैं, पर वह उत्तमता इस काल के कवियों में नहीं है, जो उस समय दृष्टि-पथ में आती है। इस काल का एक भी कवि नवरत्न में नहीं पहुँचा, परंतु प्रथम को छोड़ अन्य श्रेणियों में इस समय पहले से बहुत अधिक उत्कृष्ट कवि हुए। महाराजाओं में इस काल महाराजा रघुराजसिंह रीवाँ-नरेश तथा महाराजा बलवानसिंह काशी-नरेश ने कविता की। ताल्लुक़दारों में राजा गुरुदत्तसिंह अमेठीवाले इस समय बहुत अच्छे कवि हो गए और तेरवावाले राजा जसवंतसिंह ने भी सराहनीय कविता की।

ठाकुर और बोधा कवि इस काल में परम प्रेमी हो गुज़रे हैं। इस समय के अनेकानेक कवि आचार्य कहे जा सकते हैं, क्योंकि बहुतों ने नायिका-भेद पर कविता की है, परंतु मुख्यतया दास, सोमनाथ, रघुनाथ, मनीराम मिश्र और बैरीसाल आचार्य हैं। दलपतिराय बंसीधर ने भाषाभूषण की एक प्रशंसनीय टीका बनाई। गानेवालों में संवत् १८०० के लगभग बिलग्राम-निवासी मीरामद

नायक प्रसिद्ध हुए। गायकगण अब भी इनके मज़ार पर नियत दिनों पर गाते हैं। महाराजा रघुराजसिंह, दास, सूदन, गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव, पद्माकर, मधुसूदनदास, व्रजवासीदास, ललकदास ने इस काल में कथा-प्रासंगिक आदरणीय कविता की है। इन सबमें गोकुलनाथ, गोपीनाथ और मणिदेव का श्रम परम सराहनीय है कि इन्होंने मिलकर महाभारत-ऐसे उत्तम और भारी ग्रंथ का विशद पद्यानुवाद किया। सम्मन ने नीति के चटकीले दोहे कहे हैं।

सौर काल में श्रीकृष्णचंद्र के भक्त कवियों ने शृंगार-संबंधी कविता केवल भक्तिभाव से ही बनाई, पर उसके पीछे से अभक्त लोगों ने भी कृष्ण के सहारे शृंगार कविता का दुंद मचाया। इस प्रथा ने भूषण और देव के समय में विशेष उन्नति पाई और इस दास पद्माकरवाले समय में इसकी इतनी भरमार हुई कि प्रत्येक कवि नायिका-भेद, षटऋतु और नखशिख के ग्रंथों का बनाना अपना कर्त्तव्य-सा समझने लगा। षटऋतु में भी नैसर्गिक पदार्थों को छोड़कर केवल नायिका-नायकों ही पर विशेषतया हमारे कवियों का झुकाव रहा। समय पाकर स्त्री-कवियों ने भी इस प्रकार निर्लज्जतापूर्ण शृंगाररस की कविता की, मानो वह स्वयं पुरुष हों। इस बात से प्राचीन प्रथा का बल देख पड़ता है।

शृंगारी कवियों में दत्त, दास, पद्माकर, प्रताप, सेवक, ठाकुर, रघुनाथ, बोधा, गुरुदत्तसिंह, थान, देवकीनंदन, बेनीप्रवीन, ग्वाल, तोष, पजनेस आदि बहुत-से परमोत्कृष्ट कवि इस समय में हुए, जिनके नाम सुनकर चित्त पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि क्या ऐसे उत्कृष्ट कवियों के होते हुए भी कोई इस काल में किसी प्रकार की न्यूनता बतला सकता है? वास्तव में हिंदी-काव्य अत्यंत प्रशस्त और गरिमा-संपन्न है। जिन कवियों के नाम यहाँ लिखे गए हैं वैसे

सरस्वती के लाल दूसरी भाषाओं में कठिनता से खोजे जा सकते हैं। सौर काल की हिंदी में अनुप्रास का बहुत अधिक आदर न था, पर बिहारी और देव ने इसका अच्छा सम्मान किया। इसी समय से हिंदी के कवियों में इसका बड़ा प्रकांड आदर होने लगा। पद्माकर ने सबसे अधिक अनुप्रास को अपनाया। प्रताप की भाषा परम प्रशंसनीय है।

वर्तमान खड़ी बोलीवाले गद्य का मानो जन्म ही इसी समय में हुआ। संवत् १८६० में लल्लूलाल ने व्रजभाषा मिश्रित खड़ी बोली में प्रेमसागर-नामक एक भारी ग्रंथ रचा। उसी साल सदल मिश्र ने शुद्धतर खड़ी बोली में नासकेतोपाख्यान-नामक एक अपूर्व कहानी कही। भक्त कवियों का इस समय प्रायः पूर्ण अभाव रहा। दासजी ने कहा भी है कि 'आगे के सुकवि रीझि हैं तौ कविताई न तौ राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है।' इसमें 'रपट पड़े तो हर गंगा' की पूरी झलक मिलती है। भक्तों का साम्राज्य सूर तथा तुलसीवाले समय में बहुत अच्छा रहा। परिशिष्ट की भाँति थोड़े-से भक्त भूषण और देववाले काल में भी हुए, पर इस काल में उन्होंने ऐसा अलोप-अंजन-सा लगाया कि प्रायः कहीं दर्शन ही न दिए। वीर कविता का भी इस समय अभाव ही-सा रहा। केवल सूदन कवि ने राजा सूरजमल के सहारे सुजानचरित्र-नामक एक उत्तम ग्रंथ वीर कविता का रचा। कवि पद्माकर ने भी हिम्मत बहादुर-बिरदावली की रचना की है, पर वह सराहनीय ग्रंथ होने पर भी तादृश आनंद नहीं देता।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, हिंदी ने प्रौढ़ माध्यमिक काल में बहुत अच्छी उन्नति कर ली थी और उसमें किसी प्रकार का कच्चापन नहीं रह गया था। फिर भी भूषण-देव-काल में, जो पूर्वालंकृत काल कहा गया है, कवियों ने उसे श्रेष्ठतर बनाने का यथा-

साध्य प्रयत्न किया। इस प्रयत्न ने भाषा-संबंधी अलंकारों की वृद्धि के स्वरूप में प्रकाश पाया। पूर्वालंकृत काल में इस श्रम से लाभ अवश्य हुआ और भाषा श्रेष्ठतर हो गई, परंतु इस उत्तरालंकृत काल में बहुत-से कवियों ने भाव चमत्कार पर विशेष ध्यान न देकर कविता-कामिनी को अलंकारों से ही लाद दिया। इस प्रकार इस समय में भाषा की उन्नति के साथ भाव-शैथिल्य भी साहित्य में आने लगा। कवियों ने शृंगार-रस की ओर भी बहुत अधिक ध्यान दिया, जिससे नायिका-भेद पर ग्रंथ लिखने की प्रथा दृढ़तर हुई। इस प्रणाली के साथ रीति-ग्रंथों का भी प्रचार बढ़ा और आचार्यता की वृद्धि हुई।

सभी भाषाओं में थोड़े-से आचार्यों का होना उपयोगी एवं आवश्यक है, पर विशेषतर क्या प्रायः सभी कवियों को विविध विषयों ही की ओर ध्यान रखना चाहिए। आचार्य लोग तो कविता करने की रीति सिखलाते हैं, मानो वह संसार से यह कहते हैं कि अमुकामुक विषयों के वर्णनों में अमुक प्रकार के कथन उपयोगी हैं और अमुक प्रकार के अनुपयोगी। ऐसे ग्रंथों से प्रत्यक्ष प्रकट है कि वह विविध वर्णनोंवाले ग्रंथों के सहायक-मात्र हैं, न कि उनके स्थानापन्न। फिर जब अधिकांश कविगण ऐसे ही सहायक ग्रंथ लिखने लगें, तब वास्तविक ग्रंथ-लेखक कहाँ से आवें? इन सहायक ग्रंथों के अस्तित्व का मुख्य फल विविध विषयों पर ग्रंथों का बनना है, परंतु यदि वैसे ग्रंथ ही न बनें और केवल सहायक ग्रंथ ही रह जायँ, तो उनका भी होना मुख्य फल के लिये न होने के बराबर है। खंभे तो छत थाँभने के लिये होते हैं, सो यदि कोई व्यक्ति छत न बनाकर केवल खंभे ही बना डाले, तो उसका परिश्रम अवश्यमेव उपहासास्पद ठहरेगा। इस कारण आचार्यता की भारी वृद्धि से हिंदी को विशेष लाभ नहीं हुआ।

शृंगाररस की रचना बहुत लोगों को रुचिकर होती है, परंतु फिर भी जैसे शृंगारी कथन सभ्य-समाज में विशेष आदर नहीं पा सकते, वैसे ही इस प्रकार के ग्रंथों का हाल है। कविगण बुद्धिबल का पूर्ण व्यय करके बड़ी योग्यता के साथ मन-मुग्धकारिणी रचनाएँ करते हैं, जो अनुचित एवं अनुपयोगी विषयों से संबंध रखने पर भी हृदयग्राहिणी होती हैं। ऐसी दशा में रचयिताओं को विषय के उपकारी होने पर अवश्यमेव ध्यान रखना चाहिए, पर शोक के साथ कहना पड़ता है कि उत्तरालंकृत काल के कविगण का ध्यान विशेषरूप से इधर नहीं रहा। इस कारण यदि उपयोगी ग्रंथों का परता अन्य ग्रंथों से लगाया जाय तो वह संतोषदायक नहीं ठहरेगा। कवियों को उचित है कि वे उत्कृष्ट वर्णनों के साथ उचित विषयों का भी सदैव ध्यान रक्खें। इस समय कवियों ने काव्योत्कर्ष के बढ़ाने पर ध्यान अवश्य रक्खा, परंतु विषय-शैथिल्य से उनके ग्रंथ तादृश लाभदायक नहीं हुए। फिर भी यह सदैव ध्यान में रखना चाहिए कि काव्योत्कर्ष अनेकानेक कारणों से होता है, जिनमें विषय की उत्तमता एक है। अतः अनुपयोगी विषयों का भी प्रकृष्ट काव्य तिरस्करणीय नहीं है।

इस अवगुण का पूरा बोझा कवियों ही के सर पर रक्खा भी नहीं जा सकता। यह भी स्मरण रखने योग्य बात है कि कवियों के भी विचार साधारण जन समुदाय की उन्नति के अनुसार चलते हैं। हमारे यहाँ अँगरेज़ी राज्य से प्रथम साधारण मनुष्यों के विचारों ने बहुत अच्छी उन्नति नहीं की थी। पाश्चात्य प्रकार की उस सभ्यता का प्रादुर्भाव हमारे यहाँ नहीं हुआ था, जो जीवन-होड़ के प्राबल्य से उत्पन्न होती है। यहाँ सदैव से वह राज्यप्रणाली एवं देशदशा अच्छी समझी जाती रही, जिसमें बरकत अच्छी हो और एक कार्यकर्ता इतना पैदा कर सके कि जिससे दस मनुष्य

झुकें। इन कारणों से यहाँ अँगरेज़ों के पूर्व आलस्य का बड़ा साम्राज्य था। हमने अपने बाल्य-काल में ऐसे कई वृद्ध महाशय देखे थे, जिन्होंने दरिद्र दशा में रहते हुए भी धनोपार्जन के लिये यावज्जीवन कोई समुचित काम नहीं किया और दूसरों ही के सहारे अपना कालक्षेप किया। अब ऐसे मनुष्यों की संख्या बहुत घट गई है और दिनोंदिन घटती जाती है। अधिकांश देसी रियासतों में आज तक यही दशा है। वहाँ सैकड़ों हज़ारों मनुष्य बिना कुछ किए ही राजाओं की उदारता से कालक्षेप करते हैं।

जीवन-होड़ (struggle for existence) प्राबल्य के अभाव से हमारे यहाँ परिश्रम की महिमा पाश्चात्य देशों के समान कभी नहीं हुई। इसी कारण से हमारे यहाँ विद्वान् मनुष्यों तक का ध्यान व्यापार-संबंधी उपयोगी विषयों की ओर नहीं गया और हम अपनी कविता में रोज़ाना लाभदायक बातों का यथोचित विवरण नहीं पाते हैं। पाश्चात्य देशों में कई शताब्दियों से जीवन-होड़ की प्रबलता स्थिर है, जो दिनोंदिन बढ़ती चली आई है। इस हेतु वहाँ साहित्य ने साधारण घटनाओं से सदैव संपर्क रक्खा है और वह अनुपयोगी विषयों से प्रगाढ़ मित्रता नहीं करने पाई।

कई कारणों से वहाँ देशहितैषिता पर लोगों का बहुत दिनों से भारी अनुराग रहा है। इस वासना ने भी उन्हें देशहित-साधक विषयों की ओर ख़ूब झुकाया। हमारे यहाँ अँगरेज़ी राज्य से प्रथम समस्त भारत की एकता पर अधिकता से विचार कभी नहीं किया गया। वहाँ ईश्वरभक्ति की प्रचुरता के होते हुए भी देशभक्ति का गौरव प्राचीन काल में नहीं बढ़ा। भारत में किसी समय सैकड़ों वर्षों तक सार्वभौम राज्य स्थापित नहीं हुआ। इस हेतु समस्त भारत की एकता का भाव हिंदू-राज्य-काल में उत्पन्न नहीं हुआ। मुसलमान-काल में हिंदू मुसलमानों के झगड़ों से हिंदूपन का भाव

तो उठा और इस विषय पर ग्रंथ भी बने, परंतु समाज का ध्यान फिर भी देशभक्ति की ओर नहीं गया। अतः जीवन-होड़-प्राबल्य एवं देशभक्ति के अभाव ने हमारे समाज एवं कविगण को लोकोपकारी विषयों से वंचित रक्खा।

उर्दू-कविता भी इस समय देश में ज़ोर पकड़ रही थी। इन्हीं बातों के अभाव से उसके कविगण भी लोकोपकारी विषयों की ओर न झुके। उर्दू-कवियों में ईश्वर-संबंधी प्रेम का भी अभाव-सा था, सो उन्होंने कथा-प्रासंगिक एवं भक्ति-ग्रंथों की ओर भी ध्यान न देकर अपना पूर्ण बल शृंगार कविता में लगाया। इस बात का भी प्रभाव हिंदी में शृंगारवर्द्धक हुआ।

हमारे यहाँ राजयशकीर्तनों से हिंदी-कविता की उत्पत्ति हुई थी, परंतु पीछे से धार्मिक विषयों ने कोरी कथा-प्रासंगिक चाल को कुछ मंद कर दिया। समय पर धर्मकविता ने बढ़ते-बढ़ते शृंगार-कविता का रूप ग्रहण किया और तब कथा-प्रासंगिक रीति का प्राचीन धर्मप्रथा से सम्मेलन हुआ। इस हेतु इस उत्तरालंकृत काल में ऐसे ग्रंथों का विशेषतया प्रादुर्भाव हुआ, और महाराजा रघुराज-सिंह, दास, मधसूदनदास, ब्रजवासीदास, ललकदास आदि ने धर्म विषय लिए हुए कथा-प्रासंगिक कविता की। भाषाभारत-रचयिताओं ने अनुवाद द्वारा इसी प्रणाली को पुष्ट किया, और लल्लूलाल एवं सदल मिश्र ने खड़ी बोली गद्य में भी इसी को आदर दिया। सूदन, पद्माकर आदि कविवरों ने धर्म से संबंध न रखनेवाली कथा-प्रासंगिक रचनाएँ कीं, परंतु पद्माकर के अन्य ग्रंथों का उतना प्रचार व आदर न हुआ जितना जगद्विनोद तथा गंगा लहरी का।

सारांश यह है कि उत्तरालंकृत काल में भाषा भूषणों से लद गई, शृंगार-कविता ख़ूब बनी, आचार्यता बढ़ी, कथा-प्रासंगिक प्रथा ने धर्म से संबंध करके बल पाया, साधारण कथा-प्रासंगिक

ग्रंथ भी रचे गए और खड़ी बोली ने गद्य में भी जड़ पकड़ी। परमोत्कृष्ट कवियों का इस समय अभाव-सा रहा, परंतु उत्कृष्ट कवियों की मात्रा अन्य सभी समयों से विशेष रही, भाषामाधुर्य के सम्मुख भावसंकुचन हुआ, एवं महाराजाओं में काव्य-प्रेम स्थिर रहा।

छब्बीसवाँ अध्याय

दासकाल (१७६१ से १८१० तक)

नाम—(७१३) भिखारीदास उपनाम दास ट्योंगा प्रताप-गढ़-निवासी।

जन्म-काल—अनुमान से संवत् १७५५।

रचनाकाल—१७८५।

ग्रंथ—(१) छंदोर्णव, (२) रससारांश, (३) नामप्रकाश, (४) विष्णुपुराण, (५) काव्यनिर्णय, (६) शृंगार-निर्णय, (छंद प्रकाश तथा) (८) शतरंजशतिका।

दासजी के विषय में ठाकुर शिवसिंह ने लिखा है कि ये बुँदेलखंड के रहनेवाले थे, परंतु स्वयं दासजी ने ग्रंथों में अपने को अरवर देश प्रतापगढ़ का रहनेवाला लिखा था, सो हमें संदेह हुआ कि कहीं यह अवध का ज़िला प्रतापगढ़ न होकर राजनूताना का हो। अतः हमने राजा प्रतापबहादुर सिंह सी० आई० ई० को पत्र द्वारा इस विषय में अपनी शंका सूचित की, तो उन्होंने कृपा करके दास-कृत 'विष्णु-पुराण' और 'नामप्रकाश'-नामक दो ग्रंथ भी हमारे पास भेजे और उनके कुटुंबियों से पूछकर उनका हाल भी लिख भेजा।

राजा साहब के लेखानुसार दासजी श्रीवास्तव कायस्थ थे। वे पर्गना प्रतापगढ़ उपनाम अरवर के ट्योंगा ग्राम में रहते थे। यह स्थान प्रतापगढ़ के दुर्ग से एक मील पर है। दासजी के पिता कृपाल-दास, पितामह वीरभानु, प्रपितामह राय रामदास और वृद्ध प्रपितामह

राय नरोत्तमदास थे। नरोत्तमदास के पिता राय पीतमदास थे। दासजी के पुत्र अवधेशलाल और पौत्र गौरीशंकर थे, जो अपुत्र मर गए और दासजी का वंश समाप्त हो गया। उनकी बिरादरी के लोग अब तक ट्योंगा में रहते हैं। इस वंशावली में राजा साहब ने वीरभानु का नाम न लिखकर राय रामदास को दासजी का पितामह माना है, परंतु स्वयं दासजी ने वीरभानु को अपना पितामह और राय रामदास को प्रपितामह लिखा है। अतः हमने राजा साहब के कथन में इतना अंतर कर दिया। राजा साहब ने इन बातों के कहने में दासजी के कुटुंबियों से भी हाल पूछ लिया है। ठाकुर शिवसिंहजी ने दास के पाँच ग्रंथ माने हैं, अर्थात् रस सारांश, छंदोर्णव पिंगल, काव्यनिर्णय, शृंगारनिर्णय और बाग़बहार। परंतु राजा साहब ने विष्णुपुराण और नामप्रकाश-नामक उनके दो और ग्रंथ भेजे, किंतु वे कहते हैं कि बाग़बहार-नामक कोई ग्रंथ दासजी ने नहीं बनाया। उनका मत है कि शायद लोग नामप्रकाश को बाग़बहार कहते हों। हमने भी बाग़बहार कहीं नहीं देखा और जान पड़ता है कि राजा साहब का अनुमान यथार्थ है। इनके सब ग्रंथ अब हमारे पास वर्तमान हैं।

दासजी ने काव्यनिर्णय में लिखा है कि सोमवंशी राजा पृथ्वीपति के भाई बाबू हिंदूपतिसिंह उनके आश्रयदाता थे। दासजी ने इन्हीं हिंदूपतिसिंह के नाम पर अपने सब ग्रंथ बनाए हैं, केवल विष्णुपुराण में किसी आश्रयदाता का नाम नहीं दिया है। पूर्वोक्त राजा साहब ने सोमवंशियों का इतिहास भेजने की भी कृपा की है, जिससे विदित होता है कि राजा छत्रधारीसिंह के पुत्रों में पृथ्वीपतिसिंह और हिंदूपतिसिंह भी थे। इन दोनों की माता रीवाँ-नरेश की पुत्री रानी सुजानकुँवरि थीं। राजा पृथ्वीपतिसिंह संवत् १७६१ में गद्दी पर बैठे और संवत् १८०७ में अहमदख़ाँ बंगश का पक्ष

लेकर युद्ध करने के कारण दिल्ली के वज़ीर सफ़दरजंग ने छल से इनका वध किया और प्रतापगढ़ का राज्य कुछ दिनों के वास्ते ज़ब्त हो गया। उस समय इस राज्य में बड़ा विप्लव रहा और न-जाने क्यों इस संवत् के पीछे दासजी ने कोई ग्रंथ नहीं बनाया। शायद इसी गड़बड़ में ये भी मार डाले गए हों।

दासजी ने छंदोर्णव पिंगल में अपना परिचय निम्न-लिखित छंद द्वारा दिया है—

अभिलाषा करी सदा ऐसनि का होय मित्थ,
सब ठौर दिन सब थाही सेवा चरचानि;
लोभा नई नीचे ज्ञान हलाहल ही को अंसु,
अंत है कृपा पताल निंदा रसही को खानि।
सेनापति देवी कर शोभा गनती को भूप,
पन्ना मोती हीरा हेम सौदा दास ही को जानि;
ही अपर देव पर बढ़े यश रटे नाउँ,
खगासन नगधर सीतानाथ कोलापानि।
या कवित्त अंतर बरन लै तुकांत द्वै छंडि;
दास नाम कुल ग्राम कहि नाम भगति रस मंडि।

इस रीति से पढ़ने पर निम्नलिखित पता ज्ञात होता है—

भिखारीदास कायस्थ, बरन बहीवार, भाई चेनलाल को, सुत कृपाल दास को, नाती वीरभानु को, पनाती रामदास को, अरवर देश, टेउँगा नगर ताथला। श्रीवास्तव कायस्थों में एक शाखा बही-वार है।

छंदोर्णव पिंगल के अतिरिक्त इनके सब ग्रंथ सबसे प्रथम प्रताप-गढ़ के राजा अजीतसिंह और प्रतापबहादुरसिंहजी ने ही छपवाए।

दासजी ने केवल विष्णुपुराण हिंदूपतिसिंह को अर्पित नहीं की है और केवल इसी के बनने का संवत् भी नहीं दिया है। इसकी

कविता इनके सब ग्रंथों से शिथिल है ; अतः जान पड़ता है कि यह इनका प्रथम ग्रंथ है और ऐसे समय बना था जब तक कि ये हिंदूपति के यहाँ नहीं गए थे। यह ग्रंथ संस्कृत विष्णुपुराण का अनुवाद है। इन्होंने अमरकोश का भी उल्था किया है। अतएव जान पड़ता है कि ये महाशय संस्कृत के भी अच्छे पंडित थे। तब इनकी अवस्था विष्णुपुराण बनाते समय तीस वर्ष से कम न होगी। अनुमान से जान पड़ता है कि यह ग्रंथ संवत् १७८९ के लगभग बना होगा, सो इस हिसाब से दासजी का जन्म-काल संवत् १७५९ के इधर-उधर होगा। विष्णुपुराण रायल अठपेजी के ३४९ पृष्ठों का एक बृहत् ग्रंथ है। इसके बनाने में दो तीन साल से कम न लगे होंगे। यह विशेषतया दोहा-चौपाइयों में बना है, परंतु कहीं-कहीं इसमें कुछ अन्य छंद भी आगए हैं। इसकी कविता साधारण परंतु निर्दोष है और भाषा गोस्वामी तुलसीदास से मिलती-जुलती है। गोस्वामीजी ने दोहा-चौपइयों में कथा वर्णन की प्रथा ऐसी कुछ स्थिर-सी कर दी है कि सब कवि बिना जाने भी उसी का अनुगमन कर बैठते हैं। इस ग्रंथ की कथा रोचक और कविता सराहनीय है, परंतु जान पड़ता है दासजी के अन्य ग्रंथों की साहित्य-प्रौढ़ता के कारण इसका प्रचार नहीं हुआ।

इन्होंने अपना दूसरा ग्रंथ रससारांश संवत् १७९१ में बनाया।

सत्रह सै यक्यानबे नभ सुदि छठि बुधबार ;
अरवर देश प्रतापगढ़ भयो ग्रंथ अवतार।

जैसा कि इसके नाम से विदित होता है, इसमें सूक्ष्मतया रसों का वर्णन किया गया है। जैसे देवजी ने जाति वर्णन किया है, उसी प्रकार दासजी ने भी भिन्न-भिन्न जाति की स्त्रियों का कथन किया है, परंतु उनको नायिका के रूप में न दिखाकर दूतियों के रूप में लिखा है। इन्होंने निम्न-लिखित स्त्रियों का दूती करके

वर्णन किया है—धाय, सखी, नायनि, नटिनी, सोनारिनि, पड़ोसिनी, चुरिहारिन, पटइनि, बरइनि, रामजनी, संन्यासिनि, चितेरिनि, धोबिनि, कुम्हारिनि, अहिरिनि, बैदिनि, गंधिनि और मालिनि। सब कवियों द्वारा कहे हुए दस हावों के अतिरिक्त दासजी ने और भी दस हाव कहे हैं। यथा—बोधक, तपन, चकित, हसित, कुतूहल, उद्दीपक, केलि, विक्षिप्त, मद और हेला। अन्य भावों के अतिरिक्त इन्होंने प्रीति को भी एक भाव माना है। परकीयाओं के अतिरिक्त दासजी ने साध्या परकीयाओं का भी वर्णन किया है। इस ग्रंथ में दोहों की अधिकता है, जो दोहे बहुधा गद्यवत् हैं, परंतु तो भी ग्रंथ अच्छा बना है।

उदाहरण-स्वरूप इसके दो छंद नीचे लिखे जाते हैं—

लाल चुरी तेरे अली लागत निपट मलीन ;
हरियारी करि देउगी हौं तो हुकुम अधीन।

जो दुख सों प्रभु राजी रहौ तौ चहौ सुख सिंधुन सिंधु बहाऊँ ;
पै यह नींद सुनौं नहिं और सी कौन सो हौं हिय मौन गहाऊँ।
मैं यहि सोच बिसूरि-बिसूरि करौं बिनती प्रभु साँझ पहाऊँ ;
तीनिहुँ लोक नाथ के सनाथ ह्वौ हौं ही अकेलो अनाथ कहाऊँ।

नामप्रकाश (अमरकोष भाषा) संवत् १७६५ में बना। इस ग्रंथ के प्रकाशक ने प्रत्येक नाम को अलग-अलग लिखकर बड़ा उपकार कर दिया है। अंत में एक शब्दानुक्रमणिका भी लगी है, जिससे शब्दों के खोजने में सुविधा होती है। इस ग्रंथ की रचना विविध छंदों में हुई है और इसके छंद निर्दोष एवं सराहनीय हैं। यह ४०० पृष्ठों का एक बड़ा ग्रंथ है।

"छंदोर्णव पिंगल" इनका चौथा ग्रंथ है। यह संवत् १७१६ में बना था। इसमें दासजी ने पिंगल का वर्णन किया है, जिसमें छंदों के अतिरिक्त मेरु, मर्कटी, पताका, नष्ट, उद्दिष्ट, प्रस्तार इत्यादि

भी कहे गए हैं। ग्रंथ साधारणतया अच्छा है। इनका पंचम ग्रंथ काव्यनिर्णय संवत् १८०३ आश्विन विजय-दशमी के दिन समाप्त हुआ। यह एक बड़ा ग्रंथ है और दासजी की आचार्यता इसी की रचना से मान्य है। इसकी कविता के विषय में इन्होंने लिखा है कि "आगे के सुकवि रीझि हैं तौ कविताई नतौ राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है।"

कविता द्वारा शिक्षा की इन्होंने अच्छी महिमा कही है।

प्रभु ज्यों सिखवै वेद मित्र मित्र ज्यों सत कथा;
काव्य रसनि को भेद सुख सिखदानि तियानि लौं।

इनके मत में कविता बनाने के लिये शक्ति, निपुणता और अभ्यास की आवश्यकता है। इन्होंने कहा है कि—

रस कविता को अंग भूखन हैं भूखन सकल;
गुन सरूप अरु रंग दूखन करैं कुरूपता।

भाषा लक्षण इन्होंने यह दिया है—

ब्रजभाषा भाषा रुचिर कहै सुमति सब कोय;
मिलै संसकृत पारसिहु पै अति प्रकट जु होय।
मिलै अमर ब्रज मागधी नाग यमन भाखानि;
सहज पारसी हू मिलै खट विधि कवित बखानि।

इन्होंने तुलसी और गंग को इस कारण कवियों का सरदार माना है कि उनके काव्यों में विविध प्रकार की भाषाएँ मिलती हैं।

इस ग्रंथ में पदार्थनिर्णय, रसांग, भाव, ध्वनि, अलंकार, गुण, चित्र, तुक, दोष और दोषोद्धार के वर्णन हैं। इसमें दासजी ने पिंगल को छोड़कर कविता के प्रायः सभी अंगों के वर्णन किए हैं और यह रीति ग्रंथों में परम प्रशंसनीय ग्रंथों में से एक माना जाता है। इसको आद्योपांत ध्यानपूर्वक पढ़ जाने से मनुष्य समस्त भाषा काव्य को भली भाँति समझ सकता है। काव्य की उत्तमता में

यह सिवा शृंगारनिर्णय के दासजी के और सब ग्रंथों से श्रेष्ठ है। इसके उदाहरण-स्वरूप हम एक ऐसा छंद देते हैं, जिसमें पाँचों प्रतीपों के उदाहरण हैं और एक छंद भाषा की उत्तमता का भी लिखते हैं—

चंद कहैं तिय आनन सो जिनकी मति वाके बखान सों है रली ;
आनन एकता चंद लहै मुख के लखे चंद गुमान घटै अली।
दास न आनन सो कहैं चंद दई सों भई यह बात न है भली ;
ऐसो अनूप बनाय कै आनन राखिबे को ससि हू की कहा चली॥१॥

अँखियाँ हमारी दई मारी सुधि-बुधि हारी,
मोंहू ते जुन्यारी दास रहैं सब काल मैं ;
कौन गहै ज्ञानै काहि सौंपत सयानै कौन,
लोक ओक जानै ए नहीं हैं निज हाल मैं।
प्रेम पगि रहीं महामोह मैं उमगि रहीं,
ठीक ठगि रहीं लगि रहीं वनमाल मैं ;
लाज को अँचै कै कुल धरम पचै कै वृथा,
बंधन सँचै कै भई मगन गुपाल मैं॥ २ ॥

"शृंगारनिर्णय" संवत् १८०७ वैशाख सुदी १३ को समाप्त हुआ। इसमें दासजी ने नायक, नायिका, उद्दीपन, अनुभाव, सात्विक एवं वियोग शृंगार का कथन किया है। इन्होंने तपन हाव का भी वर्णन किया है। आपने निम्न-लिखित नायिकाओं को भी स्वकीया माना है—

श्रीमाननि के भौन मैं भोग्य भामिनी और ;
तिनहूं को सुकियाहि मैं गनैं सुकवि सिरमौर॥ ३ ॥

इसके उदाहरण-स्वरूप राजा ययाति की दूसरी पत्नी शरमिष्ठा को समझना चाहिए। यह समस्त ग्रंथ और विशेषतया नखशिख बहुत ही उत्कृष्ट बना है। दासजी के सब ग्रंथों में यह श्रेष्ठ है। इसके उदाहरण-स्वरूप एक छंद यहाँ उद्धृत करते हैं—

कंजसकोच गड़े रहे कीच मैं मीनन बोरि दियो दह नीरन ;
दास कहै मृगहू को उदास कै बास दियो है अरन्य गँभीरन ।
आपुस मैं उपमा उपमेय ह्वै नैन ए निंदत हैं कबिधीरन ;
खंजन हू को उड़ाय दियो हलुके करि डारे अनंग के तीरन ॥४॥

दास की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है। उसमें माधुर्य विशेष होता है और श्रुतिकटु शब्द बहुत कम हैं। अन्य उत्तम कवियों की भाँति इनकी भाषा में भी मिलित वर्ण बहुत कम आने पाए हैं। इनको अनुप्रास का इष्ट न था, परंतु कहीं-कहीं इन्होंने उसका व्यवहार भी किया है। इन कथनों का उदाहरण-स्वरूप एक छंद लिखा जाता है।

आनन मैं मुसुकानि सुहावनि बंकुरता अँखियानि छई है ;
बैन सुने मुकले उर जात जकी थिथकी गति ठौनि ठई है।
दास प्रभा उछलै सब अंग सुरंग सुबासता फैलि गई है ;
चंदमुखी तनु पाय नबीनो भई तरुनाई अनंदमई है ॥ ५ ॥

बहुत स्थानों पर इन्होंने स्वाभाविक वर्णन अच्छे किए हैं, परंतु इनकी कविता में प्राकृतिक वर्णनों का अभाव-सा है। हृदय पर चोट लगानेवाले भाव भी इनकी कविता में यत्र-तत्र पाए जाते हैं और उसमें भावपूर्ण एवं गंभीर छंदों का भी अभाव नहीं है। हम इसके उदाहरणार्थ एक छंद भी नीचे लिखते हैं—

नैनन को तरसैयै कहाँ लौं कहाँ लौं हियो बिरहागि मैं तैए।
एक घरी न कहूँ कलपैयै कहाँ लगि प्रानन को कलपैए।
आवै यही अब जी मैं बिचार सखी चलि सौतिहु के घर जैए ;
मान घटे ते कहा घटि है जुपै प्रानपियारे को देखन पैए ॥ ६ ॥

दासजी ने यत्र-तत्र हास्य के वर्णन भी बहुत अच्छे किए हैं।

ऊधो तहाँई चलौ लै हमैं जहँ कूबरी कान्ह बसैं यकठोरी ;
देखिए दास अघाय अघाय तिहारे प्रसाद मनोहर जोरी।

कूबरी सों कछु पाइए मंत्र लगाइए कान्ह सों प्रीति की डोरी ;
कूबर भक्ति बढ़ाइए बंदि चढ़ाइए चंदन बंदन रोरी ॥ ७ ॥

भाषा-साहित्य में यदि कोई प्राचीन कविसमालोचक हुआ है, तो वह यही महाकवि है। जैसे यह जाति के मुंशी थे, वैसे ही इन्होंने काव्य में भी मुंशीगीरी ख़तम की है। इस कथन की पुष्टि काव्यनिर्णय के प्रथम अध्याय एवं चौदहवें अध्याय के पंद्रहवें छंद से होती है।

इन्होंने अपनी कविता में जहाँ-तहाँ नीति के भी अच्छे वचन कहे हैं। देखिए काव्यनिर्णय का छंद ७४, अध्याय आठवाँ। इन्होंने भी अपने प्रत्येक ग्रंथ के कवित्त अन्यान्य ग्रंथों में रख दिए हैं, पर ऐसा बहुत नहीं हुआ है। इन सब गुणों के रहते हुए भी कहना पड़ता है कि इनकी रचना में तल्लीनता का अभाव-सा है, अर्थात् सूर, तुलसी, देव और भूषण की भाँति साहित्यानंद में मग्न होकर दास आपे से बाहर कभी नहीं होते। इनमें एक यह भी बहुत बड़ा दोष है कि ये अन्य कवियों की उक्तियों को अपनी कविता में बेधड़क रख लेते हैं। इस कथन के उदाहरण-स्वरूप इनकी रचना में बहुत छंद मौजूद हैं। बिचारे श्रीपति कवि पर यह अपना हक़ विशेष रूप से समझते थे। यहाँ तक कि श्रीपतिसरोज के अध्याय-के-अध्याय उठाकर आपने जैसे-के-तैसे अपने काव्यनिर्णय में रख लिए हैं और इस बात को स्वीकार करना तो दूर रहा, अपनी कवियों की नामावली में श्रीपतिजी का नाम तक नहीं लिखा, मानो ये उनको जानते ही न थे। संस्कृत के बहुतेरे श्लोकों के अनुवाद भी इनकी कविता में वर्तमान हैं।

इन दो दोषों के होते हुए भी इनकी आचार्यता माननीय है। दशांग काव्य बहुत ही उत्तम रीति से इन्होंने समझाया है और इनका बोलचाल भी बहुत श्लाघ्य है। भाषा-साहित्य के आचार्यों में आचार्यता की दृष्टि से इनका पद बहुतों से न्यून नहीं है। कविता की उत्तमता में ये महाशय दूसरे दर्जे के कवि हैं। इनका पांडित्य

अवश्य सराहनीय है। यदि ये महाशय काव्य न करके भाषा-साहित्य की समालोचना में अपने को लगाते, तो शायद भाषा का अधिक उपकार होता। इनके विषय में एक बात सर्वप्रधान है कि इनका भाषा-माधुर्य एवं प्रसाद अत्यंत सराहनीय है और इनके बहुतेरे छंद मतिराम एवं देव तक की उत्तम रचनाओं से पूरी तुलना के योग्य हैं। खोज [१६०३] में इनके छंदप्रकाश-नामक ग्रंथ का पता चलता है। द्वितीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट में इनका शतरंजशतिका-नामक एक और ग्रंथ लिखा है।

नाम—(७१४) गुरुदत्तसिंह उपनाम भूपति।

ग्रंथ—(१) सतसई, (२) कंठाभरण, (३) रसरत्नाकर, (४) भागवत भाषा, (५) रसदीप।

कविताकाल—१७६१।

ये महाशय वंधलगोती ठाकुर एवं अमेठी के राजा थे। इन्होंने संवत् १७६१ में सतसई-नामक सात सौ दोहों का एक बड़ा भावपूर्ण ग्रंथ बनाया। ये महाराज कवि-कोविदों के कल्पवृक्ष थे। इनकी प्रशंसा में कवींद्र के बनाए हुए बहुत-से छंद मिलते हैं। कवींद्रजी इनकी सभा में थे, वरन् रसचंद्रोदय बनाने पर अमेठी के राजा हिम्मतसिंहजी ने ही उन्हें कवींद्र की उपाधि दी थी। राजा हिम्मतसिंह के पीछे कवींद्र बहुत दिन तक राजा गुरुदत्तसिंहजी के समय में भी अमेठी में रहते रहे। राजा गुरुदत्तसिंहजी से एकबार अवध के नवाब सआदतख़ाँ से युद्ध हुआ। नवाब सआदतख़ाँ ने गढ़ अमेठी को चारों ओर से घेर लिया। राजा गुरुदत्तसिंहजी जंगल को निकल-जाने का विचार करके गढ़ के बाहर निकले, परंतु और किसी ओर से न निकलकर जिधर स्वयं नवाब साहब थे उधर ही से चले और लड़ते भिड़ते तथा बहुत-से शत्रुओं को काटते हुए जंगल को निकले चले गए। इसी का वर्णन कवींद्रजी ने निम्न छंद द्वारा किया—

समर अमेठी के सरोस गुरुदत्तसिंह,
साद्त की सेना समसेरन सों भानी है ;
भनत कविंद्र काली हुलसी असीसन को,
सीसन को ईस की जमाति सरसानी है।
तहाँ एक जोगिनी सुभट खोपरी लै उड़ी,
सोनित पियत ताकी उपमा बखानी है ;
प्यालो लै चिनी को छकी जोबन तरंग मानो,
रंग हेत पीवत मजीठ मुगलानी है।

कहते हैं कि राजा साहब ने कई वर्षों के पीछे अपना राज्य फिर पाया।

राजा गुरुदत्तसिंहजी की सतसई की एक हस्त-लिखित प्रति हमारे पास वर्तमान है। इसके देखने से जान पड़ता है कि इन्होंने कंठाभरण और रसरत्नाकर-नामक दो और दोहों के ग्रंथ बनाए हैं। सतसई में इन दोनों ग्रंथों के छंद बहुतायत से उद्धृत किए गए हैं। खोज १६०३ में भागवत भाषा और रसदीप-नामक इनके दो ग्रंथ और निकले हैं। अतः कुल मिलाकर इनके पाँच ग्रंथ हुए।

इनकी कविता बहुत सरस और भाषा अत्यंत मधुर और सुहावनी होती थी। बिहारीलाल के अतिरिक्त और किसी भी दोहाकार की कविता उत्तमता और सरसता में इनकी कविता से नहीं बढ़ पाती। प्रत्येक विषय पर इन्होंने बहुत ही मनोरंजक और सच्ची कविता की है। राजा साहब ने बिहारी की भाँति थोड़े शब्दों में बहुत-सा भाव भर रक्खा है। इनकी रचना में संक्षिप्त गुण का बहुत अच्छा चमत्कार है। इन्होंने उत्तम भाषा का भी यथेष्ट प्रयोग किया है और उसमें शब्दालंकारों का ख़ूब समारोह रक्खा है। रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा आदि अलंकारों की भी छटा सतसई में प्रभा फैलाती है। इसका विषय शृंगार प्रधान है। दोहों के चमत्कार को राजा साहब ने ख़ूब ही दिखाया है।

सत्रह शतक इकानवे कातिक सुदि बुधवार ;
ललित तृतीया को भयो सतसैया अवतार ॥ १ ॥
घूँघुट पट की आड़ दै हँसति जबै वह दार ;
ससिमंडल ते तब कढ़ति जनु पियूष की धार ॥ २ ॥
अति सौरभ सहवास ते सहज मधुर सुखकंद ;
होत अलिन को नलिन ढिग सरस सलिल मकरंद ॥ ३ ॥
भए रसाल रसाल हैं भरे पुहुप मकरंद ;
मान सान तोरत तुरत भ्रमत भ्रमर मदमंद ॥ ४ ॥

नाम—(७१५) तोपनिधि। इनका ठीक नं० (२६४/८) है। तृ० त्रै० रि० में इनका दीनव्यंग्यशत-नामक ग्रंथ मिला है।

(७१५/१) दत्त

देवदत्त उपनाम दत्त जाजमऊ अंतर्वेद के रहनेवाले थे। खोज १९०३ में इनका लालित्यलता-नामक ग्रंथ उपलब्ध हुआ है जिसमें इस कवि ने अपने विषय में इस प्रकार कहा है कि "अंतरवेद पवित्र महा असनी औ कनौज के मध्य निवास है ; भागीरथी भवतारनि के तट देखत होत सो पातक नास है। देव सरूप सबै नर नारि दिनो दिन देखिए पुन्य प्रकास है ; जज्ञ निनानवे कीने जजाति सो जाजमऊ कविदत्त को वास है।" लालित्यलता का निर्माण-काल १७९१ संवत् है जो ग्रंथ ही में दिया है। अतः यह कवि माढ़ि ज़िले कानपूरवाले दत्त कवि से इतर समझ पड़ते हैं। लालित्यलता-नामक अलंकार-ग्रंथ पंडित जुगुलकिशोर ने देखा है। यह आकार में मतिराम-कृत ललितललाम के बराबर है और बहुत प्रशंसनीय भी है। इनकी कविता बड़ी ही मनोहर होती थी। पद्माकर, ग्वाल और इनकी कविता में नोंक-झोंक रहती थी। दत्त की रचना में अलंकारों की ख़ूब छटा है और अनुप्रास एवं अर्थ दोनों का अच्छा चमत्कार देख पड़ता है। हम इन्हें पद्माकर की श्रेणी में रक्खेंगे।

लाल है भाल सिंदूर भरो मुख सुंदर चारु जु बाहु बिसाल है ;
साल है सत्रुन के उर को इतै सिद्धित सोम-कला धरे भाल है ।
भा लहै दत्तजू सूरज कोटि की कोटिन काटत संकट जाल है ;
जाल है बुद्धि बिबेकनि को यह पारबती को लड़ाइतो लाल है ॥१॥
ग्रीषम मैं तपै भीषम भानु गई बन कुंज सखीन की भूल सों ;
काम सो बाम लता मुरझानी बयारि करै घनस्याम दुकूल सों ।
कंपत यों प्रगट्यो तन सेद उरोजन दत्तजू ठोढ़ी के मूल सों ;
द्वै अरविंद कलीन पै मानो गिरै मकरंद गुलाब के फूल सों ॥२॥
तो तन मैं रबि को प्रतिबिंब परैं किरनैं सो घनी सरसाती ;
भीतर हूँ रहि जात नहीं अँखियाँ चकचौंध ह्वै जात हैं राती ।
बैठि रहौ बलि कोठरी मैं कहि तोप करौं बिनती बहुभाँती ;
सारसी नैन लै आरसी सो अँग काम कहा कढ़ि धाम मैं जाती ॥३॥

(७१६ व ७१७) दलपतिराय तथा वंसीधर

इन दोनों कवियों ने मिलकर अलंकाररत्नाकर [खोज १९०४]-नामक ग्रंथ संवत् १७९२ में बनाया। याज्ञिकत्रय के पास जो प्रति है उसमें निर्माण-काल १७९८ दिया है। दलपति रायमहाजन और वंशीधर ब्राह्मण थे। ये दोनों कवि अमदाबाद के रहनेवाले थे। अमदाबाद से गुजरात के अहमदाबाद का प्रयोजन जान पड़ता है। इन्होंने "उदयापुर" वाले जगतेस के नाम पर यह ग्रंथ बनाया है। शुद्ध शब्द उदयपूर और जगत्सिंह हैं। महाराणा जगत्सिंहजी संवत् १७९१ में सिंहासनारूढ़ हुए थे और संवत् १८०८ में परलोक-गामी हुए। उनकी बड़ाई में यह छंद लिखा गया है—

सकल महीपन के राजैं सिरताज राज ,
पर उपकारी हारी भारी दुख दंद के ;
देव जगतेस धीर गुरुता गँभीर धरे ,
भंजन बिपच्छ पच्छ दच्छ फौज फंद के ।

प्रभुता प्रकास अति रूप को निवास सोहैं,
प्रगट प्रकास मेटैं जग दुख वृंद के;
मेघ से समुंदर से पारथ पुरंदर से,
रति-पति सुंदर समान सूर चंद के।

अलंकाररत्नाकर में जोधपूर के महाराजा जसवंतसिंह के बनाए हुए भाषाभूषण की एक प्रकार से टीका की गई है। इस ग्रंथ में कवियों ने अपनी साहित्य-छटा दिखाने का प्रयत्न न करके अलंकारों के विषय को समझाने का अधिक उद्योग किया है। इस कारण अलंकार-ग्रंथों में जिज्ञासु के वास्ते यह ग्रंथ परमोपकारी है। इसमें पूर्ण रूप से गद्य द्वारा प्रत्येक अलंकार का स्वरूप एवं उसके उदाहरण में अलंकारका निकलना समझा दिया गया है। इसमें कर्ताओं ने अपनी ही कविताओं से अलंकारों के उदाहरण न देकर अन्य ४४ प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कवियों की रचनाओं से भी उदाहरण दिए हैं, जिस के कारण से इस ग्रंथ के प्रायः सब उदाहरण बड़े ही बढ़िया हैं। इन दोनों रचयिताओं की कविता बड़ी मनोहर बनती थी। इनकी भाषा बहुत मधुर और भाव बड़े गंभीर होते थे।

इस ग्रंथ के दोहे भी बड़े मनोहर हैं।

रहै सदा विकसित विमल धरे बास मृदु मंजु;
उपज्यो नहिं पुनि पंक ते प्यारी तव मुख कंजु।

इन कवियों ने अनुप्रास भी अच्छे रक्खे हैं। इनकी कविता बहुत थोड़ी है, परंतु है बड़ी उत्कृष्ट। इन दोनों कवियों के छंद इस ग्रंथ में अलग-अलग हैं, परंतु काव्य के गुणों में दोनों एक-सा हैं, सो इनके विषय में सब बातें मिलाकर लिखी गई हैं। इनको हम पद्माकर कवि की कक्षा में समझते हैं। उदाहरणार्थ इनके कुछ छंद नीचे लिखे जाते हैं—

आली री निहारि वृषभानु की दुलारी जाहि,
पेखि प्रान प्रीतम के प्रेम-पास मैं परत;

भौंहन को फेरिबो और हेरिबो बिहँसि मंद,
.टेरिबो सखी को जब नाह अंक मैं भरत ।
आजु लौं न जानी ही सो परी पहिचानी अब,
जोबन निसानी ऐसी अंग-अंग को धरत ;
विधना प्रवीन मानो तन मैं नवीन कियो,
चाहै काटि छीन याते पीन कुच को करत ॥ १ ॥
बिकसित कंजन की रुचि को हरत हठि,
करत उदोत छिन-छिन ही नवीनो है ;
लोचन चकोरन को सुख उपजावै अति,
धरत पियूख लखे मेटि दुख दीनो है ।
छबि दरसाय सरसाय मीनकेतन को,
तापै बुधिहीन बिधि काहे बिधु कीनो है ;
एहो नँदनंद प्यारी तेरो मुख चंद यह,
चंद ते अधिक अंक पंक सों बिहीनो है ॥ २ ॥
(यह छंद दोनों कवियों का बनाया हुआ है ।)
अरुन हरौल नभमंडल मुलुक पर,
चढ़ो अक्क चक्कवै कि तारि दै किरनि कोर ;
आवत ही सावँत नछत्र जोय धाय-धाय,
घोर घमसान करि काम आए ठौर-ठौर ।
ससिहर सेत भयो सटक्यो सहमि ससी,
आमिल उलूक जाय गिरे कंदरन ओर ;
दुंद देखि अरबिंद बंदीखाने ते भगाने,
पायक पुलिंद वै मलिंद मकरंद चोर ॥ ३ ॥

इस ग्रंथ में महाराणा जगत्सिंह के अतिरिक्त निम्न-लिखित महापुरुषों के भी नाम आए हैं—उदोतचंद, प्रतापसिंह, जाफ़रख़ान और ख़ानाख़ाना ।

दलपतिराय बंसीधर ने अपने छंदों के अतिरिक्त निम्न-लिखित कवियों के भी छंद उदाहरणों में रक्खे हैं—

यशवंतसिंह (स्फुट छंद एवं भाषाभूषण से), सेनापति, केशवदास, बलभद्र, भगवंतसिंह, गंग, बिहारीलाल, मुकुंदलाल, बदन, शिरोमणि, सुखदेव, चातुर, सूरति मिश्र, नीलकंठ, मीरन, रामकृष्ण, आलम, देवी, दास, धोरी, कृष्ण दंडी, देव, कालिदास, दिनेश, बीठल राम, अनीस, काशीराम, चिंतामणि, पुखी, शिव, गोप, रघुराय, नेही, मुबारक, रहीम, मतिराम, रसखान, निरमल, निहाल, निपट निरंजन, नंदन, महाकवि, राधाकृष्ण और ईश। इनमें से भगवंतसिंह, धोरी, कृष्ण दंडी, गोप, निरमल और राधाकृष्ण के अतिरिक्त शेष सब कवियों के नाम शिवसिंहसरोज में पाए जाते हैं। इस ग्रंथ में इन कवियों के नाम आ जाने से इतना निश्चय हो गया कि इन लोगों ने संवत् १७६२ के पूर्व या तब तक कविता की थी। शिवसिंहसरोज में से कुछ कवियों के जन्मकाल संवत् १७६२ के पीछे लिखे गए हैं, सो इस ग्रंथ में उनके नाम आ जाने से यह निश्चय हो गया कि उनके जन्मकाल इस समय से पूर्व के हैं। पुराने संग्रहों से इतना बहुत बड़ा उपकार हो जाता है कि एक तो पुराने कवियों के नाम स्थिर हो जाते हैं, दूसरे उनके समय-निरूपण में कुछ सुभीता रहता है। सो इस प्रकार विचार करने से कालिदास का हज़ारा बड़ा ही प्रशंसनीय ग्रंथ है। यह ग्रंथ छोटा होने पर भी हज़ारा ही की भाँति उपकारी है। द्वितीय त्रैवार्षिक खोज में दलपतिराय के एक और ग्रंथ श्रवणाख्यान का पता चलता है जो बलरामपूर महाराज दिग्विजयसिंह के कहने पर बना। पर याज्ञिकत्रय का कहना है कि श्रवणाख्यान के रचयिता का नाम दलपतराम है और वे इन दलपतराय से भिन्न हैं।

नाम—(७१८) शिवनारायण, ग़ाज़ीपूर।

ग्रंथ—(१) लालग्रंथ, (२) संतविलास, (३) भजनग्रंथ, (४) संतसुंदर (१८११), (५) गुरुन्यास, (६) संतचारी, (७) संतोपदेश, (८) शब्दावली, (९) संतपरवाना, (१०) संतमहिमा, (११) संतसागर, (१२) संतविचार । [द्वि० त्रै० रि०]

रचनासंवत्—१७९२ ।

विवरण—ये महाशय शिवनारायणी पंथ के चलानेवाले हैं । इनकी रचना साहित्य की दृष्टि से साधारण है ।

नाम—(७१९) महाकवि । यह असल में कालिदास त्रिवेदी का दूसरा नाम है । 'वधूविनोद' में उन्होंने इस नाम से भी कविता की है । नीचेवाला छंद भी वधूविनोद में है । शेष-वर्णन 'कालिदास त्रिवेदी'-शीर्षक में देखो ।

(७२०) सोमनाथ

ये महाशय माथुर ब्राह्मण थे । इन्होंने अपना कुल इस प्रकार कहा है—छिरौरा वंशी नरोत्तम मिश्र के देवकीनंदन एवं श्रीकंठ-नामक दो पुत्र थे । देवकीनंदन ने नीलकंठ, मोहन, महामणि और राजाराम-नामक चार पुत्र पाए, जिनमें से नीलकंठ के उजागर, गंगाधर और सोमनाथ आत्मज हुए । जैपूर-नरेश महाराजा रामसिंह के नरोत्तम मंत्र-गुरु थे । ये महाराज संवत् १७२४ में राजगद्दी पर बैठे थे । नीलकंठ महाराज कविता एवं ज्योतिष में बड़े प्रवीण थे ।

सोमनाथजी ने संवत् १७९४ की ज्येष्ठ वदी १० को "रस-पीयूषनिधि"-नामक ग्रंथ समाप्त किया । इनका यह ग्रंथ पं० युगुलकिशोरजी मिश्र के पुस्तकालय में है । ठाकुर शिवसिंह सेंगर ने इनके किसी ग्रंथ का नाम नहीं लिखा और इनके जन्म का संवत्

१८८० बताया है, परंतु स्वयं इनके ग्रंथ से विदित होता है कि इन्होंने सं० १७६४ में रसपीयूपनिधि ग्रंथ बनाया। इसकी काव्य-प्रौढ़ता से अनुमान होता है कि लगभग पचास वर्ष की अवस्था में सोमनाथजी ने इसे समाप्त किया होगा। इनके मरण-काल के विषय में हम कुछ भी नहीं कह सकते। इन्होंने अपने ग्रंथ में तत्कालीन इतिहास का बहुत थोड़ा उल्लेख किया है। कविता में इन्होंने अपने नाम शशिनाथ, सोमनाथ और नाथ लिखे हैं। इनके और ग्रंथ सुजानविलास और कृष्णलीलावली [द्वि० त्रै० रि०] पंचाध्यायी खोज १९०० से मिले हैं। च० त्रै० रि० से इनके दशमस्कंध भाषा, ध्रुवविनोद, रामकलाधर, वाल्मीकिरामायण, अध्यात्म रामायण अयोध्याकांड तथा सुंदरकांड-नामक ग्रंथों का पता चलता है। कवि सत्यनारायण ने अपने मालती-माधव के अनुवाद में इनके 'माधवविनोद' ग्रंथ के भी कुछ उदाहरण दिए हैं। ये महाशय भरतपुर के महाराज बदनसिंह के कनिष्ठ पुत्र प्रतापसिंह के यहाँ रहते थे। बदनसिंह के बड़े पुत्र सूरजमल युवराज थे और प्रतापसिंह को वैरिगढ़ मिला था, जिसमें वे रहते थे। सूरजमल के विजयों के वर्णन सूदन कवि ने बहुत ही सोहावने काव्य-द्वारा किए हैं। प्रतापसिंह का सन् १७७० ई० तक जीवित रहना अनुमान में आता है, क्योंकि वे सूरजमल के छोटे भाई थे और सूरजमल सन् १७६१ ई० वाली पानीपत की तीसरी लड़ाई के समय वर्तमान थे।

रसपीयूषनिधि रीति का बहुत ही सुंदर ग्रंथ है। इसमें सोमनाथ ने पिंगल, कविता के लक्षण, प्रयोजन, कारण और भेद, पदार्थ-निर्णय, ध्वनि, भाव, रस, रसाभास, भावाभास, दूषण, गुण, अनुप्रास, यमक, चित्रकाव्य और अलंकार कहे हैं। पदार्थनिर्णय में देवजी की भाँति इन्होंने भी वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य के अति-

रिक्त तात्पर्य भी माना है। रस का निम्न-लिखित लक्षण इन्होंने बहुत यथार्थ दिया है—

सुनि कवित्त को चित्त मधि सुधि न रहै कछु और ;
होय मगन वहि मोद मैं सो रस कहि सिरमौर।

शृंगाररस के अंतर्गत नायिकाभेद भी बहुत विस्तार-पूर्वक कहा गया है। रसों के पीछे प्रतापसिंह के हाथी और घोड़ों का अच्छा वर्णन हुआ है। सोमनाथजी ने दशांग कविता को इस एक ही ग्रंथ में बहुत उत्कृष्ट प्रकार से दिखा दिया है।

श्रीपति और दासजी के सिवा इनका रीति-ग्रंथ प्रायः और सब आचार्यों के रीति-ग्रंथों से रीति के विषय में श्रेष्ठ है। प्रत्येक विषय को जैसी साफ़ और सुगम रीति से इन्होंने समझाया है, वैसा कोई भी कवि नहीं समझा सका है। कविता से अपरिचित पाठक भी इस ग्रंथ को पढ़कर दशांग कविता समझ सकता है। हमारी समझ में आचार्यता की दृष्टि से देखने पर केवल चार सत्कवियों ने दशांग कविता का वर्णन साफ़ और सुंदर किया है, अर्थात् देव, श्रीपति, सोमनाथ और दास। इन सबमें समझाने की रीति सोमनाथजी की प्रशंसनीय है। केशवदास और कुलपति मिश्र भी आचार्य हैं, परंतु उन्होंने एक तो दशांग कविता नहीं कही, और दूसरे इन दोनों की कविता कठिन है। रसपीयूषनिधि काव्योत्कर्ष में भी प्रशंसनीय है। आकार में यह दास के काव्यनिर्णय से सवाया होगा।

सोमनाथ की भाषा शुद्ध व्रज भाषा है। उसमें मिलित वर्ण बहुत कम आने पाए हैं और समस्त ग्रंथ बहुत ही मधुर भाषा में लिखा गया है। इनको यमक, अनुप्रास आदि का इष्ट न था और ये उचित रीति से अपनी कविता में उनका व्यवहार करते थे। शब्दों के स्वरूप में ये महाशय शुद्ध संस्कृत के स्थान पर हिंदी की रीति

अधिक पसंद करते थे। वृंदावन की जगह ये विंदाबन लिखते थे। इनकी कविता में प्रकृष्ट छंदों की संख्या बहुत अधिक न मिलेगी, परंतु इनकी रचना निर्दोष है और एकरस बनती चली गई है, ऐसा नहीं कि कहीं बहुत उत्तम हो और कहीं शिथिल पड़ गई हो। ये महाशय देव और मतिराम की भाँति चमत्कारिक छंद नहीं लिख सकते थे, परंतु इनकी भाषा बहुत ही संतोषजनक है। आप दासजी के समकक्ष कवि हैं। इनकी कविता से दो छंद नीचे उद्धृत किए जाते हैं—

प्रीति नई नित कीजति है सबसों छलकी बतरानि परी है;
सीखी ढिठाई कहा ससिनाथ हमैं दिन द्वैकते जानि परी है।
और कहा कहिए सजनी कठिनाई गरे अति आनि परी है;
मानत हैं बरज्यो न कछू अब ऐसी सुजानहि बानि परी है॥ १॥

दिसि बिदिसनि ते उमड़ि मढ़ि लीन्हों नभ,
छोड़ि दीनो धुरवा जवासेजूथ जरिगे;
डहडहे भए द्रुम रंचक हवा के गुन,
कहूँ कहुँ मुरवा पुकारि मोद भरिगे।
रहि गए चातक जहाँ के तहाँ देखत ही,
सोमनाथ कहै बूँदा बाँदीहू न करिगे;
सोर भयो घोर चहुँ ओर महिमंडल मैं,
आए घन आए घन आइकै उघरिगे॥ २॥

(७२१) रसलीन

सैयद गु़लामनबी बिलगरामी उपनाम रसलीन कवि ने अठारहवीं शताब्दी में कविता की थी। क़स्बा बिलगराम ज़िला हरदोई में है। यह मल्लाएँ से पाँच कोस की दूरी पर स्थित है। बिलगराम में बहुत दिनों से बड़े-बड़े विद्वान् मुसलमान होते रहे हैं और अब भी वर्तमान हैं। यह स्थान विद्या और गुणों के लिये इतना प्रसिद्ध है

कि लोग बिलगरामी होना-एक महत्व-सूचक उपाधि समझते हैं। यह उपाधि रसलीन के समय में भी श्रद्धाभाजन समझी जाती थी, क्योंकि उन्होंने अपने को बिलगरामी करके लिखा है। आपने अपने को बाक़र पुत्र कहा है।

शिवसिंहसरोज में इनके विषय में निम्न बातें लिखी हैं—

"ये कवि अरबी-फ़ारसी के आलिम फ़ाज़िल और भाषा-कविता में बड़े निपुण थे। रसप्रबोध नाम ग्रंथ अलंकार में इनका बनाया हुआ बहुत प्रामाणिक है। इनके कुतुबख़ाने में पाँच सौ जिल्द भाषा-काव्य की थीं।"

इनका जन्म-काल अनुमान से संवत् १७४६ के लगभग जान पड़ता है, क्योंकि इनके प्रथम ग्रंथ अंगदर्पण में प्रौढ़ कविता है। इन्होंने अपना पूरा नाम 'श्रीहुसैनी बासती बिलगरामी सैयद बाक़र-सुत सैयद ग़ुलामनबी रसलीन' लिखा है। हुसैनी बासती से मुसलमानी बस्ती का प्रयोजन जान पड़ता है।

इनके दोनों ग्रंथ, अर्थात् अंगदर्पण और 'रसप्रबोध' प्रकाशित हो चुके हैं और दोनों हमारे पास वर्तमान हैं।

अंगदर्पण संवत् १७६४ में बना था। इसमें १७७ दोहे हैं, जिनमें नायिका के नखशिख का वर्णन है। यह वर्णन बड़ा ही भड़-कीला है। इसमें उपमाएँ, रूपक और उत्प्रेक्षाएँ चमत्कारिक हैं। "रसप्रबोध" एक बड़ा ग्रंथ है, जिसमें ११५५ दोहों द्वारा रसों का विषय बड़े विस्तार-पूर्वक और प्रशंसनीय रीति से सांगोपांग वर्णित है। इसमें अलंकारों का विषय बिलकुल नहीं कहा गया है। रसों का वर्णन भावों के बिना अच्छा नहीं कहा जा सकता, इस कारण रसलीन महाशय ने भावभेद भी बहुत विस्तार-पूर्वक कहा है। भावभेद में आलंबन विभाव के अंतर्गत नायक और नायिकाभेद आ जाता है। इस विषय को भी इन्होंने बड़े विस्तार-पूर्वक और

भली भाँति कहा है । उद्दीपन में षट्ऋतु का भी वर्णन आ जाता है और उसे भी इस कवि ने ख़ूब निभाया है। इसी ग्रंथ में एक बारहमासा भी अच्छा है। रसलीन ने कहा है कि यदि कोई यह ग्रंथ ध्यान-पूर्वक पढ़े तो उसे रसों का विषय जानने के वास्ते किसी दूसरे ग्रंथ के पढ़ने की आवश्यकता न रहे। यह कथन पूर्णरूप से यथार्थ है। यह ग्रंथ संवत् १७९९ में समाप्त हुआ।

रसलीन ने मुसलमान होने पर भी व्रजभाषा बहुत ही शुद्ध लिखी है। उसमें फ़ारसी के शब्द नहीं आए हैं। इनकी तथा किसी ब्राह्मण कवि की भाषाओं में कुछ भी अंतर नहीं है। यह इन्हीं का काम था कि फ़ारसी के पारगामी होकर भी ये ऐसी ठेठ व्रजभाषा में कविता करने में समर्थ हुए। इनकी कविता सराहनीय है। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं।

मुकुत भए घर खोय कै कानन बैठे जाय ;
घर खोवत हैं और के कीजै कौन उपाय ॥ १ ॥
कत देखाय कामिनि दई दामिनि को यह बाँह ;
थरथराति सी तन फिरै फरफराति घन माँह ॥ २ ॥
कहुँ लावति बिकसित कुसुम कहूँ डोलावति बाय ;
कहूँ बिछावति चाँदनी मधु ऋतु दासी आय ॥ ३ ॥
कुमति चंद प्रति द्यौस बढ़ि मास मास कढ़ि आय ;
तुव मुख मधुराई लखै फीको परि घटि जाय ॥ ४ ॥
वृद्धकामिनी काम ते सून धाम मैं पाय ;
नेवर झमकावति फिरै देवर के ढिग जाय ॥ ५ ॥
तिय सैसव जोबन मिले भेद न जान्यो जात ;
प्रात समै निसि द्यौस के दुवौ भाव दरसात ॥ ६ ॥

(७२२) रसिक प्रीतम ने नित्यलीला संवत् १७९५ में रची। यह ग्रंथ हमने नहीं देखा, पर खोज [१९००] में इसका

हाल लिखा है। द्वि० त्रै० खोज में 'वृंदावनसत'-नामक इनका एक और ग्रंथ मिला है।

(७२३) रघुनाथ

ये महाशय काशिराज महाराज वरिबंडसिंह के राजकवि थे और काशी में ही रहते थे। इनके पुत्र गोकुलनाथ, पौत्र गोपीनाथ और गोकुलनाथ के शिष्य मणिदेव ने महाभारत का भाषानुवाद बनाया। ये महाशय वंदीजन थे। ठाकुर शिवसिंहजी ने इनके काव्यकलाधर, रसिकमोहन, जगतमोहन और इश्क़ महोत्सव-नामक चार ग्रंथों के नाम लिखकर यह भी लिखा है कि इन्होंने सतसई की टीका भी बनाई है। इनके प्रथम तीन ग्रंथ हमारे पास हैं, जिनमें से 'जगतमोहन' राजा इटौंजा के पुस्तकालय से हमें प्राप्त हुआ है। काव्यकलाधर और रसिकमोहन हमारे पास हस्त-लिखित हैं। रघुनाथ ने अपने ग्रंथ (जो हमारे पास हैं) संवत् १७९६ से १८०७ तक बनाए। काशी-नरेश ने इनको चौरा ग्राम दिया, जिसमें इनका कुटुंब रहा। इन्होंने महाराजा वरिबंडसिंह के पूर्व पुरुषों में मंसाराम और कीट्टू मिश्र का वर्णन किया है और यह भी लिखा है कि महाराजा वरिबंडसिंह ने चिलबिलिया का गढ़ जीता था।

रसिकमोहन संवत् १७९६ में बना था। यह अलंकारों का ग्रंथ है, जिसमें १२१ पृष्ठ और ३२३ छंद हैं। इसमें शृंगार-रस का विषय इतना अधिक नहीं है, जितना कि अन्य ग्रंथों में हुआ करता है। इसमें अलंकारों के लक्षण और उदाहरण बड़े ही साफ़ हैं। इस महाकवि ने यह ग्रंथ और इसके समस्त छंद अलंकार समझाने ही के लिये बनाए, अतः जिस अलंकार का उदाहरण दिया गया है, उसमें प्रायः एक ही छंद में बहुत बार वही अलंकार निकलता है। यथा—

फूलि उठे कमल-से अमल हितू के नैन,
कहै रघुनाथ भरे चैन रस सियरे;
दौरि आए भौंर-से करत गुनी गुन गान,
सिद्ध-से सुजान सुख सागर सों नियरे।
सुरभी-सी खुलन सुकवि की सुमति लागी,
चिरिया-सी जागी चिंता जनक के हियरे;
धनुष पै ठाढ़े राम रवि-से लसत आजु,
भोर-कैसे नखत नरिंद भए पियरे ॥ १ ॥

इस ग्रंथ में बढ़िया छंद बहुत-से हैं और कहीं-कहीं इनके पद कहावत के रूप में परिणत हो गए हैं। यथा—

मैं मन बीच बिचारि लख्यो है,
बनारस मैं न बिना रस कोऊ;

× × ×

छीरनिधि जायो गायो निगम पुरान छायो,
बपुष प्रभा सों लीन्हें तारन जगतु है;
अनुज कहायो कमला को कहै रघुनाथ,
नातो पायो विष्णु सों सो जानत जगतु है।
माथे पै महेस राख्यो मित्र कहि मित्र भाख्यो,
ऐसो जऊ तऊ तुलताई न लहतु है;
भूप वरिबंड जस रावरे कुलीन आगे,
धाकर सो देखत सुधाकर लगतु है ॥ २ ॥

उत्कृष्ट छंदों के होते हुए भी रघुनाथ की कविता कहीं-कहीं बिलकुल गद्यवत् हो जाती है।

काव्यकलाधर संवत् १८०२ में बना। यह भी १५० पृष्ठों का एक बड़ा ग्रंथ है। इसमें भाव-भेद और रस-भेद के वर्णन हैं। रघुनाथ ने नायिका-भेद तो विस्तारपूर्वक कहा ही है, परंतु नायक-

भेद का भी बड़ा विस्तार किया है। यह भी रसिकमोहन की भाँति प्रशंसनीय है। इसका उदाहरण-स्वरूप केवल एक छंद यहाँ लिखा जाता है—

काछो कछे पट पीत को सुंदर सीस धरे पगिया रँगराती ;
हार गरे बिच गुंजन के अलकैं छिति छोरन लौं छहराती।
खेलत ग्वालन सों रघुनाथ औ डोलै गलीन मैं री उतपाती ;
जो रँग साँवरो होतो न ईठि तौ काहू की डीठि कहूँ लगि जाती ॥३॥

जगतमोहन संवत् १८०७ में बना। इसमें रघुनाथ ने लिखा है कि—

महाराज बरिबंड ने ह्वै मो पर अनुकूल ;
गाँव नाव संपति दियो कियो बड़ेन के तूल ॥ ४ ॥

यह ३२४ पृष्ठों का एक बड़ा ग्रंथ है, परंतु इसमें श्रीकृष्णचंद्र की केवल १२ घंटे की दिनचर्या वर्णित है। बंदीजनों ने उन्हें गुणगान करके जगाया, उन्होंने उठकर देवताओं का ध्यान करके प्रातकृत्य किया। इतने में पंडित लोगों ने आशीर्वाद देकर राजनीति कही, तथा नैयायिक, ज्योतिषी, सामुद्रिकज्ञ और वैद्य क्रमशः आए और उन्होंने भी बड़े विस्तार-पूर्वक अपने-अपने विषयों के वर्णन किए। तब हरि ने भोजन करके दरबार किया। यहाँ दरबारी, मुसाहेब, साज-सामान, सेना, जवाहिरात, घोड़ों के गुण-दोष और औषध, हाथी, उनके भेद एवं दवा और विविध भाँति के पक्षियों के सांगोपांग वर्णन हैं। इसके पीछे यादवपति मृगया को निकले। इस स्थान पर वाहन, सेना, नगर, वन, पक्षी मृगादि के अच्छे कथन हैं। मृगया में हाथी पकड़ने का वर्णन है। तदनंतर मुनिगण यादवराय से मिले और उन्होंने आशीर्वाद देकर ब्रह्मज्ञान का कथन किया। इस स्थान पर ऋषियों के आश्रमों का भी वर्णन है। ब्रह्मज्ञान के साथ ग्रंथ समाप्त हो गया है। इस ग्रंथ में राजनीति

अच्छी कही गई है। वर्णनों का बाहुल्य देखते यह ग्रंथ बहुत प्रशंस-नीय है, परंतु कई स्थानों पर यह काव्य लक्षण के बाहर हो गया है। इस कथन के उदाहरण-स्वरूप वैद्यक, ज्योतिष, न्याय आदि हैं, जो काव्य की दृष्टि से अरुचिकर हो गए हैं, यद्यपि उनसे कवि की बहुज्ञता प्रकट होती है। इस ग्रंथ के उदाहरण-स्वरूप दो छंद नीचे लिखे जाते हैं—

सुघरे सिलाह राखै, वायु वेगी बाह राखै,
 रसद की राह राखै, राखे रहे बन को;
चोर को समाज राखै, बजा औ नजर राखै,
 खबरि के काज बहुरूपी हरफन को।
अगम भखैया राखै, सकुन लेवैया राखै,
 कहै रघुनाथ औ विचार बीच मन को;
बाजी हारै कबहूँ न औसर के परे जौन,
 ताजी राखै प्रजन को, राजी सुभटन को॥ ५॥
कैधौं सेस देस ते निकसि पुहुमी पै आय,
 बदन उचाय बानी जस असपंद की;
कैधौं छिति चवरी उसीर की देखावति है,
 ऐसी सोहै उज्जल किरनि जैसे चंद की।
जानि दिनपाल श्रीनृपाल नँदलालजू को,
 कहै रघुनाथ पाय सुघरी अनंद की;
छूटत फुहारे कैधौं फूल्यो है कमल तासों,
 अमल अमंद कढ़ै धार मकरंद की॥ ६॥

ये महाशय व्रजभाषा में कविता करते थे। इनकी भाषा साधा-रण और कविता अच्छी है। इनके भाव अच्छे होते थे, परंतु भाषा प्रायः शिथिल रहती थी। इनकी कविता में टकसाली छंदों का अभाव-सा है। इनकी गणना साहित्य के आचार्यों में है और काव्य-

प्रौढ़ता की दृष्टि से हम इन्हें पद्माकर की श्रेणी में रखते हैं। इन्होंने एकाध स्थान पर खड़ी बोली एवं प्राकृत मिश्रित भाषा में भी कविता की है।

इश्क़ महोत्सव को पं० युगुलकिशोरजी मिश्र (व्रजराज) ने देखा है। यह ग्रंथ खड़ी बोली में स्फुट विषयों पर लिखा गया है, परंतु इसमें भी शृंगार की प्रधानता है। आकार में यह कालिदास के वधूविनोद के बराबर है, उदाहरण देखिए—

आप दरियाव पास नदियों के जाना नहीं,
दरियाव पास नदी होयगी सो धावैगी;
दरखत बेलि आसरे को कभौं राखत न,
दरखत ही के आसरे को बेलि पावैगी।
मेरे ही लायक जो था कहना सो कहा मैंने,
रघुनाथ मेरी मति न्याव ही को गावैगी;
वह मोहताज आपकी है आप उसके न,
आप कैसे चलौ वह आप पास आवैगी।

खोज [१६०२] से इनके एक ग्रंथ रसिकमोहन काव्य का और पता चलता है।

नाम—(७२४) जनकराज किशोरीशरण, अयोध्यावासी।

इनका ठीक नं० (१$\frac{२}{१}$२२) है।

(७२५) महारानी बाँकावतीजी उपनाम व्रजदासी।

ये जयपुर राज्यांतर्गत लिवाण में कछवाहा राजा आनंदरामजी उदेरा मोत की पुत्री थीं, और संवत् १७७६ में कृष्णगढ़ के महाराजा राजसिंह से इनका विवाह हुआ था। इन्होंने श्रीमद्भागवत का छंदोबद्ध उल्था किया जो व्रजदासी भागवत के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें दोहा-चौपाइयों का आधिक्य है और इसकी भाषा व्रजभाषा एवं बैसवाड़ी का मिश्रण है, जिसमें कहीं-कहीं राजपूताना के शब्द

मिल गए हैं। इनकी भाषा अच्छी और कविता निर्दोष है। ये भी मधुसूदनदासजी की श्रेणी में हैं।

नमो नमो श्री हंस नमो सनकादि रूप हरि;
नमो नमो श्री नारद देव ऋषि जग को समसरि।
नमो नमो श्री व्यास नमो शुकदेव जु स्वामी;
नमो परिच्छित राज ऋषिन मैं मुख्य जु नामी।
पुनि नमो नमो श्री सूत जू नमो नमो सौनक सकल;
अरु नमो नमो श्रीभागवत कृष्णरूप छिति मैं अकल।

(७२६) भारथशाह विजना के प्रथम जागीरदार दीवान सावंतसिंह के पौत्र थे। आपने संवत् १७६६ में ऊषा-अनिरुद्ध की कथा-नामक एक उत्कृष्ट ग्रंथ रचा। हनुमानविरुदावली आपका दूसरा ग्रंथ है। आपकी रचना तेजपूर्ण और सबल है, जिसमें माधुर्य गुण की विशेषता है। आपकी गणना साधारण श्रेणी में की जाती है। [प्र० त्रै० रि०]

गन नायक गज वदन गवरि सुत विघन बिनासन;
एकदंत गुनवंत अंत नहिं लहत सनातन।
कर त्रिसूल सुखमूल मूल दारिद्र विभंजन;
लपटे अंग भुजंग सदा त्रैपुर अनुरंजन।

(७२७) व (७२८) स्वामी ललितकिशोरी व ललित मोहनी-नामक दो महाशय गुरुशिष्य थे। ये संवत् १८०० के लगभग हुए। ये लोग निंबार्क संप्रदाय में स्वामी हरिदास की शाखा के वैष्णव थे। इस शाखा के अनुयायी टट्टिनवाले कहलाते थे और अब भी कहलाते हैं। इन दोनों महाशयों ने श्रीस्वामी महाराजजू की वचनिका-नामक एक ४७ पृष्ठों का व्रजभाषा में गद्य-ग्रंथ रचा, जो हमने छत्रपूर में देखा है। इनका समय जाँच से मिला है। ये साधारण श्रेणी के लेखक थे। इनका वर्णन नं० ८८८ पर देखो।

(७२६) स्वामी श्रीहित वृंदावनदासजी चाचा

चाचाजी जाति के ब्राह्मण थे। आप पुष्करजी के समीप रहते थे तथा श्रीस्वामी हितरूपजी के शिष्य थे। इनके आश्रयदाता महाराज बहादुरसिंहजी, महाराज नागरीदास राजा कृष्णगढ़ के छोटे-भाई थे। आप तत्कालीन गद्दीश्वर गोस्वामी के पितृव्य होने के कारण चाचा कहलाने लगे। इनकी पहली रचना जो हमें मिली है, वह संवत् १८०० की है, सो अनुमान से इनका जन्म-संवत् १७७० के लगभग माना जा सकता है। कहा जाता है कि इन्होंने चार लक्ष पदों तथा छंदों की रचना की। हमने इनके जितने ग्रंथ दरबार छतरपूर में देखे हैं, केवल उन्हीं में १८२४५ पद दोहा, चौपाई इत्यादि हैं। इनके अतिरिक्त इन महात्मा द्वारा रचित और भी ग्रंथों का होना इन्हीं ग्रंथों के देखने से जान पड़ता है। उपर्युक्त कविता पर निगाह करने से कहना पड़ता है कि आकार में इनके बराबर रचना शायद सूरदासजी के सिवा और किसी ने भी नहीं की है, परंतु सूरदासजी के भी पद इस समय साढ़े चार सहस्र से अधिक उपलब्ध नहीं होते। काव्य-प्रौढ़ता के विषय में भी इनकी कविता गोस्वामीजी हितजी, सूरदास आदि के सिवा और प्रायः सभी पदरचयिता कवियों से श्रेष्ठ है। चाचाजी ने अष्टयाम, समय-प्रबंधादि कई बार स्थान-स्थान पर लिखे हैं। इन्होंने प्रायः सभी ग्रंथों में कृष्ण भगवान् के भोजन, शयन, रास आदि के वर्णन किए हैं और श्रृंगाररस पर विशेष ध्यान रक्खा है। श्रृंगारी कवि होने पर भी आप पूर्णतया निर्विकार थे। यह बात इनकी रचना से भी प्रकट है।

इनकी कविता जो हमने देखी है, वह संवत् १८०० से प्रारंभ होकर सं० १८४४ तक की है। इसके बाद का पता नहीं कि इनका परलोकवास कैसे और किस समय हुआ। पहले ये पुष्कर के

समीप कृष्णगढ़ में रहा करते थे; पर पीछे से श्रीवृंदावन में निवास करने लगे। इनके पीछेवाले ग्रंथ वृंदावन में बने। इनकी भाषा व्रजभाषा है और वह परम मनोहर तथा ललित है। हम इनको दास की श्रेणी का कवि मानते हैं। इनके रचित ग्रंथों के नाम ये हैं—

समयप्रबंध १ से १६ तक १६।

अष्टयाम।　　　　८।

छोटे-छोटे अष्टक, वेली, पचीसी, इत्यादि १६०।

कृष्णगिरि पूजन बेली ३३२ छंद।

श्रीहित रूपचरित बेली ४६२ छंद।

भक्तिप्रार्थनावली ३३४ छंद।

चौबीस लीला १०३ सफ़ा।

हिंडोरा २४२ पृष्ठ रायल अठपेजी।

श्रीव्रजप्रेमानंदसागर ३४१ पृष्ठ बड़े साइज़।

कृष्णगिरिपूजन मंगल ३३२ छंद।

द्वि० त्रै० रि० में इनके हरिनाममहिमावली (१८०३), हित-हरिवंशचंद्रजू की सहस्रनामावली (१८१२), भावविलास टीका राधा सुधानिधि (१८२०), तथा सेवक वानी-नामक ग्रंथ मिले हैं। रसिकयशवर्णन (१८२५), युगलप्रीतिपचीसी (१८२६) तथा आनंदवर्द्धनबेलि का पता च० त्रै० खो० रि० से चलता है। नवम समय प्रबंध शृंखला (१८३०), कृष्णसुमिरनपचीसी (१८३०), कृष्णविवाहउत्कंठा (१८३१), रासउत्साहवर्द्धन (१८३१), इष्टभजनपचीसी, जगनिर्वेदपचीसी, पद, प्रार्थना-पचीसी, राधाजन्मउत्सवबेलि, वृषभानसुजसपचीसी, टीका छप्पय हरिवंशचंद्रजू भी च० त्रै० खो० रि० में लिखे हैं।

तृतीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट में इनके (१) समयप्रबंध, (२)

राधाबालविनोद, (३) ब्रजप्रेमानंदसागर, (४) लाड़लीजी की जन्म बधाई, (५) हितकल्पतरु, (६) भक्तसुजसबेलि, (७) करुणाबेलि, (८) भँवरगीत, (९) लीला (जिसमें छोटे-छोटे ४५ ग्रंथ हैं), (१०) हरिकलाबेलि, (११) लाड़-सागर, (१२) सेवकजी की विरुदावली, (१३) छद्मषोडशी, (१४) रसिक अनन्य, (१५) ख्यालविनोद, (१६) ब्रजविनोद, (१७) बेलि, (१८) हितरूपचरितावली, (१९) सेवकजी की परिचर्यावली-नामक ग्रंथों का पता चलता है।

यह छबि बाढ़ीरी रजनी खेलत रास रसिकमनि माई ;
कानन बर सौरभ की महकनि तैसिय सरद जुन्हाई।
पुलिन प्रकास मध्य मनिमंडल तहँ राजत हरि राधा ;
प्रतिबिंबत तन दुरनि मुरनि मैं तब छबि बढ़त अगाधा।
गौरस्याम छबिसदन बदन पर फबि रहे श्रम कन ऐसे ;
नील कनक अंबुज अंतर धरे ओपि जलज मनि जैसे।
झलकत हार चलत कल कुंडल मुख मयंक ज्यों सोहैं ;
वारों सरद निसा ससि केतिक मैन कटाच्छनि मोहैं।
थेइ थेइ बचन बदत पिय प्यारी प्रगटत नृत्य नई गति ;
वृंदाबन हित तान गान रस अलिहित रूप कुशल अति ॥ १ ॥

हौं बलि जाउँ मुख सुखरास।
जहाँ त्रिभुवन रूप सोभा रीझि कियो निवास।
प्रतिबिंब तरल कपोल कमनी युग तरौना कान ;
सुधासागर मध्य बैठे मनौ रवि युग न्हान।
छबि भरे नव कंजदल से नेहपूरित नैन ;
पूतरी मनु मधुप छौना बैठि भूले गैन।
कुटिल भृकुटी नमित सोभा कहा कहौं विसेख ;
मनहुँ ससि पर श्याम बदरी युगुल किंचित रेख।

लसत भाल विशाल ऊपर तिलक नगनि जराय ;
मनहुँ चढ़े बिमान ग्रह गन ससिहि भेटत जाय ।
मंद मुसुकनि दसन दमकनि दामिनी दुति हरी ;
वृंदावन हित रूप स्वामिनि कौन विधि रचि करी ॥ २ ॥'

सोभा केहि विधि बरनि सुनाऊँ ।
यक रसना सोउ लोचन हीनी कहौ पार क्यों पाऊँ ।
अंग अंग लावन्य माधुरी बुधि बल किती बताऊँ ;
अतुलित सुमति कहि गए क्यों हग पलरनि धरि जु उचाऊँ ।'
नव वैसंधि दुहुनि नित उलहत जब देखो तब औरै ;
यहि कौतुक मेरो सुनि सजनी चित न रहत यक ठौरै ।
लोक न सुनी स्रवन नहिं देखी ऐसी रूप निकाई ;
मेरी तेरी कहा चली खग मृग मलि प्रेम बिकाई ।
कबहूँ गौर श्याम तन कबहूँ लोचन प्यासे धावैं ;
कह घटि जात सिंधु को पंछी जौ चोंचन भरि लावैं ।
सुंदरता की हद मुरलीधर बेहद छबि श्रीराधा ;
गावैं वपु अनंत धरि सारद तऊ न पूजै साधा ।
न्याइ काम करवट ह्वै निकसत पिय अरु रूप गुमानी ;
वृंदावन हित रूप कियो बस सो कानन की रानी ॥३॥

नाम—(७३०) कमलनयन हित वृंदावनवाले ।

ग्रंथ—(१) समयप्रबंध, (२) समयप्रबंध ।

समय—१८०० ।

विवरण—पहले ग्रंथ में पद और दूसरे में प्रथम पद व दोहा इत्यादि हैं और पीछे वार्तिक । उसमें आठ पहर की पूजा, उत्सव, उपासना इत्यादि के वर्णन हैं । कविता इनकी साधारण श्रेणी की है । हमने यह ग्रंथ दरबार छतरपूर में देखा है । इसमें कुल १६४ पृष्ठ फ़ुलस्केप

साँची के हैं। समय जाँच से मिला है। ये स्वामी हरिवंश हित के अनुयायी तथा आचार्य वंश में थे।

दंपति सोभा आजु बनी।
सूहे बागे चालु डगमगी छबि नहिं जात भनी।
दिए अंश भुज भार परसपर नव घन नवल धनी;
कमल नैन हित संतत राजत संपति बिपिन मनी॥ १॥

(७३१) गिरिधर कविराय

इस कवि ने केवल कुंडलियों में कविता की है। इनका कोई ग्रंथ हमारे देखने में नहीं आया, केवल एक ग्रंथ में इनकी इक्यानबे कुंडलियाँ लिखी हुई हैं। यह ग्रंथ हमारे पुस्तकालय में वर्तमान है। इस कवि का समय-संबंधी हमें कोई प्रमाण नहीं मिला। शिवसिंहजी ने इनका जन्म-काल संवत् १७७० माना है।

इस कवि की भाषा अवध की ग्रामीण भाषा है। तुकांत ढूँढ़ने के लिये इन्होंने कहीं-कहीं भदेसिल एवं निरर्थक शब्द रख दिए हैं। इनकी कविता में भाषा और भाव भी कभी-कभी बहुत भदेसिल हो गए हैं। इनकी भाषा से यह विचार होता है कि ये महाशय अवध के रहनेवाले थे। इन्होंने कहीं-कहीं स्त्रियों की निंदा कर-दी है।

इन दो-एक त्रुटियों के होते हुए भी इस कवि की रचना इतनी यथार्थ है कि संसार ने इसकी कविता को बहुत अधिकता से ग्रहण किया है। संसार ऐसा गुणग्राही है कि बहुतेरे कवियों ने अपनी रचना को बहुत कुछ छिपाया और उनके ग्रंथ मुद्रित भी नहीं हुए, परंतु फिर भी उन भूले और छिपे हुए ग्रंथों के भी उत्कृष्ट छंदों को उसने ग्रहण कर ही लिया। उत्तम रचनाओं की यह भी एक बहुत बड़ी जाँच है कि संसार ने उन्हें पसंद कर लिया हो। यह नहीं कहा जा सकता कि लोकमान्यता सदैव

अच्छे गुणों की कसौटी होती है, परंतु विशेषतया ऐसा ही है। कभी-कभी अनेकानेक कारणों से उत्कृष्ट रचनाएँ भी प्रचलित नहीं होतीं, पर ऐसा प्रायः नहीं होता। इस लोकमान्यता की जाँच में गिरिधरराय का साहित्य बहुत ही सच्चा ठहरता है। इस कवि की रचनाओं में कितने ही ऐसे पद आए हैं कि आज वे हिंदी बोलनेवालों की भाषा के भाग होकर कहावत के रूप में हर छोटे-बड़े की ज़बान पर वर्तमान हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी को छोड़कर और किसी कवि की रचना को गिरिधरराय की कविता के समान कहावतों में आदर पाने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ होगा।

इस अद्वितीय लोकप्रियता के कारणों में एक यह भी है कि इस कवि ने सिवा नीति तथा अन्योक्ति के और किसी विषय पर काव्य नहीं किया है। नीति में भी बड़ी गूढ़ बातों को छोड़कर गिरिधर ने रोज़ की काम-काज-संबंधिनी सीधी-सादी नीति कही है। इनकी कविता भी गूढ़ काव्यांगों को छोड़कर सर्वसाधारण को प्रसन्न करने-वाली है और वह नायिकाओं के ताक-झाँक, तथा दूर की कौड़ी को छोड़कर, नित्य के काम-काज और यथार्थ एवं सर्वप्रकारेण सच्ची बात कहनेवाली है। ऐसी हृदयग्राहिणी कविता रचने में बहुत कम कविजन समर्थ हुए हैं। इस कवि ने बड़ी ज़ोरदार रचना की है। यह कहता था कि यदि कोई काम करना उचित हो तो एक मिनट की देर न करके उसे तुरंत करना चाहिए। हर उचित बात के वास्ते यह कवि तुरंत कार्यारंभ होना चाहता है। इसकी कविता चाणक्य की भाँति वास्तविक काम-काज की है। हम इनको तोष की श्रेणी में रखते हैं। इनकी कविता के उदाहरणार्थ कुछ छंद नीचे लिखते हैं—

जाकी धन धरती हरी ताहि न लीजै संग ;
जो सँग राखे ही बनै तौ करि राखु अपंग।

तौ करि राखु अपंग भूलि परतीति न कीजै ;
सौ सौगंधै खाय चित्त में एक न दीजै ।
कहि गिरिधर कबिराय कबहुँ परतीति न वाकी ;
सत्नु सरिस परिहरिय हरिय धन धरती जाकी ॥ १ ॥
बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेइ ;
जो बनि आवै सहज मैं ताही मैं चित देइ ।
ताही मैं चित देह बात जोई बनि आवै ;
दुरजन हँसै ठठाय चित्त मैं खेद न पावै ।
कहि गिरिधर कबिराय यहै करु मन परतीती ;
आगे को सुख होइ समुझ बीती सो बीती ॥ २ ॥
साँईं अपने चित्त की भूलि न कहिए कोय ;
तब लगि मन मैं राखिए जब लगि काज न होय ।
जब लगि काज न होय भूलि कबहूँ नहिं कहिए ;
दुरजन हँसै ठठाय आपु सियरे ह्वै रहिए ।
कह गिरिधर कबिराय बात चतुरन के ताईं ;
करतूती कहि देति आपु जनि कहिए साईं ॥ ३ ॥

बहुत लोगों का मत है कि साईंवाले छंद इनकी स्त्री के बनाए हुए हैं, परंतु हम इस कथन को यथार्थ नहीं समझते, क्योंकि यह ध्यान में नहीं आता कि इनकी स्त्री में भी सब प्रकार से वे ही सब गुण वर्तमान हों जो इनमें थे। गिरिधर के छंदों में कहीं-कहीं अन्य लोगों ने भी अपने छंद मिला दिए हैं, इस कारण भी बहुत-से भद्दे छंद इनके नाम पर प्रचलित हो गए हैं। इन्होंने पाश्चात्य नीति को न छूकर पूर्वीय देशों में समादर पाई हुई परिपाटी की नीति कही है।

(७३२) नूरमुहम्मद

इस कविरत्न ने संवत् १८०० (११५७ हिजरी) के लगभग तीस वर्ष की अवस्था में दोहा-चौपाइयों में जायसी-कृत पद्मावती के ढंग पर

इंद्रावती [खोज १९०२]-नामक एक अच्छा प्रेम-ग्रंथ बनाया। इसका प्रथम भाग प्रायः १५० पृष्ठों में नागरीप्रचारिणी-ग्रंथ-माला में निकला है। इन्होंने वावैला आदि फ़ारसी शब्द और त्रिविष्टप, स्वांत, वृंदारक, स्तंबेरम आदि संस्कृत शब्द भी अपनी भाषा में रक्खे हैं। आपने गँवारी अवधी भाषा में कविता की है, परंतु फिर भी उसकी छटा मनमोहिनी है। इनकी रचना से विदित है कि ये महाशय काव्यांग जानते थे। एकाध स्थान पर इन्होंने कूट भी कहे हैं। इनका मन-फुलवारीवाला वर्णन बड़ा ही विशद बना है और योगी के अचेत होने एवं लट पर भी इनके भाव अच्छे बँधे हैं। इस कविवर ने स्वाभाविक वर्णन जायसी की भाँति ख़ूब विस्तार से किए हैं, और भाषा, भाव तथा वर्णन-बाहुल्य में अपनी कविता जायसी में मिला दी है। इन्होंने प्रीति का भी अच्छा चित्र दिखाया है। हम इन्हें तोप कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।

अब रानी चलि देखहु जोगी; कैसो राखत भेष बियोगी।
चंद नखत सँग पाँव उठाएउ; जाइ चकोरहि दरस देखाएउ।
इंद्रावति औ सखी सयानी; जोगी रूप बिलोकि लुभानी।

मन लोचन मों चंद दिसि रहिगा चितै चकोर;
चंद बिलोकत रहि गयउ निज चकोर की ओर।

जब लगि नैन चारि रहु चारी; राज कुवँर कहँ ठग अस मारी।
दामिनि चमक चाह अधिकाई; दुअऊ चितै रहे चित लाई।
बहेउ पवन लट पर अनुरागे; लट छितरानि पवन के लागे।
परी बदन पर लट सटकारी; तपा दिवस भै निसि अँधियारी।
मोहि परा दरसन कर चेरा; हना बान धन आँखिन केरा।
यह मुख यह तिल यह लट कारी; ये तो कहि कै गिरा भिखारी।
हा हा सखिन कहा पछिताई; काहे तपी परा मुरझाई।
नहिं मुरछा मुख देखि सयाना; लट परतहि मुख पर मुरझाना।

एक कहा लट सों मुख सोभा ; होति अधिक लखि मुरछा लोभा।
एक कहा लट जामिनि होई ; राति जानि जोगी गा सोई ।
एक कहा मुख तिल लट कारी ; संबुल भँवर अहह फुलवारी ।
एक कहा मुख ससिहि लजावा ; लट जोगी को मन अरुझावा ।
एक कहा लट नागिन कारी ; डसा गरल सो गिरा भिखारी ।
सबन बखाना जो जस बूझा ; इंद्रावति कहँ आगम सूझा ।
कहा तपी अस कहते आगे ; गरब न करु सुंदरि डर त्यागे ।
यह मुख यह तिल यह लट कारी ; अंत होइ इक दिन सब छारी ।

(७३२/१) कुँवर कुशल

ये दो भाई 'कुँवर कुशल' और 'कनक कुशल' जोधपुर के रहनेवाले जैन कवि थे। कच्छ के राजा लखपतिसिंहजी बड़े गुणग्राही थे। ये संवत् १७९६ में गद्दी पर बैठे। इन्होंने 'कुँवर कुशल' को आश्रय दिया। कुँवर कुशल ने इनके लिये 'लखपति यश सिंधु' नाम का एक बहुत बड़ा ग्रंथ बनाया।

इनकी कविता का उदाहरण इस प्रकार से है—

एक ओर देखियत बड़े-बड़े एक ओर,
हैं अमीर उमराउ बड़े परमान के ;
लाखन के पटा आए अरि को उड़ावैं जंग,
अचल पहार से अपार अभिमान के ।
कामदार मौजदार बकसी अनेक और,
पंडित विवेकी वैद जोइसी सुजान के ;
राजनि के राजा महाराजा लखपतिजू की,
सभा जैसी देखी तैसी काहू नहिं आन के ।

(७३३) ठाकुर

इस नाम के चार कवि हुए और ये सब उत्तम कविता करते थे। इनमें से सबसे अधिक प्रसिद्ध असनी के ठाकुर थे, जो ऋषिनाथ

के पुत्र और सेवक के पितामह थे। इसका हाल स्वयं सेवक ने एक छंद में लिखा है, जो छंद उनके वर्णन में दिया गया है। इनका ठाकुरशतक छोड़ कोई स्वतंत्र ग्रंथ हमने नहीं देखा, परंतु कदाचित् ऐसा कोई भी हिंदी-कविता-रसिक न होगा, जिसे इनके दो-चार स्फुट छंद न याद हों। इनका ठाकुरशतक भारतजीवन प्रेस में छपा है, जिसमें १०७ स्फुट छंद हैं। इनका सतसैया [खोज ११०४] एक दूसरा ग्रंथ है जिसमें सतसई की टीका है। ये महाशय जाति के ब्रह्मभट्ट (भाट) थे। सेवकजी अभी हाल तक वर्तमान थे। अनुमान से ठाकुरजी का समय संवत् १८०० के लगभग होगा। शिवसिंहसरोज में लिखा है कि ठाकुर के बहुत-से छंद कालिदास-कृत हज़ारा में मिलते हैं। यह ग्रंथ संवत् १७७५ में समाप्त हुआ। इन ठाकुर का समय चाहे जितनी दूर ले जाइए, वह संवत् १७७५ में इनके कवि होने तक नहीं पहुँच सकता, क्योंकि इनके पौत्र सेवक का जन्म संवत् १८७२ में हुआ था, सो यदि उस समय सेवक के पिता ४० वर्ष के भी हों और उनके जन्म-समय ठाकुर भी ४० वर्ष के हों, तो भी ठाकुर का जन्म-काल दूर-से-दूर संवत् १७९२ में पड़ता है। सो हज़ारा के छंद या तो ठाकुरराम के होंगे या किसी पंचम ठाकुर के। इनके वंश में पहले ही से कविता होती थी और इनके वंशधरों में कितने ही अच्छे कवि हो गए हैं, जिनका हाल सेवक के लेख में दिया जाएगा।

ठाकुर के सवैया-छंद बहुत ही अनमोल बनते थे। इनकी कविता का सबसे बड़ा गुण प्रेम है और यह इनके प्रायः सभी छंदों में वर्तमान है। इनका मत है कि बिना स्नेह के देह धारण वृथा है। इन्होंने लिखा है कि स्नेह का करना सहल है, परंतु उसका निभाना मुश्किल है। इन्होंने कितने ही स्थानों पर यह कहा है कि अब तो किसी-न-किसी प्रकार नेह को निभा रहे हैं। इनके छंदों में ठपैची

की मात्रा बहुत अधिक है। ये प्रायः ऐसी प्रेमोन्मत्ता नायिकाओं का वर्णन करते हैं कि जिन्हें समझाकर ठीक मार्ग पर लगाने का प्रश्न भी नहीं पैदा होता, वरन् वे स्वयं खुल्लमखुल्ला कहती हैं कि हम तो अब बिगड़ चुकीं, हमें क्या समझाती हो; जाओ अपना काम करो और ख़ुद ऐसे कुमार्गों से बचो। इनकी नायिकाओं को चौचँदहाइयों से बड़ी शिकायत रहती है। वे कहती हैं कि हम स्वतंत्र हैं; अपने लिये चाहे जो कुछ करें, फिर किसी दूसरे को क्या पड़ी है कि हमें दिक़ करे? इन्होंने प्रेम के बड़े ही बढ़िया छंद लिखे हैं।

उत्कृष्ट छंदों की मात्रा इस कवि की रचना में बहुत अधिकता से है। इन्होंने अपने छंदों में लोकोक्तियों को बहुत रक्खा है और इनके बहुतेरे पद स्वयं कहावत हो गए हैं। निर्मोहिनी एवं प्रेमोन्मत्ता नायिकाओं का इन्होंने बड़ा ही भड़कीला वर्णन किया है। प्रेम-विषयक ऐसे सच्चे और टकसाली छंद प्रायः किसी भी कवि की रचना में नहीं पाए जाते। इन्होंनें होली के भी बढ़िया छंद लिखे हैं। एक स्थान पर इन्होंने निर्धनता की निंदा में सधनों का बहुत बड़ा उपहास व्यंजित किया है। यह एक बड़ा ही ज़िंदादिल कवि था। जिस विषय का इसने वर्णन किया है, उसमें इसे पूर्ण तल्लीनता और सहृदयता थी, वरन् यह कवि बीती हुई सच्ची घटनाएँ-सी कहता गया है।

ठाकुर, सेवक, बोधा, घन आनंद, आलम और विहारी आदि ने प्रेम का ऐसा सच्चा वर्णन किया है, जैसा कि अन्य बहुत कम कवि कर सके हैं। ये लोग सच्चे प्रेमी थे। ठाकुर की भाषा भी बहुत सराहनीय है। इसमें मिलित वर्ण बहुत कम हैं। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की है। इस महाकवि ने मानुषीय प्रकृति और हृदयंगम भावों एवं चित्तसागर की तरंगों को बड़ी ही सफलता-

पूर्वक चित्रित किया है। ठाकुर का स्वभाव भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र से बहुत कुछ मिलता है। यथा—

सेवक सिपाही हम उन राजपूतन के,
　　दान युद्ध जुरिबे मैं नेकु जे न मुरके;
नीति दैनवारे हैं मही के महिपालन को,
　　कवि उनही के जे सनेही साँचे उर के।
ठाकुर कहत हम बैरी बेवकूफन के,
　　जालिम दमाद हैं अदेनिया ससुर के;
चोजन के चोर रस मौजन के पातसाहि,
　　ठाकुर कहावत पै चाकर चतुर के।

सेवक के भतीजे की लिखी हुई जीवनी से विदित होता है कि ठाकुर कवि काशी के बाबू देवकीनंदनजी के आश्रय में रहते थे और उनकी आज्ञानुसार इन्होंने सतसई की एक टीका भी बनाई, जिसका नाम सतसैया-वरणार्थ है। उदाहरणार्थ इनके कुछ छंद नीचे लिखते हैं, और स्थानाभाव से कहीं-कहीं कुल छंद न देकर केवल उनके कुछ अंश दिए हैं। हम इनको सेनापति की श्रेणी के कवि समझते हैं और उस श्रेणी में भी इनका पद बहुत अच्छा है।

उदाहरण—

बहती नदी पावँ पखारि लेरी।
　　×　　×　　×
रूप सो रतन पाय जोबन सो धन पाय,
　　नाहक गँवायबो गँवारन को काम है।
　　×　　×　　×
माया मिली नहिं राम मिले दुविधा मैं गए सजनी सुनो दोऊ।
　　×　　×　　×

जानि झुका-झुकी बेष छुपाय कै,
गागरि लै घर ते निकरी ती;
जानौं कहाँ ते कवै केहि बेर ते,
आय जुरे जितै होरी घरी ती।
ठाकुर दौरि परे मोहिं देखत,
भागि बची जु कहूँ सुघरी ती;
बीर जु द्वार न देहुँ केवार,
तौ मैं होरिहारन हाथ परी ती॥ १॥
रूप अनूप दई दियो तोहिं त,
मान किए न सयान कहावै;
और सुनौ यह रूप जवाहिर,
भाग बड़े बिरलै कोउ पावै।
ठाकुर सूम के जात न कोऊ,
उदार सुने सबही उठि धावै;
दीजिए ताहि देखाय दया करि,
जो चलि दूरि ते देखन आवै॥ २॥
वा निरमोहिनि रूप कि रासि न,
ऊपर के मन आनति ह्वैहै;
बारहि बार बिलोकि घरी-घरी,
सूरति तौ पहिंचानति ह्वैहै।
ठाकुर या मन की परतीति है,
जो पै सनेह न मानति ह्वैहै;
आवत हैं नित मेरे लिये,
इतनो तौ बिशेषहू जानति ह्वैहै॥ ३॥
अब का समुझावती को समुझै,
बदनामी के बीज त बोचुकी री;

तब तौ इतनो न विचार कियो,
अब जाल परे कहौ को चुकी री।
कबि ठाकुर या रस रीति रँगी,
परतीति पतिव्रत खो चुकी री;
अरी नेकी बदी जो बदी हुती भाल मैं,
होनी हुती सुतौ हो चुकी री॥ ४॥
कहिबे की कछू न कहा कहिए,
मग जोवत-जोवत ज्वै गयो री;
उन तोरत बार न लाई कछू,
तन ते वृथा जोबन ख्वै गयो री।
कबि ठाकुर कूबरी के बस ह्वै,
रस मैं बिसवासी बिसै गयो री;
मनमोहन को हिलिबो मिलिबो,
दिना चारि की चाँदनी ह्वै गयो री।

नाम—(७३३/१) अनंत फंदी।
रचनाकाल—१८००।
विवरण—महाराष्ट्र के कवि हैं। हिंदी में नाना फड़नवीस की प्रशंसा की है।

(७३४) शिव

इस नाम के कई कवि हो गए हैं, एक पयागपूर ज़िला बहरायच या देउतहागोंडा के रहनेवाले अरसेला बंदीजन थे और दूसरे असनी के। पहले का समय संवत् १८०० के आसपास है और दूसरे का १९३१ के लगभग। प्रथम के बनाए हुए रसिकविलास, अलंकारभूषण तथा पिंगल खोज में मिले हैं।

रसिकविलास-नामक नायिका-भेद का एक विशद ग्रंथ आकार में रसराज से कुछ बड़ा है। इसको पंडित युगुलकिशोरजी ने देखा

है। इनके कुछ स्फुट छंद भी मिलते हैं। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की है और वह प्रशंसनीय है। हम इन्हें तोपजी की श्रेणी का कवि समझते हैं।

उदाहरण—

सनि कै परागन सों रागन रचत भौंर,
हृै रहे मदंध वौर झौंरनि झुके परैं;
प्रगट पलासन हुतासन-से सुलगत,
बन ओर मन देत अंग-अंग पजरैं।
कहै शिव कवि आई विषम बसंत रितु,
ऐसे मैं बिदेस बातैं कोऊ हियरे धरैं;
देखौ नए पल्लव पवन लागे डोलैं,
मानौ चलत बिदेसिन बिदेस को मने करैं॥ १॥

गोरी की हथोरी शिव कवि मेहँदी के बिंदु,
इंद्रती को गन जाके आगे लगै फीको है;
अँगुठा अनूप छाप मानो ससि आयो आप,
कर कंज के मिलाप पात तजि ही को है;
आगे और आँगुरी अँगूठी नीलमनि युत,
बैठो मनो चाय भरो चेटुवा अली को है।
दबि कै छला सों कोमलाई सों ललाई दौरि,
जीतत चुनी को रँग छोर छिगुनी को है॥ २॥

दौरत लंक दुनै-दुनै जात डनै-डनै भौंर की भीर सतावै;
भारी अँध्यारी दुरौं जहँ जाय तहाँ मुख चंद तुरंत बतावै।
चोरमिहीचनी खेलिए क्यों शिव तैं सजनी हठि सौंह दिवावै;
दोस हमारेई अंगन को सखि हौस हिए की न पूजन पावै॥ ३॥

(७३५) शिव कवि द्वितीय

ये असनी-निवासी बंदीजन थे। इनका कोई ग्रंथ देखने में नहीं

आया, केवल स्फुट छंद भँड़ौवा इत्यादि देखे गए हैं। ये साधारण श्रेणी में गिने जा सकते हैं। प्रथम त्रैवार्षिक रिपोर्ट में १६३१-वाले शिव कवि का ग्वालियर-नरेश महाराजा दौलतराव के आश्रय में वागविलास-नामक ग्रंथ बनाना लिखा है।

(७३६) गुमान मिश्र

इन्होंने पिहानी के महमदीमहाराज अकबरअलीख़ाँ के आश्रय में संवत् १८०१ में श्रीहर्षकृत नैषधकाव्य का उल्था मनोहर छंदों में किया। इन्होंने अपने विषय में केवल इतना लिखा है कि आप मिश्र थे और सवसुख मिश्र के शिष्य थे। इनका केवल यही एक ग्रंथ हमारे देखने में आया है, जो १७८ पृष्ठों का है, परंतु मिश्र युगुल किशोरजी ब्रजराज ने इनके रचित आठ-सात ग्रंथ अलंकार, नायिका-भेद, काव्यरीति इत्यादि विषयों के सेठ जैदयालजी तअाल्लुक़दार के पास देखे, जो अभी तक प्रकाशित नहीं हुए हैं। इनकी कृष्णचंद्रिका खोज में मिली है। इन्होंने ब्रजभाषा में कविता की, परंतु दो-एक स्थान पर प्राकृतमिश्रित और संस्कृतमिश्रित भाषा भी लिखी है। तृतीय त्रैवार्षिक खोज से इनके अलंकारदर्पन (१८१८) तथा गुलालचंद्रोदय (१८२०)-नामक ग्रंथों का पता चलता है। इन्होंने अनुप्रास साधारणतया अधिक लिखे हैं। इनकी भाषा प्रशंसनीय है। ये महाशय बहुत शीघ्र छंद बदलते गए हैं। इनका अनुवाद ऐसा मनोहर बना है कि वह स्वतंत्र ग्रंथ के समान हो गया है। इनकी कविता में उत्कृष्ट छंद बहुत हैं। ये महाशय केशवदास की रीति पर चले हैं और छंदों की चाल में यह ग्रंथ रामचंद्रिका-सा बना है। हम इनको पद्माकर की श्रेणी में समझते हैं।

उदाहरण—

दिग्गज दबत दबकत दिगपाल भूरि,
धूरि की धुँधेरी सों अँधेरी आभा भान की;

धाम औ धरा को माल वाल अवला को अरि,
तजत परान राह चहत परान की।
सैयद समथ्थ भूप अलीअकवर दल,
चलत बजाय मारू दुंदुभी धुकान की;
फिर-फिर फनतु फनीस उलटतु ऐसे,
चोली खोलि ढोली ज्यों तमोली पाके पान की ॥ १ ॥

देस प्रवाहन की सरिता सव ओर वहैं बहुतै सरसानी;
कानन कोठि अगोठि कुलाचल भार भरी धरनी अकुलानी।
सूछम छाँह सरूप भई चित चाह नई निहिचै नियरानी;
सीतल आप पियैं ससि मैं पर हीतल की तव ताप बुझानी ॥ २ ॥

त्रिभुवन भूपन भूमि भूरि वर नगर सिरोमनि;
झलझलात छवि अच्छ-अच्छ लखि भापति धनि-धनि।
सोहत विकट कपाट जटित पुर द्वार फटिकमय;
मनौ रच्यो कैलास शंभु निज वास भक्त दय।
जनु सजत सुमेर प्रदच्छिना चहुँ सुवरन आकार पर;
सरवरि जहान को करि सकै सव नरवर नव नगर कर।

नाम—(७३७) दूलह।

जन्म-काल—१७७७।

जन्म-भूमि—वनपुरा।

ग्रंथ—(१) कविकुलकंठाभरण, (२) स्फुट छंद।

शिवसिंहसरोज में दूलह के जन्म का संवत् १८०३ वि० लिखा हुआ है, परंतु इनके पिता का जन्म-काल संवत् १८०४ वि० का दिया हुआ है और यह पिता-पुत्र का संवंध भी कथित है। इससे जान पड़ता है कि दूलह के कुटुंब का संवत् सरोज में वड़ी ही असावधानी से लिखा गया है। यदि संवत् १८०४ को दूलह का जन्म-काल न मानें, तो यह भी किसी प्रामाणिक रीति से नहीं

समझ पड़ता कि उनके जन्म का शुद्ध समय क्या है ? कवींद्र और दूलह के ग्रंथों में सन्-संवत् का कोई ब्योरा नहीं दिया गया है। दूलह ने कंठाभरण के अंत में केवल इतना लिखा है कि "इति श्री महाकवि कालिदासात्मज कवींद्र उदैनाथनंद कवि दूलहराय विरचिते कविकुलकंठाभरणे अलंकारनिरूपणं समाप्तः।" कालिदास ने बीजा-पुर और गोलकुंडा की लड़ाइयों का एक ही छंद में वर्णन किया है। ये लड़ाइयाँ संवत् १७४५ में हुई थीं। इस वर्णन को उन्होंने द्रष्टा की भाँति लिखा है। सरोज में भी उनका गोलकुंडा की लड़ाई में उपस्थित होना कहा गया है। फिर संवत् १७५० में उन्होंने वारवधू-विनोद बनाया। इन बातों से हमने अनुमान किया था कि उनका जन्म संवत् १७१० के लगभग हुआ होगा, क्योंकि चालीस-पैंतालीस वर्ष की अवस्था के प्रथम कोई कवि ऐसा राजमान्य मनुष्य मुश्किल से हो सकता है कि बादशाहों की लड़ाइयों में उनकी सेना के साथ हज़ारों मील पर ले जाया जावे। फिर कालिदास ऐसे बढ़िया कवि भी न थे कि बहुत शीघ्र ऐसी कवित्व शक्ति संपादित कर लेते कि थोड़ी अवस्था में उत्कृष्ट कविता करने लगते। कवींद्र ने बूँदी के राव राजा बुद्धसिंह की प्रशंसा के छंद कहे हैं। बुद्धसिंह ने संवत् १७६३ से संवत् १७९२ तक राज्य किया था, सो इसी समय में उनकी प्रशंसा के छंद बने होंगे। यदि कवींद्र का जन्म-काल संवत् १७३७ मानें, तो कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि इनके जन्म-काल में इनके पिता की अवस्था २७ वर्ष की पड़ती है और राव बुद्धसिंह के कवित्त बनाने के समय कवींद्रजी की अवस्था ४० वर्ष की निकलती है। इसी समय में दूलह का जन्म-काल मान सकते हैं। अतः अनुमान से दूलह का जन्म-काल संवत् १७७७ आता है। यह सब अनुमान-ही-अनुमान अवश्य है, परंतु यह ऐसा अनुमान नहीं है कि जिसमें २० वर्ष से अधिक की भूल हो। किसी उचित प्रमाण के अभाव में ऐसे अनुमान करने ही पड़ते हैं।

दूलह कवि कान्यकुब्ज त्रिपाठी ब्राह्मण थे। इनका स्थान बल-पुरा था। स्फुट छंदों के अतिरिक्त 'कविकुलकंठाभरण' इनका एक-मात्र ग्रंथ है। इसमें कुल इक्यासी छंद हैं। दूलह के स्फुट छंद बहुतायत से नहीं मिलते। कुल मिलाकर इनके एक सौ से अधिक छंद न मिलेंगे; परंतु इन्हीं थोड़े-से छंदों में इस कवि ने ऐसी मोहनी-सी डाल रक्खी है कि इसकी कविता पढ़कर यह कोई नहीं कह सकता कि दूलह के छंद न्यून हैं। क्या भाषा की उत्तमता, क्या कविता की प्रौढ़ता और क्या बहुतेरे अन्य गुण, सभी बातों में दूलह की कविता अत्यंत सराहनीय है। कंठाभरण में दूलह ने अलं-कारों का विषय कहा है, और कुल ८१ छंदों में उसे ऐसा दिखा दिया है कि कुछ कहा नहीं जाता। रीति के अधिकांश ग्रंथ कविता की प्रौढ़ता में कंठाभरण को नहीं पा सकते। दूलह ने लक्षण और उदाहरण एक ही छंद में ऐसे मिला दिए हैं कि कंठाभरण कंठ करने में बहुत ही सुगम, और काव्य में बहुधा ही सुहावना हो गया है। कंठाभरण का माहात्म्य दूलह ने निम्न दोहे में कहा है—

जो या कंठाभरण को कंठ करै चित लाय;
सभा मध्य सोभा लहै अलंकृती ठहराय।

यदि किसी ग्रंथ का माहात्म्य सच्चा है, तो इसका सबसे पहले है। वास्तव में कंठाभरण कंठाभरण ही है। यह ग्रंथ कंठ करने योग्य अवश्य है, और ऐसा रोचक है कि दो-चार बार पढ़ने से बिना परि-श्रम कंठ हो सकता है। कविता के न जाननेवाले को चाहे दो-चार स्थानों पर इसके अलंकार ध्यान में न आवें, परंतु एक बार समझ लेने से इसके लक्षण और उदाहरण बहुत ही साफ़ हो जाते हैं। यह ग्रंथ कुवलयानंद और चंद्रालोक के मत पर कहा गया है। दूलह कविता के आचार्य न होकर केवल अलंकार संबंधी आचार्य हैं और ऐसे आचार्यों में इनका पद बहुत ऊँचा है। किसी कवि ने

इनकी प्रशंसा में कहा है कि 'और बराती सकल कवि दूलह दूलह-राय।'. इस कवि के सब गुणों पर विचारकर हम इसे दास का समकक्ष कवि समझते हैं। इनकी भाषा और काव्य-प्रौढ़ता के उदाहरणार्थं हम केवल तीन छंद नीचे लिखते हैं। इनमें से प्रथम दो कंठाभरण के हैं और तृतीय स्फुट कविता का।

उपमान जहाँ उपमेयता लेय तहाँ पहिलोई प्रतीप गनो;
कुच-से कमनीय बने करि कुंभ कहै कवि दूलह लोक घनो।
उपमान जहाँ उपमेयता लै फिरि ताहि निरादरै दूजो भनो;
सखि नैनन को जनि जोम करौ इनके सम सोहत कंज बनो॥१॥

उरज उरज धसे बसे उर आड़ लसे,
बिन गुन माल गरे धरे छवि छाए हौ;
नैन कवि दूलह सुराते तुतराते बैन,
देखे सुने सुख के समूह सरसाए हौ।
जावक-सो लाल भाल पलकन पीक लीक,
प्यारे ब्रजचंद सुचि सूरज सोहाए हौ;
होत अरुनोत यहि कोत मति बसी आजु,
कौन घर बसी घर बसी करि आए हौ॥२॥

सारी की सरौटैं सब सारी मैं मिलाय दीन्हीं,
भूषन की जेब जैसे जेब जहियत है;
कहै कवि दूलह छिपाए रद छद मुख,
नेह देखे सौतिन की देह दहियत है।
बाला चित्रसाला ते निकरि गुरुजन आगे,
कीन्ही चतुराई सो लखाई लहियत है;
सारिका पुकारैं हम नाहीं हम नाहीं ए जू,
राम राम कहौ नाहीं-नाहीं कहियत है।

नाम—(७३८) कुमारमणि भट्ट। इनका ठीक नं० ६५१ है।

(७३६) सरयूराम पंडित

इस महात्मा का बनाया हुआ जैमिनि-पुराण हस्तलिखित हमारे पुस्तकालय में है। इसमें पंडितजी ने न अपना नाम और न ग्रंथ-समय लिखा है। इसमें इन्होंने प्रथम दो श्लोकों द्वारा वंदना की है; जिनमें द्वितीय में अपना नाम-मात्र लिख दिया है और फिर अपने विषय में कहीं कुछ भी नहीं कहा। आपने अंत में एक दोहे द्वारा यह कह दिया है कि यह ग्रंथ संवत् १८०५ में बनकर तैयार हुआ। हमारे पास जो प्रति है वह संवत् १८८५ में लिखी गई थी। इस ग्रंथ के अक्षर जोड़ने से आकार में यह ७६०० अनुष्टुप् छंदोंवाले ग्रंथ के बराबर आता है। इस हिसाब से श्रीमद्भागवत १८००० और वाल्मीकीयरामायण २४००० है।

इसमें ३६ अध्याय हैं, जिनमें परम मनोहर एवं विस्तीर्ण कथा वर्णन की गई है। प्रथम चार अध्यायों में यज्ञ की तैयारी, घोड़ा लाया जाना और सेना एकत्रित होना कहे गए हैं। पंचम अध्याय से घोड़ा छूटना और उसकी रक्षा में युद्ध वर्णित हैं। इसमें क्रम से अनुशील, नीलध्वज (इसमें अग्नि का युद्ध है), हंसध्वज (इसमें-सुरथ एवं सुधन्वा का प्रचंड युद्ध है), स्त्रीगण, सुवेग राक्षस (वकात्मज), अर्जुन-पुत्र बभ्रुवाहन (इसमें कराल युद्ध, संक्षिप्त रामायण, सीता-त्याग, लवकुश-जन्म, रामाश्वमेध में लवकुश का शत्रुघ्न, लक्ष्मण और भरत से युद्ध, तथा राम के मोहित होने पर वाल्मीकिजी द्वारा दल चेतन और सीताराम-मिलाप भी कहे गए हैं), मयूरध्वज (इसमें इसके पुत्र ताम्रध्वज का घोर युद्ध वर्णित है), परिशर्मा, चंद्रहास और समुद्रस्थ मुनि की कथाएँ अच्छी रीति से वर्णित हैं और अंतिम कथा को छोड़कर सबमें लोमहर्षण युद्ध कहे गए हैं। अंत में युद्धों का संक्षिप्त इतिहास कहकर कवि ने अर्जुन की स्वपुरयात्रा वर्णित की है। छत्तीसवें अध्याय में दो

ब्राह्मणों का झगड़ा, कृष्ण-द्वारिकागमन, सब राजाओं का अपने-अपने नगर जाना और कथा-माहात्म्य वर्णित हैं। इन सब विषयों के रुचिर वर्णन इस ग्रंथ में हैं। ये महाशय महात्मा तुलसीदास की रीति पर चले हैं। इनकी भाषा भी बैसवारी है। इन्होंने विशेषतया दोहा-चौपाइयों में रचना की है, परंतु अन्य छंदों की मात्रा इनकी कविता में बहुत है। उपमा, रूपक आदि इन्होंने अच्छे कहे हैं और सब विषयों को सफलता से लिखा है। हम इनको कथा-प्रासंगिक कवियों की छन्न श्रेणी में रखते हैं।

गुरुपद रज सम नहिं कछु लाहा ; चिंतामनि पाइय चित चाहा।
गुरुपद पंकज पावन रेनू ; कहा कलपतरु का सुर धेनू।
गुरुपदरज प्रिय पावन पाए ; अगम सुगम सब बिनहि उपाए।
गुरुपद रज अज हरिहर धामा ; त्रिभुवन विभव बिस्व बिसरामा।
गुरुपद रज अंजन दृग दीन्हे ; परत सुतत्व चराचर चीन्हे।
तबलगि जगजड़ जीव भुलाना ; परम तत्व गुरु जिय नहिं जाना।
श्रीगुरु चरन सरन सब पाई ; रह्यौ न कछु करनीय उपाई।
श्रीगुरु पंकज पाउँ पसाऊ ; श्रवत सुधामय तीरथराऊ।
सुमिरत होत हृदय असनाना ; मिटत मोहमय मन मल नाना।
व्यापक ब्रह्म चराचर अंतर ; ध्याइय परमहंस सिर ऊपर।

(७४०) शंभुनाथ मिश्र (सं० १८०६ वाले)

नागरीप्रचारिणी सभा के खोज से जान पड़ा कि इस नाम के कई कवि हुए हैं, जिनमें से तीन महाशय मिश्र भी थे। इनमें से एक संवत् १८०६, दूसरे १८६७ और तीसरे १९०१ में थे। संवत् १८०६-वाले शंभुनाथ ने रसकल्लोल, रसतरंगिनी और अलंकारदीपक-नामक तीन ग्रंथ बनाए। शेष दोनों कवियों के भी नाम यथा स्थान दर्ज हैं। संवत् १८०६ वाले शंभुनाथ असोथर ज़िला फ़तेहपुर के

राजा भगवंतराय खीची के यहाँ रहते थे। इनके अलंकारदीपक में दोहा अधिक हैं और शेष छंद कम। इस ग्रंथ में खीची नृप का यशगान बहुत है और वह बढ़िया भी है। इसमें कवि ने गद्य में टीका भी लिख दी है। इसका आकार रघुनाथ के रसिकमोहन का प्रायः आधा है। शेष दोनों ग्रंथों के विषय में हमें विशेष हाल ज्ञात नहीं हुआ है। इनकी कविता अत्यंत मधुर, सानुप्रास तथा सरस है। हम इन्हें पद्माकर की श्रेणी में रक्खेंगे।

उदाहरण—

आजु चतुरंग महाराज सेन साजत ही,
धौंसा की धुकार धूरि परी मुँह माही के;
भय के अजीरन ते जीरन उजीर भए,
सूल उठी उर में अमीर जाही ताही के।
बीर खेत बीच बरछी लै बिरुझानो इतै,
धीरज न रह्यो संभु कौन हू सिपाही के;
भूप भगवंत बीर ग्वाही कै खलक सब,
स्याही लाई बदन तमाम पातसाही के।

(७४१) तीर्थराज

इस नाम के दो कवि हुए हैं। एक ने तो संवत् १८०६ में समरसार भाषा किया और दूसरे ने १८३० में ६८ पृष्ठों का रसानुराग-नामक ग्रंथ बनाया। इन दोनों की कविता अनुप्रास-पूर्ण तथा सबल होती थी। हम इनको तोष कवि की श्रेणी में रक्खेंगे। समरसारकार डौंडियाखेरे के राजा अचलसिंह के यहाँ थे और बैसवाड़े के रहनेवाले थे।

समरसार के कर्ता का उदाहरण—

बीर बलवान बालपन ते अरिंदन को,
पठयो पताल पाय तम को न लेस है;

जाको राज राजत सुमन सब साधु जन,
सुमन सरोज कैसे सरस सुभेस है।
सुंदर बिलंद भाल पूरन प्रताप जाको,
जाकी ओर देखे और सूझत न बेस है;
फूल्यो चहुँ ओर देस देसनि मैं तेज पुंज,
अचल नरेस मानो दूसरो दिनेस है।

(७४२) भगवंतराय खीची

आप असोथर ज़िला फ़तेहपुर के एक प्रसिद्ध राजा एवं सुकवि थे। इनका कोई ग्रंथ हम ने नहीं देखा। सरोज में इनके विषय में लिखा है कि "सातौ कांड रामायण कवित्तों में महा अद्भुत रचना और कविताई के साथ बनाया है।" हमें इनके रचित हनुमानजी के ५० स्फुट छंद मिले हैं। शायद ये उसी रामायण के हों। खोज में इनका समय १८०६ दिया है, और इनका एक ग्रंथ हनुमत्पचीसी लिखा है, जिसका संवत् १८१७ कहा गया है। ये महाशय कवियों के कल्पवृक्ष थे। सैकड़ों कवियों ने इनकी प्रशंसा की है, जिनमें एक ने इनके मृत्यु पर यह भी कहा है कि 'भूप भगवंत सुरलोक को सिधारो आजु, आजु कवि गन को कलपतरु टूटि गो।' इनकी कविता उत्कृष्ट, सानुप्रास और ज़ोरदार होती थी। हम इनको छत्र कवि की श्रेणी में समझते हैं।

उदाहरण—

सुख भरिपूरि करै दुखन को दूरि करै,
जीवन समूरि सो सजीवन सुधार की;
चिंता हरिबे को चिंतामनि-सी बिराजै,
कामना को कामधेनु सुधा संजुत सुमार की।
भनै भगवंत सूधी होत जेहि ओर देव,
साहिबी समृद्धि देखि परत उदार की;

जन मन रंजनी है गंजनी बिथा की,
भयभंजनी नजरि अंजनी के ऐंड़दार की ॥ १ ॥
बिदित बिसाल ढाल भालु कपि जाल की है,
ओट सुरपाल की है तेज के तुमार की ;
जाही सों चपेटि कै गिराए गिरि गढ़ जासों,
कठिन कपाट तोरे लंकिनी सुमार की।
भनै भगवंत जासों लागि-लागि भेंटे प्रभु,
जाके त्रास लखन को छुभिता खुमार की ;
ओड़ै ब्रह्म अस्त्र की अवाती महाताती बंदौ,
जुद्ध मदमाती छाती पवनकुमार की।

नाम—(७४३) मल्ल।

कविताकाल—१८०७।

विवरण—खीची भगवंतराय असोथरवाले के यहाँ थे। ये महाशय तोष कवि की श्रेणी के कवि थे। याज्ञिकत्रय दोहासार-नामक पुस्तक के आधार पर इस कवि का समय १७२० के लगभग मानते हैं।

उदाहरण—

आजु महा दीनन को सूखि गो दया को सिंधु,
आजुही गरीबन को सब गथ लूटि गो ;
आजु दुजराजन को सकल अकाज भयो,
आजु महराजन को धीरजहु छूटि गो।
मल्ल कहै आजु सब मंगन अनाथ भए,
आजुही अनाथन को करम सो फूटि गो ;
भूप भगवंत सुरधाम को पयान कियो,
आजु कबिगन को कलपतरु टूटि गो।

नाम—(७४४) भूधर ।

समय—१८०६ ।

विवरण—भगवंतराय राजा असोथरवाले के यहाँ थे। ये तोष की श्रेणी के कवि थे। कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया, पर स्फुट छंद संग्रहों में देखे गए हैं।

उदाहरण—

जोबन उजारी प्यारी बैठी रंग रावटी मैं,
मुख की मरीची सो दरीची बीच झलकैं;
भूधर सुकवि भौंहैं सोहैं मन मोहै खरी,
खंजन-सी आँखैं मन रंजन-सी पलकैं।
सीस फूल बेना बेंदी बीर अरु वंदन की,
चंदन की चरचा की चारु छवि छलकैं;
कोर वारी चूनरी चकोर वारी चितवनि,
मोर वारी बेसरि मरोर वारी अलकैं ॥ १ ॥

(७४५) शिवसहायदास

ये महाशय जैपूरनिवासी भद्र कवि थे। इन्होंने संवत् १८०६ में शिव-चौपाई और लोकोक्ति-रसकौमुदी-नामक दो सुंदर ग्रंथ बनाए। द्वितीय ग्रंथ में पखाने (उपाख्यान) हैं और उन्हीं को मिलाकर कवि ने नायिका-भेद वर्णन किया है। इन्होंने ३०० लोकोक्तियों का ५६ पृष्ठों में वर्णन किया है। इनकी कविता लोकोक्तियों के कारण बड़ी मनमोहनी है। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रक्खेंगे।

तिय तन झलक्यो जोबन भूप; चल्यो चहत सिसुता को रूप।
कहैं पखानो जे बुधिधाम; उतर्यो सहना मरदक नाम ॥१॥
करौ रुखाई नाहिन बाम; बेगिहि लै आऊँ घनस्याम।
कहै पखानो युत अनुराग; बाजी ताँत कि बूझ्यो राग ॥२॥

बोलै निठुर पिया बिनु दोस ; आपुहि तिय बैठी गहि रोस ।
कहै पखानो जेहि गहि मोन ; बैल न कूद्यो कूदी गोन ॥३॥

नाम—(७४६) रसिक अली ।

ग्रंथ—(१) मिथिलाविहार, (२) अष्ट-याम (७७ पद कवित्त आदि), (३) होरी। [प्र० त्रै० रि०] (४) षट्ऋतु पदावली।

समय—१८१० ।

विवरण—मिथिला-विहार में रामचंद्रजी का जनकपुर में आगमन और उनकी शोभा का वर्णन विविध छंदों में है। इसमें कुल ४२३ छंद हैं। कविता प्रशंसनीय है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है। हमें प्रथम दोनों ग्रंथ दरबार छतरपुर में देखने को मिले ।

माई घन गरजन लगत सुहाई ।
वन प्रमोद मोरन की सोरा चहुँ दिसि बन हरिआई ;
रिमि झिमि बरसत दमकत दामिनि घन अँधियारी छाई ।
झिल्ली रव चातक रट कोकिल छिनछिन कुहक मचाई ;
तरद्रुम बकुल रसाल कदंबन सोभा रहि अधिकाई ॥ १ ॥

सोहै सीस प्यारी जू के चंद्रिका जटित नग,
जगमग जोति भानु कोटि उजियारी है ;
रतन किरीट राजै राघव सुजान सीस,
उदित बिदित कोटि तरुन तमारी है ।
दामिनी सघन घन बरन बिराजैं दोऊ,
नील पीत बसननि जटित किनारी है ;
रसिक अली जू प्यारे राजत सिंगार कुंज,
सुखमा अमित पुंज छबि मोदकारी है ॥ २ ॥

नाम—(७४७) हित रामकृष्ण, कालिंजर-निवासी चौबे । [प्र० त्रै० रि०]

ग्रंथ—(१) विनयपचीसी, (२) विनय-अष्टक, (३) विष्णु-अवतार-चरित्र, (४) रासपंचाध्यायी, (५) वज्रनाभ की कथा, (६) रुक्मिणी-मंगल, (७) अष्टक, (८) अवतारचेतावनी, (९) वृषभान की कथा, (१०) दूसरा रुक्मिणी मंगल, (११) नायिका-भेद दोहा, (१२) स्फुट कवित्त, (१३) स्फुट पद, (१४) श्रीकृष्णविलास, (१५) ग्वालपहेली लीला, (१६) प्रतीत-परीक्षा। प्रथम त्रैवार्षिक रिपोर्ट में कृष्णविलास का रचना-काल १८१७ लिखा है।

समय—१८१०।

विवरण—इनके ये सब ग्रंथ हमने दरबार छतरपूर में देखे हैं। इनमें काव्य-गरिमा साधारण श्रेणी की है। समय जाँच से लिखा गया है। "आप पन्ना-नरेश महाराजा हिरदेशाह के समय से राजा अमानसिंह के समय तक कालिंजर के क़िलेदार रहे। यह राधा-वल्लभीय थे।

पंकज बरन रवि छबि के हरन चारि,
फल के फरन देवतरु सम गाइए;
विधि के सरन मेटैं जिय की जरनि गावै,
धरा के धरन सदा हिय मैं रमाइए।
जन पै ढरन दुख दारिद हरन,
असरन के सरन राम कृष्ण उर ध्याइए;
संकट हरन भवनिधि के तरन सब,
सुख के करन गुरु चरन मनाइए॥ १॥

इस समय के अन्य कविगण

नाम—(७४७/१) दत्त, जाजमऊ-वासी।

ग्रंथ—लालित्य लता।

रचनाकाल—१७६१। [खोज १६०३]

नाम—(७४८) प्रेमदास राधावल्लभी।

ग्रंथ—(१) अरिल्लन, (२) हरिवंस चौरासी, [प्र० त्रै० रि०] (३) रससार संग्रह, (४) प्रेमदास की बानी।

रचनाकाल—१७६१।

विवरण—हितहरिवंश के अनुयायी।

नाम—(७४८/१) चुन्नीलाल।

नाम—(७४८/२) मथुरा भट्ट।

नाम—(७४८/३) रामराय।

ग्रंथ—राधा गोविंदसार।

रचनाकाल—१७६१।

विवरण—जयपूर दरबार में थे। इन लोगों ने यह ग्रंथ श्रीकृष्ण भट्ट नं० ७४६ के साथ मिलकर बनाया। [तृ० त्रै० रि०]

नाम—(७४६) श्रीकृष्ण भट्ट।

ग्रंथ—(१) दुर्गाभक्तितरंगिनी, [प्र० त्रै० रि०] (२) साँभर युद्ध। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६१।

विवरण—जयपुर दरबार में थे।

नाम—(७५०) कृपाराम।

ग्रंथ—भाषाज्योतिषसार।

रचनाकाल—१७६२।

विवरण—शाहजहाँपुर के कायस्थ।

नाम—(७५०/१) घनश्याम।

ग्रंथ—टीका बिहारी सतसई।

रचनाकाल—१७६२। [च० त्रै० रि०]

नाम—(७५१) ज़ोरावरसिंह महाराजा।

ग्रंथ—फुटकर।

रचनाकाल—१७६२ से १८०८ तक।

नाम—(७५२) दशरथ राय महापात्र।

ग्रंथ—नवीनाख्य (नायिका-भेद)। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६२।

विवरण—असनी के सुप्रसिद्ध नरहरि महापात्र के वंशज।

नाम—(७५३) हरि जू ब्राह्मण, आज़मगढ़।

ग्रंथ—अमरकोश भाषा पृष्ठ १३२।

रचनाकाल—१७६२। [द्वि० त्रै० रि०]

विवरण—आश्रयदाता आगढ़ाधीश आज़मखाँ।

नाम—(७५४) शाह जू पंडित, ओरछा।

ग्रंथ—(१) लक्ष्मणसिंहप्रकाश, (२) बुंदेलवंशावली। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६४।

विवरण—टहरौली के जागीरदार लक्ष्मणसिंह इनके आश्रयदाता थे।

नाम—(७५५) जैतराम।

ग्रंथ—(१) सदाचारप्रकाश पृष्ठ २१२। [द्वि० त्रै० रि०] (२) भगवद्गीता भाषा। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६५।

नाम—(७५६) दयाराम त्रिपाठी।

ग्रंथ—(१) अनेकार्थ, (२) सामुद्रिक [प्र० त्रै० रि०]।

जन्म-संवत्—१७६६।

रचनाकाल—१७६५।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(७५६/१) दौलतराम, खंडेलवाल ।

ग्रंथ—(१) क्रियाकोश (१७९५), (२) पद्मपुराण की बचनिका, (३) आदिपुराण की बचनिका, (४) हरिवंश-पुराण की बचनिका ।

रचनाकाल—१७९५ ।

विवरण—बसवा-निवासी आनंदराम के पुत्र थे ।

नाम—(७५६/२) देवीसिंह, नरवर-वासी ।

ग्रंथ—उपदेश सिद्धांत रत्नमाला ।

रचनाकाल—१७९६ ।

नाम—(७५७) देवीचंद ।

ग्रंथ—हितोपदेश भाषा ।

रचनाकाल—१७९७ के पूर्व ।

नाम—(७५७/१) विष्णु सखी ।

ग्रंथ—हिताष्टक । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७९७ के लगभग ।

नाम—(७५८) गोपाल भट्ट ब्राह्मण, गोकुलवाले ।

ग्रंथ—(१) रामअलंकार, (२) पिंगल-प्रकरण । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७९७ ।

विवरण—ओरछा-नरेश राजा पृथ्वीसिंह के यहाँ थे ।

नाम—(७५९) देव कवि ।

ग्रंथ—रागमाला । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७९७ ।

विवरण—अमीरख़ाँ को अपना आश्रयदाता बतलाते हैं ।

नाम—(७६०) विजयाभिनंदन, बुँदेलखंडी ।

रचनाकाल—१७९७ ।

विवरण—महाराज छत्रसाल बुँदेला के यहाँ थे। संभव है कविता-काल कुछ पहले भी प्रारंभ होता हो।

नाम—(७६१) वीरभानु।

ग्रंथ—राजरूपक।

रचनाकाल—१७६७।

नाम—(७६२) रुद्रमणि मिश्र।

रचनाकाल—१७६७।

विवरण—जुगुलकिशोर भट्ट के यहाँ थे।

नाम—(७६३) सुखलाल ब्राह्मण अंटेर, भदावर।

ग्रंथ—वैद्यकसार। [द्वि० त्रै० रि०।]

रचनाकाल—१७६७।

विवरण—जुगुलकिशोर तथा गोंडा-नरेश के यहाँ रहे। साधारण श्रेणी।

नाम—(७६४) संत जीव।

रचनाकाल—१७६७।

नाम—(७६५) गोविंद।

ग्रंथ—कर्णाभरण।

रचनाकाल—१७६८।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(७६६) नौने व्यास।

ग्रंथ—धनुषविद्या। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१७६८।

विवरण—राजा दुर्जनसिंह जागीरदार बँधौरा के यहाँ थे।

नाम—(७६६/१) रूपचंद।

ग्रंथ—समयसार की टीका।

रचनाकाल—१७६८।

नाम—(७६७) शिवनाथ, पन्ना, बुँदेलखंड।
ग्रंथ—रसरंजन।
रचनाकाल—१७६८।
विवरण—साधारण श्रेणी। छत्रसालात्मज महाराजा जगतराज के यहाँ थे।
नाम—(७६७/१) श्रीकृष्ण।
ग्रंथ—तिमिरदीप। [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७६८।
विवरण—लोकमणि मिश्र के पुत्र थे।
नाम—(७६८) नंदव्यास।
ग्रंथ—(१) मानलीला, (२) यज्ञलीला [प्र० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७६६ के पूर्व।
नाम—(७६६) कवींद्र नरवर, बुँदेलखंडवाले।
ग्रंथ—रसदीप।
रचनाकाल—१७६६। [खोज १६०४]
नाम—(७७०) पंचमसिंह कायस्थ, ओरछा।
ग्रंथ—नौरता की कथा। [प्र० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१७६६।
विवरण—दोहा-चौपाई। मधुसूदनदास से न्यून। एक ग्रंथ स्वप्नाध्याय गद्य छत्रपूर में देखा। हितहरिवंश की गद्दी में किसी ने सं० १८०० में रचा।
नाम—(७७१) अलाकुली।
ग्रंथ—स्फुट।
रचनाकाल—१८०० के लगभग।
विवरण—एक बार भरतपूर के सूरजमल से लड़े थे।
नाम—(७७१/१) इंद्रमणि गोस्वामी।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० के लगभग ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य ।

नाम—(७७२) कल्यान पुजारी राधावल्लभी ।

ग्रंथ—(१) बोल, (२) कल्यान पुजारी की बानी ।

रचनाकाल—१८०० (अंदाज़ी) ।

विवरण—ग्रंथ छत्रपूर में देखा । साधारण श्रेणी ।

नाम—(७७२/१) किशोरीलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—वाणी ।

रचनाकाल—१८०० के लगभग ।

विवरण—गोस्वामी रूपलाल के पुत्र थे ।

नाम—(७७२/२) केलिदास ।

ग्रंथ—चौरासी की टीका ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभी । आप चाचा वृंदावनदास के साथ रहकर लेखक का काम करते थे ।

नाम—(७७३) कुंजलाल राधावल्लभीय आचार्य । इनका ठीक नं० (१६१/१) है ।

नाम—(७७३/१) कृपासिंधुलालजी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० के लगभग ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७७३/२) गुलाल साहिब ।

ग्रंथ—बानी । [पं० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७७३/३) गोपीलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७७३/४) घनश्यामलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० (अंदाज़ी) ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७७३/५) चतुरशिरोमणिलाल ।

ग्रंथ—(१) स्फुट पद, (२) हिताष्टक, (३) हरिवंशाष्टक ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७७३/६) जयवल्लभ गोस्वामी ।

ग्रंथ—(१) अष्टपदी, (२) बानी ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य ।

नाम—(७७४) तालिबशाह ।

जन्मकाल—१७६८ ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—साधारण श्रेणी । इनकी कविता खड़ी-बोली मिश्रित है ।

नाम—(७७४/१) दयासिंधुलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७७५) नंदलाल ।

जन्म-काल—१७७४ ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(७७६) नवलदास वृंदावन ।

ग्रंथ—(१) बानी, (२) भागवत दशम स्कंध भाषा । [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—ये भगवत रसिक के चेला नागरीदास के शिष्य थे। [खोज १६०५] । इनकी बानी के ५ पृष्ठ हमने दरबार छत्रपूर में देखे । हीन श्रेणी ।

नाम—(७७७) नारायण ।

ग्रंथ—हरिश्चंद्र की कथा । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७७८) नित्यकिशोर, गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० (अंदाज़ी) ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य ।

नाम—(७७९) पुंडरीक बुँदेलखंडी ।

जन्म-काल—१७६६ ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(७८०) वल्लभ रसिक गदाधर भट्ट संप्रदाय के ।

ग्रंथ—(१) स्फुट पद, (२) बानी ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—बानी छत्रपूर में देखी । [च० त्रै० रि०] में इनका जुगलसनेह विनोद-नामक ग्रंथ मिला है ।

नाम—(७८०/१) व्रजभूषण गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० अंदाजी ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७८०/२) व्रजमोहन गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य ।

नाम—(७८१) व्रजराज, बुँदेलखंडी ।

जन्म-काल—१७७५ ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(७८१/१) व्रजलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य । [खोज १९०५]

नाम—(७८२) फ़तेहसिंह कायस्थ, पन्ना ।

ग्रंथ—(१) दस्तूरमालिका, (२) मोहरम (ज्योतिष), (३) माताचंद्र, (४) वृत्तचेतावनी, (५) दफ़्तर-नामा, (६) गुण प्रकाश ।

रचनाकाल—१८०० के लगभग ।

विवरण—क़ायदा हिसाब-किताब रचा । हीन श्रेणी । कोंच ज़िला जालौन के निवासी थे । पन्ना-नरेश सभासिंह इनके आश्रयदाता थे ।

नाम—(७८३) भीकचंद मथेन जती ।

ग्रंथ—फुटकर काव्य ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७८४) महताब ।

ग्रंथ—नखशिख ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—साधारण श्रेणी । इन्होंने हिंदूपति की प्रशंसा की है, जिनके यहाँ दास कवि थे । इन्होंने उन्हें राजा के स्थान पर बादशाह लिख दिया है ।

नाम—(७८५) माईदास मुंशी ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७८६) मीर अहमद, बिलग्राम ।

ग्रंथ—स्फुट ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७८६/१) मुकुंदलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीयाचार्य ।

नाम—(७८७) मूरतिसिंह लाजी, बालाघाट ।

ग्रंथ—(१) दुर्गापाठ भाषा, (२) तीर्थों के कवित्त ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७८८) रतनबीर भानु ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७८९) रसचंद्र ।

ग्रंथ—स्फुट काव्य ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—भक्त कवि थे ।

नाम—(७९०) रसिकानंदलाल ।

ग्रंथ—स्फुट पद।
रचनाकाल—१८०० के लगभग।
विवरण—साधारण श्रेणी, राधावल्लभी।
नाम—(७६१) लालमुकुंद बनारसी।
ग्रंथ—लालमुकुंदविलास।
जन्म-काल—१७७४।
रचनाकाल—१८००।
विवरण—साधारण श्रेणी। [खोज १६०३]
नाम—(७६२) लाल गिरिधरजी।
ग्रंथ—स्फुट पद। नायिका-भेद पदों में।
रचनाकाल—१८०० के लगभग।
नाम—(७६२/१) श्यामलालजी।
ग्रंथ—स्फुट पद।
रचनाकाल—१८००।
विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य।
नाम—(७६२/२) सदानंद गोस्वामी।
ग्रंथ—स्फुट पद।
रचनाकाल—१८००।
विवरण—राधावल्लभीयाचार्य।
नाम—(७६३) साधु पृथ्वीराज।
रचनाकाल—१८००।
नाम—(७६४) सावंतसिंह।
रचनाकाल—१८००।
नाम—(७६४/१) सुखलाल गोस्वामी।
ग्रंथ—(१) स्फुट पद, (२) भाषामृत, (३) रासपंचाध्यायी की टीका, (४) चौरासी की टीका।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य ।

नाम—(७६५) सेवक गुलालचंद ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७६६) सेवक प्रेमचंद ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७६७) सेवक शिवचंद ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७६८) हम्मीरदान चारण ।

ग्रंथ—(१) गुणनाम माला, (२) स्फुट ।

जन्म-काल—१७७६ ।

रचनाकाल—१८०० ।

नाम—(७६६) हितराम ।

रचनाकाल—१८०० के लगभग ।

नाम—(८००) हितलाल गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० के लगभग ।

विवरण—साधारण श्रेणी । राधावल्लभीय संप्रदाय के आचार्य ।

नाम—(८००/१) हितवल्लभ गोस्वामी ।

ग्रंथ—स्फुट पद ।

रचनाकाल—१८०० ।

विवरण—राधावल्लभीय संप्रदायाचार्य ।

नाम—(८०१) पीतांबर ।

ग्रंथ—जैमिनि पुराण भाषा ।

रचनाकाल—१८०१ । [खोज १६०५]

विवरण—मधुसूदनदास श्रेणी ।

नाम—(८०२) विरजूबाई ।
रचनाकाल—१८०१ ।
विवरण—चारणी स्त्री कवि ।
नाम—(८०३) विष्णु गिरि ।
ग्रंथ—सुगमनिदान । [खोज १९०२]
रचनाकाल—१८०१ ।
नाम—(८०४) वीरन कवि, जोधपुर ।
रचनाकाल—१८०१ ।
नाम—(८०५) सुखसागर उपनाम सदासुख ।
ग्रंथ—(१) भ्रमरगीत, (२) बारामासा, (३) विष्णुपुराण भाषा, (४) राधाविहार ।
रचनाकाल—१८०१ से १८८२ तक ।
विवरण—इनकी कविता देखने में नहीं आई ।
नाम—(८०५/१) भीखा साहिब ।
ग्रंथ—शब्दावली । [पं० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८०२ ।
नाम—(८०६) जुगुलकिशोर भट्ट दिल्ली व कैथाल, ज़िला करनाल ।
ग्रंथ—(१) अलंकारनिधि, (१८०५) [द्वि० त्रै० रि०] (२) किशोरसंग्रह ।
रचनाकाल—१८०३ ।
विवरण—साधारण श्रेणी । इन्हें मोहम्मदशाह ने राजा की पदवी दी ।
नाम—(८०७) तालिबअली (रसनायक), बिलग्राम ।
ग्रंथ—स्फुट ।
रचनाकाल—१८०३ ।

नाम—(८०८) ब्रह्मनाथ, साँडी, ज़िला हरदोई।

रचनाकाल—१८०३।

नाम—(८०९) रामप्रसाद बंदीजन, बिलग्रामी।

ग्रंथ—(१) जैमिनिपुराण भाषा, (२) जुगल पद। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०३।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८१०) हिम्मतबहादुर गोसाईं, बाँदा।

ग्रंथ—स्फुट।

रचनाकाल—१८०३ से १८९७ तक।

विवरण—ये बड़े बहादुर और कवियों के सहायक हुए हैं। इनके नाम पर हिम्मतबहादुर विरदावली कवि पद्माकर ने बनाई।

नाम—(८११) दत्तप्राचीन, गयावासी।

ग्रंथ—(१) सज्जनविलास, (२) वीरविलास, (३) व्रजराजपंचाशिका (१८०८)। [पं० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०४।

विवरण—कुंवर फ़तेहसिंह गयावाले के यहाँ थे। [खोज १९०३]

नाम—(८१२) धौंकलसिंह, न्यावा, ज़िला रायबरेली।

ग्रंथ—रमलप्रश्न भाषा।

जन्म-काल—१७६०।

रचनाकाल—१८०५।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(८१३) मधुनाथ।

जन्म-काल—१७८०।

रचनाकाल—१८०५ ।

नाम—(८१३/१) मंसाराम ।

ग्रंथ—वियोगाष्टक । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०५ ।

विवरण—हरिवंश भट्ट नं० (६२२/१) के पुत्र तथा हरप्रसाद नं० (१६५२/१) के पुत्र थे ।

नाम—(८१३/२) रत्न कवि, काशीवासी ।

ग्रंथ—प्रेमरत्न ।

रचनाकाल—१८०५ ।

नाम—(८१४) सरदारासिंह ।

ग्रंथ—सुरतिरंग ।

रचनाकाल—१८०५ । [खोज १९०२]

नाम—(८१५) कृपाराम, नारायनपूर, ज़िला गोंडावाले ।

ग्रंथ—(१) भागवत भाषा (१८१५) [खोज १९०५] (दोहा-चौपाई आदि में), (२) माधव सुलोचना-चंपू, (३) मुहम्मद ग़िज़ाली किताब, [खोज १९०२] (४) भाष्यप्रकाश (१८०८) [खोज १९०४], (५) चित्रकूट-माहात्म्य । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०६ ।

विवरण—इनकी भागवत हमने देखी है । वह बहुत बड़ा ग्रंथ है, पर उसकी कविता साधारण है ।

नाम—(८१६) मंगल मिश्र । इनका ठीक नं० (१२६३/१) है ।

नाम—(८१७) राजाराम श्रीवास्तव खरे कायस्थ, बुँदेलखंड ।

ग्रंथ—(१) श्रृंगारकाव्य, (२) यम द्वितीया की कथा । [प्र० त्रै० रि०]

जन्म-काल—१७७८ ।

रचनाकाल—१८०६।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(८१८) शुभकरण। इनका नाम नं० ६६८ पर आ चुका है।

नाम—(८१६) रामानंद।

ग्रंथ—(१) रसमंजरी, [द्वि० त्रै० रि०] (२) राम रचा। [खोज १६००]

रचनाकाल—१८०७ के पूर्व।

नाम—(८२०) कलानिधि नवीन।

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८२१) देव मुकुंदलाल।

ग्रंथ—फ़र्ज़ंद खेल।

रचनाकाल—१८०७। [खोज १६०४]

नाम—(८२२) नेवाज ब्राह्मण, बुँदेलखंडी।

ग्रंथ—अखरावती। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—साधारण श्रेणी। ये महाशय असोथर के राजा भगवंतराय खीची के यहाँ थे।

नाम—(८२३) ब्रजलाल चौबे, (ब्रज) मथुरा।

ग्रंथ—स्फुट।

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—ये महाराज माधवसिंह जैपूर-नरेश के आश्रय में थे। साधारण श्रेणी।

नाम—(८२४) भोलन झा, दरभंगा-निवासी।

ग्रंथ—हरिवंश।

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—मैथिली भाषा में बनाया।

नाम—(८२४/१) रसजानीदास।

ग्रंथ—भागवत भाषा। [खोज १६०१]

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—भक्तमाल के टीकाकार प्रियादास के शिष्य थे।

नाम—(८२५) रंगलाल।

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—साधारण श्रेणी। भरतपूर के महाराजा सूरजमल के यहाँ थे।

नाम—(८२६) शंभुनाथ त्रिपाठी।

ग्रंथ—(१) वैतालपचीसी भाषा [प्र० त्रै० रि०] (१८०६), (२) मुहूर्तचिंतामणि भाषा, [प्र० त्रै० रि०] (१८०३) (३) जातकचंद्रिका, [प्र० त्रै० रि०] (४) प्रेमसुमनमाल। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०६।

विवरण—राजा अचलसिंह वैस, डौंड़ियाखेरा के यहाँ थे।

नाम—(८२७) श्यामलाल, जहानाबाद।

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—राजा भगवंतराय खीची के यहाँ थे।

नाम—(८२८) सारंग।

रचनाकाल—१८०७।

विवरण—राजा भगवंतराय खीची, असोथरवाले के यहाँ थे।

नाम—(८२६) ऋषिकेश (आगरा)।

ग्रंथ—(१) स्वरोदय भाषा, [प्र० त्रै० रि०] (२) योग-साधन। [च० त्रै० रि०]।

रचनाकाल—१८०८।

नाम—(८३०) गजसिंह।

ग्रंथ—(१) गजसिंहविलास, (२) गजसिंह के कवित्त।

रचनाकाल—१८०८ से १८४४ तक।

नाम—(८३१) निधान ब्राह्मण।

ग्रंथ—(१) शालिहोत्र, (२) वसंतराज भाषा [१८३२]।

रचनाकाल—१८०८।

विवरण—राजा अलीअकबरख़ाँ के यहाँ थे।

नाम—(८३२) नेतासिंह।

ग्रंथ—सारंगधर संहिता।

रचनाकाल—१८०८।

विवरण—पिता का नाम नाथनजी भाट था। [खोज १६००]

नाम—(८३३) बखता राठौर (बखतेस), (बखतसिंह महाराज जोधपुर)।

ग्रंथ—फुटकर भजन।

रचनाकाल—१८०८।

विवरण—अहमदशाह बादशाह के कृपापात्र थे।

नाम—(८३४) बदन, (बाँदा) गिरवाँ तहसील।

ग्रंथ—रसदीपक। [खोज १६०५]

रचनाकाल—१८०८।

विवरण—पृथ्वीसिंह गढ़ाकोटा के यहाँ थे। तोष कवि की श्रेणी।

नाम—(८३४/१) वेदव्यास।

ग्रंथ—भूगोल पुराण। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८०८।

नाम—(८३५) लालजी कायस्थ, काँधला, मुज़फ़्फ़रनगर।

ग्रंथ—भक्त-उर्वशी (भक्तमाल)।

रचनाकाल—१८०८।

विवरण—देखो नं० ९४१।

नाम—(८३५/१) जवाहरसिंह कायस्थ, पन्ना।

ग्रंथ—वैद्य प्रिया।

कविताकाल—१८०९।

विवरण—महाराजा अमानसिंह के समय में थे।

नाम—(८३६) सोमनाथ, सांडी, हरदोई।

रचनाकाल—१८०९। [खोज १९०४]

विवरण—कुँवर बहादुरसिंह के यहाँ थे।

नाम—(८३७) शिवदास, जैपूर।

ग्रंथ—(१) शिव चौपाई, (२) लोकोक्ति रस जगत, [द्वि० त्रै० रिं] (३) अलंकार शृंगार (दोहा)।

रचनाकाल—१८१० के पूर्व। याज्ञिकत्रय की राय से कविता-काल १७८०। ये कृष्ण कवि के मित्र और राजा आयामल्ल के भाई थे। बड़े रसज्ञ थे।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८३८) सनेहीराम।

ग्रंथ—रसमंजरी। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८१० के पूर्व।

नाम—(८३९) सुमेरसिंह साहबजादे।

रचनाकाल—१८१० के पूर्व।

विवरण—एक सुमेरसिंह साहबज़ादे पटना के थे, जो अपना नाम सुमिरेसहरी रखते थे और वह संवत् १९४० तक वर्तमान थे। ये शायद कोई दूसरे हों।

नाम—(८४०) सूरज।

रचनाकाल—१८१० के पूर्व।

नाम—(८४१) कमलनैन उपनाम रससिंधु ।

ग्रंथ—(१) गुरुप्रसाद दस्तूर, (२) कमलप्रकाश (१८३५), [च० त्रै० रि०], (३) रामसिंह मुखारविंद मकरंद ।

जन्म-काल—१७८४ ।

रचनाकाल—१८१० ।

विवरण—निम्न श्रेणी । बूँदी-नरेश महाराजा रामसिंह के यहाँ थे ।

नाम—(८४२) गरबीलीदास या गरीबदास कलानी के मुसाहेब । टट्टिन की संप्रदाय के ।

ग्रंथ—(१) पद (५८), (२) बानी ।

रचनाकाल— १८१० ।

विवरण—साधारण श्रेणी । छत्रपूर में ग्रंथ देखे । इनके समय आदि जाँच से मिले हैं ।

नाम—(८४२/१) घासीराम ।

रचनाकाल—१८१० ।

ग्रंथ—काव्यप्रकाश तथा रसगंगाधर की टीका तथा भाषा गीतगोविंद ।

विवरण—भरतपुर के रहनेवाले थे और १८१५ में मरे ।

नाम—(८४२/२) चरणदास ।

ग्रंथ—(१) शिक्षा प्रकाश (१८१०), (२) भक्त नाम-माला, (३) रहस्य दर्पण (१८१२), (४) रहस्य-चंद्रिका (१८१८) । [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८१० ।

विवरण—वृंदावनवासी तथा टट्टी संप्रदाय के वैष्णव थे । इन्होंने अपने गुरु की कन्याओं श्यामादासी तथा इंद्र कुँअरिबाई के लिये शिक्षा प्रकाश तथा रहस्य-चंद्रिका ग्रंथ बनाए ।

नाम—(८४३) जवाहिरसिंह कायस्थ, जिगौरा।
ग्रंथ—वैद्यप्रिया।
रचनाकाल—१८१०।
विवरण—पन्ना-नरेश अमानसिंह के दीवान थे, जिन्होंने संवत् १८०९ से १२ तक राज्य किया।
नाम—(८४४) धनसिंह बंदीजन, मौरावाँ ज़िला उन्नाव।
जन्मकाल—१७६१।
रचनाकाल—१८१०।
विवरण—साधारण श्रेणी।
नाम—(८४५) धीरजासिंह उपनाम धीरजराम।
ग्रंथ—चिकित्सासार।
रचनाकाल—१८१०। [द्वि० त्रै० रि०]
नाम—(८४६) विजयसिंह महाराजा।
ग्रंथ—विजयविलास।
रचनाकाल—१८१० से १८४१ तक।
नाम—(८४७) बिहारी, कायस्थ ओरछा, बुँदेलखंड।
ग्रंथ—दंपतिध्यानमंजरी।
जन्म-काल—१७८६।
रचनाकाल—१८१०।
विवरण—साधारण श्रेणी।
नाम—(८४८) व्रजनाथ।
ग्रंथ—रागमाला।
जन्म-काल—१७८०।
रचनाकाल—१८१०।
विवरण—रागों के लक्षण इत्यादि लिखे हैं। साधारण श्रेणी।
नाम—(८४९) रसराज।

ग्रंथ—नखशिख।

जन्म-काल—१८८५।

रचनाकाल—१८१०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८५०) रसरूप।

ग्रंथ—(१) उपालंभशतक, [द्वि० त्रै० रि०] (२) तुलसी-भूषण [खोज १९०४] (१८११), (३) शिखनख [खोज १९०५]।

रचनाकाल—१८१०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८५१) रसिकविहारी।

जन्म-काल—१७८०।

रचनाकाल—१८१०।

नाम—(८५२) रुद्रमणि चौहान।

जन्म-काल—१७८०।

रचनाकाल—१८१०।

नाम—(८५२/१) रूपमंजरी उपनाम देवकीनंदनदास।

ग्रंथ—(१) युगल केलि ललित लीला, (२) युगल केलि-रस माधुरी, (३) युगल रस सिद्धांत।

रचनाकाल—१८१०।

विवरण—वंसी अली के शिष्य थे।

नाम—(८५३) हरि कवि।

ग्रंथ—(१) चमत्कारचंद्रिका, (२) कविप्रियाभरण, (३) अमरकोष भाषा।

रचनाकाल—१८१०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८५४) हेमगोपाल ।

जन्म-काल—१७८० ।

रचनाकाल—१८१० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

सत्ताईसवाँ अध्याय

सूदन-काल

(१८११ से १८३० तक)

(८५५) सूदन

ये महाशय माथुर ब्राह्मण, महाराज वसंत के पुत्र मथुराजी के निवासी थे। भरतपूर के महाराजा बदनसिंह के पुत्र सुजानसिंह उपनाम सूरजमल इनके आश्रयदाता थे। जान पड़ता है कि ये महाशय भरतपुर में बहुधा रहा करते थे और सूरजमल के साथ युद्धों में भी सम्मिलित रहते थे। इन्होंने लड़ाइयों का वर्णन आँखों-देखा-सा किया है। इन्हीं सूरजमल के भाई प्रतापसिंह के यहाँ सोमनाथ कवि रहते थे। सूदन कवि ने "सुजान-चरित्र"-नामक एक बड़ा ग्रंथ बनाया और वही नागरी-प्रचारिणी सभा ने "ग्रंथ-माला" द्वारा प्रकाशित किया है। इसमें २३४ पृष्ठ छपे हैं, परंतु यह जान पड़ता है कि ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें सूदन जी ने अध्याय-समाप्ति पर निम्न-लिखित छंद हर जगह लिखा है, जिसमें तीन पद वही रहते हैं, परंतु चतुर्थ पद अध्याय में वर्णित कथा के अनुसार बदलता रहता है—

भुवपाल पालक भूमिपति बदनेस नंद सुजान है ;
जानै दिली दल दक्खिनी कीन्हें महा कलिकान है।
ताको चरित्र कछूक सूदन कह्यो छंद बनाय कै ;
कहि देव ध्यान कवीश नृप कुल प्रथम अंक सुनाय कै।

ग्रंथारंभ में सूदन ने छः छंदों में १७९ कवियों के नाम लिखकर उन्हें प्रणाम किया। इससे यह ज्ञात होता है कि उसमें वर्णित कवि सूदनजी से प्रथम के या समकालिक हैं। कवियों के नाम ये हैं—

केशव, किशोर, काशी, कुलपति, कालिदास, केहरि, कल्यान, करन, कुंदन, कविंद, कंचन, कमंच, कृष्ण, कनकसेन, केवल, करीम, कविराज, कुँवर, केदार, खानखाना, खगपति, खेम, गंगापति, गंग, गिरिधरन, गयंद, गोप, गदाधर, गोपीनाथ, गोवर्धन, गोकुल, गुलाब, गोविंद, घनश्याम, घासीराम, नरहरि, नैन, नायक, नवल, नंद, निपट, नित्यानंद, नंदन, नरोत्तम, निहाल, नेही, नाहर, नेवाज, चंदबरदाई, चंद, चिंतामनि, चेतन, चतुर, चिरंजीवि, छीत, छबीले, यदुनाथ, जगाथ, जीव, जयकृष्ण, जसवंत, जगन, टीकाराम, टोडर, तुरत, तारापति, तेज, तुलसी, तिलोक, देव, दूलह, दयादेव, देवीदास, दूलाराय, दामोदर, धीरधर, धीर, धुरंधर, पुखी, पीत, पहलाद, पाती, प्रेम, परमानंद, परम, पर्वत, प्रेमी, परसोत्तम, बिहारी, बान, बीरबल, वीर, विजय, बालकृष्ण, बलभद्र, वल्लभ, वृंद, वृंदावन, वंशीधर, ब्रह्म, बसंत, रावबुद्ध, भूपन, भूधर, मुकुंद, मनिकंठ, माधव, मतिराम, मलूकदास, मोहन, मंडन, मुबारक, मुनीस, मकरंद, मान, मुरली, मदन, मित्र, अक्षर अनन्य, अग्र, आलम, अमर, अहमद, आज़मख़ाँ, इच्छाराम, ईसुर, उमापति, उदय, ऊधो, उधृत, उदयनाथ, राधाकृष्ण, रघुराय, रमापति, रामकृष्ण, राम, रहीम, रणछोरराय, लीलाधर, नीलकंठ, लोकनाथ, लीलापति, लोकपति, लोकमनि, लाल, लच्छ, लच्छी, सूरदास, शिरोमनि, सदानंद, सुंदर, सुखदेव, सोमनाथ, सूरज, सनेही, सेख, श्यामलाल, साहेब, सुमेर, शिवदास, शिवराम, सेनापति, सूरति, सबसुख, सुखलाल, श्रीधर, सबलसिंह, श्रीपति, हरिप्रसाद, हरिदास, हरिवंश, हरिहर, हरी, हीरा, हुसेनी और हितराम।

सुजान-चरित्र में सूरजमल के युद्धों का वर्णन है और इसमें संवत् १८०२ से १८१० विक्रमीय तक की घटनाएँ कही गई हैं। ग्रंथ-निर्माण का समय नहीं दिया गया है। जान पड़ता है कि संवत् १८१० के कुछ पीछे यह ग्रंथ बना और इसी कारण प्रारंभ से ही इसमें दिल्ली और दक्षिणी दलों की दुर्गति का वर्णन हर अध्याय में किया गया। इसमें लिखा है कि सूरजमल ने प्रथम मेवाड़ छीन लिया और फिर मालवा में माड़ौगढ़ जीता। संवत् १८०२ में बादशाह अहमदशाह के सैनिक असदख़ाँ ने फ़तेहअली पर धावा किया। सूरजमल ने फ़तेहअली की सहायता करके असदख़ाँ का ससैन्य संहार किया। इसी अध्याय में घोड़ों की जाति, सूरजमल से फ़तेहअली के वकील की बातचीत और असदख़ाँ का व्याख्यान परम प्रशंसनीय हैं। सूदनजी हर अध्याय के लिये नई वंदना लिखते हैं। संवत् १८०४ में सूरजमल ने जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह की सहायता करके मरहट्टों को पराजित किया। संवत् १८०५ में बख़्शी सलाबतख़ाँ बादशाह की तरफ़ से सूरजमल से लड़कर पराजित हुआ। इस युद्ध का एक छंद नीचे लिखते हैं—

तोमतम छाए सुलतान दल आए सोतौ,
समर भजाए उन्हें छाई है अचक-सी ;
काल कैसी रसना कराल करवाल तेरी,
व्याल भाल काटि कै करन लागी तकसी।
सूदन सुजान मरदान हरिनारायन,
देव हरिदेव जंगजीत तोहिं बकसी ;
जूझत हकीमखाँ अमीरन के धकसी,
औ बकसी के जिय मैं परी है धकपक-सी।

संवत् १८०६ में बादशाही वज़ीर नवाब सफ़दरजंग मंसूर ने

बंगश पठानों पर चढ़ाई की, जिसमें सूरजमल ने वज़ीर का साथ दिया। इससे जान पड़ता है कि उस समय वही मनुष्य बादशाह का बहुत जल्दी शत्रु और मित्र दोनों हो सकता था। पहले सूरजमल ने बादशाही अफ़सर असदख़ाँ को मारकर फ़तेहअली को सहायता दी और फिर दूसरे ही साल सरकारी बख़्शी जब उनसे लड़ने आया तब वही फ़तेहअली बख़्शी की तरफ़ से सूरजमल से लड़ा। इसी के दूसरे साल स्वयं सूरजमल बादशाह से मिलकर बंगश से लड़ने गए और उसके चार ही वर्ष पीछे बादशाह से लड़कर उन्होंने दिल्ली लूटी। बंगश की लड़ाई का वर्णन सूदनजी ने बहुत अच्छा किया है। जब सूरजमल सेना समेत मंसूर के दल में पहुँचे, तब वे मंसूर से मिलने गए और उसके पीछे मंसूर भी सत्कारार्थ उनके डेरे पर मिलने गया। उधर अहमदख़ाँ पठान ने अपनी सेना एक उमंगोत्पादक व्याख्यान द्वारा युद्धार्थ प्रोत्साहित की, और

यों सुन अहमदख़ाँ का कहना सब पठान उठधाए;
जो पठान तिसको तो लड़ना ऐसे बचन सुनाए।

बंगस की लाज मऊखेत की अवाज यह,
सुने अजराज ते पठान वीर बबके;
भाई अहमदखान सरन निदान जानि,
आया मनसूर तौ रहैं न अब दबके।
चलना मुझे तौ उठ खड़ा होना देर क्या है,
बार-बार कहे ते दराज सीने सब के;
चंड भुज दंडवारे हयन उदंड वारे,
कारे-कारे डीलन सँवारे होत रब के।

इस अध्याय में कितने ही योद्धाओं के व्यख्यान बढ़िया हैं और अहमदख़ाँ ने जो संदेसा सूरजमल से कहला भेजा था वह भी प्रशंसनीय है।

संवत् १८०९ में सूरजमल ने घासहरे का दुर्ग वहाँ के राव को मारकर छीन लिया। राव के वीरत्व की भी सूदन ने अच्छी प्रशंसा की है—

अड़ राखी ऐंड राखी मैड़ रजपूती राखी,
राव रज राखि राह लीन्ही सुरपुर की।

संवत् १८१० में अहमदशाह ने मंसूर को बरख़ास्त कर दिया, जिस पर क्रोध करके मंसूर सूरजमल को दिल्ली पर चढ़ा ले गया और इन्होंने कई दिन तक दिल्ली को ख़ूब लूटा। इस लूट का वर्णन सूदन ने बहुत उत्कृष्ट और विस्तार-पूर्वक लिखा है और दिल्ली-वासियों की विकलता को भी कई छंदों में कई बोलियों द्वारा दर्शित किया है। उसमें से ख़ड़ी बोली का छंद नीचे लिखा जाता है—

महल सराय से रवाने बुआ बूबू करो,
मुझे अफ़सोस बड़ा बड़ी बीबी जानी का;
आलम में मालुम चकत्ता का घराना यारो,
जिसका हवाल है तनैया जैसा तानी का।
खने खाने बीच से अमाने लोग जाने लगे,
आफ़त ही जानो हुआ औज देहकानी का;
रब की रजा है हमैं सहना वजा है,
वक्त हिंदू का गजा है आया छोर तुरकानी का।

पूर्वी बोली का केवल एक पद नीचे लिखा जाता है—

असकस कीन्ह ख्वार दिली का नबाब ख़्वार,
चीन्हत न सार मनसूर जट्ट ल्यावा है।

अंत में जयपूर के महाराजा माधवसिंह ने आकर संधि कराई। फिर इसी संवत् में आपाजी और मल्हारराव ने सूरजमल से दो करोड़ रुपए का कर माँगा और न मिलने से चढ़ाई करने की धमकी दी। इन्होंने कर देने से इनकार किया और युद्ध के वास्ते तैयारी

की। इस बार की तैयारी का वर्णन बहुत ही गंभीर किया गया है। महाराष्ट्र दल के आ जाने पर श्रीकृष्णचंद्रजी और कालयवन का युद्ध वर्णन होने के पीछे विना लड़ाई का कथन हुए ही ग्रंथ समाप्त हो-गया है। इसी कारण हमारा विचार है कि यह ग्रंथ अपूर्ण रह-गया है। यह अध्याय भी बहुत प्रशंसनीय है, परंतु स्थानाभाव के कारण हम इस अध्याय के केवल तीन छंद उद्धृत करते हैं—

उतते राव मल्हार जयपुर ते कूचहि कियो ;
जैसे सलभ अपार उठै प्रजा संहारहित।

हारे देखि हाड़ा मनमारे कमधुज वंस,
कूरम पसारे पाँय सुनत नगारे के ;
केते पुर जारे केते नृपति सँहारे तेई,
जोरि दल भारे ब्रज भूमि पै हँकारे के।

रारे मधुसूदन सँवारे बदनेस प्यारे,
ब्रज रखवारे निज वंस अवधारे के ;
होत ललकारे सूर सूरजप्रताप भारे,
तारे-से छिपैंगे सब सुभट सितारे के।

ऐंठि बाँध्यो मुकुट समेटि घुँघरारे बार,
कुंडल चढ़ाए कान कलँगी सुघट की ;
जाँघिया जकरि कै अकरि अंगराग करि,
कटि मैं लपेटी कसि पेटी पीत पट की।
भृगुपति अंकढाल सकति श्रिया को चिह्न,
सूदन सनाह बनमाल लाल टटकी ;
कोटिन सुभट की निहारि मति सटकी यों,
सुंदर गोपाल की धरनि भेष भट की।

सूदन कवि ने केशवदासजी की रीति का अनुसरण किया है और विविध छंदों का प्रयोग करके सुजान-चरित्र को एक बहुत

विशद और रोचक ग्रंथ बना दिया है। रोचकता की मात्रा में यह ग्रंथ रामचंद्रिका से शायद ही कुछ कम हो। इसमें हर विषय का बहुत ही सजीव, सच्चा और वास्तविक घटनाओं से पूर्ण वृत्तांत लिखा गया है। युद्ध-कर्ताओं के व्याख्यान और महाराजाओं से दूतों की वार्ता विशेषतया द्रष्टव्य हैं। युद्ध की तैयारी वर्णन करने में इसकी बराबरी बहुत कवि नहीं कर सकते, परंतु इनका युद्ध-वर्णन उतना उत्कृष्ट नहीं है। फिर भी प्रत्येक युद्ध के पीछे के छंद बहुत ही प्रशंसनीय हैं। इन्होंने भूषण के मत पर न चलकर केवल सूरजमल का ही वर्णन नहीं किया है, वरन् उनके अनुयायी एवं अन्य सरदारों के अनुयायी छोटे-छोटे युद्धकर्ताओं का भी अच्छा कथन किया है। शत्रुओं का ऐसा प्रभावपूर्ण वर्णन हमने प्रायः किसी अन्य ग्रंथ में नहीं देखा। सूदन ने अपने नायक का जैसा उचित वर्णन किया वैसाही उसके प्रतिद्वंदी का भी किया। इस विषय में असदख़ाँ, अहमदख़ाँ, अन्य अफ़ग़ान, घासहरे के राव एवं कालयवन का वर्णन दर्शनीय है। सूदन ने असदख़ाँ, अफ़ग़ान-गण, मरहट्टों की चढ़ाई और कृष्णचरित्र के बहुत ही चित्ताकर्षक वर्णन किए हैं। उद्दंडता में भी यह कवि प्रायः किसी से कम नहीं है और हास्य की कविता भी इसने सुंदर की है। कहीं-कहीं इन्होंने रूपक भी अच्छे कहे हैं। एक स्थान पर व्यूह-रचना का भी अच्छा वर्णन है। संभवतः यह व्यूह सूरजमल को पसंद था।

सूदनजी की कविता में व्रजभाषा, खड़ी बोली, माड़वारी, राजपूतानी, पूरबी, पंजाबी आदि भाषाओं का प्रयोग हुआ है, और इनकी सब भाषाओं की कविता प्रशंसनीय है। कालयवन का युद्ध प्रायः पंजाबी बोली में लिखा गया है। ये महाशय यमक और अनुप्रास का प्रयोग अधिक नहीं करते थे। युद्ध-वर्णन में इन्होंने मिलित वर्णों का प्रयोग अधिकता से किया है। इनको हम बहुत ही

बढ़िया कवि समझते हैं और इनकी गणना दास की श्रेणी में करते हैं। युद्ध की तैयारी में सूदन, युद्ध-वर्णन में लाल और आतंक एवं भागने के वर्णन में भूषण प्रायः सर्वश्रेष्ठ हैं। इन तीनों महाशयों की कविता युद्धकाव्य की शृंगार है। अपने पूर्वोक्त कथनों के उदाहरणार्थ हम कुछ छंद सूदनजी के नीचे देते हैं—

पिल्ले रुहिल्ले सुभिल्ले करी पास ; मिल्ल्यौ इसाखान झिल्ल्यो नहीं त्रास ।
खिल्ले खरे खग्ग गिल्ले भए रत्त ; छिल्ले घने गत्त चिल्ले नहीं मत्त ।
कुल्ले कुजाहस्त इस वक्त मंसूर ; तुल्ल्यौ इसाखान मन खेत में पूर ।
यों भाखतै राखतै ज्यों कढ़ी जाल ; सब्बै रुहेले किए नैन यों लाल ।
कोई चढ़्यौ दंति दै दंत पै पाउ ; काहू गही पुच्छ की राह कै दाउ ।
केती छनाछन्न बाजीं तहाँ तेग ; मानौ महामेघ मैं चंचला वेग ।
कीन्हों इसाखान को मारिकै चूर ; कट्यो तऊ सीस हट्यो नहीं सूर ।

नैननि लई सलाम सलावत खान ने (यथार्थता) ;
तैं अपने मनमें गना बूड़ा तुरकाना (यथार्थता) ।

बापु बिस चाखै भैया षटमुख राखै देखि,
आसन मैं राखै बस बास जाको अचलै ;
भूतन के छैया आस पास के रखैया ;
और काली के नथैया हू के ध्यान हू ते न चलै ।
बैल बाघ बाहन बसन कौ गयंद खाल,
भाँग कों धतूरे कों पसारि देत अचलै ;
घर को हवालु यहै संकर की बाल कहै,
लाज रहै कैसे पूत मोदक को मचलै । (हास्य)

पूत मजबूत बानी सुनिकै सुजान मानी,
सोई बात जानी जासौं उर मैं छमा रहै ;
जुद्ध रीति जानौ मत भारत को मानौ जैसौ,
होइ पुठवार ताते ऊन अगमा रहै ।

वाम और दच्छिन समान बलवान जान,
कहत पुरान लोक रीति यों रमा रहै;
सूदन समर घर दोउन की एकै विधि,
घर मैं जमा रहै तौ खातिर जमा रहै। (व्यूह)

एकै एक सरस अनेक जे निहारे तन,
भारे लाज भारे स्वामि काज प्रतिपाल के;
चंगलौं उड़ायौ जिन दिल्ली की वजीर भीर,
पारी बहु मीरनु किए हैं वे हवाल के।
सिंह बदनेस के सपूत श्री सुजानसिंह,
सिंह लौं झपटि नख दीने करवाल के;
वेई पठनेटे सेल साँगन खखेटे भूरि,
धूरि सौं लपेटे लेटे भेटे महाकाल के। (युद्धांत)

सेलनु धकेला तैं पठान मुख मैला होस,
केते भट मेला हैं भजाए भुव भंग मैं;
तंग के कसेते तुरकानी सब तंग कीनी,
दंग कीनी दिल्ली औ दुहाई देत बंग मैं।
सूदन सराहत सुजान किरवान गहि,
धायो धीर धारि बीरताई की उमंग मैं;
दक्खिनी पछेला करि खेला तैं अजब खेल,
हेला मारि गंग मैं रुहेला मारे जंग मैं।
(युद्धांत)

(८५६) देवीदत्त

इनका बनाया हुआ वैतालपचीसी-नामक २६८ पृष्ठों का सुंदर ग्रंथ हमने देखा है। इसकी कविता श्रुतिमधुर और मनोहर है। संवत् १८१२ में यह ग्रंथ बना था। इसमें विविध छंदों में कविता हुई है। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रक्खेंगे।

जै गननायक बीर विकट दुष्टन संहारन ;
जै गननायक बीर साधु जन विपत्ति विदारन।
जै गन नायक बीर धीर निरमल मतिदायक ;
जै गननायक बीर विघन वन दाहन लायक।
सुभ एक रदन गज बदन जै-जै अखंड आनंदमय ;
कवि देवीदत्त दयालु जै गिरिस नंद सुर वंद्य जय।

इनके अटकपचीसी (१८०९)-नामक एक और ग्रंथ का पता खोज १९०४ में चलता है।

(८५७) हरनारायण

इनके बनाए हुए माधवानल, कामकंदला और वैतालपच्चीसी-नामक ५६ और १०३ पृष्ठों के दो उत्कृष्ट ग्रंथ हमने देखे हैं। ये विविध छंदों में हैं और इनकी रचनाशैली कुछ-कुछ छत्र कवि से मिलती है। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रक्खेंगे। अनुप्रास का इन्हें भी ध्यान रहता था।

सोहै मुंड चंद सो तृपुंड सो विराजै भाल,
तुंड राजै रदन उदंड के मिलन ते ;
पाप रूप पानिप विघन जल जीवन के,
कुंड सोखि सुजन बचावै अखिलन ते।
ऐसे गिरि नंदिनी के नंदन को ध्यान ही मैं,
कीबे छोड़ि सकल अपानहि दिलन ते ;
भुगति मुकति ताके तुंड ते निकसि तापै,
झुंड बाँधि कढ़ती भुसुंड के बिलन ते।

माधवानल, कामकंदला का रचनाकाल कवि ने संवत् १८१२ दिया है। [खोज १९०५]

नाम—(८५७/१) रामजोशी।

रचनाकाल—१८१२।

विवरण—महाराष्ट्र कवि थे। हिंदी में भी रचना करते थे। (८५७/२) होनाजी समन भाऊ और (८५७/३) परशुराम ने भी इसी समय हिंदी में कविता की है।

(८५८) रूपसाहि

ये श्रीवास्तव कायस्थ पन्ना के मुहल्ला बागमहल में रहते थे। इनके पिता का नाम कमलनैन, पितामह का शिवाराम और प्रपितामह का नरायनदास था। ये महाशय बुँदेला चत्री पन्ना के महाराजा हिंदूसिंह के यहाँ थे। हिंदूसिंह महाराजा के पिता सभासिंह, पितामह हिरदेश और प्रपितामह छत्रसाल थे। यह वर्णन इन्होंने अपने ग्रंथ में किया है। इन्होंने महाराज हिंदूपति के आश्रय में रूपविलास [खोज १६०५]-नामक ग्रंथ संवत् १८१३ में बनाया, जिसमें कुल ६०० दोहों में काव्य-लक्षण, छंद-ज्ञान, नायिका-नायक, नौरस, अलंकार और षट्ऋतु के वर्णन हैं। इनकी कविता साधारण है। हम इनको साधारण श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण—

जगमगात सारी जरी झलमल भूषन जोति ;
भरी दुपहरी तियाकी भेट पिया सों होति ॥ १ ॥
लालन वेगि चलौ न क्यों बिना तिहारे बाल ;
मार मरूरन सों मरति करिए परसि निहाल ॥ २ ॥

(८५९) हरिचरणदास

ये महाशय जाति के ब्राह्मण कृष्णगढ़ (माड़वार) के रहनेवाले थे। इनके पूर्वज सूवा बिहार परगना गोआ मौज़े चैनपुर में रहते थे। इनका जन्म संवत् १७६६ में हुआ था और इन्होंने सं० १८३५ [खोज १६०४] में केशवकृत प्रसिद्ध कविप्रिया की अच्छी टीका लिखी। इसमें कविप्रिया की टीका बहुतही विस्तार-पूर्वक तथा पांडित्य-पूर्ण की गई है। इसके अतिरिक्त इन्होंने रसिकप्रिया तथा सतसई की

भी अनमोल टीकाएँ की हैं। सतसई की टीका १८३४ में बनी। इनकी भाषा-भूषण की टीका भी उत्कृष्ट बनी है। ये महाशय कविता भी उत्कृष्ट करते थे। हमने कविप्रिया की टीका दरबार छतरपूर के पुस्तकालय में देखी, जिसका आकार रॉयल अठपेजी के ७४२ पृष्ठों का है। इनके सभाप्रकाश (१८१४) और कविवल्लभ-नामक दो और ग्रंथ भी [प्र० त्रै० रि०] में मिले हैं। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में समझते हैं।

उदाहरण—

राधे के पायन के नख की सुखमा लखि होत है चंद मलीनो ;
रूप अतोलिक की उपमा लहि कंज हिए मैं महामद भीनो।
सो नहिं नेक सह्यौ करतार बिचार सों जानत है परबीनो ;
देखौ बराटक के छल सों बिधि मोल कै ताहि बराटक कीनो ॥१॥

इनके आश्रयदाता महाराज बहादुरसिंह नागरीदास के छोटे भाई थे।

(८६०) रामसखे ने श्रीनृत्यराघवमिलन (६१ पृष्ठ छोटे), दानलीला (४ पृष्ठ), बानी, दोहावली, मंगलसतक, पदावली, रागमाला (७४ पृष्ठ) और पद (६ पृष्ठ)-नामक ग्रंथ लिखे हैं, जो छत्रपूर में हैं। इनका कविताकाल जाँच से १८१५ जान पड़ा। खोज १६०५ में नृत्यराघवमिलन का रचनाकाल १८०४ लिखा है। ये साधारण श्रेणी के कवि थे। प्र० त्रै० रिपोर्ट में इनके एक और ग्रंथ रासपद्धति का पता चलता है। द्वि० त्रै० रि० में इनके एक अन्य ग्रंथ मंगललतिका का पता चलता है। च० त्रै० रि० में कवित्त, मंगलाष्टक, राघवेंद्र रहस्यरत्नाकर कवितावली तथा सीतारामचंद्र रहस्य पदावली-नामक ग्रंथ और मिले हैं।

उदाहरण—

संझा आवनि पिय की लावनि देखौ भावनि अवध गली चलि ;
मृगया भेष हरित चरना तन अरु बन कुसुम सजैं गुंजैं अलि।

लिए कर कुही तुरँग कुदावत जुलफैं छूटी पैज हिए बलि ;
रामसखे यह छवि पीजै अब नेह गेह कुल लाज आज दलि।
खोज से इनके गीत व "रासपद्धति" का पता और चला है।

नाम—($\frac{८६०}{१}$) जसुराम।

ग्रंथ—राजनीति।

कविताकाल—१८१४।

विवरण—गुजराती कवि थे।

(८६१) मोहनदासजी ने १०६ पदों की एक बानी कही, जो हमने छत्रपूर में देखी। इनका कविताकाल जाँच से संवत् १८१५ जान पड़ा। ये साधारण श्रेणी के कवि थे। ये बीहट, बुँदेलखंड के ब्राह्मण थे।

उदाहरण—

हरि करि हैं सो नीकी करि हैं।
अपनो दास जानि श्री रघुबर दुसह दोष सब हरिहैं।
आसा फाँस छोड़ाय दया करि बिनु कारन निस्तरिहैं ;
मोहनदास भयो सिय पिय को कहु काको भव डरिहैं।

(८६२) सहजोबाई

ये बाईजी चरणदासजी की चेली और हरिप्रसादजी दूसर की कन्या थीं। चरणदासजी का जन्म संवत् १७६० में हुआ था। अनुमान से इनका कविताकाल संवत् १८१५ जान पड़ता है। इन्होंने अपने गुरु का संवत् एवं पता लिखा है। खोज १६०० के अनुसार इनका कविताकाल संवत् १८०० से प्रारंभ होता है।

सहजोबाई ने भगवद्भक्तिमयी कविता की और इसी रस में पड़कर कई ग्रंथ बनाए, जिनमें से सहजोप्रकाश का वर्णन महिला-मृदुवाणी में हुआ है। इनकी कविता में रहिमन की भाँति नीति का भी कथन है। इनकी रचना बड़ी ही हृदयग्राहिणी एवं सब

प्रकार से प्रशंसनीय है। इनकी भाषा में राजपूताना के भी शब्द मिल गए हैं, सो वह व्रजभाषा तथा राजपूतानी का मिश्रण है। इनको हम छत्र कवि की श्रेणी में रखते हैं। उदाहरण नीचे लिखे जाते हैं—

सहजो तारे सब सुखी गहै चंद औ सूर ;
साधू चाहै दीनता चहै बड़ाई कूर ॥ १ ॥
भली गरीबी नवनता सकै न कोई मारि ;
सहजो रुई कपास की काटै ना तरवारि ॥ २ ॥
साहन को तौ भै घना सहजो निरभै रंक ;
कुंजर के पग बेड़ियाँ चींटी फिरैं निसंक ॥ ३ ॥
प्रेम दिवाने जो भए मन भो चकनाचूर ;
छके रहैं घूमत रहैं सहजो देखि हजूर ॥ ४ ॥

नाम—(८६३) महंत सखीसरन, अयोध्यावाले।
ग्रंथ—(१) गुरुप्रनालिका, (२) मंजावली (सं० १८१६), (३) उत्कंठामाधुरी।
समय—१८१६।
विवरण—गुरुप्रनालिका में निंबार्क संप्रदाय की गुरुप्रणाली का वर्णन एवं उत्सवों का कथन रोला तथा दोहों में किया गया है। ये ग्रंथ हमने दरबार छतरपूर में देखे। काव्य निम्न श्रेणी का है। इनका समय जाँच से मिला था और पीछे से कहीं मंजावली में भी निकल आया।

नाम—(८६३/१) महाराव श्रीलखपति।
ग्रंथ—लखपति श्रृंगार।
कविताकाल—१८१७।
विवरण—ये कच्छ के महाराज थे। इनके ग्रंथ में ४४७ छंद हैं, और 'सुंदर श्रृंगार' के अनुकरण में बना है। इनके पौत्र

उत्तड़जी भी कवि थे। भट्टार्क कनककुशल लखपति-जी का आश्रित कवि था। 'लखपति श्रृंगार' की कविता का उदाहरण इस प्रकार है—

कीनो लखपति कच्छपति भले सुनो कवि भूप ;
सुंदरकृत अनुरूप यह रस तरंग रस रूप।

(८६४) सुंदरिकुँवरिबाई राधावल्लभीया

ये रूपनगर तथा कृष्णगढ़ के राठौरवंशी महाराजा राजसिंह की पुत्री थीं। इनका जन्म संवत् १७६१ में हुआ। राघवगढ़ के खीची महाराज बलभद्रसिंहजी के कुँवर बलवंतसिंह के साथ इनका विवाह संवत् १८२२ में हुआ। इनकी माता महारानी बाँकावतीजी थीं, जिन्होंने भागवत का छंदोबद्ध उलथा किया जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है। इनके पिता, पितामह मानसिंहजी तथा प्रपितामह रूपसिंहजी सदैव से स्वयं सुकवि तथा कवियों के आश्रयदाता रहे। इनके भाई सुप्रसिद्ध नागरीदासजी और बहादुरसिंहजी तथा इनके भतीजे विरदसिंहजी भी कविता करते थे। इनके घर की एक लौंडी बनीठनी ने भी रसिकविहारी के नाम से कविता की है। इन बाईजी के पिता और पति के यहाँ शत्रुओं से सदैव लड़ाई-झगड़े रहे, परंतु तो भी इन्होंने कविता से इतना प्रेम रक्खा कि ११ ग्रंथों की रचना कर डाली, जैसा करने में प्रायः बड़े-बड़े कवि भी समर्थ नहीं हुए हैं।

इनके ग्रंथ ये हैं—

(१) नेहनिधि सं० १८१७ रूपनगरमध्ये। [खोज १६०१]
(२) वृंदावनगोपीमाहात्म्य सं० १८२३ रूपनगरमध्ये। [खोज १६०१]
(३) संकेत युगल सं० १८३० कृष्णगढ़मध्ये। [खोज १६०१]
(४) रसपुंज सं० १८३४ राघोगढ़मध्ये। [खोज १६०१]
(५) प्रेमसंपुट सं० १८४५। [खोज १६०१]

(६) सारसंग्रह सं० १८४९ । [खोज १६०१]

(७) रंगझर सं० १८४५ । [खोज १६०१]

(८) गोपीमाहात्म्य सं० १८४६ । [खोज १६०१]

(९) भावनाप्रकाश सं० १८४६ । [खोज १६०१]

(१०) राम रहस्य सं० १८५२ । [खोज १६०१]

(११) पद तथा फुटकर कवित्त । [खोज १६०१]

इनके उपर्युक्त सब ग्रंथ बूँदी महाराज की माताजी की कृपा से मुद्रित हो गए हैं।

इनकी गणना हम तोष कवि की श्रेणी में करते हैं। इनकी रचना बड़ी सरस तथा मनोहर है। वह सुकवियों की-सी है और भक्तिरस से पूर्ण है। इनकी भाषा शुद्ध व्रजभाषा है और उसमें मिलित वर्ण बहुत कम आने पाए हैं। इन्होंने हर प्रकार के छंद सफलता-पूर्वक कहे हैं और अपने छंदों द्वारा अपने पिता के कविकुल को और भी प्रशंसित कर दिया है। कुछ छंद नीचे उद्धृत करते हैं—

अज्ञा लहि घनश्याम की चलीं सखी वहि कुंज ;
जहाँ बिराजत मानिनी श्री राधा सुख पुंज ॥ १ ॥
कहरी जहरी श्याम की लहरैं उर सरसान ;
कोटि सुधा सरितन सिंचत तेहि सुख गनै न आन ॥ २ ॥
घूमत मन घूमत सुतन दृग उनमील घुमार ;
थकित बयन गति सिथिल चढ़ि अन उतरन मतवार ॥ ३ ॥

श्याम नैन सागर मैं नैन वार पार थके,
नचत तरंग अंग-अंग रँग मगी है ;
गाजन गहर धुनि बाजन मधुर वेनु,
नगिनि अलक जुग सोधै सगबगी है।
भँवर त्रिभंगताई पानिप लुनाई तामैं,
मोती मनि जालन की जोति जगमगी है ;

काम पौन प्रबल धुकाव लोपी पाज तामे,
आज राधे लाज की जहाज डगमगी है ॥ ४ ॥

मेरी प्रान सजीवन राधा (टेक)।
कब तुव बदन सुधाधर दरसै मों अँखियन हरै बाधा।
ठमकि ठमकि लरिकौंहीं चालनि आव सामुहे मेरे ;
रस के बचन पियूष पोखिकै कर गहि बैठों तेरे।
रंगमहल संकेत सुगल करि टहलिनि करो सहेली ;
अज्ञा लहौं रहौं तहँ ततपर बोलत प्रेम पहेली।
मन मंजरी जु कीन्हों किंकर अपनावहु किन बेग ;
सुंदर कुवँरि स्वामिनी राधा हिय को हरो उदेग।

नाम—(८६५) जगजीवनदास चंदेल, कोटवा जिला बाराबंकी।

ग्रंथ—(१) प्रथम ग्रंथ, (२) ज्ञानप्रकास, (३) महाप्रलय, (४) बानी [द्वि० त्रै० रि०] (२५३ पद)।

कविताकाल—१८१८।

विवरण—ये महाशय सत्यनामी पंथ के आचार्य थे। आपने काव्य भी शांत रस का किया है। इनकी गद्दी में इनके चेले दूलमदास, जलालीदास, देवीदास इत्यादि अच्छे महात्मा और कवि हुए हैं। इनकी रचना साधारण श्रेणी की है। इनका अंतिम ग्रंथ हमने छत्रपूर में देखा।

नाम—(८६५/१) रत्नसेन।

कविताकाल—१८१९।

विवरण—जैन साधु थे। अपनी यात्रा का वर्णन हिंदी गद्य में किया है।

(८६६) गणेश कवि

ये महाशय मल्लायें ज़िला हरदोई के कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। शिव-सिंहसरोज में इनका नाम नहीं है। इन्होंने संवत् १८१६ में रसबल्ली-नामक ग्रंथ बनाया। इसकी एक हस्तलिखित प्रति हमारे पुस्तकालय में वर्तमान है। इसमें रस एवं भावों का वर्णन है। यह समस्त ग्रंथ बरवै छंद में कहा गया है। इसमें २२६ छंद हैं। गणेश का और कोई ग्रंथ या छंद हमने नहीं देखा। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है।

सिरधरि मोर किरीट पिछौरी पीत।
मंगलकर निसि बासर श्यामल मीत ॥ १ ॥
तन दुति जीतेसि घन दुति घनक सुभाय।
यह रस बरसो बरसो बरसो पाय ॥ २ ॥

(८६७) मनबोध झा

ये महाशय एक प्रसिद्ध नाटककार थे। इनकी मृत्यु संवत् १८४५ में हुई। इनका कविताकाल सं० १८२० से समझना चाहिए। इन्होंने हरिवंश नाटक-नामक एक भारी ग्रंथ मैथिल-भाषा में लिखा, जिसमें श्रीकृष्णचंद्रजी का अच्छा वर्णन है। इस हरिवंश के अब दस अध्याय-मात्र मिलते हैं। मैथिल लोग इन्हें बड़े चाव से पढ़ते हैं। इनकी गणना मधुसूदनदास की श्रेणी में है।

उदाहरण—

कतो यक दिवस जखन बिति गेल ; हरि पुनि हथ गर गोड़हर भेल।
से कोन ठावँ जतै नहिं जाथि ; कै बेर आँगन हुँ सों बहिराथि।
द्वार उपर सों धरि धरि आनि ; हरखित हँसथि जसोमति रानि।
कौसल चलथि मारि कहुँ चाल ; जसुमति का भेल जिबक जँजाल।

नाम—(८६८) सहचरिशरण, टट्टी संप्रदाय के वैष्णव।
ग्रंथ—(१) ललितप्रकाश, (२) सरसमंजावली, [प्र० त्रै० रि०] (३) गुरु प्रणालिका।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—ललितप्रकाश में स्वामी हरिदासजी की बानी, माहात्म्य, उनसे अन्य महात्माओं तथा महानुभावों के मुलाक़ात करने एवं उनके शिष्य होने आदि के वर्णन किए गए हैं। कविता-चमत्कार तोष की श्रेणी का है। इसमें कुल ७५६ पद व छंद हैं। यह ग्रंथ हमने दरबार छतरपुर में देखा है।

उदाहरण—

तरुन तमाल तरु मंदिर अनूप सोहैं,
चित बिसराम जाको स्यामा स्याम थल मैं ;
आय रही आभा रसिकाली गुन गाय रही,
छाय रही सुरति सुधा-सी तन मन मैं।
हरिदास बिनु रस की न आस पूजै मन,
जाय पछितायगो तू नासतीक गन मैं ;
बृंदा अरबिंदन को तजि मकरंद चारु,
मधुप सुगंध ज्यों न पावैं मूँज बन मैं।

नाम—(८६६) चंद राधावल्लभी ।

ग्रंथ—भगवानसुबोधिनी ।

समय—१८२० ।

विवरण—इस ग्रंथ में कुल १६५ पृष्ठ हैं। इसमें विशेषतया सवैया एवं कवित्त हैं। अन्य छंद भी कहीं-कहीं हैं। यह ग्रंथ हमने दरबार छतरपूर में देखा है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है।

उदाहरण—

ब्रज की वनिता जिनको बहु रूप निहारत प्रीति सों नैनं सिरावंत,
जोगी बड़े मुनिहू मन ध्यान कियो ही करैं पै हिए नहिं आवत ;

मो मति यों निहचौ करि जानत प्रेम ही सों उनको यह पावत,
राधिकावल्लभ ही मन भावत याही ते चंद सदा जस गावत।

नाम—(८७०) नागरीदास, बृंदावनवाले।

ग्रंथ—स्वामीजी के पदन की टीका।

समय—१८२०।

विवरण—इसमें स्वामी हरिदास, बिहारिनिदास, विट्ठल विपुल, सरसदास, नरहरिदास तथा स्वयं इनके पदों की टीका विस्तृत रूप से की गई है। यह फ़ूलसकैप साँची के ३२४ पृष्ठों में है। इनकी कविता-गरिमा साधारण श्रेणी की है। यह पुस्तक हमने दरबार छतरपूर में देखी है। इनका समय जाँच से मिला है। खोज १९०५ में इनका एक और ग्रंथ स्वामी हरिदासजी को मंगल-नामक मिला है।

नाम—(८७०/१) नगाजी।

रचनाकाल—१८२०।

विवरण—मध्यप्रदेश के मराठी भाषा के कवि थे। जाति के नाई थे। इनकी हिंदी कविता भी मिली है। भैरव अवधूत नाम के कवि इनके समसामयिक थे।

नाम—(८७०/२) महीपतिनाथ।

रचनाकाल—१८२३।

विवरण—ये जसवंतराय हुलकर के गुरु और हिंदी के कवि थे। दत्तनाथ नाम के एक और महाराष्ट्र इनके समसामयिक कवि थे।

(८७१) बैरीसाल [प्र० त्रै० रि०]

बैरीसाल ने संवत् १८२५ में भाषाभरण बनाया। इन्होंने अपने विषय में यहाँ तक मौन धारण किया कि अपने ग्रंथ में साफ़-साफ़ अपना नाम तक नहीं दिया। एक स्थान पर बड़े एंच-पेंच से आपने

अपना नाम दिखा दिया, परंतु अपने विषय में और कुछ नहीं लिखा। शिवसिंहसरोज में इनका नाम नहीं है। जाँच से जान पड़ा कि ये महाशय असनी-निवासी ब्रह्मभट्ट थे। इनकी पक्की हवेली अद्यावधि नई असनी में विद्यमान है। इनके वंशधरों में लालजी अब तक हैं जो कविता भी करते हैं। इनका एक-मात्र ग्रंथ भाषाभरण पंडित युगुलकिशोर के पुस्तकालय में हस्तलिखित वर्तमान है। इसमें ४७५ छंद हैं, जिनमें से प्रति सैकड़े प्रायः ९५ दोहे हैं। इन्होंने घनाक्षरी छंद दो ही एक लिखे हैं। इस ग्रंथ की प्रौढ़ता से जान पड़ता है कि बैरीसालजी ने पचास वर्ष की अवस्था में इसे संपूर्ण किया होगा। इस हिसाब से इनका जन्म संवत् १७७६ का समझ पड़ता है।

भाषाभरण अलंकार-संबंधी रीति-ग्रंथ है। इसके देखने से जान पड़ता है कि बैरीसाल सुकवि थे। इस ग्रंथ के पढ़ने से एक अनभिज्ञ भी अलंकारों को समझ सकता है। यह कुवलयानंद के मत पर बनाया गया है। इस कवि के बहुतेरे दोहे बिहारी की रचना से मिल जाते हैं। यह कवि बड़ा ही प्रशंसनीय है और अलंकारों का आचार्य समझा जाता है। बैरीसाल को हम पद्माकर की कक्षा में रखते हैं।

उदाहरण—

नहिं कुरंग नहिं ससक यह नहिं कलंक नहिं पंक ;
बीस बिसे बिरहा दही गड़ी दीठि ससि अंक।
करत कोकनद मदहिं रद तुव पद हद सुकुमार ;
भए अरुन अति दबि मनो पायजेब के भार।

(८७२) किशोर

शिवसिंहसरोज में इनका जन्म संवत् १८०१ दिया है और यह भी लिखा है कि इन्होंने किशोरसंग्रह-नामक ग्रंथ बनाया है। इनका कविताकाल सं० १८२५ से मानना चाहिए। इनका कोई ग्रंथ

हमारे देखने में नहीं आया, परंतु इनके ५० से अधिक स्फुट छंद हमारे पास वर्तमान हैं और प्रायः २०० छंदों का इनका एक संग्रह भी हमारे देखने में आया है। ये छंद देखने से अनुमान होता है कि इन्होंने कोई षट्ऋतु पर ग्रंथ भी बनाया होगा, क्योंकि इनके षट्ऋतु के बहुत-से और उत्कृष्ट छंद हैं। इनकी कविता लोकोक्ति-युक्त स्वाभाविक एवं प्रशंसनीय है। इनकी भाषा व्रजभाषा है और उसमें मिलित वर्ण बहुत कम हैं। इन्होंने अनुप्रास का भी साधारणतया अधिक प्रयोग किया है। हम किशोर को पद्माकर कवि की श्रेणी में रखते हैं। शिवसिंहजी ने इनका मोहम्मदशाह के यहाँ होना लिखा है। प्रथम त्रैवार्षिक रिपोर्ट में तेरहमासी-नामक इनके ग्रंथ का पता चलता है।

उदाहरण—

फूलन दे अबै टेसू कदंबन अंबन बौरन छावन दे री ;
री मधुमत्त मधुव्रत पुंजन कुंजन सोर मचावन दे री।
क्यों सहि हैं सुकुमारि किसोर अली कल कोकिल गावन दे री ;
आवतही बनि है घर कंतहि बीर बसंतहि आवन दे री ॥ १॥

कैला भई कोयल कुरंग बार कारे किए,
कूटि-कूटि केहरी कि लंक लंक हदली ;
जरि-जरि जंबूनद मूँगा बदरंग होत,
अंग फाड्यो दाड़िम तुचा भुजंग बदली।
एरी चंदमुखी तू कलंकी कियो चंदहू को,
बोले व्रजचंद सो किसोर आपु अदली ;
छार मुंड डारैं गजराज ते पुकार करैं,
पुंडरीक डूब्यो री कपूर खायो कदली ॥ २ ॥

(८७३) दत्त

देवदत्त उपनाम दत्त ब्राह्मण माढ़ि, ज़िले कानपूर के रहनेवाले थे,

और चरखारी के महाराजा खुमानसिंह के आश्रय में रहते थे। इनका कविताकाल संवत् १८२७ के लगभग है, क्योंकि महाराजा खुमान-सिंह का राजत्वकाल १८१८ से १८३९ संवत् तक है। इन्हीं के समय में एक दूसरे दत्त (ब्रह्मदत्त) भी थे, जिन्होंने दीपप्रकाश और विद्वद्विलास-नामक ग्रंथ रचे थे। स्वरोदयकार एक तीसरे भी दत्त [खोज १९०३] में मिले हैं, परंतु उनका समय ज्ञात नहीं हुआ। संभव है कि इन्हीं दोनों दत्तों में से एक ने स्वरोदय भी रचा हो।

(८७४) पुखी कवि

सरोजकार का कथन है कि ये महाराज ब्राह्मण थे और मैनपुरी के समीप कहीं रहते थे। इनका कोई ग्रंथ नहीं मिलता। ये संवत् १८०३ में उत्पन्न हुए थे। हमने इन महाशय की स्फुट कविता, संग्रहों एवं ज़बानी देखी-सुनी है, जो आदरणीय है। हम इनको तोष कवि की श्रेणी का समझते हैं।

उदाहरण—

फूले अनारन किंसुक डारन देखत मोद महा उर माँचै;
माधुरे भौरन अंब के बौरन भौरन के गन मंत्र से बाँचै।
लागि रहीं बिरहीजन के कचनारन बीच अचानक आँचै;
साँचे हुँकारै पुकारै पुखी कहि नाचे बनैगी बसंत की पाँचै ॥१॥

सिंध मरवर की सुधारी सरवर पारि,
फूले तरवर सब विपिन सो वारयो है;
ठाढ़ी तहाँ प्यारी संग रसिक विहारी पुखी,
रैनि उजियारी इत बदन उज्यारयो है।
कान को तरयोना छूटि परसि पयोधर को,
धरनी परत कनी झरि झनकारयो है;
रोख भरपूरि जिय जानि कै कलंकी कूर,
मानौ चंदचूर चंदचूर करि डारयो है ॥ २ ॥

पीनस वारो प्रवीन मिलै तौ कहाँ लौ सुगंधी सुगंध सुँघावै ;
कायर कोयि चढ़ै रन मैं तौ कहाँ लगि चारन चाउ बढ़ावै ।
जो पै गुनी को मिलै निगुनी तौ पुखी कहु क्यों करि ताहि रिझावै ;
जैसे नपुंसक नाह मिलै तो कहाँ लगि नारि सिंगार बनावै ॥३॥

(८७५) रतन कवि

इन्होंने अपने ग्रंथ में संवत् या अपना पता कुछ नहीं दिया, सिर्फ़ इतना ही लिखा है कि फ़तेहशाह श्रीनगर-नरेश की आज्ञा से फ़तेहप्रकाश ग्रंथ रचा। फ़तेहशाह के पिता का नाम ग्रंथ में मेदिनी साहि दिया हुआ है। सरोजकार ने इनकी उत्पत्ति का संवत् १७९८ एवं *श्रीनगरेश राजा* फ़तेसाहि बुँदेला के यहाँ इनका होना लिखा है, और इनके दूसरे ग्रंथ नाम फ़तेहभूपण कहा है, परंतु इन्होंने राजा फ़तेहशाह को गढ़वार का राजा लिखा है, अतः यह गढ़वाल का श्रीनगर समझ पड़ता है। इस ग्रंथ में काव्य-गुण, व्यंजना, लक्षणा, रस, ध्वनि-भेद, गुणी भूतादि अष्टव्यंग्य, दोष और अंत में सविस्तार अलंकार का वर्णन है। उदाहरणों में प्रायः राजा की प्रशंसा के छंद लिखे गए हैं, जो उत्कृष्ट हैं। भाषा इनकी अति ही मधुर शुद्ध व्रजभाषा है। इसमें अलंकारों का वर्णन बहुत अच्छा किया गया है और बहुत ही मार्के के उदाहरण दिए गए हैं। यह भाषा-रीति-विषयक एक प्रशंसनीय ग्रंथ है। इस ग्रंथ में कुल ५६६ छंद हैं। हम इस कवि को दासजी की श्रेणी का समझते हैं।

उदाहरण—

बैरिन की बाहिनी को भीषम निदाघ रवि,
कुवलय केलि को सरस सुधाकरु है ;
दान झरि सिंधुर है जग को बसुंधर है,
बिबुध कुलनि को फलित कामतरु है ।

पानिप मनिन को रतन रतनाकर,
कुवेर पुन्य जननि को छमा महीधरु है ;
अंग को सनाह वनराह को रमा को नाह,
महाबाहु फतेशाह एकै नर वरु है ॥ १ ॥
काजर की कोर वारे भारे अनियारे नैन,
कारे सटकारे वार छहरे छवानि छ्वै ;
श्याम सारी भीतर भरक गोरे गातन की,
ओपवारी न्यारी रही वदन उज्यारी वै ।
मृग मद वेंदी भाल में दी याही आभरन,
हरन हिये की तू है रंभा रति ही क्वै ;
नीके नथुनी के तैसे सुंदर सुहात मोती,
चंद परच्चै रहे सुमानौं सुधाबुंद द्वै ॥ २ ॥

प्रथम त्रैवार्षिक खोज में इनका अलंकारदर्पण-नामक एक और ग्रंथ लिखा है जिसका रचनाकाल १८२७ है । इसमें यह कवि अपना दीवान हिंदूसिंह के पास रहना कहता है ।

(८७६) नाथ

इस नाम के कई कवि सुने गए हैं, एक भगवंतराय खीची के आश्रित थे और एक वनारस-निवासी, जो संवत् १८१६ के लगभग हुए हैं । पहले नाथ का केवल एक कवित्त हमारे देखने में आया है, जिसमें भगवंतराय की प्रशंसा की गई है, पर उसमें खीची-राज का और औरंगज़ेब का समकालीन होना लिखा है, जो अशुद्ध है, क्योंकि वे तो १८१७ संवत् के आसपास हुए हैं और औरंगज़ेब की मौत १७६७ में हुई । अतः जान पड़ता है कि यह छंद किसी का मनगढ़ंत है और शायद खीची-राज के आश्रय में कोई नाथ कवि न थे । वनारसवाले नाथ कवि के १०-१२ छंद हमने देखे हैं । इनकी कविता साधारणतया अच्छी है और अधिकांश में शृंगार-

रस ही की है। कोई विशेष नूतन भाव इनमें हमने न पाए, पर इनकी कहनावत अच्छी है। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण—

सोहत अंग सुभाय के भूषन भौंर के भाय लसैं लट छूटी :
लोचन लोल अमोल विलोकत तीय तिहू पुर की छवि लूटी।
नाथ लटू भए लालन जू लखि भामिनि भाल की वंदन बूटी.;
चोप सों चारु सुधारस लोभ बिधी विधु मैं मनौ इंद्र वधूटी।

शायद इन्हीं नाथ ने भागवतपचीसी रची'। संभव है कि मानिकचंद के यहाँवाले नाथ यही हों। [द्वि० त्रै० रि०]

(८७७) हरिनाथ ब्राह्मण (नाथ)

ये महाशय गुजराती ब्राह्मण काशी-निवासी थे। इन्होंने संवत् १८२६ में अलंकारदर्पण [प्र० त्रै० रि०]-नामक अलंकार का ग्रंथ वनाया। इसमें पहले ८६ दोहों में लक्षण, तत्पश्चात् ४० छंदों द्वारा उनके उदाहरण, फिर १७ दोहों द्वारा अनुप्रास वर्णन किया गया है। इन्होंने एक-एक छंद में कई-कई उदाहरण रक्खे हैं। इनका दूसरा ग्रंथ पृथीशाह मुहम्मदशाह इतिहास-संबंधी है, जो विलायत के अजायब घर में नं० ६६५७ पर रक्खा है। इनकी भाषा व्रजभाषा है और वह साधारणतया अच्छी है। हम इनको साधारण श्रेणी में रखते हैं।

रोवति रिसाति मुसुकाति अरु हाहा खाति,
मद को करत धन जोबन समाज है ;
आगमन पीतम को सुनत छबीली बाल,
हरखि लजाति हिय होत सुख साज है।
राम के जनम रहे दाम दफतर बीच,
चित्रसारी मध्य देखे घोरे गजराज है ;

नाथ जू भनत दुख अंत करै प्यारो कितौ,
अंतक करैगो एरी जान्यो मन आज है ॥ १ ॥
तरुनी लसति प्रकास ते मालति लसति सुवास ;
गोरस गोरस देत नहिं गोरस चहति हुलास ॥ २ ॥

(८७८) ब्रजवासीदास

ये महाराज वल्लभाचार्य की संप्रदाय में थे। आचार्यवंशोद्भव मोहन गोसाईं इनके गुरु थे। इन्होंने [खोज १६०४] "प्रबोध-चंद्रोदय" (१८१६) का भाषानुवाद विविध छंदों में किया, जिस की भाषा खड़ी बोली मिश्रित ब्रजभाषा है, जो प्रशंसनीय है। यह ग्रंथ रॉयल अठपेजी के १३४ पृष्ठों में समाप्त हुआ है। आपने संवत् १८२७ में 'ब्रजविलास' [द्वि० त्रै० रि०]-नामक एक बढ़िया ग्रंथ बनाया। इसी ग्रंथ में उपर्युक्त बातें लिखी हुई हैं। आपने अपने विषय में और कुछ नहीं लिखा है। ठाकुर शिवसिंहजी ने इनको वृंदावन-वासी माना है और अनुमान से यह ठीक भी जान पड़ता है, क्योंकि वल्लभाचार्य के संप्रदायवाले वहीं रहते हैं और ये आचार्यजी के एक वंशधर के शिष्य थे। यह भी अनुमान से जान पड़ता है कि ये महाशय माथुर ब्राह्मण थे।

ब्रजविलास एक बड़ा ग्रंथ है। रॉयल अठपेजी से कुछ बड़े फ़रमों में यह ५४६ पृष्ठों में छपा है। इसके विस्तार के विषय में ब्रजवासी-दासजी ने यह लिखा है कि—

सिगरे दोहा आठ सौ और नवासी आहि ;
हैं इतनेही सोरठा ब्रजविलास के माहिं ॥ १ ॥
दश सहस्र पट सों अधिक चौपाई विस्तारु ;
छंद एक शत पट अधिक मधुर मनोहर चारु ॥ २ ॥
सब को नुष्टुप छंद करि दश सहस्र परिमान ;
खंडित होन न पावहीं लिखियो जानि सुजान ॥ ३ ॥

इन्होंने सूरसागर के आधार पर यह ग्रंथ बनाया और यह साफ़ कह दिया है कि मैं काव्यानंद के अर्थ इसे न बनाकर केवल भजनानंद के लिये बनाता हूँ। अपनी रचना का संवत् भी इन्होंने लिखा है—

संवत् शुभ पुराण शत जानौ ; तापर और नछत्रन आनौ।
माघ सुमास पच्छ उजियारा ; तिथि पंचमी सुभग ससि बारा।
श्री बसंत उत्सव मन जानी ; सकल विश्व मन आनँद दानी।
मन मैं करि आनंद हुलासा ; ब्रजबिलास को करौं प्रकासा।
भाषा की भाषा करौं छमिए सब अपराध ;
जेहि तेहि बिधि हरि गाइए कहत सकल श्रुति साध।
या मैं कछुक बुद्धि नहिं मेरी ; उक्ति युक्ति सब सूरहि केरी।
मोते यह अति होत ढिठाई ; करत विष्णुपद की चौपाई।
मैं नहिं कबि न सुजान कहाऊँ ; कृष्ण बिलास प्रीति करि गाऊँ।
सो विचार कै श्रवणन कीजै ; काव्यदोष गुण मन नहिं दीजै।

इस बृहत् ग्रंथ में इस कवि ने श्रीकृष्णचंद्र की लीलाओं का विस्तार-पूर्वक वर्णन किया है, परंतु उद्धव-संवाद के पीछे सूर की भाँति इन्होंने श्रीकृष्ण को छोड़ दिया है। सूरदास ही की भाँति ब्रजवासीदास भी ब्रजवासी यशोदा-नंदन एवं गोपिकावल्लभ कृष्ण के दास थे, अतः इन्होंने भी कृष्ण के इन्हीं चरित्रों के वर्णन किए हैं। ये महाशय गोस्वामी तुलसीदास के मार्ग पर चले हैं और इन्होंने भी गोस्वामीजी की भाँति दोहा-चौपाइयों, एवं कुछ अन्य छंदों में अपना ग्रंथ बनाया है। इन्होंने सूरदास से कथा एवं भाव और तुलसीदास से रीति एवं भाषा लेकर ब्रजविलास में इन दोनों महात्माओं का सम्मेलन-सा करा दिया है। ब्रजविलास में जितनी लीलाओं के वर्णन हुए हैं वे सब बड़े विस्तार के हैं। इस कवि ने युद्ध और वियोग के स्पष्ट रूप खींचे हैं। गोवर्द्धनधारण, कृष्ण का

मथुरागमन और उनका कुवलयापीड़ हाथी एवं मल्लों से युद्ध आदि कितनी ही लीलाओं के इसमें अच्छे वर्णन हैं।

इस कवि की भाषा में भी तुलसीदासजी की भाँति बैसवाड़ी का प्राधान्य और व्रजभाषा का बहुत कम मेल है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने व्रजभाषा का ऐसा कुछ तिरस्कार-सा कर दिया कि उनके अनुयायीगण व्रजवासी होने पर भी व्रजभाषा का बहुत कम व्यवहार करने लगे। भाषा के अन्य सत्कवियों की भाँति इस कवि की भी भाषा प्रशंसनीय है। सब बातों पर ध्यान रखके हम इन्हें भी मधुसूदनदास की श्रेणी का कवि समझते हैं। इनकी कविता के उदाहरणस्वरूप हम कुछ छंद नीचे लिखते हैं—

वार बार चपला चमकि झकझोरत चहुँओर ;
अरर अरर आकास ते जल डारत घन घोर ॥ १ ॥
सात दिवस बीते यहि भाँती ; बरषत जल जलधर दिनराती।
कोपि कोपि डारत जलधारा ; मिटी न व्रज की नेकु लगारा।
भए जलद जलते सब रीते ; रहो एक गुन द्वै गुन बीते।
महा प्रलय जल बरसे आनी ; व्रज मैं बूँद न पहुँच्यो पानी।

× × ×

जबहिं श्याम ऐसे कह्यो बिलखि उठीं सब नार ;
देखो री मारन चहत मल्ल उभै सुकुमार ॥ २ ॥
अतिहि निठुर उर जाति अहीरा ; लोभ लागि पठए दोउ बीरा।
होन चहत अबधौं बिधि कैसी ; कहत कंस यह बात अनैसी।

× × ×

गहन न पावत घात छूटि जात लपटात पुनि ;
शिव बिधि पै न गहात तिन्हैं मल्ल चाहत गहन ॥ ३ ॥
स्याम सहज मल्लन सों खेलैं ; पकरि पकरि भुजदंडन पेलैं।
भए प्रथम कोमल तन ताहीं ; सिथिल रूप पविवत मनमाहीं।

× × ×

वार बार जसुदा यों भाखै ; कोऊ चलत गोपालहि राखै।
सुफलक सुत वैरी भो आई ; हरे प्राण धन बाल कन्हाई।
हरहु कंस वरु गोधन सारो ; कै करि मोहिं बंध मैं डारो।
ऐसेहू दुख श्याम सभागे ; खेलहिं मो नैनन के आगे।
लै गए मधु अक्रूर निकारी ; माखी ज्यों सब दीन बिडारी।
देखत रहीं थकी टक लाई ; जब लगि धूरि दृष्टि मैं आई।

भए ओट जब दृगन ते, मूर्छि परीं बिलखाय ;
कहति गयो रथ दूरि अब, धूरि न परति लखाय ॥४॥

खग मृग बिकल जहाँ तहँ बोलैं ; गाय वत्स राँभत सब डोलैं।
तरु बेली पल्लव कुम्हिलानी ; ब्रज की दसा न परति बखानी।

× × ×

इंद्री जीति करै बस अपने तजै जगत की आसा है,
जोड़ै प्रेम नेह साँईं सों रहै दरस रस प्यासा है ;
आपा मेटि गरद करि डारै सिर दै लखै तमासा है,
यह बिधि गहै संत तब होवै यों क्या दूध बतासा है ॥ ५ ॥

फूलन ही के दुकूल महा छबि भूषण फूलन के अभिराम ते,
फूलन को सिर गुच्छ लसै अरु कंदुक फूलन के कर बाम ते ;
फूल सरासन सायक पानि भुजा रति ग्रीव रमै रस बाम ते,
ऐसो सरूप मनोभव को उठि आयो है मानो बसंत के धाम ते ॥६॥

नाम—(८७९) जगतसिंह बिसेन बोतहरी, ज़िला गोंडा।

ग्रंथ—(१) छंद शृंगार (१८२७), (२) साहित्यसुधानिधि, (१८५८), (३) नखशिख (१८७७), (४) चित्रमीमांसा, (५) चित्रकाव्य।

कविताकाल—१८२७।

विवरण—इनकी कविता बहुत अच्छी है। ये भाषा-काव्य के

आचार्यों में गिने जाते हैं। इनकी गणना तोष कवि
की श्रेणी में की जाती है।

सीस लसै ससि-सी नख रेख खरी उपटी उर पै नगमालै,
पेंच खुले पगरी के बने जनु गंग तरंग बनी छवि जालै;
जागत रैनिहुके अलसाय कियो विपपान रहे दृग लालै,
देखहु रूप सखी हरि को हर को धरि आवत रूप रसालै।

नाम—(७७९/१) किशोरदास।

रचनाकाल—१८२७।

विवरण—अहमदाबाद के देवता का वर्णन।

(८८०) गोकुलनाथ

(८८१) गोपीनाथ, (८८२) मणिदेव

महाराजा काशीनरेश के यहाँ बंदीजन रघुनाथ कवीश्वर बड़े मान से रहते थे। उनको महाराजा ने चौरा ग्राम दिया, जहाँ उनका कुटुंब रहने लगा। उन्हीं के पुत्र गोकुलनाथ थे, जिनके पुत्र गोपीनाथ हुए। ये दोनों महाशय अच्छे कवि थे। कविवर मणिदेवजी गोकुलनाथ के शिष्य थे। रघुनाथ कवि ने संवत् १७९६ से १८०७ तक कविता की। उनके पुत्र गोकुलनाथ के विपय में शिवसिंहसरोज में लिखा है कि उन्होंने चेतचंद्रिका और गोविंदसुखदविहार-नामक दो ग्रंथ बनाए हैं। इनका बनाया हुआ तीसरा ग्रंथ राधाकृष्ण-विलास है, जो विपय और आकार दोनों में जगत्विनोद के बराबर है। इसको पं० युगुलकिशोरजी (ब्रजराज) ने देखा है। इनकी रचना में चेतचंद्रिका व महाभारत हमारे पास प्रस्तुत हैं। राधाजी का नखशिख, नाम रत्नमाला कोप, [खोज १९०३] सीताराम गुणार्णव, अमरकोप भापा और कविमुखमंडल [खोज १९०२]-नामक इनके और ग्रंथ खोज में लिखे हैं। प्रथम ग्रंथ में ९६८ छंद हैं जिनके द्वारा काशी-नरेश महाराजा चेतसिंह की वंशावली एवं अहंकारादि का विपय पूर्णतया कहा गया है।

गोपीनाथ का बनाया हुआ भाषाभारत से इतर कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया, परंतु इनके स्फुट छंद भी इधर-उधर पाए जाते हैं। मणिदेवजी का भी कोई अन्य ग्रंथ हमने नहीं देखा, परंतु रामचंद्र की प्रशंसा में इनके बहुत-से छंद देखे हैं। इन तीनों कवियों ने मिलकर काशी-नरेश महाराजा उदितनारायणसिंह की आज्ञा से संस्कृत महाभारत और हरिवंश का भाषा छंदों में बड़ा ही विलक्षण और प्रशंसनीय अनुवाद किया। इसके द्वारा इन तीनों कवियों का कथा-प्रासंगिक भाषा-साहित्य पर बहुत बड़ा उपकार हुआ है। कथा-प्रसंग का इतना बड़ा ग्रंथ और कोई भी नहीं है। इसमें कुल मिलाकर १८६६ पृष्ठ हैं और इन पृष्ठों का आकार रॉयल अठपेजी का दुगुना है। फिर भी ये छोटे टाइप में छपे हुए हैं। इनके समय तक कथा-प्रसंग की कविता में छंदों के विषय में तुलसीदास और केशवदासवाली दो प्रणालियाँ थीं। प्रथम में दोहा-चौपाइयों तथा द्वितीय में विविध छंदों और विशेषतया सवैया एवं घनाक्षरियों में रचना करने की परिपाटी स्थिर हो गई थी। द्वितीय में एक प्रकार के छंद एक साथ बहुत नहीं लिखे जाते थे, और छंद शीघ्र बदले जाते थे। इसके उदाहरण केशवदास, गुमान मिश्र, सूदन आदि हैं। इन कवियों ने देखा होगा कि केवल दोहा-चौपाइयों में रचना करने से यदि वे छंद बहुत ही उत्तम न बने, तो इतना बड़ा ग्रंथ बिलकुल फीका हो जायगा, जैसे कि बहुत-से ग्रंथ हो गए। इन्होंने यह भी सोचा होगा कि जल्द छंद बदलने से इतना बड़ा ग्रंथ बनाने में कृतकार्यता मिलनी कठिन है। शायद इन्हीं विचारों से इन्होंने एक तीसरी प्रथा निकाली। केवल दोहा-चौपाई न लिखकर इन्होंने विविध छंदों में रचना की, सवैया, घनाक्षरी, छप्पय, कुंडलिया आदि का प्राधान्य नहीं रक्खा, और जो छंद उठाया उसको कुछ दूर तक चलाया।

इनकी कविता-शैली और शक्ति बहुत सराहनीय हैं। इनको

बहुत बड़ा काम करना था, परंतु इनकी ऐसी कुछ हथौटी पड़ गई थी कि इन्होंने उस महाकार्य को सफलता-पूर्वक आद्योपांत निभा दिया और रचना किसी स्थान पर शिथिल नहीं होने पाई। कथा कहने का इन्होंने ऐसा कुछ अनोखा ढँग निकाल लिया है कि वह प्रायः सब कवियों से पृथक् है। कथा में ये तीनों कवि ऐसी मिलती-जुलती रचना करते थे कि यदि अध्यायों के पीछे ये अपना नाम न लिखते तो समस्त कविता एक ही व्यक्ति की समझने में किसी को लेश-मात्र संदेह न होता। कवित्व-शक्ति और रचना-शैली इन तीनों कवियों की बिलकुल एक हैं।

प्रत्येक अध्याय के पीछे इन्होंने रचयिता का नाम लिख दिया है। गोकुलनाथ ने आदि, सभा, वन, विराट और उद्योग पर्वों का अनुवाद किया, जिनमें से वन-पर्व के केवल चार अध्याय इनके नहीं हैं। इन्होंने भीष्म पर्व के पाँच, द्रोण-पर्व के चार, और शांति-पर्व के नौ अध्यायों का भी अनुवाद किया। गोपीनाथ ने भीष्म और द्रोण-पर्वों के शेष भाग, तथा अश्वमेध, आश्रम-वासिक, मुशल और स्वर्गारोहण-पर्वों एवं हरिवंश पुराण का अनुवाद किया। शांति-पर्व के इन्होंने केवल ३० अध्याय लिखे। मणिदेव ने कर्ण, शल्य, गदा, सौसिक, ऐषिक, विशोक, स्त्री और महाप्रस्थान पर्वों तथा शांति-पर्व के शेष प्रायः २२५ अध्यायों की रचना की। वन-पर्व के शेष चार अध्यायों में से गोपीनाथ और मणिदेव ने दो-दो अध्याय बनाए। इस हिसाब से महाभारत में इन तीनों महाशयों ने आकार में भी बराबर कविता की। जान पड़ता है कि इन तीनों कवियों ने महाभारत और हरिवंश को मिलाकर तीन बराबर भागों में विभक्त करके एक-एक भाग का अनुवाद कर डाला।

व्यासजी ने इतनी बृहत् पुस्तक बनाने में भी उसे ऐसी युक्ति से बनाया कि वह प्रत्येक स्थान पर रोचक है। उनको इस बड़े ग्रंथ में

विवश होकर कुछ ऐसे विषय भी लाने पड़े, जो रुचिकर नहीं हैं, परंतु वे इस बात को पहले ही से जानते थे, अतः उन्होंने बहुत वर्णनों के बीच कहीं-कहीं थोड़ा-सा अरोचक विषय ऐसा हिला-मिला दिया है कि उसकी अरोचकता अखरती नहीं है। हमने इन कवियों के इस बृहत् ग्रंथ को आद्योपांत क्रम से पढ़ा है, परंतु यह किसी स्थान पर भी अरुचिकर नहीं हुआ। यदि कोई बालक इस ग्रंथ को पढ़े तो उसे भी कवित्व-शक्ति प्राप्त हो सकती है। हमको बाल्यावस्था में इस ग्रंथ के पढ़ने की बड़ी रुचि थी, क्योंकि इसमें अत्यंत रोचक कथाएँ हैं। हमारे संबंधी विशाल कवि भी इसे बहुत पढ़ा करते थे। विशालजी को एवं हमें कविता करने की रुचि और कवित्व-शक्ति पहले पहल इसी ग्रंथ से प्राप्त हुई थी। हम लोगों के प्रथम ग्रंथों की रचना-शैली भी इसी ग्रंथ से मिलती थी, यद्यपि पीछे से यह शैली छूट गई।

यह ग्रंथ बड़ा ही प्रशंसनीय और उपकारी है। भाषा-कथा-प्रेमियों को महाराजा उदितनारायणसिंहजू देव का बहुत कृतज्ञ होना चाहिए कि उन्होंने विपुल धन-व्यय करके भाषा-रसिकों के लिए यह रत्न सुलभ कर दिया। सुना जाता है कि उन्होंने पहले इन कवियों के पास इन्हें मदद देने को पंडित नियत कर दिए थे और फिर ग्रंथ समाप्त होने पर उन्हें एक लक्ष मुद्रा पुरस्कार में दिए। पहले यह ग्रंथ कलकत्ते में छपा था और फिर अमेठी के राजा माधवसिंहजी की इच्छानुसार यह लखनऊ में मुंशी नवलकिशोर सी० आई० ई० के यंत्रालय में संवत् १९३० में प्रकाशित हुआ। इसका तीसरा संस्करण भी निकला है।

इन कवियों ने अपने ग्रंथ का समय नहीं लिखा है। हमने इस विषय में महाराजा बनारस के यहाँ से हाल पूछा था, सो मणिदेव के पौत्र कवि सीतलाप्रसादजी ने लिखा कि महाभारत संवत्

१८८४ में समाप्त हुआ। सुना जाता है कि इसकी रचना बहुत काल तक होती रही थी। गोकुलनाथ का कविता-काल अनुमान से लगभग संवत् १८२८ से प्रारंभ होता है। यही समय इस अनुवाद के आरंभ का समझना चाहिए। उनके लेख से यह भी विदित हुआ कि मणिदेव वंदीजन भरतपूर रियासत के जिहानपूर-नामक ग्राम के रहनेवाले थे। इनकी माता के मरने पर इनके पिता ने द्वितीय विवाह किया। अपनी विमाता के कुव्यवहार से रुष्ट होकर ये बनारस चले गए और गोकुलनाथजी के यहाँ रहने लगे। अन्य स्थानों पर भी इनकी कविता का मान हुआ और इन्हें गज, तुरंग, ग्रामादि मिले। अपनी अंतिम अवस्था में ये कभी-कभी पागल भी हो जाते थे। इनका शरीरपात संवत् १९२० में हुआ। काव्य-प्रणाली में इनमें गोकुलनाथ, दास कवि की श्रेणी के, और गोपीनाथ व मणिदेव तोष की कक्षा में हैं और कथा-प्रासंगिक कवियों में इनकी गणना छत्र कवि की श्रेणी में है। इन्होंने काव्य-प्रणाली में व्रजभाषा को प्रधान रक्खा, परंतु कथा-वर्णन में इनकी कविता में व्रजभाषा और तुलसीदास की भाषाओं का मिश्रण हो गया है। इन्होंने अनुप्रास यमकादि का आदर न करके सीधी भाषा को प्रधान रक्खा; फिर भी इनकी कविता बड़ी ज़ोरदार है। इन कवियों ने बड़ा भारी कथा-प्रासंगिक ग्रंथ बनाया; अतः यदि इनके उदाहरण कुछ बढ़ जायँ तो पाठक हमको क्षमा करेंगे।

गोकुलनाथ

राधाकृष्णविलास—

सखिन के श्रुति मैं उकुति कल कोकिल की,
    गुरुजन हू के पुनि लाज के कथान की;
गोकुल अरुन चरनांबुज पै गुंज पुंज,
    धुनि-सी चढ़ति चंचरीक चरचान की।

पीतम के स्रवन समीप ही जुगुति होति,
मैन मंत्र तंत्र के बरन गुन गान की ;
सौतिन के काननि मैं हलाहल ह्वै हलति,
एरी सुखदानि तो बजनि बिछुवानि की ॥ १ ॥

चेतचंद्रिका—

पेंच खुले पगरी के उड़ैं फिरै कुंडल की प्रतिमा मुख दौरी ;
तैसियै लोल लसैं जुलफैं रहैं एहो न मानति धावति धौरी ।
गोकुलनाथ किए गति आतुर चातुर की छवि देखिन बौरी ;
ग्वालनि ते कढ़ि जात चल्यो फहरात कँधा पर पीत पिछौरी ॥२॥

महाभारत भापा—

हतो हम शिशुपाल को सुनि शाल्व नृप करि क्रोध;
सहित सेना आय कीन्हो द्वारिका को रोध ।
सुदृढ़ नाना भाँति रचित पुरी सो अति मान;
बसत जामैं वृष्णि जादव वीर बर बलवान ॥ ३ ॥
शस्त्र नाना भाँति के अति उग्र जंत्र उदार;
सहित पुर के ओर चारौं वज्र सार प्रकार ।
ओर चारों महत परिखा भरी सलिल अखर्व;
धरी बुर्जन पै भुसुंडी महत आयत सर्व ॥ ४ ।
दुर्ग अतिही महल रचित भटन सों चहुँ ओर;
तौन घेरो शाल्व भूपति सैन लै अति घोर ।
एक मानुस निकसिबे की रही कितहुँ न राह;
परी सेना शाल्व नृप की भरी जुद्ध उछाह ॥ ५ ॥
शाल्व नृपति कहँ अति बल मानि ; कंपित पुरी विषम रण जानि ।
तब प्रद्युम्न निकसि बल ऐन ; यों सुभटन सों बोलो बैन ।
समाधान सों तुम सब बीर ; ठाढ़े इहाँ रहौ धरि धीर ।
लखौ हमारो युद्ध महान ; शाल्व निवारन करत सुजान ।

निसित सरन सों सेना मारि ; देत शाल्व की महि पै डारि ।
यदु बंसिन पै कहि इमि वैन ; चढ़ो परम रथ पै बल ऐन ।
मकर केतु यों लसो बिसाल ; मुख पसारि जनु धावत काल ।
चपल तुरँग इमि लसे श्रमान; मनौ गगन महँ चहत उड़ान ।
विद्युत सरिस चाप अति घोर; फिरत दुहू कर मैं दुहु ओर ।
कढ़ि प्रद्युम्न सैन ते तूर्ण ; चलो शाल्व पै अमरख पूर्ण ॥ ६ ॥

लहि सुदेष्णा की सुआज्ञा नीच कीचक जौन ;
जाय सिंहिनि पास जंबुक तथा कीन्हयो गौन ।
लगो कृष्णा सों कहन यहि भाँति सस्मित बैन ;
इहाँ आई कहाँ ते तुम कौन हौ छवि ऐन ॥ ७ ॥
चंद्रवदनी कहहु हमसों सत्य सो अभिराम ;
भरी परमा कांति सों सुकुमारता की धाम ।
कमलनयने अंग तो सब वसीकर के यंत्र ;
चारुहासिनि सुधा-से तव बचन मोहन मंत्र ॥ ८ ॥
नहीं तुम-सी लखी भू पर भरी सुखमा बाम ;
देवि यची किन्नरी कै श्री सची अभिराम ।
कांति सों अति भरो तुमरो लखत वदन अनूप ;
करैगो नहिं स्ववश काको महा मनमथ भूप ॥ ६ ॥
हार योग्य सुसद्य उन्नत कनक कुंभ समान ;
करत उरसिज रावरे अति व्यथित कठिन महान ।
लसति त्रिवली भंग-सी दवि धरे उरसिज भार ;
उदर छाम गँभीर नाभी लाँक तनु सुकुमार ॥ १० ॥
सरित पुलिन समान जंघा सघन पीन अलोम ;
मदन रोग अमोघ कारन अंग तो छवि तोम ।
करहु मेरे संग सुंदर सौख्य को अभिराम ;
खान पान विधान भूखन वसन सों छवि धाम ॥ ११ ॥

द्रोणाचार्य कोपि तेहि पल मैं ; पारयौ प्रलय पांडवी दल मैं ।
बाण वृष्टि कर व्यूह विदारण ; मर्दत भटन भूरि भय भारण ।
मंडल सम कोदंडहि कीन्हें ; फिरत चक्र सम गुरुता लीन्हें ।
पुरुषसिंह द्विज वर की दपटैं ; दावानल सम सर की लपटैं ।
सहि न सके उनके भट एकौ ; थिर न सके धरि धीरज नेकौ ।
प्रलैकाल के रुद्र समाना ; लसत भयो तहँ द्रोण अमाना ।
हय गज रथ भट अगणित काटे ; रुंड-मुंड सों रण महि पाटे ।
बर्धित कियो रुधिर की सरिता ; निज विक्रम गिरिवर की चरिता ।
निज विक्रम की गुरुता लीन्हें ; सब थर पर भट मर्दित कीन्हें ।
यहि विधि निज भट मर्दित देखी ; सदल सबंधु धर्म नृप देखी ।
घन समूह सम बढ़ि अति बलसों ; भिरयो आय द्विजराज सदल सों ।
उड़ैं वायुवश ह्वै तृण जैसे ; भए पराजित पर भट तैसे ।
द्विज के सरि झरिसों तेहि पल मैं ; हाहाकार मच्यो पर दल मैं ।
अगिनि अलात असंख्यन देखी ; भगैं करिनि जिमि भय सो भेखी ।
तिमि लखि बाण जाल द्विजबरके; थिरि न सकत अब योधा पर के ।
जिमि सिंहहि लखि मृग गण भागत;भगे जात तिमि भयसों पागत॥१२॥

गोपीनाथ

प्रबल अरि को दाप लहि युग शत्रु मिलि ह्वै मित्र ;
करत बचिबे की जुगुति निष्कपट ह्वै निह चित्र ।
मिटे अरि को दाप तिनको उचित नहिं विश्वास ;
सुनौ कहियत भूमिपति इक पूर्व को इतिहास ।
रह्यो कानन बीच कहुँ बट वृक्ष अति कमनीय ;
चहूँ दिशि ते लतन छादित निबिड़ अति रमनीय ।
बिहँग अगनित भाँति के तहँ रमत बोलत बैन ;
मृगा आवत तासुतर ते लहत अतिसय चैन ।

पलित नामक मूष शत मुख बिवर करि तरतासु ;
भयो निवसत अति बिचच्छन चंपल लच्छन जासु ।
बसत हो बट बृच्छ पै मार्जार लोमस नाम ;
गहि अनुच्छिन खात पच्छिन कृत अदच्छिन काम ।
जात जालपसारि व्याधा तहाँ साँझहि जाय ;
रहो असरख करम जाको सरम नहिं सरसाय ।
एक दिन मार्जार लोमस बझो तामधि पापि ;
परो व्याकुल कलपनो करि मरन अपनो थापि ।
बझो लखि अखुभुकहि अखु कढ़ि लगो चरन निशंक;
परे आपद प्रबल खल पै होत मोदित रंक ।
जाल बंधन दंड पै चढ़ि लगो आमिख खान ;
प्रबल शत्रुहि बझो लखि कै हिए अति हरखान ।
आय कै बट साख पै तेहि समय ढूक उलूक ;
भरत भय मनु धरत निरखत करत भीषम कूक ।
आइ उत मग रोकि बैठो नकुल गहिवे ताहि ;
ताहि छन हिय दाहि अखु रहि गयो यहि वहि चाहि ।
उभय शत्रुन देखि कछु छिन शोक सों रहि ग्रस्त ;
भयो मन मैं गुनत कैसे होय आपद अस्त ।
जीव रहे लों जियन को करिबो उचित उपाय ;
बुद्धिमान तरि आपदा लहत पार सुखदाय ।
हैं स्वछंद ए दोय अरि तीजो जो मार्जार ;
है तापहँ आपद परो प्रानघात उपचार ।
बंधन काटि छोड़ायबे की विधि याहि बताय ;
जो यासों मैत्री करौं तौ संशय मिटिजाय ॥ १४ ॥
तहाँ भीषम किए कार्मुक मंडला कृत बेष ;
तजे बाण बिशाल अगणित अतुल अकथ अलेप ।

कुपित अहि-से सरन सों सब दिशा दीन्ही छाय ;
हते अगणित द्विरद हय अरु रथिन के समुदाय।
सर्वदिशि मैं फिरत भीषम कों सुरथ मन मान ;
लखे सब कोउ तहाँ भूप अलात चक्र समान।
सर्व थर सब रथिन सों तेहि समय नृप सब ओर ;
एक भीषम सहस सम रन जुरो हो तहँ जोर।
लखे जे जेहि ओर भीष्महिं लखे ते तेहि ओर ;
जानि यह सब गुणे भीषम करत माया घोर।
एक-एक इषूनसों यक एक मैगल मारि ;
भीष्म त्तण मैं दिए अगणित द्विरद महि मैं डारि।
मारतंड सम भीषमहिं लखि न सक्यो कोइ तत्र ;
आतप सम छादित दुसह सर देखे सरबत्र।

तब रथ रोकि कृष्ण अनुमानी ; कहे धनंजय सों यह बानी।
पूर्व सभामधि तुम हे पारथ ; प्रण कीन्हे सो करहु यथारथ।
कहे कृष्ण सो सुनि हित बानी ; कहत भयो पारथ अभिमानी।
तात शीघ्र परदल मधि हलिए ; भीषम के सन्मुख लै चलिए।
बूढ़हिं एक बान सों मारी ; रथ ते देहुँ भूमि पर डारी।
सो सुनि कृष्ण हाँकि बर घोरे ; रथ लै गए भीष्म के धोरे।
तहँ भीषम बहु शर तेहि छन मैं ; हने पार्थ अरु प्रभु के तन मैं।
फिरि बहु सहस बाण परिहरि कै ; सरथ पारथहि छादित करि कै।
पांडव के जे भट फिरि आए ; रहे तिन्हैं फिरि मारि भगाए।
बाण असंख्य मारि नभ पथ पै ; देहिं छाय पारथ के रथ पै।
जौ लगि पारथ बान बिदारैं ; तौ लगि भीषम बहु भट मारैं।
भीषम की गुरुता लखि ऐसी ; पारथ की मृदुता लखि तैसी।
मन मैं गुनत भये यदुनायक ; नहिं कोउ भीष्महि जीतनलायक।
आजुहि भीष्म वीर जगजेना ; हतिहि सर्व पांडव की सेना।

भीष्म द्रोण आदिक जे रन मैं ; तिन्हैं बधब अब हम यहि छन मैं ।
इमि कहि चक्र पानि मैं लीन्हें ; करि आमित ऊरध भुज कीन्हें ।
रथ ते कूदि सिंह सम परखत ; चले भीष्म पै धीरन धरखत ।
प्रभु को पाणि नाल बपु सरसो ; लसो चक्र तहँ वारिज वर सो ।
रिसरबि सों विकसित रण दिन मैं ; निरखि रह्यौ तहँ धीरज किन मैं ।
जानि कुरुन को छय सब राजा ; भए प्रकंपित सहित समाजा ।
पुरुषसिंह अनुपम छबि छावत ; कृष्णचंद्र कहँ निज दिसि आवत ।
लखि भीषम करि अचल सरासन ; करत भए हरि सों संभाषन ॥१४॥

× × ×

मणिदेव

वचन यह सुनि कहत भो चक्रांग हंस उदार ;
उड़ौगे मम संग किमि सो कहहु तुम उपचार ।
खाय जूँठो पुष्ट गर्वित काग सुनि ए बैन ;
कह्यौ जानत उड़न की शत रीति हम बलऐन ।
उड्डीन अरु अवडीन अरु प्रडीन अरु नीडीन ;
संडीन तिर्यग्डीन अरु बीडीन अरु परिडीन ।
पराडीन सुडीन अरु अति डीन अरु श्वाडीन ;
डीन अरु संडीन डीनक महाडीन अडीन ।
इन्हैं आदि प्रकार शत हैं उड़न के ते सर्व ;
भली बिधि हम सिखे ताते गहत इतनो गर्व ।
जौन गति की किए होहु अभ्यास तुम गति तौन ;
ग्रहण करिकै उड़ौ मों सँग सकौ जो करि गौन ।
काग के ए बचन सुनिकै कह्यौ हंस सुजान ;
एक गति सब विहँग की तुम काक शत गति वान ।
एक गति सों उड़ब हम तुम यथा रुचित सुबंस ;
बाँधि यहि बिधि बहस लागे उड़न वायस हंस ।

बैठि वृच्छन उड़त तच्छन चल्यौ काग सडौर ;
उड़त बोलत फिरत इत उत गहे गुरुता गौर ।
देखि ताकी इबिधि गति भे मुदित सिगरे काग ;
हंस सिगरे लगे बिहँसन जानि तासु अभाग ।
इबिधि एक मुहूर्त उड़ि भो कहत हंसहि टेरि ;
प्रगट करिए कला निज मम कला इतनी हेरि ।
हंस सुनि हँसि चलो पश्चिम ओर सागर यत्र ;
चलो ताके संग बायस चपल कीन्हे पत्र ।
उदधि पै कछु दूरि लौं बढ़ि जाय थाको काग ;
वृच्छ टापू लखे बिन तजि धीर डरपन लाग ।
शिथिल ह्वैगे पच्छ तब गिरि परो सागर माहँ ;
देखि सो हँसि खरो ह्वै भो कहत हंसजनाहँ ।
पालिव्रत करि शीघ्र मज्जन चलहु बायस कंत ;
एकशत योजन इहाँ ते उदधि को है अंत ।
कहो शत मैं उड़न की यह चारु बिधि है कौन ;
बारि मैं परि तुंड बोरत कढ़त हौ गहि मौन ।
बचन यह सुनि नीच बायस कह्यौ आरत बैन ;
देखि निज दिसि छमा करि अब मोहिं दीजै चैन ।
सुनौ सूतज काग के सुनि बचन हंस अमंद ;
पकरि पग सों ल्याय थल पै दियो डारि स्वछंद ।

× × ×

इमि सुभटन सों टेरि, भीम पराक्रम भीम भट ;
दुस्सासन तन हेरि कहत भयो अमरख भरो ।
तब तो सोनितपान करन कह्यौ हम मधि सभा ;
सो अब करत सुजान सकत त्रान करि कौन भट ।

नृप यह सुनि तो सुत रनधीरा ; कहत भयो इमि बचन गँभीरा ।

ए मम कर करिकुंभ बिदारन ; देनहार गो बाजि हजारन ।
इनके बल तुम सरबस हारे ; वर्ष त्रयोदश बिपिन बिहारे ।
सर पंजर बिरचन बल भारे ; पीनपयोधर मर्दन हारे ।
अति सुकुमार सुगंधन मींजे ; राजसूय के जल सों भीजे ।
केश द्रौपदी के तेहि कर्षण ; करनहार मम भुज अरि धर्षण ।
तुम सब लखत रहे तेहि छन मैं ; तब न रह्यो कछु विक्रम तन मैं ।
क्षात्र धर्म पालन करि रण मैं ; अब हम परे मरे भट गण मैं ।
काग श्रृगाल पियैं मम श्रोनित ; कै तुम पियौ करन करि द्रोनित ॥ १६॥

× × ×

भीम दुर्योधन का गदा-युद्ध

भए तहँ अति करत बिक्रम उभय योधा धीर ;
सहि परसपर गदा गरुई गनत नेकु न पीर ।
गर्जि-गर्जि अखंड गति गहि उभय वीर उदंड ;
करत चालन दोरदंडनि चपल अतिशय चंड ।
सव्य कोउ अपसव्य फिरि जो सव्य सो अपसव्य ;
फिरत बाहत गदा गरुई सुभट भा भरि भव्य ।
शब्द सों भरि दियो अब्दहिं स्तब्ध भेनहिं नेक ;
टूटि टूटि अचूक बाहत गहे जय की टेक ॥ १७ ॥

× × ×

कृपाचारज के वचन सुनि द्रोण सुत अनखाय ;
कह्यौ निज मत श्रेठ सब कहँ परत जानि सचाय ।
कारनांतर योग मैं मति बुद्धि पलटति तात ;
है विचित्र मनुष्य को चित ठीक नहिं ठहरात ।
भिषज भैषज देत जीवन हेतु समुझि निदान ;
कालबस वह मरत तौ सब कहत तेहि अग्यान ।
पुरुषसिंह प्रवीण भूपति कियो राजस धर्म ;

गयो काज नसाय अब सब कहत कुत्सित कर्म।
कहाँ निद्रा आतुरहिं अरु भरो अमरख ताहि ;
कहाँ निद्रा ताहि घेरे महा चिंता जाहि।
सकल ए मम हिए निवसत कहाँ निद्रा मोहिं ;
पिता के बध ते अधिक दुख कौन बूझत तोहिं।
बिप्र हम निज धर्म तजि कै गह्यो छत्री धर्म ;
कर्म छत्रिन के करब अब उचित तजि कै भर्म।
झूठ कहि तजि धर्म उन मम पितहिं डारयो मारि ;
तथा अब हम बधब उन कहँ नीति-धर्म बिसारि।
न्याय सहित लरि शत्रु सों हारे सरवस जात ;
करि अधर्म जीते रहत सर्बस जीति कहात।
समित कार्य तत्पर भजत निजन निरायुध पाय ;
सोवत निशि मैं तहि समय शत्रुहि मारब न्याय ॥ १ ॥

नाम—(८८२) महादाजी सिंधिया।
रचनाकाल—१८२८।
विवरण—ये प्रसिद्ध सींधिया थे। बड़े अच्छे कवि थे। नित्य कविता बनाते थे। हिंदी में भी इन्होंने कविता की है। इनकी कविता का संग्रह 'माधव विलास' के नाम से निकला है। इन्हीं के समय में सोहिरोबानाथ ने भी हिंदी में कविता की है। 'साहित्य-समालोचक' में इनकी कविता छपी है। उदाहरण इस प्रकार है—

अरी बँसुरिया कान्ह की छल तुम कीन्हों कौन ;
उन अधरन लागी रहै हम चाहत हैं जौन।

(८८३) शिवनाथ द्विवेदी

ये महाशय कान्यकुब्ज ब्राह्मण मौज़ा क़ुरसी, ज़िला बाराबंकी (अवध प्रदेश के) रहनेवाले थे। इनका नाम शिवसिंहसरोज में नहीं

है। ये महाशय पँवाँएँ के ठाकुर कुशलसिंह वैस के यहाँ रहते थे। यह स्थान ज़िला हरदोई अवध देश में है। शिवनाथजी ने 'रसवृष्टि' नामक एक ग्रंथ बनाया है, जिसमें उपर्युक्त बातें लिखी हुई हैं। इन्होंने अपने ग्रंथ का संवत् नहीं लिखा। पता लगाने से जान पड़ा कि पँवाँएँ के ठाकुर कुशलसिंह संवत् १८३१ में स्वर्गवासी हुए थे, और इनका ग्रंथ संवत् १८२८ में बना। यह बात कुशलसिंह के वंशधर ठाकुर सर्वजीतसिंह वर्तमान तअल्लुक़दार पँवाँयाँ ने कृपा करके हमें लिख भेजी। शिवनाथ ने ७९ पृष्ठों का यह बड़ा ग्रंथ बनाया है, जिसमें रस-भेद, भाव-भेद और नख-शिख के वर्णन हुए हैं। इनका काव्य सानुप्रास और सुंदर है और वह ब्रजभाषा में लिखा गया है। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण—

चंप चमेली कली चुनि कै अलबेली-सी फूलनि सेज सँवारी;
कुंज कि देहरी वैठि रही मग जोवत स्यामहि गोपकुमारी।
ज्यों-ज्यों गई रजनी सरसाइ कै आवैं न आवैं इतै गिरिधारी;
खोलत मूँदि रहै पट घूँघट कानन कानन सुंदर वारी ॥१॥
नामहि ते गनिका गनि साधनि बाधन काटि गई हरि धामहि;
धामहि धौल सुदामहि दै पठयो प्रभु पास कोहाइ कै वामहि।
वामहि गौतम की गति पाय भई शिवनाथ सपूरन कामहि;
कामहि काम गए दिन बीति अरे मन मूढ़ भजो हरि नामहि ॥२॥

ठाकुर कुशलसिंह के स्वर्गवासी होने के विषय में ठाकुर सर्वजीत-सिंहजी ने राम कवि-कृत निम्न कुंडलिया भेजी है—

धायो फागुन सुकुल कहँ दसमी औ सनिवार;
इंदु राम वसु चंद को संवत है सुभ सार।
संवत है सुभ सार जाम दिन बासर वीते;
अमर नदी के तीर समर कीन्हें मन चीते।

राम कहहि असि बात आजु सुर बृंदहि पायो ;
कुशलसिंह सिरमौर तबहि बैकुंठ सिधायो ।

(८८४) मनीराम मिश्र

ये महाशय क़न्नौज-निवासी इच्छाराम मिश्र के पुत्र कान्य-कुब्ज ब्राह्मण कात्यायन गोत्री अनिरुद्ध के मिश्र थे। इन्होंने संवत् १८२९ में छंदछप्पनी-नामक पिंगल का अद्वितीय ग्रंथ निर्माण किया। उसी से एवं क़न्नौज से जाँचकर इनका यह हाल हमने यहाँ लिखा। इस ग्रंथ की एक बहुत प्राचीन हस्त-लिखित प्रति हमको पं० युगुलकिशोर मिश्र गँधौली-निवासी के पुस्तकालय से प्राप्त हुई है। शिवसिंहजी ने इनका सं० १८३९ दिया है। खोज में इनका आनंदमंगल-नामक ग्रंथ सं० १८२९ का लिखा हुआ है।

छप्पनी ग्रंथ में मनीरामजी ने केवल छप्पन छंदों द्वारा ऐसी विलक्षण रीति से पिंगल का वर्णन किया है कि पाठक थोड़े ही परिश्रम से छंद का विषय समझ सकता है। यह ग्रंथ परम प्रशंस-नीय है। जैसे अलंकार दूलह ने सिर्फ़ ८० छंदों द्वारा स्पष्टतया समझा दिए हैं, उसी तरह इस ग्रंथ से इन्होंने पिंगल के विषय को पाठकों के हस्तामलक कर दिया। इनका यह ग्रंथ सूत्रों के समान कंठस्थ करने योग्य है। केवल इसी एक ग्रंथ को ध्यानपूर्वक समझ लेने से जिज्ञासु को पिंगल के बड़े-बड़े और जटिल ग्रंथ पढ़ने से छुटकारा मिल सकता है। इस ग्रंथ की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। भाषा के दुर्भाग्य से यह ग्रंथ भी अब तक अमुद्रित पड़ा है। इसकी भाषा व्रजभाषा है, परंतु विषय विशेष एवं गंभीर तथा वर्णन सूक्ष्म होने के कारण कानों में कुछ खटकती है। इस ग्रंथ में गण-विचार, उनके देवता और फल का एक ही छंद द्वारा कैसा उत्कृष्ट वर्णन किया गया है कि इस एक ही छंद को कंठस्थ करने से वह गण-विचार पूर्ण रीति से समझ में आ जाता तथा

याद हो जाता है, जिसको कि अन्य आचार्यों ने अध्यायों में कहा है।

तीनि गो मो धरा श्री मनीराम ला आदियों अंबुदै वृद्धि को मानिए;
वीच लारो सुनो वन्हि है मीच को अंत गो सो बयारी श्रमै जानिए।
अंत लो तो सुआकास सून्यै फलै मध्य गा जो रवी रोग को दानिए;
आदि गो भो शशी कीर्तिकों देइ ला तीनि नो नाग आनंद को ठानिए।

इसके समझने को नीचे चक्र दिया गया है।

नाम गण	मगन	यगन	रगन	सगन	तगन	जगन	भगन	नगन
गण का रूप	ऽ ऽ ऽ	। ऽ ऽ	ऽ । ऽ	। । ऽ	ऽ ऽ ।	। ऽ ।	ऽ । ।	। । ।
गण देवता	धरा	अंबु	अग्नि	पौन	आकाश	सूर्य	शशि	नाग
गण का फल	श्री	वृद्धि	मीचु	श्रम	शून्य	रोग	कीर्ति	आनंद

इस छंद में गणों के नामों एवं देवताओं के नामों के प्रथम अंक दिए गए हैं और उस पर छंद पूर्ण होने के विचार से जो मात्राएँ लगा दी गई हैं, उन्हें अर्थ समझते समय निकाल देना चाहिए, जैसे ती नि गो मो धरा श्री का अर्थ समझना चाहिए कि तीनि गुरु होने से मगन होता है, उसकी देवी पृथ्वी है और उसका फल लक्ष्मी है। इसी भाँति अन्य स्थानों पर भी समझना उचित है। सूत्र ग्रंथ होने के कारण ये दूषण नहीं कहे जा सकते। इसी भाँति प्रायः संस्कृत-सूत्र ग्रंथों में वर्णन किया जाता है। यह ग्रंथ बहुत ही प्रशंसनीय बना है, और छंद-प्रेमियों को इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। इसकी रचना पिंगल-सूत्रों के आधार पर की गई है। हम मनीरामजी को दास कवि की श्रेणी में समझते हैं। इस ग्रंथ की यदि टीका हो जावे तो बहुत ही उचित हो और छंद के जिज्ञासुओं को बड़ी मदद मिले।

(८८५) मनभावन ब्राह्मण, मुड़िया, ज़िला शाहजहाँपुरवाले

सरोज में इनका सं० १८३० दिया हुआ है और लिखा है कि ये चंदनराय के १२ शिष्यों में प्रथम हैं। इनका बनाया हुआ शृंगार-रत्नावली ग्रंथ है। जो उदाहरण इनका सरोज में दिया है वह बहुत ही सरस और प्रशंसनीय है। हम इनकी गणना तोष की श्रेणी में करते हैं।

फूली मंजु मालतीन पै मलिंद वृंदवर,
सुरभि लपेट्यो मंद मधुर बहै समीर;
ललित लवंगन की बल्लरी तमाल जाल,
लतिका कदंबन को देखे दूरि होत पीर।
बौंडी गुंज पुंज अति झौंड़ी झुकि झाँप्यो बन,
केकी कुल कलित कपोती पिक बोलैं कीर;
भरे प्रेम श्यामा श्याम गरे भुज धरे दोऊ,
हरे हरे डोलत हैं तरनितनूजा तीर।

नाम—(८८५/१) भूदेव मिश्र।

रचनाकाल—१८३०।

विवरण—ये उत्तर भारत के रहनेवाले थे, पर दक्षिण पूना में रहते थे और हिंदी तथा मराठी की कविता करते थे।

(८८६) तीर्थराज

इनका नाम परागीलाल था और ये चरखारी के निवासी थे। सं० १८३० में इन्होंने रसानुराग-नामक शृंगार-[खोज १९०५] रस का सुंदर ग्रंथ बनाया। इनकी कविता ललित और अनुप्रास-पूर्ण होती थी। हम इन्हें तोष की श्रेणी का कवि समझते हैं।

छपि छपि जात चित चपि चपि जात बहु,
सुंदरता देखि बहु सुंदरता ती की है;
गिरिजा कहा है सुरी सिरिजा कहा है,
जोति जलजा कहा है कहा काम कामिनी की है।

कहै तीर्थराज सुचि सुंदर बरन सील,
उपमा धरन मन हरन दुनी की है;
नख-सिख नीकी गति नीकी, मति नीकी ती की,
ऐसी छबि नीकी वृषभानु नंदनी की है॥ १॥

(८८७) बोधा फ़ीरोज़ाबादी

पंडित नकछेदी तिवारी ने भाषा के कवियों की जाँच-पड़ताल में प्रशंसनीय श्रम किया है। उन्हीं महाशय ने बुँदेलखंडी कवियों से पूछ-पाँछकर बोधा का जीवन-चरित्र लिखा है। उनके अनुसार बोधा कवि सरवरिया ब्राह्मण राजापुर, प्रयाग के रहनेवाले थे। शिवसिंहजी ने भूल से गोस्वामी तुलसीदास के जन्म-स्थान राजापुर को प्रयाग के ज़िले में लिखा है, यद्यपि वह बाँदा में है। जान पड़ता है कि उसी भूल से तिवारीजी ने भी राजापुर को प्रयाग में बतलाया है। किसी संबंध के कारण ये महाशय बाल्यावस्था में ही पन्ना राजधानी को चले गए। इनके संबंधियों की प्रतिष्ठा पन्ना दरबार में अच्छी थी। ये महाशय भी कवि होने के अतिरिक्त भाषा, फ़ारसी और संस्कृत के अच्छे पंडित थे। अतः महाराज इनका मान करने लगे, यहाँ तक कि वह प्यार के कारण इन्हें बुद्धिसेन से बोधा कहने लगे और इसी कारण इनका नाम बोधा पड़ गया। उनके दरबार में सुभान-नामक एक वेश्या थी, जिससे बोधा का भी संपर्क हो गया। इस बात से अप्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें छः महीने के लिये देश-निकाले का दंड दिया। इस अवसर में इन्होंने उस वेश्या के विरह में 'विरहवारीश'-नामक एक उत्तम ग्रंथ बनाया जो हमने देखा है। जब छः महीने के पीछे ये महाशय दरबार में फिर गए और वहाँ इन्होंने विरहबारीश के छंद पढ़े, तब महाराज ने प्रसन्न होकर इन्हें वर माँगने को कहा; इस पर ये बोले कि 'सुभान अल्लाह!' महाराज ने प्रसन्न होकर इन्हें इनकी प्राणेश्वरी सुभान को दे दिया। उस समय से

ये अपनी "मुराद को पहुँचकर" प्रसन्नता-पूर्वक रहने लगे। अपने इश्क़नामा में इन्होंने सुभान की प्रशंसा के बहुत-से छंद कहे हैं। इनका शरीरपात पन्ना में हुआ। इनके जन्म और मरण के विषय में कोई ठीक प्रमाण अब तक नहीं मिला है। ठाकुर शिवसिंहजी ने इनका जन्म-संवत् १८०४ लिखा है, जो अनुमान से ठीक जान पड़ता है। बोधा एक बड़े ही प्रशंसनीय और जगद्विख्यात कवि थे; अतः यदि ये संवत् १७७५ के पहले के होते, तो कालिदासजी इनके छंद हज़ारा में अवश्य लिखते। इधर सूदन कवि ने संवत् १८१५ के लगभग सुजान-चरित्र बनाया, जिसमें उन्होंने १७५ कवियों के नाम लिखे हैं। इस नामावली से प्रायः कोई भी तत्कालिन वर्तमान अथवा पुराना आदरणीय कवि छूट नहीं रहा है, परंतु इसमें भी बोधा का नाम नहीं है। इससे विदित होता है कि संवत् १८१५ तक ये महाशय प्रसिद्ध नहीं हुए थे। फिर पद्माकर आदि की भाँति बोधा का अर्वाचीन कवि होना भी प्रसिद्ध नहीं है, अतः शिवसिंहजी का संवत् प्रामाणिक जान पड़ता है। जान पड़ता है कि बोधा ने लगभग सं० १८३० से १८६० तक कविता की। आगरा के पं० लक्ष्मी-दत्त ने हमें लिख भेजा कि बोधा के लिखे एक पत्र में १८४५ सं० दिया हुआ है। आपने सौंजीराम और मौजीराम को बोधा के भाई, बलदेव, मनसाराम और डालचंद को पुत्र, टीकाराम को पौत्र और गोपीलाल को प्रपौत्र लिखा है, जिनका अभी जीवित होना आप बतलाते हैं। आप कहते हैं कि बोधा कवि फ़ीरोज़ाबाद, ज़िला आगरा के रहनेवाले थे। ये कथन यथार्थ जान पड़ते हैं।

बोधाकृत केवल 'इश्क़नामा' हमारे पास है, जिसमें २५ पृष्ठ और १०६ स्फुट छंद हैं। इसमें थोड़े-से दोहा, बरवै आदि को छोड़कर शेष घनाक्षरी अथवा सवैया छंद हैं। इस ग्रंथ में बोधा ने कोई संवत् नहीं दिया है। इस समस्त ग्रंथ में प्रेम के चोज और तत्त्व

भरे पड़े हैं। जैसे गोस्वामी तुलसीदासजी प्रत्येक स्थान पर राम को देखते थे, वैसे ही बोधा को हर जगह प्रेम देख पड़ता था। दो-एक स्थान को छोड़कर इनका प्रेम ईश्वरसंबंधी न होकर वनितासंबंधी था, परंतु फिर भी यह कवि सच्चा प्रेमोपासक था। प्रेम का ऐसा उत्कृष्ट और सच्चा वर्णन करने में बहुत कम कवि समर्थ हुए हैं। बोधा की रचना हर जगह अत्यंत सजीव और इनकी आत्मीयता से भरी हुई है। सब स्थानों पर इनका अनूठापन झलकता है। यह बड़ा ही सच्चा कवि था और इसने प्रेम की बड़ी सच्ची और सुघर मूर्ति पाठकों के सामने खड़ी कर दी है। इन्होंने ठाकुर की भाँति लिखा है कि प्रेम करना सहल है, परंतु उसका निवाहना कठिन है। प्रेम के विषय में इनका यह मत था—

अति खीन मृनाल के तारहु ते तेहि ऊपर पाँव दै आवनो है ;
सुई बेह ते द्वारसकी न तहाँ परतीति को टाँड़ो लदावनो है।
कवि बोधा अनी घनी नेजहु ते चढ़ि तापै न चित्त डरावनो है ;
यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवारि की धार पै धावनो है ॥१॥

× × ×

विष खाय मरै कै गिरै गिरि ते दगादार ते यारी कभी न करै ;

× × ×

पहलाद की ऐसी प्रतीति करै तब क्यों न कढ़ै प्रभु पाहन तैं।

बोधा के बनाए हुए बहुत-से स्फुट छंद और भी मिलते हैं। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की है, परंतु कहीं-कहीं खड़ी बोलीमिश्रित भाषा भी लिखी है। बोधा की कविता सब मिलाकर बहुत ही प्रशंसनीय है। साहित्य-प्रौढ़ता में बोधा को हम दास की श्रेणी में रक्खेंगे।

पं० सुशील चंद्र चतुर्वेदी ने फ़ीरोज़ाबादी बोधा कवि के विषय में एक नोट लिख भेजा है कि बोधा कवि बुँदेलखंडी से बोधा कवि फ़ीरोज़ाबादी इतर समझ पड़ते हैं। फ़ीरोज़ाबादी बोधा कवि सनाढ्य

ब्राह्मण थे, तथा इनकी कुछ पैतृक भूमि 'रहना'-नामक ग्राम में जो फ़ीरोज़ाबाद के पास है, थी। इनकी कविता कुछ अप्राप्य-सी हो रही है। इन्होंने वागविलास-नामक एक ग्रंथ रचा था। ये सन् १८३० अर्थात् संवत् १८८७ में वर्तमान थे। समय के विचार से तथा कविता-शैली की दृष्टि से हमें यह दोनों एक ही कवि समझ पड़ते हैं।

उदाहरण—

तुम जानति हौजु अजान भई कहि आगे से उत्तर धावत हो;
बतराति कछू औ कछू करतीं अनुराग कि आँसु दुरावत हो।
हमैं काह परी जो मने करिहैं कवि बोधा कहै दुख पावत हो;
बदनामी की गैल बचाय चलौ बड़े बाप की बेटी कहावत हो।

श्रीफल बादाम तूल जामन जमीरी आम,
खारक खजूर नीम नीबू तुन काज है;
करना कनेर बेर सीस सरों गुलाचीन,
गूलर गुलाब ककरौंदा कैंथ साज है।
बेल बेला केतकी पलास पीपलौ नरंगी,
कुंदन कदंब सेब सेवती समान है;
आवासिंह कहै बोध जाके सम लेखियत,
सुरन निवास हेतु बागो बनराज है॥ २॥

पाऊँ हौं गुपाल गुन गाऊँ हौं गोविंदजू के,
ध्याऊँ शिवशंकर मनाऊँ गनपति को;
सारदा सहाई बुद्धि देई अधिकाइ हर,
करि दे सवाई महामाई मो मति को।
श्रीफल चढ़ाऊँ धूप दीप धरि लाऊँ,
जल अगन निवास वाक देव बोध सुत को;
परम पिरोजावाद बाग महासिंह जू को,
लेऊ मन पेड़ सो बनाई देऊँ गति को॥ ३॥

तैं अब मेरी कही नहिं मानति राखति है उर जोम कछू री ;
सो सब को छुटि जात भटू जब दूसरो मारि निकारत भूरी।
बोधा गुमान भरी तब लौं फिरिबो करो जौलौं लगी नहीं पूरी ;
पूरी लगे लखु सूरन की चकचूर ह्वै जाति सबै मगरूरी ॥४॥
एक सुभान के आनन पै कुरबान जहाँ लगि रूप जहाँ को ;
कैयो सतक्रतु की पदवी लुटियै लखि कै मुसुकाहट ताको।
सोक जरा गुजरा न जहाँ कवि बोधा जहाँ उजरान तहाँ को ;
जान मिलै तौ जहान मिलै नहिं जान मिलै तौ जहान कहाँ को ॥५॥
काँपत गात सकात बतात है साँकरी खोरि निसा अँधियारी ;
पातहू के खरकै छरकै धरकै उर लाय रहै सुकुमारी।
बीच मैं बोधा रचै रस रीति मनो जग जीति चुक्यो तेहि बारी ;
यों दुरि केलि करै जग मैं नर धन्य वहै धनि है वह नारी ॥ ६ ॥

इस अंतिम छंद से अधिक शोहदापन मिलना कठिन है। इनके विरहवारीश में विविध छंदों द्वारा एक प्रेम-कहानी प्रायः ५०० पृष्ठों में कही गई है। उदाहरण लीजिए—

हिल मिलि जानै तासों मिलि कै जनावै हेत,
हित को न जानै ताको हितू न बिसाहिए ;
होय मगरूर तापै दूनी मगरूरी कीजै,
लघु ह्वै चलै जो तासों लघुता निबाहिए।
बोधा कवि नीति को निबेरो यही भाँति अहै,
आप को सराहै ताहि आपहू सराहिए ;
दाता कहा सूर कहा सुंदर सुजान कहा,
आप को न चाहै ताके बाप को न चाहिए ॥ ५ ॥

नाम—(८८७/१) ठाकुरदास बाबा।

रचनाकाल—१८११।

विवरण—कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। दक्षिण में एकनाथ के शिष्य

होकर रहते थे। मराठी और हिंदी के कवि थे। बंबई का प्रसिद्ध महल्ला ठाकुरदास रोड इन्हीं के नाम पर प्रसिद्ध है।

नाम—(८८८) ललित किशोरीजी टट्टी संप्रदाय के महात्मा ने बानी रची। देखो नं० ७२७।

इस समय के अन्य कविगण

नाम—(८८९) रसनिधि। देखो नं० ५३८।

नाम—(८९०) हरिदास ब्राह्मण, बाँदा।

ग्रंथ—(१) भाषा भागवत समूल एकादश स्कंध [खोज १९०४] (१८१३), (२) ज्ञान सतसई [खोज १९०४] (१८११), भगवद्गीता भाषा, [प्र० त्रै० रि०] (४) भाषाभूषण की टीका, (५) रामायण (१८३४)।

कविताकाल—१८११।

विवरण—राजा अरिमर्दनसिंह इनके आश्रयदाता थे।

नाम—(८९१) जयसिंह राय रायां कायस्थ, अयोध्या।

ग्रंथ—सतसई पृष्ठ ५८।

कविताकाल—१८१२। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(८९१) देवीदास।

ग्रंथ—(१) परमानंद विलास, (२) प्रवचनसार, (३) चिद्विलास-वचनिका, (४) चौबीसी पाठ।

रचनाकाल—१८१२।

नाम—(८९२) रामदासजी।

ग्रंथ—(१) वाणी, (२) अर्थतत्त्वसार, (३) गर्भचित्रवनी।

कविताकाल—१८१२ से १८५५ तक।

विवरण—साधु कवि निम्न श्रेणी।

नाम—(८९३) फतेहसिंह कायस्थ, कोंच।

ग्रंथ—(१) मतचंद्रिका पृष्ठ १० पद्य, (२) गुणप्रकाश, (३) गुर्रा भाषानुवाद। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८१३।

विवरण—ज्योतिष गुर्रा एक फ़ारसी ग्रंथ है, जिसमें पहली मोहर्रम से लेकर साल-भर का शुभाशुभ वर्णन है।

नाम—(८६३) भारामल्ल।

ग्रंथ—(१) चारुदत्त चरित्र, (२) सप्त व्यसन चरित्र, (३) दान-कथा, (४) शील कथा, (५) रात्रि भोजन कथा।

रचनाकाल—१८१३।

नाम—(८६४) बालकृष्ण। देखो नं० ४५३।

नाम—(८६५) करनीदान।

ग्रंथ—पान वीरमर्दन की बात।

कविताकाल—१८१४।

विवरण—स्त्री थी।

नाम—(८६६) जसराम चारण।

ग्रंथ—राजनीतिविस्तार।

कविताकाल—१८१४। [खोज १६०१]

विवरण—भड़ोच ज़िले के आमोद-नामक ग्राम के निवासी थे। जामनगर के किसी राजा के यहाँ थे।

नाम—(८६७) वैष्णवदास साधु, वृंदावन।

ग्रंथ—गीतगोविंद भाषा पृष्ठ २६। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८१४। [खोज १६०४] में इनकी भक्तरस-बोधनी टीका दृष्टांत नाम्नी पुस्तक मिली है।

विवरण—अनुवाद।

नाम—(८६८) संतदासजी कबीरपंथी फ़क़ीर।

ग्रंथ—(१) स्वामी संतदास की अनभै वाणी, (२) शब्द-माला, (३) स्वासविलास। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८१४ तक।
विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(८९८/१) कृपाराम गूदड़।
ग्रंथ—भागवत दशमस्कंध। [खोज १९०५]
कविताकाल—१८१५।
विवरण—चित्रकूट के महंत थे।

नाम—(८९९) बिहारीलाल।
ग्रंथ—हरदौल चरित्र।
कविताकाल—१८१५। [खोज १९०५]
विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९००) यशोदानंद दास।
ग्रंथ—रागमाल पृ० १४०। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८१५।

नाम—(९०१) रघुराय, बुँदेलखंडी।
ग्रंथ—यमुनाशतक।
जन्म-काल—१७९०।
कविताकाल—१८१५।
विवरण—तोषश्रेणी।

नाम—(९०२) श्रीधर।
जन्म-काल—१७८९।
कविताकाल—१८१५।
विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९०३) गोपालजी चारण।
ग्रंथ—शिषर बंसात पति पीढ़ी वर्तिका।

कविताकाल—१८१६ ।

नाम—(९०४) गोपाल ।

ग्रंथ—भगवंतराय की विरदावली । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८१६ के लगभग ।

नाम—(९०४/१) चिंतामणि ।

ग्रंथ—(१) ज्ञान सहेली, (२) बत्तीस अक्षरी, (३) गीत-गोविंदार्थ सूचनिका । [प्र० तथा च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८१६ ।

नाम—(९०४/२) दूलनदास ।

ग्रंथ—शब्दावली । [पं० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८१७ ।

नाम—(९०५) बेनी ।

ग्रंथ—(१) रसमय, (२) शृंगार, (३) कविता । [खोज १९०३]

जन्म-काल—१७९० ।

कविताकाल—१८१७ ।

नाम—(९०६) वृंदावनदास ।

ग्रंथ—(१) यमुनाप्रताप बेलि, [प्र० त्रै० रि०] (२) श्री हरिनामबेलि, [प्र० त्रै० रि०] (३) विवाह प्रकरण, [प्र० त्रै० रि०] (४) माखन चोर लहरी, [प्र० त्रै० रि०] (५) हरिनाम महिमावली, (६) हित हरिवंसजू की सहस्त्ररसवती, (७) राधा सुधानिधि की टीका, (८) सेवक बानी ।

कविताकाल—१८१७ ।

विवरण—गोस्वामी हरिवंशात्मज गो० हरिलाल की शिष्य-परंपरा में थे ।

नाम—(९०७) कविराय ।

कविताकाल—१८१८ ।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९०८) झामदास ब्राह्मणसाधु।

ग्रंथ—(१) श्रीरामायण [खोज १९०१], (२) रामायंव [खोज १९०३]।

कविताकाल—१८१८।

नाम—(९०९) टोडरमल।

ग्रंथ—(१) आत्मानुशासन, (२) मोक्षमार्गप्रकाशक, (३) त्रैलोक्यसारवचनिका, (४) पुरुषार्थसिद्ध्युपाय वचनिका, (५) गोम्मटसार भाषा टीका।

कविताकाल—१८१८ [खोज १९००]।

जन्म-काल—१७९३।

मृत्युकाल—१८२४।

विवरण—महाराजा टोडरमल नहीं। जयपूरवासी खंडेलवाल जैन थे।

नाम—(९१०) देवदत्त।

ग्रंथ—द्रोणपर्व।

कविताकाल—१८१८ [खोज १९०१]।

विवरण—काश्मीर के महाराज कुमार व्रजराज के कहने से द्रोणपर्व बनाया।

नाम—(९११) मान ब्राह्मण, बैसवारे के।

ग्रंथ—कृष्ण कल्लोल (कृष्ण खंड भाषा)।

कविताकाल—१८१८।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९११/१) लालचंद्र, सांगानेरी।

ग्रंथ—(१) षट् कर्मोपदेश रत्नमाला, (२) वरांग चरित्र, (३) विमलनाथ पुराण, (४) शिखर विलास, (५) आगमशतक, (६) सम्यक्त्व कौमुदी।

रचनाकाल—१८१८।

नाम—(९११/२) वीरकवि (दाऊ दादा), मंडलावासी।

ग्रंथ—(१) प्रेम दीपिका (१८१८), (२) प्रेम दीपिका तरंग (१८१८)। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८१८।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९११/३) शोभा कवि।

ग्रंथ—नवलरस चंद्रोदय। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८१८।

नाम—(९१२) कृष्णकलानिधि।

ग्रंथ—(१) वृत्तचंद्रिका, (२) शृंगाररस माधुर्य, (३) वाल्मीकि-रामायण, (४) रामायण सूचनिका, (५) समस्यापूर्ति नवसई। [च० त्रै० रि०]

कवितकाल—१८२० के पूर्व [खोज १९००]।

नाम—(९१३) जगदेव।

जन्म-काल—१७९२।

कविताकाल—१८२०।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(९१४) जोरावरमल कायस्थ, नागपूर।

ग्रंथ—शनि कथा।

जन्म-काल—१७९२।

कविताकाल—१८२०।

नाम—(९१५) तारापति।

ग्रंथ—नख शिख।

जन्म-काल—१७९०।

कविताकाल—१८२०।

विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(६१६) नरींद्र ।

जन्म-काल—१७८८ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६१७) नवखान, बुँदेलखंडी ।

जन्म-काल—१७६२ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६१७/१) विजय कीर्ति ।

ग्रंथ—श्रेणिक चरित्र ।

रचनाकाल—१८२० ।

विवरण—नागौर की गद्दी के भट्टारक थे।

नाम—(६१८) विहारिनिदास बनी ठनी । इनका नाम नं० ६५६ पर आ चुका है।

नाम—(६१६) बिहारी ।

ग्रंथ—नखशिख रामचंद्रजी । [द्वि० त्रै० रि०]

जन्म-काल—१७६६ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६२०) यूसुफ़ख़ाँ ।

ग्रंथ—(१) रसिकप्रिया टीका, (२) सतसई टीका ।

जन्म-काल—१७६१ ।

कविताकाल—१८२० ।

नाम—(६२१) रविनाथ, बुँदेलखंडी ।

जन्म-काल—१७६१ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६२२) राजाराम ।

जन्म-काल—१७८८ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—तोष श्रेणी ।

नाम—(६२३) शत्रुजीतसिंह, बुँदेला महाराजा दतियानरेश ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—रसराज की टीका बख़्तेश कवि से बनवाई ।

नाम—(६२४) शिव बिलग्रामी ।

ग्रंथ—रसनिधि ।

जन्म-काल—१७६६ ।

कविताकाल—१८२० ।

नाम—(६२५) शिवसिंह ।

जन्म-काल—१७८८ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(६२६) हरीहर ।

जन्म-काल—१७६४ ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(६२७) हुक्मीचंद चारण, जैपूर ।

ग्रंथ—स्फुट गीत ।

कविताकाल—१८२० ।

विवरण—जयपुरनरेश महाराजा माधोसिंह के यहाँ थे ।

नाम—(६२८) जसवंतसिंह, बुँदेला ।

ग्रंथ—(१) जसवंतविलास, [प्र० त्रै० रि०] (२) धनुर्वेद। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२१।

विवरण—महाराज हिंदुपति के चचेरे भाई।

नाम—(६२८/१) जुगलदास।

ग्रंथ—(१) चौरासी सटीक, (२) जुगल कृत्य। [तृ०त्रै०रि०]

रचनाकाल—१८२१।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६२८/२) सेवादास।

ग्रंथ—(१) बानी, (२) परब्रह्म की बारामासी, (३) परमार्थ-रमैनी, (४) करुणाविरह। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२१।

नाम—(६२९) आनंद ब्राह्मण, बनारसी।

ग्रंथ—(१) आनंदानुभव (१८४२) [खोज १९०३], (२) भगवद्गीता, (३) प्रबोधचंद्रोदय नाटक (४५० पृष्ठ), [द्वि० त्रै० रि०] (४) दानलीला। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२२।

नाम—(६३०) इच्छाराम।

ग्रंथ—प्रपन्न प्रेमावली पृ० ४३८। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२२।

नाम—(६३१) जोगराम संन्यासी, बुँदेलखंड।

ग्रंथ—जोग रामायण।

कविताकाल—१८२२। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६३१/१) टेकचंद।

ग्रंथ—वृत्तकथा कोष। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२२।

नाम—(६३२) बखतेश।

ग्रंथ—रसराज टीका।

कविताकाल—१८२२। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—ये शाह आलम शाह देहली के यहाँ थे। कविता बड़ी मनोहर की है। तोष श्रेणी।

नाम—(६३३) नं० ६३२ पर आ चुके हैं।

नाम—(६३४) बाजूराय।

ग्रंथ—भागवत दशम स्कंध की संक्षिप्त कथा। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२२।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(६३५) हरिवंशराय ब्राह्मण।

ग्रंथ—(१) वैद्यविनोद, (२) गणपति कृष्ण चतुर्थी व्रत-कथा। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२२।

नाम—(६३६) नवलदास ठाकुर, गुरगाँव, बाराबंकी।

ग्रंथ—(१) ज्ञानसरोवर, (२) भागवत दशम स्कंध भाषा, (३) भागवत पुराण भाषा जन्मकांड। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२३ के पूर्व।

विवरण—संभव है कि १८०७ वाले भी नवलदास यही हों।

नाम—(६३७) चंद्रदास।

ग्रंथ—(१) नेहतरंग, (२) रामायण भाषा। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२३ के पूर्व।

नाम—(६३८) नेवल (निर्मल) दास मु० धनेशा साधु।

ग्रंथ—भागवत पुराण भाषा जन्मकांड पृ० २१८।

कविताकाल—१८२३।

नाम—(९३८/१) मानसिंह जैन ।
ग्रंथ—बिहारी सतसई की टीका ।
रचनाकाल—१८२३ । [खोज १९०१]
विवरण—विजैगढ़, उदयपूर के निवासी थे ।
नाम—(९३९) करन भट्ट, पन्ना ।
ग्रंथ—(१) साहित्य चंद्रिका (सतसई की टीका), [प्र० त्रै० रि०]
(२) रसकल्लोल ।
जन्म-काल—१७९४ ।
कविताकाल—१८२४ ।
विवरण—महाराजा सभासिंह, अमानसिंह एवं हिंदू पति के यहाँ थे ।
नाम—(९३९/१) चंद्रलाल गोस्वामी, राधावल्लभी ।
ग्रंथ—(१) वृंदावन प्रकाशमाला (१८२४), (२) उत्कंठा माधुरी (१८३५), (३) भागवतसार पचीसी (१८५४), (४) वृंदावन महिमा, (५) भावना सुबोधनी, (६) अभिलाप बत्तीसी, (७) समय पचीसी, (८) समय प्रबंध, (९) स्फुट कवित्त, (१०) भावना पचीसी ।
कविताकाल—१८२४ । [द्वि० त्रै० रि०]
विवरण—साधारण श्रेणी । हिताचार्य प्रभु की कन्या के वंशज ।
नाम—(९३९/२) नथमल बिलाला ।
ग्रंथ—(१) सिद्धांतसार दीपक (१८२४), (२) जिनगुण विलास, (३) नागकुमार चरित्र (१८३४), (४) जीवंधर चरित्र (१८३५), (५) जंबूस्वामी चरित्र ।
रचनाकाल—१८२४ ।
विवरण—भरतपूरवासी ।
नाम—(९४०) मलूकदास क्षत्री साधु, कालपी ।
ग्रंथ—(१) भक्तवत्सल, [खोज १९०४] (२) भक्त विरदावली,

(३) गुरुप्रताप, (४) पुरुषविलास, (५) रतनखानि, (६) अलखबानी। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२४ के लगभग।

विवरण—बाबू कृष्णबलदेव खत्री कालपी-निवासी के मातामह के बाबा थे।

नाम—(९$\frac{४}{१}$०) अवधूत।

ग्रंथ—बारह अनुप्रेक्षा भावना। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२५।

नाम—(९४१) चंद्रदास (लालजी) कायस्थ।

विवरण—इनका हाल नं० ८३५ पर भी आ गया है।

नाम—(९$\frac{४}{१}$१) प्रियादास।

ग्रंथ—(१) सेवक चरित्र दोहावली, (२) पद्यावली।

जन्म-काल—१८०० के क़रीब।

रचनाकाल—१८२५।

विवरण—राधावल्लभी।

नाम—(९४२) बदन।

कविताकाल—१८२५ के लगभग।

नाम—(९$\frac{४}{१}$२) हितमकरंद।

ग्रंथ—स्फुट बानी।

विवरण—राधावल्लभी।

रचनाकाल—१८२५।

नाम—(९४३) कल्यानसिंह (कल्यान), जैसलमेर।

ग्रंथ—स्फुट बानी।

कविताकाल—१८२५।

विवरण—साधारण श्रेणी, महाराजा मूलराज जैसलमेर-नरेश के आश्रित थे।

नाम—(६४४) कुसाल मिश्र ज्योधार, आगरावाले ।
ग्रंथ—गंगा नाटक ।
कविताकाल—१८२६ । [खोज १९००]

नाम—(६४५) जीवन ।
जन्म-काल—१८०३ ।
ग्रंथ—वरबंड विनोद (१८७३) । [तृ० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८२६ ।
विवरण—मोहम्मद अलीशाह के यहाँ थे । निम्न श्रेणी ।

नाम—(६४५/१) रामरूप स्वामी उपनाम गुरुभक्तनंद ।
ग्रंथ—(१) गुरुभक्तिप्रकाश, (२) मुक्तिमार्ग । [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८२६ ।
विवरण—चरणदास के शिष्य तथा मुरलीधर के पुत्र थे ।

नाम—(६४६) श्रीनाथजी गोस्वामी (नाथ) ।
ग्रंथ—(१) मूलराजविलास, (२) अन्योक्तिमंजूषा, (३) लोलिंब-राज भाषा ।
कविताकाल—१८२६ ।
विवरण—महाराज मूलराज जैसलमेर-नरेश के सभासद् थे । आप संस्कृत के महा विद्वान् तथा भाषा के सत्कवि थे । साधारण श्रेणी ।

नाम—(६४७) तेजसिंह कायस्थ, बुँदेलखंडी । देखो नं० ११७० ।

नाम—(६४८) दरिया साहब ।
ग्रंथ—(१) अमरसार, (२) ब्रह्मविवेक, (३) भक्तिहेतु, (४) बीजक दरिया साहब, (५) दरियासागर, (६) ज्ञानस्वरोदय दरिया-साहब, (७) गुर्य्य दरिया साहब, (८) ज्ञानरत्न, (९) ज्ञान-दीपिका, (१०) रेखता दरिया साहब, (११) शब्ददरिया-साहब, (१२) सतसैया दरिया साः (१३) अनुभववानी ।

कविताकाल—१८२७ के लगभग।

विवरण—ये साधु थे। बिहार प्रांत के धरकंधा सूबा में रहते थे। अपने को कबीर साहब का अवतार बताते थे। संवत् १८२७ में थे। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(९ ५/१ ८) प्रियादास, दनकौरवासी।

ग्रंथ—(१) सेवक चरित्र, (२) अष्टक। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२७।

विवरण—श्रीनाथ तिवारी के पुत्र तथा हितदास के लघुभ्राता थे।

नाम—(९ ५/२ ८) प्रेमदास अग्रवाल, अजयगढ़।

ग्रंथ—(१) प्रेमसागर (१८२७), (२) नासकेत की कथा (१८३५), (३) पंचरत्न गेंद लीला (१८४५), (४) श्रीकृष्ण लीला, (५) गेंद लीला, (६) बिसातिन लीला, (७) भगवत्-विहार लीला, (८) प्रेम परिचय।

कविताकाल—१८२७।

विवरण—साधारण श्रेणी। रामानुज संप्रदाय के थे।

नाम—(९४९) प्रेमनाथ कलुवा, खीरी।

ग्रंथ—ब्रह्मोत्तर खंड, आदिपर्व।

कविताकाल—१८२७।

विवरण—ब्राह्मण।

नाम—(९ ५/१ ९) मोतीराम।

ग्रंथ—धीररससागर। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२७।

विवरण—धीरजसिंह ब्राह्मण के यहाँ थे।

नाम—(९५०) रसरासि रामनारायण, जैपूर।

ग्रंथ—(१) कवित्त रत्नमालिका संग्रह, [खोज १९०१] (२) फुटकर भाषा।

कविताकाल—१८२७ ।

विवरण—यह संग्रह ग्रंथ इन्होंने महाराजा सवाई प्रतापसिंहजी के दीवान सिंगी जीवराज के आश्रय में बनाया, जिसमें प्राचीन कवियों के ८०१ छंद और स्वयं इनके १०८ छंद हैं । कविता इनकी साधारण श्रेणी की है ।

नाम—(९५०/१) लालचंद पांडे ।

ग्रंथ—बारांगनाचरित्र । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२७ ।

नाम—(९५०/२) सेनापति चतुर्वेदी ।

ग्रंथ—सिंहासनबत्तीसी । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२८ के पूर्व ।

नाम—(९५१) चंद्र कवि सनाढ्य चौबे ।

ग्रंथ—चंद्रप्रकाश ।

कविताकाल—१८२८ ।

विवरण—पिता का नाम हीरानंद था ।

नाम—(९५२) हरीसिंह ।

ग्रंथ—प्रश्नावली । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२८ ।

नाम—(९५२/१) जगन्नाथ उपनाम जगदीश ।

ग्रंथ—(१) अलंकार प्रकाश, (२) बुद्धि परीक्षा, (३) माधव-विजय विनोद, (४) सरस्वतीप्रसाद । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८२९ के लगभग ।

नाम—(९५३) नारायणदास । कुछ दिन चित्रकूट में रहे ।

ग्रंथ—(१) छंदसार (१८२९), (२) भाषाभूषण की टीका, (३) पिंगल मात्रा । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८२९ ।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(६५४) मानसिंह।

ग्रंथ—(१) हनुमान नखशिख, (२) हनुमानपचीसी, (३) हनुमान पंचक, (४) लछिमनशतक, (५) महावीरपचीसी, (६) नरसिंह चरित्र, (७) नरसिंहपचीसी, (८) नीतिनिधान।

कविताकाल—१८२९।

नाम—(६५५) अनूपदास।

जन्म-काल—१८०१।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—शांतरस के उत्तम छंद बनाए हैं। साधारण श्रेणी। सरोजकार ने संवत् १७९८ के एक और अनूप का नाम लिखा है, परंतु जान पड़ता है कि ये दोनों एक ही हैं।

नाम—(६५६) केसरीसिंह।

ग्रंथ—केसरीसिंहजी की कुंडलिया।

कविताकाल—१८३० [खोज १९०२]।

नाम—(६५७) जीवनाथ भाट, नवाबगंज, उन्नाव।

ग्रंथ—वसंतपचीसी।

जन्म-काल—१८०३।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—बालकृष्णराय दीवान अवध के कवि हैं। साधारण श्रेणी।

नाम—(६५७/१) द्विज प्रहलाद, छत्तीसगढ़ी।

ग्रंथ—(१) जयचंद्रिका, (२) जगन्नाथाष्टक, (३) भवानीभुजंग।

जन्म-काल—१८०० ।

रचनाकाल—१८३० ।

विवरण—आप सरयूपारीण ब्राह्मण पं० श्यामसुंदर दुबे के पुत्र तथा सारंगढ़ के गोंडनरेश राजा विश्वनाथ साय नैताम के यहाँ थे ।

उदाहरण—

संभरी नरेश जू को वंस अवतंस त्रिष्णु,
अंस हंस कैसे अंशु ब्यापै जा बरत है ;
दान किरवान है जहान में समान जाको,
राका चंद जैसे जाको यों जस भरत है ।
धरम धुरंधर पुरंदर-सी प्रभुताई,
भरि प्रहलाद कलपद्रुम फरत हैं ;
राजन के राज महाराज जैतसिंह देव,
सुरपति समराज कौसलै करत हैं ।

नाम—(९५८) नाथ ।

जन्म-काल—१८०३ ।

कविताकाल—१८३० ।

विवरण—मानिकचंद के यहाँ थे ।

नाम—(९५९) नेवाज जोलाहा, बिलग्रामी ।

जन्म-काल—१८०४ ।

कविताकाल—१८३० ।

विवरण—तोष श्रेणी ।

नाम—(९६०) पद्मेश ।

जन्म-काल—१८०३ ।

कविताकाल—१८३० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(९६०/१) प्रियादास शास्त्री।

ग्रंथ—(१) अध्वनि निर्णय टीका, (२) व्रतोत्सव निर्णय, (३) हित कथामृत तरंगिणी, (४) हितमतार्थ-चंद्रिका, (५) संप्रदाय निर्णय, (६) उत्सव बोध, (७) सिद्धांतोत्तम तत्व निर्णय, (८) व्यास नंदन-भाष्य, (९) फुटकरबानी की टीका, (१०) ईशावास्योपनिषद्भाष्य, (११) वैष्णव सिद्धांत मत बोध, (१२) सारासार विवेक संक्षिप्त सार, (१३) चतुः-श्लोकी विवरण, (१४) अनन्याश्रयपद्धति, (१५) स्फुट पद।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—राधावल्लभी।

नाम—(९६१) मुकुंदलाल, बनारसी।

जन्म-काल—१८०३।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९६१/१) मुरली।

ग्रंथ—स्फुट छंद।

कविताकाल—१८३०।

नाम—(९६२) रामभट्ट, फ़र्रुख़ाबादी।

ग्रंथ—(१) शृंगारसौरभ, (२) बरवै नायिकाभेद।

जन्म-काल—१८०३।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—नवाब क़ायमख़ाँ के यहाँ थे। एक रामजी सरोज में हैं, जिनका शृंगारसौरभ हमारे पास है, परंतु उसमें संवत् व नवाब क़ायमख़ाँ का वर्णन नहीं है, और इनके उनके

समय में बहुत अंतर है। इसीलिये दोनों नाम दिए हैं।

नाम—(९६३) शिवप्रसाद कायस्थ, दतिया।

ग्रंथ—(१) रसभूषण [प्र० त्रै० रि०] (१८६९), (२) अद्भुत रामायण [द्वि० त्रै० रि०] (१८३०) पृष्ठ १९६।

कविताकाल—१८३० से १८६९ तक।

विवरण—वकील राजा परीक्षित।

नाम—(९६३/१) शंकरदत्त, पटनावासी।

ग्रंथ—(१) हरिवंशप्रशस्ति, (२) हरिवंश हंस नाटक, (३) सद्वृत्ति मुक्तावली, (४) राधिकामुख वर्णन काव्य।

विवरण—राधावल्लभी थे। इन्होंने संस्कृत में भी कई ग्रंथ रचे।

कविताकाल—१८३०।

नाम—(९६४) सवितादत्त।

जन्म-काल—१८०३।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(९६५) सीताराम वैश्य, बीरापुर, बाराबंकी।

कविताकाल—१८३०।

विवरण—हीन श्रेणी।

नाम—(९६६) सुखानंद, चाचरीवाले।

जन्म-काल—१८०३।

कविताकाल—१८३०।

अट्ठाईसवाँ अध्याय

रामचंद्र-काल

(१८३१ से १८५५)

(९६७) रामचंद्र

इस महाकवि की रचना अनमोल है, परंतु यह ऐसा कुछ छिपा हुआ है कि शिवसिंहसरोज में इसका नाम तक नहीं दिया हुआ है। इस कवि के समय, वंश आदि के विषय में हम केवल इतना जानते हैं कि यह ब्राह्मणकुलभूषण था और इसका चरण-चंद्रिका-नामक ग्रंथ पहलेपहल संवत् १९२३ में छपा था, अतः यह महाकवि उस समय के प्रथम हुआ होगा। अपना विप्र होना इन्होंने अपने ग्रंथ में ही लिख दिया है। हम इनका समय संवत् १८४० के लगभग मानते हैं, क्योंकि मनियारसिंह अपने को लिखते हैं कि "चाकर अखंडित श्रीरामचंद्र पंडित को।" इससे विदित होता है कि ये वलियानिवासी थे और महिम्न-भाषा रचना के समय सं० १८४१ में वर्तमान थे।

इनका चरणचंद्रिका-नामक केवल ६२ घनाक्षरियों का एक ग्रंथ हमारे पास है, परंतु इस छोटे-से एक ही ग्रंथ द्वारा इस कविरत्न ने वह मोहनी डाल रक्खी है कि इस विषय का इसके जोड़ का दूसरा ग्रंथ खोज निकालना कठिन बात है। इसकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। इसमें पार्वतीजी के चरणों का वर्णन है और विनय-विलास, अभयविलास, विभवविलास, विरदविलास, और विजय-विलास-नामक पाँच अध्याय हैं। रामचंद्र पंडित ने संस्कृतमिश्रित भाषा लिखी है, अतः उसमें मिलित वर्ण कुछ विशेषता से आ गए हैं। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की, और अनुप्रास का कुछ सूक्ष्म रीति से प्रयोग किया। आपको रूपकों से बड़ा प्रेम था और आपने

बहुत-से परमोत्तम रूपक कहे हैं। उद्दंडता भी इनकी कविता का एक प्रधान अंग है। इस ग्रंथ में एक भी छंद शिथिल नहीं है और उत्कृष्ट छंदों की मात्रा बहुत विशेष है। हम इस महाकवि की गणना सेनापति की श्रेणी में करते हैं। जब इसने केवल चरणों पर ऐसी उत्तम कविता की है, तब अन्य ग्रंथ भी अवश्य बनाए होंगे; परंतु शोक का विषय है कि इस कवि के अन्य ग्रंथ अथवा छंद नहीं मिलते। खोज में इनके एक ग्रंथ अरिल्यन का पता लगा है। [च० त्रै० रि०] में इनके टीका गीतगोविंद-नामक ग्रंथ का मिलना लिखा है।

नूपुर बजत मानि मृग-से अधीन होत,
मीन होति जानि चरणामृत झरनि को;
खंजन-से नचैं देखि सुखमा सरद की-सी,
मचैं मधुकर से पराग केसरनि को।
रीझि-रीझि तेरे पद छबि पै तिलोचन के,
लोचन ये अंब धारैं केतिक धरनि को;
फूलत कुमुद से मयंक से निरखि नख,
पंकज से खिलैं लखि तरवा तरनि को॥ १॥

जारे ताप दाहन के मारे पाप पाहन के,
लिंपट निरासरै ये आस काकी धरते;
छूटे सतसंग के अनंग बटपार लूटे,
कूटे कलिकाल के कहाँ ते जाय अरते।
अति अकुलाय कै डेराय घबराय हाय,
त्राहि-त्राहि कहि आगे काके धाय परते;
होते जो न अंब तेरे चरन सरन तौ,
ये अरज गरजवंद कापै जाय करते॥ २॥

मानिए करींद्र जो हरींद्र को सरोस हेरै,
मानिए तिमिर घेरै भानु किरनन को;

मानिए चटक बाज जुर्रा को पटकि मारै,
मानिए झटकि डारै भेक भुजगन को।
मानिए कहै जो बारि धार पै दवारि औ,
अँगार बरसाइबो बतावै बारिदन को;
मानिए अनेक विपरीति की प्रतीति पै,
न भीति आई मानिए भवानीसेवकन को ॥ २ ॥

(६६८) चंदन

चंदन वंदीजन नाहिल पुवायाँ, ज़िला शाहजहाँपूर के रहनेवाले थे और गौर राजा केशरीसिंह के यहाँ ये रहते थे। संवत् १८३० के लगभग ये वर्तमान थे। सरोजकार ने केशरीप्रकाश, शृंगारसार, कल्लोलतरंगिनी, काव्याभरण (सं० १८४५), चंदन सतसई और पथिकबोध-नामक इनके छः ग्रंथों के नाम लिखे हैं, परंतु गँधोली में इनके नखशिख और नाममाला-नामक दो ग्रंथ और वर्तमान हैं। खोज में पत्रिकाबोध और तत्त्व-संज्ञा [खोज १९०१]-नामक इनके दो और ग्रंथ लिखे हैं। इनकी कविता सरस और मनोहर होती थी। हम इन्हें दास की श्रेणी में रखते हैं। [तृ० त्रै० रि०] में इनके कृष्णकाव्य (१८१०), प्राज्ञविलास (१८२५), पीतमवीरविलास (१८६५) तथा रसकल्लोल-नामक ग्रंथों का और पता चलता है।

ब्रजवारी गँवारी दै जानैं कहा यह चातुरता न लुगायन मैं;
पुनि वारिनी जानि अनारिनी है रुचि एती न चंदन नायन मैं।
छबि रंग सुरंग के बिंदु बने लगैं इंद्रवधू लघुतायन मैं;
चित जो चहैंदी चकि-सी रहैंदी केहि दी मेहँदी इन पायन मैं ॥१॥

ठाकुर जगन्मोहन वर्मा ने इनके निम्न-लिखित ९ अन्य ग्रंथों के नाम लिखे हैं—

शीतवसंत, कृष्णाकाव्य (१८१० सं०), केशरीप्रकाश (सं०

१८१७), प्राज्ञविलास (सं० १८२५) और रसकल्लोलिनी (सं० १८४६)।

ये महाशय फ़ारसी के भी अच्छे कवि थे। इस भाषा में ये अपना नाम संदल रखते थे। आपने दीवानेसंदल-नामक एक फ़ारसी-ग्रंथ भी रचा। एक बार अवध के बादशाह ने इनकी साहित्यपटुता-संबंधिनी ख्याति सुनकर इन्हें अपने यहाँ बुलवा भेजा, परंतु इन्होंने वहाँ जाना पसंद न करके यह दोहा लिख भेजा—

खरी टूक खर खर थुआ खारी नोन सँजोग ;
येतौ जो घर ही मिलै चंदन छप्पन भोग।

सरोजकार ने यही कथा "किसी बुँदेलखंडी रईस" के विषय में लिखी है। कहते हैं कि बादशाह का अधिक दबाव पड़ा और तब ये अवध न जाकर काशीजी को चले गए।

(६६६) कलानिधि

इनका नाम कृष्ण भट्ट था और ये तैलंग ब्राह्मण थे। बाल्मीकीय रामायण में बाल, उत्तर कांड, ब्रह्मसूत्र, तैत्तरीय मांडूक्य, केन और प्रश्न उपनिषदों के इन्होंने उत्कृष्ट अनुवाद किए हैं।

इन महाशय का एक नखशिख भी हमने ठाकुर शिवसिंह के पुस्तकालय में देखा है, परंतु उसमें संवत् या पता कुछ नहीं दिया है। इनका कविताकाल १७६९ है। यह नखशिख उत्कृष्ट बना है। इसमें हर अंग का एक दोहा एवं उसी आशय का एक कवित्त लिखा गया है। इसमें कुल २८ दोहा व २८ और छंद हैं। भाषा इसकी प्रशंसनीय है। हम इनको तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं। इन्होंने अलंकार कलानिधि, सांभर युद्ध, दुर्गाभक्ति-तरंगिणी, वृत्तचंद्रिका तथा शृंगाररस माधुरी-नामक ग्रंथ और बनाए हैं। अलंकार कलानिधि जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह के लिये बना है। उसमें भोगीलाल नाम भी आया है। देखो पूर्वालंकृत

प्रकरण सं० १७५४ नं० (६०३/१), (७४६), (८२०), (६१२) तथा (१०१७) पर भी शायद इन्हीं कवि का वर्णन है।

दुति दामिनी मयंक छबि सुधा शील उनमानि ;
रदन पाँति बरनत सुकबि रतन काँति सम जानि ॥ १ ॥
भुज भूषन मधि लाल दुति स्याम सेत अवरेखि ;
अरुन किरनि मंडल सहित राहु चंद ढिग देखि ॥ २ ॥
हरी सारी घूँघुट घटा की छबि गहि ओट,
अनमित छबि छटा दामिनी की जगी है ;
कलानिधि कालिंदी के हरित प्रवाह परि,
परिणत चंद की किरनि छबि लगी है।
कैधौं सोभा सुधा की अलक उरगनि बीच,
विमल बिलोकि मुनि मनन में खगी है ;
सुंदरी के बदन बतीसी मैं रदन पाँति,
सीसा मैं रतन काँति मानौ जगमगी है ॥ ३ ॥

(६७०) जन्न गोपाल

ये महाशय मऊ रानीपूर, ज़िला झाँसी के रहनेवाले महाकवि हो गए हैं। इनकी भाषा एवं भावों में जो गंभीरता पाई जाती है वह सिवा उत्कृष्ट कवियों की रचनाओं के और कहीं भी नहीं मिलती। इन्होंने संवत् १८३३ [खोज १६०४] में समरसार-नामक एक आदरणीय ग्रंथ वनाया। इनकी रचना वहुत ही भव्य और भावपूर्ण है। हम इनको पद्माकर की श्रेणी में रक्खेंगे। [तृ० त्रै० रि०] में इनका एक वारहमासा मिला है।

थोथि थुरकीली ढुरकीली त्रिधु कला भाल,
सरसीली भौंहनि समाधि सरसति है ;
प्रानायाम आसन कलित कमलासन कै,
विघन बिनासन की वासना वसति है।

सिंदुर भुसंड गंड मंडल समीप,
गज बदन के रदन की दुति यों लसति है ;
साँझ समै छीरनिधि नीर के निकट मानो,
द्वैज के कलाधर की कला बिलसति है।

एक जन गोपाल महात्मा दादू के शिष्य संवत् १६५७ में भी हो गए हैं। उन्होंने ध्रुवचरित्र रचा।

नाम—(९७०/१) देवनाथ।

रचनाकाल—१८३२।

ये बरार के साधु थे। इन्होंने व्रजभाषा में बड़ी सुंदर कविता की है।

(९७१) प्रेमी यमन

इनका बनाया अनेकार्थनाममाला ग्रंथ हमने देखा है। इसमें कुल १०३ छंद हैं, जिनमें दोहे विशेषता से हैं, एवं कुछ और भी छंद हैं। इसमें शब्दों के अनेकार्थ कहे गए हैं। भाषा इसकी साधारण और सरल है। इसको पढ़ने से बहुत-से शब्दों के अनेकार्थ जाने जाते हैं। यदि इस तरह का बड़ा ग्रंथ हो तो विशेष लाभदायक हो सकता है। इसमें संवत् का कुछ पता नहीं है, परंतु सरोज में इनका जन्म-संवत् १७९८ दिया है और ये दिल्ली-निवासी लिखे हैं। इनका कविताकाल १८३५ के लगभग है। हम इनको साधारण श्रेणी में समझते हैं।

चंद्र शब्दार्थ

चंद्र मन हंस तार तारिका औ कसतूरी,
चंदन औ पृथ्वी गंगा ग्रंथन गहत हैं ;
बानर औ कुश लता ब्रजनाथ औधपुरी,
लंका साँप कामदेव जग मैं चहत हैं।
खग्ग रिपु ग्रह जन रवि मंडलो प्रमान,
मेघ इते शब्द चंद्रमाहु के लहत हैं ;

चंद्रमा सुनर जानि भजो राम रहिमान,
नाहीं तौ तवा समान ताही को कहत हैं ॥ १ ॥

(६७२) मंचित द्विज बुँदेलखंड, मऊ महेवा के रहनेवाले संवत् १८३६ में वर्तमान थे। इन्होंने सुरभीदानलीला-नामक एक बड़ा ग्रंथ बनाया, जो छतरपूर में हमने देखा है। यह ग्रंथ हमने अपूर्ण पाया। उस प्रति में (जो हमने देखी) १६२ पृष्ठ हैं और २१ अध्याय पूर्ण हैं तथा बाईसवें अध्याय के ४ छंद लिखे हैं। यह पूरा ग्रंथ एक ही छंद में है, केवल प्रति अध्याय के अंत में कुछ दोहे या सोरठे हैं। इन्होंने बाललीला तथा यमलार्जुनपतन कहकर दानलीला का वर्णन किया है। श्रीकृष्ण का शिखनख इस कवि ने अच्छा कहा है। इनका एक ग्रंथ कृष्णायन-नामक भी हमने छतरपूर में देखा, जो अपूर्ण है। इसमें कृष्णचरित्र कृष्णखंड के आधार पर विस्तृत रूप से दोहा-चौपाइयों में कहा गया है, जो परम प्रशंसनीय है। इनकी कविता परम मनोहर है। हम इन्हें सेनापति की श्रेणी में रक्खेंगे।

जुलफैं सुलफ ब्याल बाला-सी खासी डुलती आवैं ;
घुँघुरारी कारी सटकारी देखत मन ललचावैं।
कुंडल लोल अमोल कान के छुवत कपोलन आवैं ;
डुलैं आपुते खुलैं जोर छवि बरबस मनहि चुरावैं।
खौरि बिसाल भाल पर सोभित केसरि की चित भावै ;
ताके बीच बिंदु रोरी को ऐसो बेस बनावै।
भृकुटी वंक नैन खंजन से कंजन गंजन वारे ;
मदभंजन खग मीन सदा जे मनरंजन अनियारे।

मंचितजी ने कृष्णायन में गोस्वामी तुलसीदास के रामचरित्र-मानस के ढँग पर कविता की है। गोस्वामीजी का ढँग उतारने में यह कवि बहुत करके सफलमनोरथ हुआ है, और इसकी कविता

कुछ-कुछ उनमें मिल जाती है। मंचित इस सफलता में बहुत प्रशंसनीय हैं। कथा-प्रासंगिक कवियों में इनका पद ऊँचा है।

वाम ओर राजै वर वानी ; सुकल सरीर सुकल सुचिसानी।
वदन सरद ससि बिहँसि बिराजैं ; अधर सधर बिंबा लखि लाजैं।
कुलिस कनीसी बनी बतीसी ; सरद सरोरुह दृग दुति दीसी।
नखते शिख लगि बनि मनि गहनै; झलकन झलक ललकि मनरहनै।
पीत पटंबर पावक पूरे ; स्वर्न समान सुगंधित रूरे।

यक-कर वर पुस्तक लिए यक कर बीना बैन ;
ज्ञानरूप सोभित सदा भगत अनुग्रह ऐन।

यहि विधि गए असुर हम गिरजा ; पहुँचे जाय तुरत तट बिरजा।
अचरज अमित भयो लखि सरिता; दुतियन उपमा कहि सम चरिता।
कृष्ण देव कहँ प्रिय जमुनासी ; जिमि गोकुल गोलोक प्रकासी।
अति विस्तार पार पय पावन ; उभय करार घाट मन भावन।
बनचर बनज बिपुल बहु पच्छी ; अलिअवलीधुनिसुनिअति अच्छी।
नाना जिनिस जीव भरि सेवैं ; हिंसा हीन असन सुचि जेवैं।
रतन रचे राजैं सोपाना ; लखिमनि पुञपुनि लसिमनि जाना।

सरि समता को कहि सकै सुनिए मुनि सनकादि ;
चौरी लामी गहिरता कही-कही जव आदि।

(६७३) मधुसूदनदास

ये महाराज माथुर चौबे थे और इनका निवासस्थान इटावा था। इन्होंने गोविंददास-नामक एक विभवसंपन्न भद्र पुरुष के कहने से संवत् १८३२ [खोज १६०१] आषाढ़ सुदी २ बृहस्पतिवार को रामाश्वमेध-नामक एक बृहत ग्रंथ रामानुज कूट में बनाना आरंभ किया। यह ग्रंथ पद्मपुराण में वर्णित रामाश्वमेध के आधार पर बना है। इसमें रायल अठपेजी साँची के ४४८ पृष्ठ हैं। रामचंद्रजी ने रावण ब्राह्मण के मारने का पातक समझकर उसके मोच के लिये

अश्वमेध यज्ञ किया था। यज्ञ हय के रक्षणार्थ शत्रुघ्न, पुष्कल (भरत के पुत्र), हनुमान् एवं रामचंद्र की शेष सेना गई थी और इन लोगों के क्रमशः सुबाहु तथा दमन, विद्युन्माली राक्षस वीर मणि तथा महादेवजी, सुरथ, और अंततोगत्वा रामचंद्र के पुत्र लव तथा कुश से युद्ध हुए थे। इन्हीं का सविस्तार वर्णन इस बड़े ग्रंथ में किया गया है। प्रथम दो लड़ाइयों में राम की सेना ने साधारण ही में जय प्राप्त कर ली, परंतु तृतीय युद्ध में स्वयं शंकरजी से सामना हो गया, अतः यह सेना विजय प्राप्त न कर सकी। तब रामचंद्रजी ने वहाँ स्वयं जाकर युद्ध निवारण किया और राजा वीरमणि युद्ध छोड़कर सेना के संग अश्वरक्षण में प्रवृत्त हुआ। चतुर्थ युद्ध में राजा सुरथ रामचंद्र का भक्त था, परंतु क्षत्रिय-धर्म पालन करने को वह युद्ध में प्रवृत्त हुआ था। उसका प्रण था कि समस्त सेना जीतकर सब सरदारों को बंदी कर दूँगा और जब स्वयं रामचंद्रजी आवेंगे, तब सब सरदारों को छोड़कर मखहय को भी छोड़ दूँगा। नितांत उसने अपने प्रण को पूरा किया। पंचम युद्ध में लव ने पहले सब सेना को पराजित किया और शत्रुघ्न तक को मूर्च्छित कर दिया, परंतु अंत में शत्रुघ्न और सुरथ ने मिलकर लव को बाँध लिया। इसके पीछे कुश ने आकर सब सेना को पराजित करके लव को छुड़ाया और फिर सीताजी के मिल जाने से विरोध नष्ट हो गया और घोड़ा दे दिया गया। जब घोड़ा लौटकर अयोध्या गया और रामचंद्र ने सुमंत से सब युद्धों का हाल पूछा, तब लव-कुश का हाल सुनकर उन्होंने लक्ष्मण द्वारा अपने दोनों पुत्रों और सीता को अयोध्या बुला लिया। इसके पीछे भली भाँति यज्ञ समाप्त किया गया। अनंतर मधुसूदनदासजी ने अपने ग्रंथ का माहात्म्य कहकर ग्रंथ समाप्त किया है।

इस कवि ने कथा-प्रासंगिक प्रणाली का पूर्ण रूप से अनुसरण

किया है। प्रायः चार चौपाइयों के पीछे एक दोहा कहा गया है और इधर-उधर अन्य छंद भी आ गए हैं। कहीं-कहीं कई दोहे भी एक साथ कहे गए हैं। चार पदों को मिलाकर एक चौपाई होती है।

मधुसूदनदासजी पूर्ण रूप से गोस्वामी तुलसीदासजी की रीति पर चले हैं। नायकों के शील-गुण भी उन्होंने गोस्वामीजी के समान ही रखने पर पूरा ध्यान रक्खा है। रामाश्वमेध को दूसरी रामायण बनाने में पूरा श्रम किया गया है।

मधुसूदनदासजी गोस्वामीजी की भाँति पूरे भक्त थे। उन्हें कथाओं को विस्तारपूर्वक कहने की अच्छी शक्ति थी। उनकी भाषा प्रशंसनीय है। गोस्वामीजी का अनुकरण होने के कारण इसमें विशेषतया अवधी भाषा का व्यवहार हुआ है। कहीं-कहीं ब्रजभाषा के भी शब्द मिलते हैं।

इन महाराज की कविता में कितने ही महापुरुषों के वर्णन हुए हैं और इन्होंने उनका आद्योपांत ठीक-ठीक निर्वाह कर दिया है। ऋषियों और राजाओं की बातचीत में भी इन्होंने ऋषियों के महत्व का सदैव विचार रक्खा है। ऋषियों और ऋषिपत्नियों का महत्व, ब्राह्मणों का पद और राज्यवर्णन एवं पुर, ग्रामादि का स्वरूपदर्शन इत्यादि इनकी कविता में अच्छे पाए जाते हैं। इन्होंने हरएक स्थान पर गोस्वामीजी की भाँति वर्णन करने का ध्यान रक्खा है। इनकी कविता के कुछ छंद उदाहरणस्वरूप नीचे लिखे जाते हैं—

संवत वसु दस सत सुनहु पुनि नव तीस मिलाय ;
विदित मास आषाढ़ ऋतु पावस सुखद बनाय।
शुक्ल पच्छ तिथि द्वैज सुहाई ; जीव बार शुभ मंगलदाई।
हर्षन योग पुनर्वसु रिच्छा ; प्रगटी प्रभु जस बरनन इच्छा।

श्री रामानुज कूट मँझारी ; कीन्ह कथा आरंभ विचारी ।
जेहि विधि व्याससूत सन गावा ; श्री अनंत मुनिवरहि सुनावा ।
सिय रघुपति पदकंज पुनीता ; प्रथमहि वंदन करौं सप्रीता ।
मृदु मंजुल सुंदर सब भाँती ; ससि कर सरस सुभग नख पाँती ।
प्रणत कल्पतरु तर सब ओरा ; दहन अज्ञ तम जन चित चोरा ।
त्रिविधि कलुष कुंजर घन घोरा ; जग प्रसिद्ध केहरि वरजोरा ।
चिंतामणि पारस सुरधेनू ; अधिक कोटि गुण अभिमत देनू ।
जन मन मानस रसिक मराला ; सुमिरत भंजत विपति विसाला ॥ १ ॥

× × ×

निरखि काल जित कोपि अपारा ; विरथ होय करि गदा प्रहारा ।
महा वेग युत आवै सोई ; अष्टधातु मय जाय न जोई ।
अयुत भार भरि भार प्रमाना ; देखिय जमपति दंड समाना ।
देखि ताहि लव हनि इपु चंडा ; कीन्ही तुरत गदा त्रै खंडा ॥ २ ॥

× × ×

जिमि नभ मास मेघ समुदाई ; वरषहिं वारि महा झरि लाई ।
तिमि प्रचंड शायक जनु व्याला ; हने कीश तन लव तेहि काला ।
भए विकल अति पवनकुमारा ; लगे करन तव हृदय विचारा ।
यह अजीत बालक वरजोरा ; अव न चलै कछु विक्रम मोरा ।
मैं सब भाँति भयों वेहाला ; केहि विधि उवरहुँ रण विकराला ।
भाजि जाहुँ जो समर विहाई ; तौ प्रभु अग्र लाज अधिकाई ।
कहहिं सकल जन करि उपहासा ; भजे मरुत सुत बालक त्रासा ।
पुनि कपीस मन कीन्ह विचारा ; कपट मूरछा विनु न उवारा ॥ ३ ॥

नाम—(९७४) वैष्णवदास, बंगाल के ।

ग्रंथ—गौरगुणगीत ।

रचनाकाल—१८४० ।

विवरण—श्री चैतन्य महाप्रभु का अष्टयाम तथा उनका यशवर्णन

६१ सफ़ा रायल १२ पेजी आकार का छपा हुआ है। कविता साधारण श्रेणी की है। चैतन्य संप्रदाय में विशेपतया बंगाली लोग हैं जिन्होंने संस्कृत या बँगला में ग्रंथ-रचना की है। ये महाशय चैतन्यवाली गौरिया संप्रदाय के थे।

(६७५) नील सखीजी ने संवत् १८४० के लगभग बानी-नामक एक ग्रंथ रचा, जिसमें ११० पद हैं। यह ग्रंथ हमने छतरपूर में देखा। ये महाशय गौर संप्रदाय के थे, जो महाप्रभु चैतन्य की चलाई हुई है। ये आदि में ओरछे के वासी थे, पर पीछे से श्री बृंदावन में रहने लगें। इनकी कविता बड़ी ही मनोहर होती थी। हम इनको तोप कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।

जै जै बिसद व्यास की बानी।
मूलाधार इष्ट रस मैं उतकरप भगति रस सानी।
लोक वेद भेदन ते न्यारी प्यारी मधुर कहानी ;
स्वादिल सुचि रुचि उपजै गावत मृदु मन मान अघानी।
कलि के कलुष बिदारन कारन तीखन तरल कृपानी ;
रस सिंगार सरित जमुना सम बर धारा घहरानी।
विधि निषेध गिरि बर तरु तोरत हरि जस जलधि समानी ;
हरि लीला सागर तैं रस भरि बरसै सदा सोहानी।

(६७६) देवकीनंदन

क़न्नौज के निकट उससे एक मील की दूरी पर मकरंद नगर-नामक एक ग्राम है, जिसे हमने कई बार देखा है। इसमें कान्यकुब्ज ब्राह्मण बहुतायत से रहते हैं। इसी ग्राम में शुक्ल हरिदास रहते थे। उनके पुत्र नाथ, उनके मधुराम और उनके सबली उत्पन्न हुए। इन्हीं सबली शुक्ल के शिवनाथ, गुरुदत्त और देवकी नंदन तीन पुत्ररत्न हुए। देवकीनंदन का जन्म-काल ठाकुर शिवसिंहजी ने

संवत् १८०१ माना है, और यह यथार्थ भी जँचता है, क्योंकि इन्होंने श्रृंगारचरित-नामक ग्रंथ संवत् १८४१ में और अवधूतभूषन संवत् १८५७ में बनाया।

देवकीनंदनजी अवधूतसिंह के यहाँ रहते थे। रैकवारवंशी पूरणमल के पुत्र नथमलसिंह और सुरतिसिंह हुए। नथमलसिंह के अमरसिंह, तेजवलीसिंह और धीरजसिंह-नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। इन्हीं तेजवलीसिंह के अवधूतसिंह पुत्र हुए थे। ये महाराज रुद्दामऊ ज़िला हरदोई में रहते थे। रुद्दामऊ मल्लाएँ के समीप है। संवत् १८४१ तक देवकीनंदन अवधूतसिंह के यहाँ नहीं गए थे, क्योंकि श्रृंगारचरित्र इन्होंने किसी राजा या आश्रयदाता को समर्पित नहीं किया है। सरोज में शिवसिंहजी ने कहा है कि उन्होंने देवकीनंदन का सिवा नखशिख के कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं देखा, परंतु उन्होंने लिखा है कि उनके "दो-तीन सौ स्फुट कवित्त हमारे पास हैं।" हमारे पास इनके नखशिख अथवा स्फुट काव्य नहीं हैं, परंतु श्रृंगारचरित्र और अवधूतभूषण-नामक इनके दो ग्रंथ हमारे पुस्तकालय में वर्तमान हैं। खोज १९०१ में सरफ़राज़चंद्रिका ग्रंथ भी इनका बनाया निकला है।

श्रृंगारचरित्र संवत् १८४१ में बनाया गया था। इसमें नायक तथा नायिकाभेद, भावादि, हाव, गुण, अनुप्रास और अर्थालंकार का वर्णन है। यह ग्रंथ अच्छा और इसकी भाषा ललित है। अलंकार-विभाग प्रायः दोहों में कहा गया है। देवकीनंदन का पांडित्य बहुत सराहनीय है। इनकी कविता में दो-चार जगह कूट भी पाए जाते हैं।

अवधूतभूषण संवत् १८५७ में समाप्त हुआ। इसमें कवि एवं राजवंश का पूरा वर्णन किया गया है। तदनंतर अर्थालंकार एवं शब्दालंकार का ब्यौरा है। मुख्य भाग अवधूतभूषण एवं श्रृंगार-

चरित्र का प्रायः एक ही है, अवधूतभूषण में केवल आदि का कुछ वर्णन नया है। वस्तुतः इन दोनों ग्रंथों को एक ही समझना चाहिए। देवकीनंदन की कविता सराहनीय है। उसमें ऊँचे भाव बहुतायत से आए हैं और कहीं-कहीं कुछ क्लिष्टता भी पाई जाती है। काव्यांगों का चमत्कार इस कवि ने अच्छा दिखाया है और पाठकों की विचारशक्ति भी पैनी करने का मसाला छंदों में रक्खा है। इनको हम पद्माकर की कक्षा में रखते हैं।

बैठी रंग रावटी मैं हेरत पिया की बाट,
आए न बिहारी भई निपट अधीर मैं;
देवकीनँदन कहै स्याम घटा घिरि आई,
जानि गति प्रलै की डरानी बहु बीर मैं।
सेज पै सदा सिव की मूरति बनाय पूजी,
तीनि डर तिनहू की करी ततबीर मैं;
पाखन मैं सामरे सुलाखन मैं अखैबट,
ताखन मैं लाखन की लिखी तसबीर मैं॥ १॥

मोतिन की माल तोरि चीर सब चीरि डारे,
फेरि कै न जैहौं आली दुख विकरारे हैं;
देवकीनँदन कहै धोखे नाग छौनन के,
अलकैं प्रसून नोचि-नोचि निरवारे हैं।
मानि मुख चंद भाव चोंच दई अधरन,
तीनौ ये निकुंजन मैं एकै तार तारे हैं;
ठौर-ठौर डोलत मराल मतवारे तैसे,
मोर मतवारे त्यों चकोर मतवारे हैं॥ २॥

(६७७) मनियारासिंह

ये महाशय काशी-निवासी क्षत्रिय थे। इनका संवत् शिवसिंह-सरोज में १८६१ लिखा है, परंतु इन्होंने महिम्न में अपना संवत् यों दिया है—

संवत के अंक रंध्र वेद वसु चंद्र पूरो,
चंद्रमा सरद को वरद धर्म धन को;
चाकर अखंडित श्री रामचंद्र पंडित को,
मुख्य सिष्य कवि कृष्णलाल के चरन को।
मनियार नाम श्याम सिंह को तनय,
भो उदय छत्रि वंश कासी पुरी निवसन को;
पारवती कंत जस जग में दिगंत कियो,
भापा अर्थवंत पुष्पदंत महीमन को।

इससे विदित होता है कि ये श्यामसिंह के पुत्र रामचंद्र पंडित के सेवक और कृष्णलाल के शिष्य काशीवासी क्षत्रिय थे और इन्होंने सं० १८४१ में महिम्न का अनुवाद किया [खोज १९०२]। अतः इनका जन्म सं० १८०० के लगभग माना जाता है। इनकी रचना से हमने सौंदर्यलहरी, जिसमें १०२ छंद हैं, हनुमत् छब्बीसी (२६ छंद), भापामहिम्न (३९ छंद) और सुंदरकांड (६२ छंद) देखे हैं और वे हमारे पुस्तकालय में प्रस्तुत हैं। ये अपना उपनाम मनियार और यार रखते थे। इन्होंने अपनी संपूर्ण रचना देवपक्ष में की है। इनकी कविता में से सौंदर्यलहरी एवं सुंदरकांड रामायण के आधार पर लिखे गए हैं, और हनुमान-छब्बीसी स्वतंत्र रचना है। इन ग्रंथों की कविता प्रशंसनीय और भापा संस्कृतमिश्रित व्रजभापा है । संस्कृतमिश्रित होने के कारण इनकी भापा कुछ तीक्ष्ण परंतु ज़ोरदार होती थी। हम इनको तोप की श्रेणी का कवि समझते हैं। खोज में भावार्थ चंद्रिका-नामक इनका एक और ग्रंथ मिला है।

उदाहरण—

सौंदर्यलहरी से

किंकनी क्कनित पद नूपुर रनित,
अगनित सुवरन आभरन झनकार की;

दिव्य पट भव्य भाल कुमकुम बिपंक मुख,
मंडल मयंक सोभा सरद सुधार की।
मनियार बान धनु धारिनि सहित स्रणि,
पास त्रास हारिनि सुप्रभा भुज चारि की;
दामिनि-सी देहदुति सर्बजग स्वामिनि,
सो नैनपथगामिनि ह्वै भामिनि पुरारि की॥ १॥
तेरे पदपंकज पराग राजै राजेश्वरी,
बेद बंदनीय बिरदावलि बढ़ी रहै;
ताकी किनुकाई पाय धाता ने धरित्री रची,
जापै लोक लोकन की रचना कढ़ी रहै।
मनियार जाहि विष्णु सेवैं सर्व पोखत सों,
सेस ह्वैके सदा सीस सहस मढ़ी रहै;
सोई सुरासुर के सिरोमनि सदाशिव के,
भसम के रूप ह्वै सरीर पै चढ़ी रहै॥ २॥

हनुमत् छब्बीसी से

अभय कठोर बानी सुनि लछिमन जू की,
मारिबे को चाहि जो सुधारी खल तरवारि;
धार हनुमंत तेहि गरजि सहास करि,
झपटि पकरि ग्रीव भूमि लै परे पछारि।
पुच्छते लपेटि फेरि दंतन दरदराइ,
नखन बकोटि चोथि देत महि डारि-डारि;
उदर बिदारि मारि लुत्थन को टारि बीर,
जैसे मृगराज गजराज डारै फारि फारि॥ ३॥
छत्री बर मनियार कासी बासी जानिए,
जापै पवनकुमार दयावंत सुखप्रद सदा॥ ४॥

मृगपद मंजुल पास सरयू तट सुरसरि,
बलिया नगर निवास भयो कछुक दिनते सुमति ॥५॥

सुंदरकांड से

देख्यो जाय गढ़ महादुर्गम अटूट जाको,
नाम सुने पुरहूत पाँय थहरात हैं;
कंचन दिवारैं दीह बुरज बलंद,
चहुँ ओर घोर खंदक समुद्र घहरात हैं।
यार कहै अति उच्च द्वार दुरापार,
जरे कुलिस किंवार छवि पुंज छहरात हैं;
छत्र मेघ डंबर दिगंबर निलय मानों,
अंबर लौं अरुन पताके फहरात हैं ॥ ६ ॥
प्रलै काली रौद्र अट्टहास किलकारै,
ललकारै हाँक मानो काल घटा घहरात है;
लंक जारि ठाढ़े सिंधु तट के निकट,
कोटि-कोटि बिज्जु छटा की-सी छटा छहरात है।
यार कहै प्रालकाल बाल रवि मंडल,
विसाल मुख मंडल ठवनि ठहरात है;
तामे जोति ज्वाल जाल मास की लपट भरी,
काल कैसी जीभ पूँछ लाल लहरात है ॥ ७ ॥

महिम्न से

मेरो चित्त कहाँ दीनता ते अति दूबरो ह्वै,
अधरम धूमरो न सुधि के सँभारे पै;
कहाँ तेरी रिद्धि कबि बुद्धि धारा ध्वनि तैं,
त्रिगुण ते परे ह्वै दरसात निरधारे पै।
मनियार याते मति थकित जकित ह्वै कै,
भक्ति बल धरि उर धीरज विचारे पै;

बिरची कृपाल वाक्यमाल या पुहुपदंत,

पूजन करन काज चरन तिहारे पै ॥ ८ ॥

नाम—(६७८) कृपानिवास ।

ग्रंथ—(१) लगनपचीसी, (२) वसंतविहार (१८०५ पद), (३) रामरसामृतसिंधु (५०० बड़े पृष्ठ), (४) प्रार्थनाशत (दोहों में ११२), (५) अनन्यचिंतामणि (भक्तिवर्णन), (६) मतमतांतरनिर्णय, (७) जन्म-मरणव्यवस्था (दोहा-चौपाइयों में), (८) श्रीरामचंद्र-जू का अष्टयाम (२६८ पृष्ठ), (९) समयपद्धति (१०१ पद), (१०) वर्षमहोत्सव (८३ पृष्ठ), (११) विवाहसमय (१८ पृष्ठ), (१२) सिद्धांतपदावली (८३ पृष्ठ), (१३) संप्रदायनिर्णय, (१४) माधुरीप्रकाश, (१५) भावनासत, (१६) अष्टयाम, (१७) सीतारामरहस्य, (१८) प्रीतिप्रार्थना, (१९) रासपद्धिति । द्वि० तथा प्र० त्रै० रिपोर्ट में भी इन ग्रंथों का पता चलता है। च० त्रै० रि० में इनके सत्गुरु महिमा, अष्टकाल समय, जनविधि भावना पचीसी तथा जानकी सहस्रनाम और मिले हैं।

रचनाकाल—१८४३ ।

विवरण—ये ग्रंथ छत्रपूर राज्य के पुस्तकालय में देखे। कविता में साधारण श्रेणी ।

लगन निबाहे ही बनि आवै,

भाव कुभाव बचाव जान दे नेही तबै कहावै ।

दग अटके मन सौंपि दियो तब प्रीतम हाथ बिकावै ;

अपनो मन न रह्यो भयो परबस कैसे न्याव चुकावै ।

(६७९) छत्रकुँवरि बाई

ये बाईजी रूपनगर के राजा सरदारसिंह की बेटी और सुप्रसिद्ध

नागरीदास की पोती थीं। इनका विवाह संवत् १८३१ में कोटड़े के खीची गोपालसिंह के साथ हुआ था। इन्होंने संवत् १८४५ में प्रेमविनोद-नामक एक ग्रंथ बनाया। इनकी कविता सरस है।

श्याम सखी हँसि कुँवरि दिसि बोली मधुरे बैन ;
सुमन लेन चलिए अबै यह बिरियाँ सुखदैन।
यह बिरियाँ सुखदैनि जानि मुसुकाय चलीं जब ;
नवल सखी करि कुँवरि संग सहचरि बिथुरीं सब।
प्रेमभरी सब सुमन चुनत जित तित साँझी हित ;
ए दुहुँ बेबस अंग फिरत निज गति मति मिश्रित।

स्त्री होने के कारण इनका प्रयत्न बहुत सराहनीय है, परंतु काव्य की दृष्टि से इनकी गणना साधारण श्रेणी में हो सकती है।

(६८०) महाराज रामसिंह

ये महाराज छत्रसिंह के पुत्र नरवलगढ़ के राजा थे। इनका कविताकाल संवत् १८४५ था। इन्होंने अलंकारदर्पण-नामक दोहों में अलंकारों का तथा रसनिवास व रसविनोद रसभेद के अच्छे ग्रंथ बनाए हैं। हम इनको तोष की श्रेणी में रक्खेंगे। प्रथम त्रैवार्षिक रिपोर्ट में रसनिवास का रचनाकाल १८३६ लिखा है।

सोहत सुंदर स्याम सिर मुकुट मनोहर जोर ;
मनो नील मनि सैल पर नाचत राजत मोर॥ १॥
दमकन लागीं दामिनी करन लगे घन रोर ;
बोलत माती कोइलैं बोलत माते मोर॥ २॥

तृ० त्रै० रि० में इनके जुगल विलास (१८३६) तथा रसशिरोमणि (१८३०) ग्रंथ मिले हैं जिनसे इनका कविताकाल १८३० आता है। (६८०) महाराज छत्रसिंह भी कवि थे और 'मोहन नाम पचीसी' ग्रंथ बनाया था।

(६८१) भान कवि

इन महाशय का पूरा पता इनके काव्य से नहीं चलता, सिर्फ़ इतना विदित होता है कि ये राजा ज़ोरावरसिंहजी के पुत्र थे और राजा रनजोरसिंह के यहाँ रहते थे। ये रनजोरसिंह महाराज बुँदेला ठाकुर संभवतः महाराज छत्रसालजी के वंशधर थे, क्योंकि इन्होंने रनजोरसिंहजी का "पंचम" की उपाधि-सहित वर्णन किया है। पंचम की उपाधि बुँदेला ठाकुरों के अतिरिक्त और किसी की नहीं हो सकती। छत्रप्रकाश में कई जगह यह उपाधि छत्रसाल को दी गई है। पंचमसिंह बुँदेलों के पूर्वज और बड़े प्रतापी थे, इसी कारण उनके कुलवाले अपने नाम के आगे पंचम लिखना सम्मानबोधक समझते हैं। अतः जान पड़ा कि महाराज रनजोर बुँदेला थे, और इन्हीं के आश्रय में भान ने यह ग्रंथ "नरेंद्रभूषण" बनाया। इसकी रचना संवत् १८४५ में हुई, अतः इनका जन्म-काल संभवतः संवत् १८०० के लगभग होगा। इसमें कुल १७७ छंद हैं, जिनमें अलंकारों का पूरा वर्णन किया गया है। भाषा इसकी व्रजभाषा है और वह मनोहर एवं ज़ोरदार है। इसमें बहुधा उदाहरणों में राजा रनजोरसिंह के यश, युद्ध-विजय, कीर्ति इत्यादि वर्णित हैं। इसमें लगभग आधे उदाहरण वीर, अद्भुत, भयानक इत्यादि रसों के और आधे शृंगाररस के होंगे। ग्रंथ अच्छा है और उदाहरण व लक्षण स्पष्ट हैं। हम इनको तोष की श्रेणी में रखते हैं। शिवसिंहसरोज में एक भानदास बंदीजन, चरखारीवाले लिखे हैं, परंतु उनका रूपविलास-पिंगल बनाना कहा गया है, और उनकी उत्पत्ति संवत् १८५५ की दी है। इन भान ने संवत् १८४५ में यह ग्रंथ रचा, अतः ये महाशय सरोज में लिखित भानदास, चरखारी-निवासी नहीं जान पड़ते, क्योंकि इनके और उनके समय में कम-से-कम ४० वर्ष का अंतर है, और इन्होंने रूपविलास भी नहीं बनाया।

"पंचम मसाल रनजोर भुवपाल तेरी,
कीरति बिसाल तीनि लोक न समाति है।"
रन मतवारे के जोरावर दुलारे तुव,
बाजत नगारे भए गालिब दिगीस पर;
दल के चलत भरभर होत चारी ओर,
चालति धरनि भारी भारु भो फनीस पर।
देखि कै समर सनमुख भयो ताही समै,
बरनत भान पैज कै कै बिसे बीस पर;
तेरी समसेर की सिफत सिंह रनजोर,
लखी एकै साथ हाथ अरिन के सीस पर॥ १॥
घन से सघन स्याम इंदु पर छाय रहे,
बैठी तहाँ असति दुरेफनि की पाँति-सी;
तिनके समीप तहाँ खंज कैसी जोरी लोल,
आरसी से अमल निहारे बहु भाँति-सी।
ताके ढिग अमल ललौहैं बिबि बिद्रुम-से,
छलकति ओप जामैं मोतिन की पाँति-सी;
भीतर ते कढ़ति मधुर बीन कैसी धुनि,
सुनि करि भान परि कानन सुहाति-सी॥ २॥

(६८२) हठी राधावल्लभी

इन्होंने संवत् १८४७ में राधाशतक-नामक एक मनोहर ग्रंथ बनाया। शिवसिंहजी ने लिखा है कि ये महाशय ब्रजवासी थे। जान पड़ता है कि ये माथुर चौबे थे। इनकी भाषा ब्रजभाषा है, और इनके छंद बहुत मधुर और सरस हैं, जो प्रायः घनाक्षरी होते हैं। हम इनकी गणना पद्माकर कवि की श्रेणी में करते हैं। [खोज १६०९]

बैठी रंग भरी है रँगीली रंग रावटी मैं,
कहाँ लौं सराहौं सुंदराई सिरताज की;

चाँदनी की, चंपक की, मैनका तिलोत्तमा की,
रंभा रमा रति की निकाई कौन काज की।
मोतिन के हार गरे, मोतिन सों माँग भरे,
मोतिन ते बेनी गुही हठी सुख साज की;
चाल गजराज मृगराज कैसो लंक,
द्विजराजसो बदन रानी राजै ब्रजराज की ॥१॥
ऋषि सुबेद बसु शशि सहित निरमल मधु को पाय;
माधव तृतिया भृगु निरखि रच्यो ग्रंथ सुखदाय ॥२॥

(६८३) थान कवि

थान कवि ने संवत् १८४८ में दलेलप्रकाश-नामक ग्रंथ बनाया। [द्वि० त्रै० रि०] इन्होंने अपना वर्णन अच्छा कर दिया है—

बासी बैसवारे को बिलासी खेरे डौंडिया को,
गिरिजा गिरीस को बिरद करौं गान हौं;
पोता महासिंह को परोता लालराय जू को,
सुत तौ निहाल को भजत भगवान हौं।
नाती तौ धरमदास जू को कबि चंदन को,
भैनो शिष्य सेवक कहाऊँ कवि थान हौं;
साहेब मेहेरबान दानि श्री दलेलजू को,
ग्रंथ बरनन करौं बिविध बिधान हौं ॥ १ ॥
समत अठारह सै जहाँ अड़तालीस बिचार;
शुक्क पत्त दशमी सुतिथि माघ मास गुरुबार ॥ २ ॥
दानि दलेलप्रकास यह तब लीन्हों अवतार;
मुद मंगल कल्यानमय रच्यो ग्रंथ सुखसार ॥ ३ ॥

इससे विदित होता है कि थानराम के प्रपितामह लालराय, पितामह महासिंह, पिता निहाल राय, मातामह धरमदास, मामा चंदन कवि, और गुरु सेवक थे। ये महाशय डौंड़ियाखेरे में रहते

थे। यह ग्राम वैसवारा, ज़िला रायबरेली में एक प्रसिद्ध स्थान है। यह राना बेनीमाधव का वासस्थान था। थान कवि ने अपना कुल नहीं लिखा और न इनके कुल का हाल शिवसिंहसरोज से विदित होता है, क्योंकि इस ग्रंथ में थान कवि का नाम ही नहीं लिखा है। शिवसिंहजी ने थान के मामा चंदन को भाट लिखा है। इससे विदित होता है कि ये भी भाट थे। थानराम के जन्म-मरण आदि का संवत् ज्ञात नहीं है।

थानराम ने दलेलसिंह गौर के नाम पर अपना ग्रंथ बनाया है। दलेलसिंह के पिता जबरसिंह, पितामह महासिंह, और प्रपितामह कीढ़ीमल गौर थे। ये लोग वैसवारे के चँड़रा नगर में रहते थे। थान ने लिखा है कि इन्होंने गौरा देश जीतकर ले लिया था।

दलेलप्रकाश में वंदना के पीछे कविवंश और राजवंश का वर्णन एक अध्याय में है। दलेलप्रकाश में एकादश अध्याय और क़रीब साढ़े तीन सौ के छंद हैं। इसमें गणविचार, गुण-दोष, भावभेद और रसभेद का वर्णन है। आदि में जिस-जिस छंद का नाम आ गया है उसका लक्षण भी इन्होंने उसी स्थान पर कह दिया है। इसी प्रकार जहाँ किसी छंद में कोई मुख्य अलंकार आ गया, वहाँ उसका भी लक्षण कह दिया गया है। एक स्थान पर राग-रागिनियों का नाम आया, वहाँ इन्होंने उनका भी वर्णन कर दिया है। यह क्रम संभवतः तृतीयांश ग्रंथ के ख़तम हो जाने पर छूट गया है। ग्रंथ के अंत में कुछ चित्र-कविता भी की गई है। इन्होंने चित्रकाव्य के संबंध में ह्रस्वाक्षरों का एक छंद कहा है जो बहुत अच्छा है। इनकी कविता में अच्छे छंद बहुतायत-से हैं, और भाषा भी उत्तम है। आपने अनुप्रास का समावेश भी किया है, पर अधिकता से नहीं। कुल मिलाकर थानराम की कविता बहुत संतोषजनक है।' इनको हम पद्माकर कवि की श्रेणी में रखते हैं।

जै लंबोदर संभुसुवन अंभोरुह लोचन;
चरचित चंदन चंद्रभाल वंदन रुचि रोचन।
मुख मंडल गंडालि गंड मंडित स्रुति कुंडल;
वृंदारक बर वृंद चरन वंदत अखंड बल।
वर अभय गदा अंकुश धरन बिघनहरन मंगलकरन;
कबि थान मवासे सिद्ध वर एकदंत जै तुव सरन॥ १॥

दासन पै दाहिनी परम हंसवाहिनी है,
पोथी कर वीना सुरमंडल मढ़त है;
आसन कँवल अंग अंबर धवल,
मुख चंद सों अवल रंग नवल चढ़त है।
ऐसी मातु भारती की आरती करत थान,
जाको जस विधि ऐसो पंडित पढ़त है;
ताकी दयादीठि लाख पाखर निराखर के,
मुख ते मधुर मंजु आखर कढ़त है॥ २॥

कलुषहरनि सुखकरनि सरन जन,
थरनि वरनि जैसे कहत धरनि धर;
कलिमल कलित बलित अघ खलगन,
लहत परम पद कुटिल कपट तर।
मदन कदन सुर सदन बदन शशि,
अमल नवल दुति भजत भगत बर;
सुर सरि तुव जल परस दरस करि,
सुरसरि सम गति लहत अधम नर॥ ३॥

नाम—(९८४) खुमानसिंह, खुमान नल्लवंशीचारण, करौली।

ग्रंथ—स्फुट।

कविताकाल—१८५० के लगभग।

विवरण—ये महाराना मदनपाल के कवि थे। काव्य साधारण श्रेणी का है।

तिलक बिजै को निरभै को नव नेजपुंज,
जबर जिले को जोट जाहिर अनीप को;
छत्रिन को छत्र है नछत्रपति जू को वंस,
जगत प्रसंस जस सुजन समीप को।
करन उदार देवतरु सो पुनीत सरि,
उमरदराज साज साहस प्रदीप को;
चंदन सो चंद सो चहूँधा चारु चंद्रिका सो,
दीप-दीप छायो जस मदन महीप को।

नाम—(९८४) तोषनिधि।

जन्म-काल—१८३०।

कविताकाल—१८९०।

ग्रंथ—(१) कामधेनु, (२) रसराज, (३) भय्यालाल पचीसी, (४) कमलापति चालीसा, (५) दीन व्यंग्य शत, (६) महाभारत छप्पनी।

विवरण—इनके पिता का नाम ताराचंद और पुत्र का गिरधरलाल था। तोषनिधि कान्यकुब्ज शुक्ल थे और कंपिला में रहते थे। इनका विस्तृत हाल 'साहित्य समालोचक' में निकला है। इनकी कविता के उदाहरण इस प्रकार हैं—

भए पसू तारे पसू सुनी पसुन की बात;
मेरी पसुमति देखि कै काहे मोहि घिनात॥ १॥
सेस सहस मुख नित रटत तासों अकरत नाहिं;
नाम जपैबो दीन सों कहा रहे हरि चाहि॥ २॥

(९८५) बेनी बंदीजन, बैंती, जिला रायबरेलीवाले

ये महाशय इसी नाम के असनीवाले कवि से इतर हैं। इनके दो

ग्रंथ और बहुत-से भँड़ौआ छंद हमारे देखने में आए हैं। अपने टिकैतरायप्रकाश में इन्होंने अपने कुल का वर्णन किया है, जिससे विदित होता है कि ये अवध के प्रसिद्ध वज़ीर महाराजा टिकैतराय के आश्रय में रहते थे। इनके पूर्वपुरुष साहेबराय ने जयपुर, जोधपूर और उदयपुर में मान पाया था और जंबू, बद्रीनाथ और केदारनाथ की भी यात्रा की थी। कहते हैं कि लखनऊ के प्रसिद्ध कवि बेनीप्रवीन से एक बार इनसे वाद हुआ था और तब से इन्होंने उन्हें प्रवीन बेनी की उपाधि दी। इनके पहले ग्रंथ 'टिकैतरायप्रकाश' में अलंकारों का विषय कहा गया है। पंडित युगलकिशोर के पास यह अपूर्ण है, परंतु हमने यह पूर्ण ग्रंथ भी देखा है, जो लगभग हस्तलिखित ५० पृष्ठ का होगा। इसकी रचना बहुत प्रशंसनीय न होने पर भी अच्छी है। यह संवत् १८४९ में बना। इनके द्वितीय ग्रंथ रसविलास में रसभेद और भावभेद का वर्णन है, जो संवत् १८७४ में बना। आकार में यह पद्माकरकृत जगद्विनोद के बराबर है और रचना भी इसकी मनोहर है। रसविलास लछिमनदास के नाम से बना है। इस ग्रंथ से विदित होता है कि बेनी कवि स्वामी हितहरिवंश के मतानुयायी थे। इन ग्रंथों के अतिरिक्त बेनी के बनाए हुए ३६ भँड़ौआ हस्त-लिखित हमने देखे हैं। ये तीनों ग्रंथ पंडित युगलकिशोर के पुस्तकालय में हैं। इनके अतिरिक्त बेनी के बहुत-से भँड़ौआ छंद भँड़ौआ-संग्रह में मिलेंगे, जो भारत-जीवन प्रेस में छपा है। इनका प्रथम ग्रंथ साधारण और द्वितीय अच्छा है, परंतु इनकी सबसे उत्कृष्ट रचना भँड़ौओं में पाई जाती है। ऐसे भड़कीले भँड़ौआ किसी भी प्राचीन कवि ने नहीं बनाए। इस कवि ने अनुप्रास और यमक का बड़ा ध्यान रक्खा है और यशवर्णन, शृंगार, नीति और स्फुट विषयों पर कविता की है। इन्होंने संसार की असारता पर भी काव्य किया है। इन्होंने

महाराजा टिकैतराय के आमों की प्रशंसा और दयाराम के आमों की दो छंदों द्वारा भारी निंदा की है। एक स्थान पर बुरी रज़ाई पाने पर भी आपने भँड़ौआ कह डाला। लखनऊ के कवि ललकदास की निंदा में इन्होंने तीन भँड़ौआ कहे। इनको हम पद्माकर की श्रेणी में रखते हैं।

जनक है ज्ञान को, बखान को युधिष्ठिर है,
दान को दधीचि कलि काम तरवर है;
प्रथु प्रजा पालन को, काल अरि जालन को,
सुकबि मरालन को मानसरवर है।
दौलति कुबेर वेनी मेरु मरजाद को है,
मुकुट महीपन को जाहि हरवर है;
राजन को राजा महाराजा श्री टिकैत राय,
जाहिर जहान में गरीबपरवर है॥ १॥
(टिकैतरायप्रकाश)

अलि दसे अधर सुगंध पाय आनन को,
कानन मैं ऐसे चारु चरन चलाए हैं;
फाटि गई कंचुकी लगे ते कंट कुंजन के,
बेनी बरहीन खोलि बार छबि छाए हैं।
वेग ते गवन कीनो धक-धक होत सीनो,
ऊरध उसासैं तन स्वेद सरसाए हैं;
भली प्रीति पाली बनमाली के बुलाइवे को,
मेरे हेत आली बहुतेरे दुख पाए हैं॥ २॥
(रसविलास)

घर-घर घाट-घाट बाट-बाट ठाट ठटे,
वेला औ कुवेला फिरै चेला लिए आस पास;
कबिन सों बाद करै, भेद बिन नाद करै,
महा उनमाद करै धरम-करम-नास।

बेनी कवि कहै विभिचारिन को बादशाह,
अतन प्रकास तन सतन सरम तास ;
ललना ललक, नैन मैन की झलक, हँसि,
हेरत अलक रद खलक ललक दास ॥ ३ ॥
चींटी की चलावै को मसा के मुख आपु जायँ,
स्वास की पवन लागे कोसन भगत हैं ;
ऐनक लगाए मरु मरु कै निहारे जात,
अनु परमानु की समानता खगत है ।
बेनी कवि कहै हाल कहाँ लौं बखान करौं,
मेरी जान ब्रह्म को विचारिबो सुगत है ;
ऐसे आम दीन्हें दयाराम मन मोद करि,
जाके आगे सरसो सुमेरु सो लगत है ॥ ४ ॥

(९८६) छेदीराम वैश्य (नेह)

इन्होंने संवत् १८४१ में नेहपिंगल नाम का ग्रंथ बनाया, जिसमें नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, मर्कटी, पताका इत्यादि कहे गए हैं। रचना इसकी साधारण है। अपने नाम के अतिरिक्त और इस ग्रंथ में उन्होंने कोई पता इत्यादि नहीं लिखा है। इसमें २६० अनुष्टुप् श्लोकों के बराबर रचना है। हम इनको साधारण श्रेणी में रखते हैं।

नाम—(९८६/१) गणपतराव।

रचनाकाल—१८४१।

विवरण—महाराष्ट्र कवि थे। हिंदी में भी रचना करते थे।

(९८७) भौन कवि

ये महाशय ब्रह्मभट्ट (भाट) थे। इनके पिता का नाम महापात्र ख़ुशालचंद था। ठाकुर शिवसिंहजी ने लिखा है कि ये नरहरिवंशी बंदीजन बेती, ज़िला रायबरेली में रहते थे। इनके पुत्र दयाल कवि संवत् १९३४ में, जब शिवसिंहसरोज बना था, वर्तमान

थे। शिवसिंहजी ने भौन का जन्म-काल संवत् १८१८१ माना है, परंतु इनका बनाया शक्तिचिंतामणि ग्रंथ सं० १८६१ का खोज [द्वि० त्रै० रि०] में मिला है ; इस कारण सरोज का संवत् अशुद्ध जान पड़ता है। इनका जन्म-काल सं० १८२५ समझना चाहिए। सरोजकार ने लिखा है कि भौन ने शृंगाररत्नाकर-नामक अलंकर ग्रंथ बनाया। यह ग्रंथ हमने नहीं देखा, परंतु 'रसरत्नाकर'-नामक इनका एक द्वितीय ग्रंथ पंडित युगलकिशोर के पुस्तकालय में वर्तमान है और इस समय हमारे सामने रक्खा है। इसमें ४३० छंद हैं, और रसभेद तथा भावभेद का वर्णन है। यह बड़ा अच्छा ग्रंथ है, परंतु भाषा के बहुतेरे ग्रंथों की भाँति अभी यह भी मुद्रित नहीं हुआ है। इस कवि की भाषा शुद्ध व्रजभाषा है, और कविता सर्वांगसुंदर और निर्दोष है। भौन कवि को हम पद्माकर की श्रेणी में रखते हैं। आपने रूपक अच्छे कहे हैं।

बार बार कोयन कनौटी बदलत बर,
बिमल बिसाल भाल छिति पर फेरे हैं ;
चूकत न चाय भरे चौकरी चलायबे मैं,
चतुर चलाँक चित चातुर के चेरे हैं।
भौन कबि कहै वाग भौंहनि के ठासे नेक,
नाचत नटा से नट निविड निबेरे हैं ;
मैन आतुरी से उड़यो चाहैं चातुरी से,
बीर करत खुरी से ये तुरी से नैन तेरे हैं।

(६८८) कृष्णदास

कृष्णदास गिरिजापुरवाले ने माधुर्यलहरी-नामक ग्रंथ भादौं संवत् १८६२ से वैशाख १८६३ तक बनाया। यह ग्रंथ छतरपूर में है, जिससे इनके विषय की सब बातें जान पड़ती हैं। ये अष्टछापवाले प्रसिद्ध कृष्णदास से इतर कवि थे। इनका ग्रंथ

४२० भारी पृष्ठों का है, जिसमें विविध छंदों में कृष्ण-कथा कही गई है । इनकी गणना साधारण श्रेणी में है । ये विंध्या-चल के निकट गंगाजी के समीप गिरजापत्तन-नामक ग्राम में रहते थे ।

कौन काज लाज ऐसी करै जो अकाज,
　　अहो बार-बार कहो नरदेह कहाँ पाइए ;
दुर्लभ समाज मिल्यो सकल सिधांत जानि,
　　लीला गुन नाम धाम रूप सेवा गाइए ।
बानी की सयानी सब पानी में बहाय दीजे ,
　　जानी सो न रीति जासों दंपति रिझाइए ;
जैसी-जैसी गही जिन लही तैसी नैनन हूँ,
　　धन्य धन्य राधाकृष्ण नित ही गनाइए ।

[द्वि० त्रै० रि०] भागवत भाषा पद्य (१८५२) (११३८ पृष्ठ) और भागवत माहात्म्य १८५५ [खोज ११०५]-नामक इनके दो ग्रंथ हैं । तृ० त्रै० रि० में इनका कृष्णदास के मंगल-नामक ग्रंथ मिला है ।

इस समय के अन्य कवि गण

नाम—(६८६) कुंजकुँवर (कुंजदास) ओरछा ।
ग्रंथ—ऊषाचरित्र । [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८३१ ।

नाम—(६६०) प्यारेलाल तिवारी, बँभौरी बैसवाड़े के ।
ग्रंथ—(१) आनंदलहरी (बारहखड़ी) (७८ पृष्ठ), (२) अय-नानंदलहरी (८७ पृष्ठ) ।
कविताकाल—१८३१ ।
विवरण—छतरपूर में देखे । हीन श्रेणी ।

नाम—(६६१) बाजेस ।

कविताकाल—१८३१।

विवरण—इन्होंने गोसाईं अनूपगिरि की तारीफ़ में कविता की है। साधारण श्रेणी।

नाम—(६६२) भूपति, गोविंदपुर।

ग्रंथ—(१) सुमतिप्रकाश [खोज १६०४], (२) रामचरित्र रामायण। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३१।

विवरण—महाराजा पटियाला के यहाँ थे।

नाम—(६६२/१) सेवाराम राजपूत।

ग्रंथ—(१) हनुमच्चरित्र (१८३१), (२) शांतिनाथ पुराण, (३) भविष्यदत्त चरित्र।

रचनाकाल—१८३१।

नाम—(६६३) प्रतापसिंह महाराजा, उपनाम मोदनारायण दरभंगा-नरेश।

ग्रंथ—राधागोविंद संगीतसार। [च० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३२।

विवरण—विद्यापति ठाकुर की रीति पर कविता की है।

नाम—(६६४) भारती (स्यात् ओरछा-नरेश महाराजा भारतीचंद)।

ग्रंथ—रसशृंगार। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३२।

विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(६६५) भीखनजी।

ग्रंथ—(१) अवजोनराभावरी, (२) सारंगा की कथा (१८३४)।

कविताकाल—१८३२।

विवरण—राजपूतानी भाषा में है।

नाम—(९९६) भीष्म जैनी साधू।

ग्रंथ—कालबादीरामतंत्र।

जन्म-काल—१८०० ।

कविताकाल—१८३२ ।

नाम—(९९७) रूपदास ।

ग्रंथ—सेवादास की परिचयी (पृ० ३०)। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३२ ।

नाम—(९९८) लाल कवि, बनारसी ।

ग्रंथ—(१) आनंदरस [खोज १९०३] (रस मूल), (२) [खोज १९०३] कवित्त महाराजा महीपनारायणसिंह तथा अन्य राजा गण, (१७७५) [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३२ ।

विवरण—चेतसिंह काशी-नरेश के यहाँ थे। साधारण श्रेणी।

नाम—(९९९) लाल गिरिधर। देखो नं० ७९२ ।

नाम—(१०००) हरिप्रसाद ।

ग्रंथ—संस्कृतसप्तशती ।

कविताकाल—१८३२ ।

विवरण—राजा चेतसिंह काशीनरेश की आज्ञा से सतसई का संस्कृत में उल्था किया था।

नाम—(१००१) छत्रसाल, मोठ ज़िला झाँसी ।

ग्रंथ—प्रेमप्रकास। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३३ ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(१००१/१) अमृत ।

ग्रंथ—राजनीति । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८३३ के पूर्व ।

नाम—(१००२) दूल्हाराम।
ग्रंथ—(१) साखी, (२) शब्द [खोज १९०२], (३) शब्दज्ञान।
कविताकाल—१८३३।
विवरण—सत्यनामी पंथ के तृतीय गुरु।

नाम—(१००३) बालकराम।
ग्रंथ—भक्तमाल टीका।
कविताकाल—१८३३। [खोज १९०२]।

नाम—(१००४) विक्रमाजीत (लघुजन) महाराजा ओरछा।
ग्रंथ—(१) लघु सतसैया, (२) भारतसंगीत, (३) पदराग मालावती, (४) विष्णुपद [प्र० त्रै० रि०] दो ग्रंथ। खोज १९०३ में इनके हरिभक्त विलास ग्रंथ का पता चलता है, जो १८८० में बना था।
कविताकाल—१८३३-८०।
विवरण—महाराष्ट्रों से लड़े। साधारण श्रेणी।

नाम—(१००५) लल्लू भाई ब्राह्मण, भृंगपुर।
ग्रंथ—उदाहरणमंजरी (पृ० ७० गद्य-पद्य)।
कविताकाल—१८३३। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(१००६) हितपरमानंद (ब्रजवासी)।
ग्रंथ—(१) रस-विवाह-भजन, [प्र० त्रै० रि०] (२) राधा-अष्टक, [प्र० त्रै० रि०] (३) गुरुभक्ति-विलास, (४) हितहरिवंश की जन्मवधाई, [प्र० त्रै० रि०] (५) गुरु-प्रताप-महिमा, [प्र० त्रै० रि०] (६) जमुनामंगल, [प्र० त्रै० रि०] (७) जमुना-माहात्म्य [प्र० त्रै० रि०]।
कविताकाल—१८३३।

विवरण—हितहरिवंशजी की संप्रदाय के हैं।

नाम—(१००७) हरिनाथ झा।

जन्म-काल—१८०४।

कविताकाल—१८३४।

विवरण—महाराज दरभंगा के यहाँ थे।

नाम—(१००७/१) हितदास राधावल्लभी।

ग्रंथ—(१) राधा सुधानिधि सटीक, (२) भागवत दशम भाषा, (३) रसिकलता (हितमालिका की टीका)। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८३४।

विवरण—भोरीसखी के शिष्य थे।

नाम—(१००७/२) व्यास।

ग्रंथ—प्रश्न। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८३५ के पूर्व।

नाम—(१००८) किंकर गोविंद, बुँदेलखंडी।

जन्म-काल—१८१०।

कविताकाल—१८३५।

विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(१००९) गोविंदजी।

जन्म-काल—१८०७।

कविताकाल—१८३५।

विवरण—पूर्वी बोली में रचना की है। निम्न श्रेणी।

नाम—(१०१०) गुलाबसिंह पंजाबी, अमृतसर।

ग्रंथ—(१) रामायण, (२) चंद्रप्रबोध नाटक, (३) मोक्षपंथप्रकाश, (४) भाँवर-साँवर।

कविताकाल—१८३५ [खोज १९०३]।

नाम—(१०११) चंद्राहित, राधावल्लभी। देखो नं० (६३६/१)।

नाम—(१०१२) प्रतापसिंह महाराजा।

ग्रंथ—(१) शृंगारमंजरी, (२) नीतिमंजरी, [प्र० त्रै० रि०] (३) वैराग्यमंजरी, (४) स्नेहसंग्राम (१८५२) [खोज १९००], (५) संचसागर (१८५२), (६) रेखता (१८५२) [खोज १९०२], (७) भर्तृहरिशतक टीका (१८५२)।

कविताकाल—१८३५।

विवरण—जयपुर महाराज, उपनाम व्रजनिधि।

नाम—(१०१३) बलदेव, बघेलखंडी।

ग्रंथ—(१) सत्कविगिराविलाससंग्रह, (२) कादंवरी (१८४१) (खोज१९०५)।

जन्म-काल—१८०९।

कविताकाल—१८३५।

विवरण—ये राजा विक्रमसाह बघेला देउरा नगरवाले के यहाँ थे। एक संग्रह सत्कविगिराविलास बनाया है, जिसमें १७ कवियों के काव्य हैं। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है।

नाम—(१०१४) मथुरानाथ मालवीय, काशी।

ग्रंथ—(१) विरहबत्तीसी (पृ० ७६ पद्य) (१८३५), (२) चौसारचक्र (पृ० ८ पद्य) (१८३७), (३) सूत्रार्थपातंजलि भाषा (पृ० १६ गद्य) (१८४६), (४) विवेकपंचामृत (१८५२), (पृ० ४१८ पद्य), (५) चूड़ामणिशकुन (पृ० ६ पद्य), (६) पातंजलि भाषा (पृ० ६४ पद्य) (१८४६)। [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(१०१५) महादान चारण।

ग्रंथ— (१) छंद जलंधरनाथजी रो [खोज १९०२] (१८६७),

(२) गीता रानाजी श्रीभीमसिंहजी रा (१८३५
(३) गीता महाराज मानसिंहजी रा (१८८५)।

कविताकाल—१८३५।

विवरण—राजपूतानी कवि।

नाम—(१०१६) मानसिंह।

ग्रंथ—मोक्षदायक पंथ। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३५।

विवरण—नानकपंथी गुलाबसिंह के शिष्य।

नाम—(१०१७) लाल कलानिधि।

ग्रंथ—नखशिख।

जन्म-काल—१८०७।

कविताकाल—१८३५ [खोज १६००]।

नाम—(१०१८) सखीसुख ब्राह्मण, नरवर, बुँदेलखंड।

जन्म-काल—१८०७।

कविताकाल—१८३५।

विवरण—साधारण श्रेणी। कदाचित् इन्हीं का एक छंद 'अलंकार रत्नाकर' में आया है। यदि 'रत्नाकर' वाले 'सखी सुख' भी यही हों तो इनका कविताकाल संवत् १७६८ के पूर्व जायगा।

नाम—(१०१६) धनंतर।

ग्रंथ—ओपधिविधि। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३६ के पूर्व।

विवरण—गद्य ग्रंथ।

नाम—(१०२०) व्यासदास।

ग्रंथ—(१) ब्रह्मज्ञान। [प्र० त्रै० रि०], (२) व्यासबानी। [च० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३६ के पूर्व।

नाम—(१०२१) दयानिधि, बैसवाड़ा।
ग्रंथ—शालिहोत्र भाषा छंदोबद्ध। [द्वि० त्रै० रि०]
जन्म-काल—१८११।
कविताकाल—१८३६।
विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१०२२) द्विज कवि।
ग्रंथ—सभाप्रकाश।
कविताकाल—१८३६। [प्र० त्रै० रि०]
विवरण—रिपोर्ट से १८२६ का समय निकलता है।

नाम—(१०२२/१) बेनीबख्श क्षत्रिय।
ग्रंथ—हरिश्चंद्र कथा। [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८३६।
विवरण—ज़िला सीतापूर के थे।

नाम—(१०२२/२) चतुर्भुजदास कायस्थ।
ग्रंथ—मधुमालती की कथा।
रचनाकाल—१८३७ के पूर्व [खोज १९०२]।

नाम—(१०२३) अनेमानंद।
ग्रंथ—नाटक दीपपंचदशी [खोज १९०१]।
कविताकाल—१८३७।
विवरण—वेदांत विषय।

नाम—(१०२४) किशवर अली।
ग्रंथ—सारचंद्रिका।
कविताकाल—१८३७।

नाम—(१०२५) किशोरी अली साधू, राधावल्लभी।
ग्रंथ—(१) सारचंद्रिका (पृ० ८६ पद्य), [द्वि० त्रै० रि०] (२) किशोरी अली के पद।

कविताकाल—१८३७ ।

विवरण—इन्हें मुसलमान न समझना चाहिए। सखी भाव से भक्ति करनेवाले अपने नामों के पीछे 'अली' प्रायः लिखते हैं। अली सखी को कहते हैं। कदाचित् नं० १०२४ व १०२५ के दोनों कवि एक ही हैं।

नाम—(१०२५/१) टेकचंद ।

ग्रंथ—(१) तत्त्वार्थ श्रुतसागरी टीका की वचनिका (१८३७), (२) सुदृष्टि तरंगिणी वचनिका (१८३८), (३) षट् पाहुडवचनिका, (४) कथा कोश, (५) बुधप्रकाश, (६) अनेक पूजापाठ ।

रचनाकाल—१८३७ ।

नाम—(१०२६) नवलराम ।

ग्रंथ—(१) सर्वांगसार, (२) नवलसागर [खोज १६०१] ।

कविताकाल—१८३७ ।

विवरण—रामचरण के शिष्य ।

नाम—(१०२७) माधवदास कायस्थ, नागौरवाले ।

ग्रंथ—(१) करुणाबत्तीसी, [द्वि० त्रै० रि०] (२) नारायणलीला, (३) मुहूर्तचिंतामणि, (४) अवतारगीता, (५) दधिलीला [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३७ [खोज १६०१] ।

नाम—(१०२८) रामचरणदास साधु (शायद महंत) अयोध्या ।

ग्रंथ—(१) रामानंदलहरी, (२) कौशलेंद्र रहस्य [खोज १६०३], (३) पिंगल (१८४१), (४) शतपंचाशिका (१८४२), (५) विदुरशतक, (६) रसमल्लिका (१८४४) [खोज १६०३], (७) चरणचिह्न, (८)

दृष्टांतबोधिका, [प्र० त्रै० रि०] (९) जयमालसंग्रह, (१०) कवितावली (१८४४), (११) तीर्थ यात्रा, (१२) रामपदावली, (१३) सियारामरसमंजरी (१८८१), (१४) रामचरितमानस की टीका, (१५) सेवाविधि, (१६) छप्पै रामायण [द्वि० त्रै० रि०] (१८४२), (१७) विरहशतक, [द्वि० त्रै० रि०] (१८) राममालिक (१८४४), पं० त्रै० रि० में अमृत खंड, विरहशतक, वैराग्य शतक, उपासनाशतक, विवेकशतक तथा नामशतक-नामक ६ ग्रंथ और मिले हैं।

विवरण—अच्छे पंडित, कवि और टीकाकार थे। इन्होंने रामायण की बहुत विशद टीका की है।

नाम—(१०२९) रामसजन।

ग्रंथ—ब्रह्मसतूल।

कविताकाल—१८३७।

नाम—($\frac{१०२९}{१}$) लालचंद जैन।

ग्रंथ—श्रीपाल चौपाई।

रचनाकाल—१८३७।

उदाहरण—

स्वतिश्रीदायक सदा चौतिस अतिशयवंत;
प्रणमूं वे कर जोड़िने जगनायक अरिहंत।
बरस अठारे से सैंतीसे सुदि आसाढ़ कहीसैजी;
द्वितीया मंगलवार सुदीसै मिथुन संक्रांत जगीसैजी।
लालचंद निज हित संभाली विकथा दूरै टालीजी;
हेमचंद्र कृत चरित्र निहाली चौपइ की धी रसालीजी।

नाम—(१०३०) लाल झा मैथिल।

ग्रंथ—(१) कनरपी घाट लड़ाई, (२) गौरीपरिणय नाटक।

कविताकाल—१८३७।

विवरण—नरेंद्रसिंह दरभंगानरेश के यहाँ थे। नाटककार हैं।

नाम—(१०३१) हरिलाल व्यास, आज़मगढ़।

ग्रंथ—(१) सेवकवानी सटीक, (२) रसिकमेदिनी, (३) रामजी की वंशावली (पृष्ट २०४), [द्वि० त्रै० रि०] (४) राधा सुधानिधि की रसकुल्या टीका तथा लघु-व्याख्या टीका।

कविताकाल—१८३७।

विवरण—साधारण श्रेणी राधावल्लभी।

नाम—(१०३२) गुमान तिवारी।

ग्रंथ—(१) छंदाटवी, [प्र० त्रै० रि०] (२) कृष्णचंद्र-चंद्रिका (खोज १६०५) (१६३८)।

कविताकाल—१८३८।

कृष्णचंद्रिका का निर्माण काल विषयक दोहा इस प्रकार है—

वसु गुण वसु शशि ठीक दै यह संवत निरधार ;
मधु माधव सित पच्छ की त्रयोदसी गुरुवार।

उदाहरण—

चंचल चलत चारु रतनारे ललित दृगन की आभा ;
मृग खंजन गंजन मन रंजन कहैं कंज की का भा।
अलकैं छूटि रही मुख ऊपर मंजु मेच घुँघरारी ;
कल कपोल बोलनि मृदु खोलनि भृकुटी कुटिल पियारी।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१०३३) महेवा प्रवीन या कलाप्रवीन।

ग्रंथ—प्रवीनसागर।

कविताकाल—१८३८।

नाम—(१०३४) जनकनंदिनीदास।

ग्रंथ—भेदभास्कर। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८३९ के पूर्व।

नाम—(१०३५) भवानीसहाय।

ग्रंथ—वैतालपचीसी।

कविताकाल—१८३९।

विवरण—कायस्थ, काशी।

नाम—(१०३५/१) मोहनदास, कपूर मिश्र के पुत्र।

ग्रंथ—(१) भावचंद्रिका, (२) कृष्णचंद्रिका (१८३९), (३) भागवत दशम स्कंध भाषा, (४) रामाश्वमेध।

रचनाकाल—१८३९।

विवरण—ओड़छा-नरेश मधुकर शाह के कुल के पुरोहित थे।

नाम—(१०३५/२) हीरालाल।

ग्रंथ—राधाशतक [खोज १९०५]।

रचनाकाल—१८३९।

विवरण—दलपतिराय के प्रपौत्र तथा हेमराज के पुत्र थे।

नाम—(१०३६) जसवंत।

ग्रंथ—(१) रामावतार, (२) दशावतार। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४० के पूर्व।

नाम—(१०३७) रसिकराय।

ग्रंथ—(१) सनेहलीला, (२) भँवरगीत, (३) रसिकपचीसी। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४० के पूर्व।

विवरण—कुछ लोगों का ख़याल है कि 'हरिरामजी' 'रसिकराय' और 'रसिक पीतम' के नाम से कविता करते थे। यदि यह ठीक हो तो इनका समय पहले जायगा।

नाम—(१०३८) मनीराम।

ग्रंथ—(१) सारसंग्रह, (२) आनंदमंगल, (३) वलभद्र-कृत नखशिख सटीक (१८४२)।

कविताकाल—१८४० के पूर्व [खोज १६०३]।

विवरण—साधारण कवि।

नाम—(१०३९) चेतासिंह।

ग्रंथ—लक्ष्मीनारायणविनोद। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४०।

नाम—(१०४०) उदेसभाट।

जन्म-काल—१८१५।

कविताकाल—१८४०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१०४१) उमरावसिंह पवाँर, सैदपुर, सीतापूर।

कविताकाल—१८४०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१०४२) गंजनसिंह कायस्थ।

ग्रंथ—शालिहोत्र। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४०।

नाम—(१०४२/१) जवाहिरलाल मिश्र।

ग्रंथ—स्फुट छंद।

जन्म-काल—१८११।

मृत्युकाल—१८६६।

रचनाकाल—१८४०।

विवरण—आपका जन्म-स्थान असनी, ज़िला फतहपुर था। आपकी ससुराल सलेथू ज़िला रायबरेली में थी। घर की स्थिति अच्छी न होने के कारण यह सलेथू में आ बसे। आपने कई ग्रंथ लिखे, परंतु वे सब एक अग्निकांड में भस्मसात्

हो गए। कुछ स्फुट छंद यत्र-तत्र मिलते हैं। सातनपुर के अयोध्याप्रसाद वाजपेयी ने प्रथमतः आपसे काव्य पढ़ा था।

उदाहरण—

साँझ भई तब चेती न तु अधिरातिहूँलों नहिं सुद्धि लई;
अब पाछे परी पछिरातिहुँलो तम चूरन की भई बानि नई।
समुझै कहा होत जवाहिरजू करि चूक सबै फिरियाद भई;
अब दीपक बारि कहा करिए सजनी रजनी सब बीति गई।

नाम—(१०४३) नारायण, काकूपूर, ज़िला कानपूरवाले।

ग्रंथ—(१) शिवराजपुर के चंदेल राजाओं का छंदोबद्ध इतिहास, (२) कथाचहारदरवेश [खोज १६०५]।

जन्म-काल—१८०६।

कविताकाल—१८४०।

नाम—(१०४४) मकरंद।

ग्रंथ—जगन्नाथमहात्म्य [द्वि० त्रै० रि०], (२) हंसाभरण (१८२१) [तृ० त्रै० रि०]

जन्म-काल—१८१४।

कविताकाल—१८४०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१०४५) ज्ञानचंद यती, राजपूताना।

जन्म-काल—१८१२।

कविताकाल—१८४०।

विवरण—टाड साहब ने इनकी सहायता से राजस्थान बनाया।

नाम—(१०४५/१) चतुर शिरोमणिलाल।

ग्रंथ—हिताष्टक। [तृ० त्रै० रि]

रचनाकाल—१८४१ के पूर्व।

विवरण—हित सांप्रदाय के थे।

नाम—(१०४६) मदनसिंह ।
ग्रंथ—कर्मविपाक ।
कविताकाल—१८४१ के पूर्व ।

नाम—(१०४७) इच्छाराम वैष्णव, ब्राह्मण रामानुजी ।
ग्रंथ—(१) गोविंदचंद्रिका, (२) हनुमत्पचीसी, [प्र० त्रै० रि० (३) सालिहोत्र ।
कविताकाल—१८४१ ।
विवरण—साधारण श्रेणी । विविध छंदों में कृष्णकथा २५०४ छंदों द्वारा वर्णित है ।

नाम—(१०४७/१) उदयनाथ ।
ग्रंथ—(१) सगुन विलास (१८४१), (२) छंद पचीसी (१८५३) । [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८४१ ।

नाम—(१०४७/२) नारायण ।
ग्रंथ—कथा चार दुर्वेश [खो० १९०४] ।
रचनाकाल—१८४१ ।

नाम—(१०४८) बहादुरसिंह ।
ग्रंथ—ख्याल ।
कविताकाल—१८४१ के पूर्व ।
विवरण—ये महाराज कृष्णगढ़ के राजा थे । राधावल्लभी ।

नाम—(१०४९) मनबोध बाजपेयी, मालवीय ।
ग्रंथ—भ्रमभंजन । [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४१ ।
विवरण—पिता का नाम रामदयाल था ।

नाम—(१०४९/१) नंददास ।
ग्रंथ—राजनीति हितोपदेश [खोज १९०५] ।

रचनाकाल—१८४२ के पूर्व।

नाम—($\frac{1049}{2}$) गुलाब राय।

ग्रंथ—शिखर विलास।

रचनाकाल—१८४२।

नाम—(१०५०) जेठामल।

ग्रंथ—नारदचरित्र।

कविताकाल—१८४२ [खोज १९०२]।

नाम—(१०५१) लाड़िलीदास।

ग्रंथ—(१) सुधर्मबोधिनी, (२) अष्टयाम, (३) स्फुट पद।

कविताकाल—१८४२। [द्वि० त्रै० रि०]

विवरण—अनन्य राधावल्लभी के शिष्य थे।

नाम—(१०५२) बाजूराय। देखो नं० ६३४।

नाम—($\frac{1052}{1}$) हरप्रसाद भट्ट, बिलग्रामी।

ग्रंथ—(१) शृंगार चंद्रिका, (२) शृंगार सरोज, (३) रसालरस, (४) दहेमजलिस।

कविताकाल—१८४३।

विवरण—मंसाराम के पुत्र थे।

नाम—(१०५३) अग्रनारायण।

ग्रंथ—भक्तिरसबोधिनी टीका (भक्तमाल की)।

कविताकाल—१८४४ [खोज १९०४]।

नाम—($\frac{1053}{1}$) अवधूतसिंह।

ग्रंथ—(१) हुक्का सुरहिया, (२) मांस दशक, (३) सदाशिव पंजर, (४) सूरपचीसी। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८४४।

नाम—($\frac{1053}{2}$) कुशलेश।

ग्रंथ—दान पचीसी। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८४४ ।

नाम—(१०५४) गिरधर भाट, होलपुर ।

ग्रंथ—रसमसाल । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४४ ।

विवरण—महाराजा टिकैतराय दीवान लखनऊ के यहाँ थे। साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०५५) गंगापति ।

कविताकाल—१८४४ ।

विवरण—निम्न श्रेणी ।

नाम—(१०५६) छत्रसास मिश्र, चँदेरी ।

ग्रंथ—(१) औषधसार (१८४४), (२) शकुनपरीक्षा (३) स्वप्नपरीक्षा । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४४ ।

विवरण—चँदेरीनरेश राजा दुर्जनसिंह के सेनापति ।

नाम—(१०५६/१) देवीदास खंडेलवाल, बसवावासी ।

ग्रंथ—(१) सिद्धांत सार संग्रह वचनिका, (२) तत्त्वार्थ-सूत्र की वचनिका ।

रचनाकाल—१८४४ ।

नाम—(१०५७) वैष्णवदास ।

ग्रंथ—(१) भक्तमालबोधिनी टीका, (२) भक्तमालमाहात्म्य, (३) भक्तमालप्रसंग ।

कविताकाल—१८४४ ।

विवरण—खोज से इनका संवत् १७८२ भी निकलता है। [प्र० त्रै० रि०]

नाम—(१०५७/१) बालदास ।

ग्रंथ—(१) साठिका [तृ०त्रै०रि०],(२) चिंत्यबोधन [च०त्रै०रि०]

रचनाकाल—१८४९ के पूर्व।

नाम—(१०५८) अमरसिंह कायस्थ, राजनगर, छतरपूर।

ग्रंथ—(१) सुदामाचरित्र, (२) रागमाला, (३) अमर-चंद्रिका (बिहारीसतसई की गद्यपद्यमय टीका)। [प्र० त्रै० रि०]

जन्म-काल—१८२०।

कविताकाल—१८४५।

विवरण—छतरपूर राज्य के स्थापक कुँवर सोनेसाह के दीवान थे।

नाम—(१०५८/१) कल्याण।

ग्रंथ—(१) छंद भास्कर, (२) रसचंद्र।

कविताकाल—१८४९।

विवरण—डाकोरजी के संत थे। इनका अखाड़ा अभी तक डाकोर में प्रसिद्ध है।

उदाहरण—

जीवन अपार जाकी जाति को न आवे थाह,
किए कोप भाँति-भाँति रतनों की ढेरी है;
संपति के सागर जगत में कल्याण कहे,
औरन को दीजिए बड़ाई सब तेरी है।
अंग अंग पूरन तरंगन ते छाय रह्यो,
सोहे चंद्र तात एक बात घट घेरी है;
बाट के बटाऊ प्यासे पूँछें नीर कूप कहाँ,
अहो छीरसागर बड़ाई धिक् तेरी है॥ १॥

पाजी बाजी झूंठ तज लोलुप लोल स्वभाव;
हिंदू पति सो मर गए नाना माधवराव।
नाना माधवराव मुए जयसिंह सवाई;
मिरजा मुनिब नवाब मोत तिनकूँ भी आई।

कहत दास कल्याण भयो काया में राजी ;
भज भज श्री भगवान् झूठ तज पाजी बाजी ।

नाम—(१०५६) जगन्नाथ, छतरपुर ।
ग्रंथ—(१) कृष्णायन (पृ० १३८), (२) समय प्रबंध ।
[तृ० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४५ । [द्वि० त्रै० रि०]

नाम—(१०६०) जवाहिर बंदीजन, बिलग्रामी ।
ग्रंथ—(१) जवाहिररत्नाकर, (२) बारहमासा (१८२२),
(३) नखशिख । [तृ० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४५ ।
विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०६१) बद्रीदास कायस्थ, टटम, राज्य छतरपुर ।
ग्रंथ—स्फुट ।
जन्म-काल—१८२० ।
कविताकाल—१८४५ ।

नाम—(१०६२) भूपनारायणसिंह क्षत्रिय ।
ग्रंथ—(१) वर्णमाला (पृ० २८ पद्य), (२) भक्तिरसाल
(पृ० २०६ देवीवंदना), (३) वेदरामायण
(पृ० ३६) (चहारदरवेश का अनुवाद) ।
कविताकाल—१८४५ । [द्वि० त्रै० रि०]
विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०६२/१) कृष्ण कवि ।
ग्रंथ—राग समूह । [च० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८४६ के पूर्व ।

नाम—(१०६३) गंगाराम त्रिपाठी ।
ग्रंथ—ज्ञानप्रदीप ।

कविताकाल—१८४६ [खोज १९०३]।

नाम—(१०६३) चंद्रजू गुसाईं।

ग्रंथ—अरिल्लें। [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८४६।

नाम—(१०६४) शिवनंदन।

ग्रंथ—(१) अगुण-सगुण-निरूपण-कथा, (२) श्रीरामध्यान-मंजरी।

कविताकाल—१८४६ [खोज १९०३]।

नाम—(१०६५) शेरासिंह।

ग्रंथ—रामकृष्णयश।

कविताकाल—१८४६ [खोज १९०२]।

नाम—(१०६६) मनजू।

ग्रंथ—हनूनाटक, [प्र० त्रै० रि०] (२) राग चेतनी। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४७ के पूर्व।

नाम—(१०६७) कमलाजन कायस्थ, कौंच।

ग्रंथ—दस्तूरमालिका।

कविताकाल—१८४७। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—गणित। साधरण श्रेणी।

नाम—(१०६७) थानसिंह।

ग्रंथ—सुबुद्धिप्रकाश।

रचनाकाल—१८४७।

नाम—(१०६८) बखतकुँवरि, उपनाम प्रिया सखी।

ग्रंथ—बानी। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८४७।

विवरण—दतियानिवासिनी।

नाम—(१०६६) राधिकानाथ बनर्जी, बनारस।
ग्रंथ—(१) सुहासिनी, (२) स्वर्णबाई।
कविताकाल—१८४७।
विवरण—गद्य लेखक। ग्रंथ हमने नहीं देखे।

नाम—(१०७०) शिवराम भट्ट।
ग्रंथ—(१) प्रतापपच्चीसो, (२) विक्रमविलास। [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४७।
विवरण—राजाविक्रमादित्य ओड़छा के दर्बार में थे।

नाम—(१०७०/१) समनेश कायस्थ, रीवां।
ग्रंथ—(१) रसिक विलास (१८४७), (२) काव्यभूषण पिंगल (१८७६)।
कविताकाल—१८४७। [प्र० त्रै० रि०]
विवरण—महाराज जयसिंह के समय में बख़्शी थे।

नाम—(१०७०/२) दौलतराव सींधिया, ग्वालियर महाराजा।
रचनाकाल—१८४७।
ग्रंथ—(१) आध्यात्मिक, स्फुट रचना (२) प्रार्थना संग्रह।
उदाहरण—

चरण गहे की लाज दुलारो।
तुम तो दीनानाथ कृपा करो भक्ति काज उधारो;
दौलत के प्रभु शरण गए हौ दीनबंधु प्रभुता तुम्हारो।

सुकवि पद्माकर ने इनके आश्रय में 'आलीजाह प्रकाश' और शिव कवि ने 'दौलत बाग विलास' ग्रंथों की रचना की।

नाम—(१०७१) इच्छागिरि।
ग्रंथ—शालिहोत्र। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४८।

नाम—(१०७१/१) गिरिवरदास ।
ग्रंथ—दोहावली । [प्र० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८४८ ।

नाम—(१०७१/२) बखतकुँवरि । नं० ६३४ सफ़ा ६२१ से आया ।

नाम—(१०७२) द्विज छत्र ।
ग्रंथ—स्वप्नपरीक्षा ।
कविताकाल—१८४९ के पूर्व ।

नाम—(१०७३) सहदेव ।
ग्रंथ—राजप्रकाश । [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४९ के पूर्व ।

नाम—(१०७४) मेहर्बानदास साधु, कोटवा, बारांबकी ।
ग्रंथ—भागवतमाहात्म्य (१८४९) । [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८४९ ।

नाम—(१०७५) रामचरणजी ।
ग्रंथ—(१) अनभै, (२) विश्वासबोध, (३) जिज्ञासुबोध, (४) वाणी, (५) विश्रामबोध, (६) रसमालिका ।
कविताकाल—१८४९ ।

नाम—(१०७५/१) रंगविजय जैन ।
ग्रंथ—(१) स्फुट पद २००, (२) ग़ज़ल पद्य २५ ।
रचनाकाल—१८४९ ।
विवरण—अमृतविजय कवि के शिष्य तथा तपागच्छ के विजयानंद सूरि समुदाय के यति थे । इन्होंने राजीमती नेमिनाथ विषयक बहुत-से शृंगारभाव के पद लिखे हैं ।

उदाहरण—

आवन दे री या होरी।
चंदमुखी राजुल सों जंपत ल्याउ मनाय पकर बरजोरी।
फागुन के दिन दूर नहीं अब कह सोचत तू जियमैं भोरी;
बाँह पकर राहा जो कहावूँ छाँडूना मुख माँडू रोरी।
सज सनगार सकल जदु वनिता अबीर गुलाल लेइ भर झोरी;
नेमी सर सँग खेलौं खिलौना चंग मृदंग डफ ताल टकोरी।
हैं प्रभु समद विजय के छौना तू है उग्रसेन की छोरी;
'रंग' कहै अमृत पद दायक चिर जीवहु या जुग जुग जोरी।

नाम—(१०७५/२) लालजी साहू।
ग्रंथ—हरिवंशपुराण भाषा।
रचनाकाल—१८४६।
विवरण—सहिजादपुर-निवासी शीतलप्रसाद के पुत्र थे।

नाम—(१०७६) राधाकृष्ण चौबे, चित्रकूट।
ग्रंथ—(१) विहारीसतसैया पर पद्य टीका, [प्र० त्रै० रि०]
(२) कृष्णचंद्रिका।
कविताकाल—१८५० के पूर्व।
विवरण—याज्ञिकत्रय की राय है कि यह और कृष्ण कवि एक ही हैं और चूँकि इनका छंद अलंकार रत्नाकर में है, इसलिये इनका समय १७९८ के पूर्व है।

नाम—(१०७६/१) कृष्णदास।
ग्रंथ—वृंदावनाष्टक। [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८५०।

नाम—(१०७६/२) क्षमाकल्याण पाठक जैन कवि।
ग्रंथ—(१) जीव विचार वृत्ति, (२) साधु प्रतिक्रमण विधि, (३) श्रावक प्रतिक्रमण विधि, (४) सुमति जिनस्तवन।

रचनाकाल—१८९० ।

नाम—(१०७७) डालचंद, आगरा-निवासी ।

कविताकाल—१८९० ।

विवरण—बोधा के पुत्र ।

नाम—(१०७८) तुलाराम बोहरा ब्राह्मण, बूँदी ।

ग्रंथ—स्फुट ।

कविताकाल—१८९० ।

विवरण—राव राजा विष्णुसिंह तथा रामसिंह के समय में कार्य-
कर्ता थे । साधारण श्रेणी के कवि थे ।

नाम—(१०७९) निहाल ब्राह्मण, निगोहाँ, लखनऊ ।

जन्म-काल—१८२० ।

कविताकाल—१८५० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०८०) प्राणनाथ ब्राह्मण, बैसवारे के ।

ग्रंथ—(१) चक्रव्यूह, (२) जीवनाथ-कथा । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८९० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०८०) मुकुंद सुत ।

रचनाकाल—१८९० ।

विवरण—हिंदी और मराठी कविता करते थे ।

नाम—(१०८१) बालनदास ।

ग्रंथ—रमलभाषा ।

जन्म-काल—१८२५ ।

कविताकाल—१८९० ।

विवरण—रमल का ग्रंथ लिखा है । निम्न श्रेणी ।

नाम—(१०८२) मदनमोहन ।

जन्म-काल—१८२३ ।

कविताकाल—१८५० ।

विवरण—महाराज चरखारी के मंत्री ।

नाम—(१०८३) रसधाम ।

ग्रंथ—अलंकारचंद्रिका ।

जन्म-काल—१८२५ ।

कविताकाल—१८५० ।

नाम—(१०८४) लाछिराम ।

ग्रंथ—भागवत का अनुवाद । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८५० ।

विवरण—हीन श्रेणी । इनके पद रागसागरोद्भव में हैं ।

नाम—(१०८५) लोचनसिंह कायस्थ, राजमल, एटा ।

ग्रंथ—(१) गंगाशतक, (२) जातकालंकार ।

जन्म-काल—१८२८ ।

कविताकाल—१८५० ।

नाम—(१०८६) शिरताज, बरसानेवाले ।

जन्म-काल—१८२५ ।

कविताकाल—१८५० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०८७) समनेश कायस्थ, रीवाँ ।

ग्रंथ—(१) काव्यभूषण पिंगल, (२) रसिकविलास ।

कविताकाल—१८५० ।

विवरण—महाराज जयसिंह के समय में बख़्शी थे ।

नाम—(१०८८) साजनराव ब्रह्मभट्ट, सिवनी (मध्य-प्रदेश) ।

ग्रंथ—फुटकर कविता ।

कविताकाल—१८५० ।

मरण-संवत्—१८७४ ।

नाम—(१०८६) हरलाल (राव), बूँदी ।

ग्रंथ—(१) स्फुट, (२) पंचाध्यायी ।

कविताकाल—१८५० के लगभग ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१०८६) दामोदरदास ।

ग्रंथ—समय प्रबंध । [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८५१ के पूर्व ।

विवरण—राधावल्लभी ।

नाम—(१०६०) लालजी मिश्र ।

ग्रंथ—कोकसार ।

कविताकाल—१८५१ के पूर्व [खोज १६०३] ।

नाम—(१०६१) सुखसखीजी, राधावल्लभी ।

ग्रंथ—(१) रंगमाला, [द्वि० त्रै० रि०] (२) आंठों-सात्विक, [द्वि० त्रै० रि०] (३) स्फुट पद

कविताकाल—१८५१ के पूर्व ।

नाम—(१०६१) टीकाराम ।

ग्रंथ—रस पयोधि । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८५१ ।

विवरण—शाहजहाँपुरवासी ।

नाम—(१०६२) विष्णुदास ।

ग्रंथ—बारहखड़ी । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८५१ ।

नाम—(१०६३) काशीराम, बुँदेलखंडी ।

जन्म-काल—१८२६ ।

कविताकाल—१८५२।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—($\frac{१०६३}{१}$)गणेश कायस्थ, पवाँरी या दतिया।

ग्रंथ—(१) दफ़्तर नामा (१८५२), (२) गुणनिधिसार (१८५२)। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८५२

नाम—(१०६४) गोपालराय, वंदीजन।

ग्रंथ—(१) राधाशिखनख (१८६१) (बलभद्र के शिखनख पर टीका), (२) सुदामाचरित्र (१८५३), (३) मानपचीसी, (४) वृंदावनधाम अनुरागावली, (५) दंपतिवाक्य विलास।

कविताकाल—१८५३।

विवरण—नरेंद्रलाल शाह और आदिलख़ाँ के छंद बनाए हैं।

नाम—($\frac{१०६४}{१}$) चेतन विजय, जैन।

ग्रंथ—श्रीपाल चौपाई।

रचनाकाल—१८५३।

उदाहरण—

देव धरम गुरु सेव के नव पद महिमा धार;
अरिहंत सिद्ध आचारज पाठक साध अपार।
वाचक रिद्ध विजय गुरु ज्ञानी; तास शिष्य सुध चेतन जानी।
रास रच्यो श्रीपाल नो भावे; जे भणसे सुणसे सुख पावे।
अठारसे त्रेपन विक्रम शाषा;
फागुन सुदि दुतिए सुभ भाषा।

नाम—($\frac{१०६४}{२}$) प्रेमचंद्र।

ग्रंथ—चंद्रकला। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८५३।

नाम—(१०९५) रतनदास, श्री सेवकदास के शिष्य।
ग्रंथ—(१) चौरासीजी की टीका (८२२ भारी पृष्ठ), (२) सेवक बानी की टीका, (३) स्वरोदय की टीका। [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८५३।
विवरण—छतरपूर में देखे। टीकाएँ गद्य में हैं।

नाम—(१०९६) राधाकृष्ण।
ग्रंथ—रागरत्नाकर। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८५३।
विवरण—जयपुरनिवासी गौड़ ब्राह्मण।

नाम—(१०९६/१) शिवनाथ।
ग्रंथ—रासभय्या बहादुर सिंह का।
रचनाकाल—१८५३।

नाम—(१०९६/२) कुशलचंद्रमणि।
ग्रंथ—जिनवाणीसार।
रचनाकाल—१८५४ के लगभग।

नाम—(१०९७) कैबात, सरवरिया।
ग्रंथ—आनंदराम साखल की वार्ता।
कविताकाल—१८५४ [खोज १९०१]।

नाम—(१०९७/१) मोतीचंद्र यति।
समय—१८५४
विवरण—जोधपूर-नरेश मानसिंह के यहाँ थे।

नाम—(१०९७/२) सेवाराम शाह।
ग्रंथ—(१) धर्मोपदेश, (२) चौबीसी पूजापाठ।
रचनाकाल—१८५४।

नाम—(१०९८) चंडीदान चारण।

कविताकाल—१८५५ के लगभग।

विवरण—सूरजमल के पिता।

नाम—(१०९९) दयालदासजी महंत।

ग्रंथ—(१) करुणासागर, (२) साधूदयालजी की वानी।

कविताकाल—१८५५।

नाम—(११००) विक्रमादित्य महाराजा चरखारी।

ग्रंथ—(१) विक्रमसतसई [खोज १०९५], (२) विक्रमविरुदावली, (३) हरिभक्ति-विलास।

कविताकाल—राजकाल १८५५ से १८८५।

विवरण—तोष कवि की श्रेणी। ये महाराज बड़े गुणी और गुणियों के आश्रयदाता थे।

नाम—(११०१) लच्छू।

जन्म-काल—१८२८।

कविताकाल—१८५५।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(११०२) शिवप्रसाद कायस्थ, कालिंजर।

ग्रंथ—स्फुट।

जन्म-काल—१८३०।

कविताकाल—१८५५।

मृत्युकाल—१९१०।

विवरण—चौबे नाथूराम जागीरदार मालदेव, बुँदेलखंड के यहाँ कवि थे।

नाम—(११०२/१) चतुरशिरोमणिदास उपनाम चतुर-अली।

ग्रंथ—(१) गऊ दुहावन की व्यवस्था, (२) बंसी प्रशंसा, (३) व्रजलालसा। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८५६ के पूर्व।

विवरण—वृंदावन भट्टाचार्य के शिष्य तथा गौड़ सांप्रदाय के वैष्णव थे।

नाम—(११०२) निरंजन बाबा।

रचनाकाल—१८५५।

विवरण—हिंदी और मराठी में कविता की है।

नाम—(११०३) दशरथ।

ग्रंथ—वृत्तविचार अथवा पिंगल। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८५६ के पूर्व।

विवरण—हीन श्रेणी।

उनतीसवाँ अध्याय

वेनी प्रवीन काल

(सं० १८५६-१८७५)

(११०४) वेनी प्रवीन वाजपेयी

ये महाशय लखनऊ-निवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण उपमन्यु-गोत्री ऊँचे के वाजपेयी थे। लखनऊ के बादशाह ग़ाज़ीउद्दीनहैदर के दीवान राजा दयाकृष्ण कायस्थ के पुत्र नवलकृष्ण उपनाम ललनजी इनके आश्रयदाता थे। जगद्विदित महाराज बालकृष्ण इन्हीं ललनजी के भाई थे। वेनीप्रवीनजी ने ललनजी की आज्ञा से 'नवरस-तरंग'-नामक ग्रंथ संवत् १८७८ [द्वि० त्रै० रि०] में बनाया। इसके प्रथम ये 'शृंगारभूषण'-नामक एक ग्रंथ बना चुके थे, क्योंकि उसके छंद नवरसतरंग में उद्धृत किए गए हैं। वेनी प्रवीनजी का मान इनके यहाँ बहुत कुछ हुआ। इसके बाद ये महाशय महाराज नानारावजी के यहाँ बिठूर में गए और उनके नाम पर आपने "नानारावप्रकाश"-नामक ग्रंथ बनाया, जो कि आकार एवं विषय

में बिलकुल कविप्रिया के समान है। इसमें कविप्रिया की रीति पर वर्णन किया गया है। यह ग्रंथ पंडित नंदकिशोरजी मिश्र (लेख-राज) ने अपने हाथ से लिखा था, परंतु ग़दर में जाता रहा। यह भी बहुत उत्कृष्ट था। वेनी प्रवीनजी के कोई पुत्र नहीं था और अंत में ये रोगग्रस्त भी हो गए थे, सो पीड़ित होकर ये महाशय सपत्नीक अर्बुद गिर पर चले गए और फिर नहीं लौटे। वहीं इनका शरीरपात हुआ। यह सब हाल वाजपेयियों से जाना गया है और संवत् एवं आश्रयदाता का हाल नवरसतरंग * में भी है।

इनका अभी कोई भी ग्रंथ मुद्रित नहीं हुआ है। हमारे पास केवल हस्तलिखित नवरसतरंग है। इसमें १६५ पृष्ठ और ५५५ छंद हैं। इसमें भावभेद एवं रसभेद का वर्णन है, परंतु मतिराम एवं पद्माकर की भाँति इन्होंने भी नायिकभेद से ग्रंथारंभ किया और अंत में सूक्ष्मतया भावभेद और रसभेद के शेष भेद भी लिख दिए। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की और अनुप्रास का भी थोड़ा-थोड़ा आदर किया। इनकी भाषा में मिलित वर्ण बहुत कम आने पाए हैं। इन्होंने प्राकृतिक वर्णन कई जगह पर बहुत उत्तम किए हैं और अमीरी का सामान भी बहुत कुछ दिखाया है। इनको रूपक भी प्रिय थे जो इनकी कविता में वे जहाँ-तहाँ पाए जाते हैं। यों तो इन्होंने कई विषयों पर विशाल काव्य किया है, परंतु गणिका, परकीया, और अभिसारिका के बड़े ही विशद वर्णन इनकी रचना में हैं। आपकी कविता में उत्कृष्ट छंदों की मात्रा बहुत विशेष है। उसमें जहाँ देखिए, टकसाली छंद निकलेंगे। ऐसे बढ़िया छंदों की इतनी मात्रा बहुत कवियों के ग्रंथों में न मिलेगी। ये महाशय

---

* हर्ष की बात है कि चि० कृष्णबिहारी मिश्र ने नवरसतरंग को संपादित करके प्रकाशित कराया है।

संस्कृत के भी अच्छे पंडित थे। इनकी कविता शृंगारकाव्य का शृंगार है। इनकी गणना हम दास की श्रेणी में करते हैं। इनके कुछ छंद यहाँ लिखे जाते हैं।

उदाहरण—

कालिहही गूँधि बबा कि सौं मैं गजमोतिन की पहिरी अति आला ;
आई कहाँ ते इहाँ पुखराग की संग गई जमुना तट बाला।
न्हात उतारी हौं बेनी प्रवीन हँसै सुनि बैनन नैन रसाला ;
जानति ना अँग की बदली सब सों बदली बदली कहै माला ॥ १ ॥
भोरहि न्योति गई ती तुम्हैं वह गोकुल गाँव कि ग्वालिनि गोरी ;
आधिक राति लौं बेनी प्रवीन कहा ढिग राखि करी बरजोरी।
आवै हँसी मोहिं देखत लालन भाल मैं दीन्ह महाउर घोरी ;
एते बड़े ब्रजमंडल मैं न मिली कहुँ माँगेहू रंचक रोरी ॥ २ ॥
जान्यो न मैं ललिता अलि ताहि जु सोवत माँहि गई करि हासी ;
लाए हिये नख केहरि के सम मेरी तऊ नहिं नींद बिनासी।
लै गई अंबर बेनी प्रवीन ओढ़ाय लटी दुपटी ठगमासी ;
तोरि तनी तन छोरि अभूषन भूलि गई गल देन को फाँसी ॥ ३ ॥
घनसार पटीर मिलै मिलै नीर चहै तन लावै न लावै चहै ;
न बुझै बिरहागिनि झार झरीहू चहै घन लावै न लावै चहै।
हम टेरि सुनावतीं बेनी प्रवीन चहै मन लावै न लावै चहै ;
अब आवै बिदेस ते पीतम गेह चहै धन लावै न लावै चहै ॥ ४ ॥
मालिनि ह्वै हरवा गुहि देत चुरी पहिरावैं बने चुरिहेरी ;
नायन ह्वै निरवारत केस हमेस करैं बने जोगिनि फेरी।
बेनी प्रवीन बनाय बिरी बरईनि बने रहैं राधिका केरी ;
नंदकिसोर सदा वृषभानुकी पौरि पै ठा बिकैं बने चेरी ॥ ५ ॥

सोभा पाई कुंज भौन जहाँ-जहाँ कीन्हो गौन,
सरस सुगंधपौन पाई मधुपनि है ;

वीथिन बिथोरे मुकताहल मराल पाए,
  आलिन दुसाल साल पाए अनगनि है।
रैनि पाई चाँदनी फटक-सी चटक रुख,
  सुख पायो पीतम प्रवीन बेनी धनि है;
बैन पाईं सारिका पढ़न लगीं कारिका,
  सु आई अभिसारिका कि चारु चिंतामनि है॥ ६॥

(११०५) जसवंतसिंह (तेरवाँ-नरेश)

जसवंतसिंहजी बघेले ठाकुर तेरवाँ के राजा थे। तेरवाँ ज़िला फ़र्रुख़ाबाद में एक मौज़ा क़न्नौज से पाँच कोस की दूरी पर है। शिवसिंहसरोज में इनके जन्म का संवत् १८५५ वि० और मरण का १८७१ वि० दिया हुआ है; पर यह अशुद्ध जान पड़ता है। इनका कविताकाल १८५६ प्रतीत होता है। सरोज में कविता-काल को प्रायः उत्पत्ति-काल कहा गया है। उसमें सिवा उत्पत्ति-काल के और कोई समय बहुत करके लिखा ही नहीं है। शिव-सिंहजी लिखते हैं कि इनके पास संस्कृत तथा भाषा के बहुत-से ग्रंथ इकट्ठे थे। इन्होंने दो ग्रंथ बनाए अर्थात् शृंगार-शिरोमणि और शालिहोत्र। इनका प्रथम ग्रंथ हमारे पुस्तकालय में वर्तमान है; परंतु द्वितीय हमने अभी तक नहीं देखा। शृंगार-शिरोमणि में भावभेद और रसभेद वर्णित हैं। आकार में यह मतिराम के रस-राज से ड्योढ़ा होगा। अलंकारों का प्रसिद्ध ग्रंथ भाषाभूषण इनका बनाया हुआ नहीं है। इनकी कविता को हम साधारण समझते हैं।

घनन के घोर सोर चारों ओर मोरन के,
  अति चितचोर तैसे अंकुर मुनै रहैं;
कोकिलन कूक हूक होत बिरहीन हिय,
  लूक से लगत चीर चारन चुनै रहैं।

झिल्ली झनकार तैसी पिकन पुकार डारी,
मारि डारी डारी द्रुम अंकुर सुनै रहैं ;
लुनै रहैं प्रान प्रानप्यारे जसवंत बिन,
कारे पीरे लाल ऊदे बादर उनै रहैं ।

(११०६) यशोदानंदन

इन महाशय का कोई विशेष पता न इनके ग्रंथ में है और न और कहीं । शिवसिंहसरोज में इनका जन्म-संवत् १८२८ दिया है । हमने जो ग्रंथ देखा है वह संवत् १८७२ का लिखा हुआ है । इन्होंने बरवै नायिकाभेद-नामक एक छोटा-सा ग्रंथ ६२ बरवै का बनाया है । इसकी भाषा मधुर है । इसमें ९ बरवै संस्कृत व ५३ भाषा के हैं । ग्रंथ प्रशंसनीय है । हम इनको साधारण श्रेणी में समझते हैं ।

संस्कृत—यदि च भवति बुधमिलनं किं त्रिदिवेन ।
यदि च भवति शठमिलनं किं निरयेन ॥ १ ॥
भाषा—अहिरिनि मनकी गहिरिनि उतरु न देइ ;
नैना करै मथनियाँ मन मथि लेइ ॥ २ ॥
तुरकिनि जाति हुरुकिनी अति इतराय ;
छुअन न देइ इजरवा मुरि-मुरि जाय ॥ ३ ॥
पीतम तुम कचलोहिया हम गजवेलि ;
सारस कै असि जोरिया फिरौं अकेलि ॥ ४ ॥

इनका कविताकाल संवत् १८५६ के आसपास जान पड़ता है ।

(११०७) गणेश

ये महाशय गुलाब कवि के पुत्र थे और लालू कवि के पौत्र। ये काशी-नरेश महाराजा उदितनारायणसिंह के यहाँ रहते थे । इनका कविताकाल संवत् १८९७ के लगभग है । इन्होंने वाल्मीकीय रामायण

बालकांड समग्र और किष्किंधा के पाँच अध्यायों का प्रशंसनीय पद्यानुवाद 'वाल्मीकिरामायणश्लोकार्थप्रकाश' [खोज १६०३] के नाम से किया और ऋतुवर्णन [खोज १६०३]-नामक एक द्वितीय पुस्तक भी लिखी। इनकी कविता सानुप्रास और सबल होती थी। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं।

बुद्धि के निधान जे प्रधान काव्य कारज मैं,
दीजै बरदान ऐसे बरन हमेस के;
दूषन ते दूरि भूरि भूषन ते पूरि पूरि,
भूषन समेत हेत नवो रस वेस के।
भनत गनेस छंद छंद मैं ललाम रूप,
भूप मन मोहैं मोहैं पंडित सुदेस के;
ग्रंथ परिपूरन के कारन करनिहार,
दीजिए निबाहि नेम नंदन महेस के।

खोज में 'हनुमतपचीसी'-नामक इनका एक और ग्रंथ मिला है।

नाम—(११०८) क्षेमकर्ण ब्राह्मण, धनौली, बाराबंकी।

ग्रंथ—(१) रामरत्नाकर संस्कृत, (२) कृष्णचरितामृत, (३) वृत्तरामास्पद, (४) गुरुकथा, (५) आह्निक, (६) रामगीतमाला, (७) पदविलास, (८) रघुराजघनाक्षरी, (९) वृत्तभास्कर।

जन्म-काल—१८२८।

मरणकाल—१९१९।

विवरण—ये महाशय अच्छे कवि थे और इनका काव्य मनोहर है। इनकी गणना तोष कवि की श्रेणी में हो सकती है।

वृत्तरामास्पद से

मै ज्यवनार तयार तरह तें रघुबर करत बियारी ;
अनुज समेत मनुजपतिमंदिर सुर नर मुनि मनहारी।
बैठि वरासन आसन पासन बासन की अधिकारी ;
गेडुआ थार कटोर कटोरी पंचपात्र अरु झारी ॥ १ ॥

× × ×

आई है बरात कोसलेस की विदेहपुर,
बसती के बालक तुरंत उठि धाए हैं ;
देखि आए राज के समाज के बिभूति भूति,
सेना चतुरंग रंग रंग के सुहाए हैं।
पूँछैं पितु मातु आए भूप सुत काहे पर,
छेमकर सोई बात बंदि कै बताए हैं ;
दंत उजियारे भारे अरिन के फंद फारे,
तापै दसरत्थ के दुलारे चढ़ि आए हैं।

(११०६) भंजन

इस कवि का कोई ग्रंथ हमारे देखने या सुनने में नहीं आया, बरन् स्फुट कवित्त भी बहुत ही थोड़े पाए जाते हैं, पर कविता अच्छी है। इनका जन्म-काल संवत् १८२० है, जो हिंदी खोज में लिखा है। इसी नाम का एक मैथिल कवि भी था। इनका कविताकाल १८४७ के लगभग प्रतीत होता है। इनको हम तोष की श्रेणी में रखते हैं। भाषा इनकी अच्छी है। इनके दो छंद हम नीचे देते हैं—

अंबर बीच पयोधर देखि कै कौन को धीरज सो न गयो है ;
भंजन जू नदिया यहि रूप की नाव नहीं रबिहू अथयो है।
पंथिक राति बसो यहि देस भलो तुमको उपदेस दयो है ;
या मग बीच लगै वह नीच जु पावक मैं जरि प्रेत भयो है ॥१॥

कोऊ कहै है कलंक कोऊ कहै सिंधु पंक,
कोऊ कहै छाया है तमोगुन के भास की ;
कोऊ कहै मृगमद कोऊ कहै राहु रद,
कोऊ कहै नीलगिरि आभा आसपास की।
भंजन जू मेरे जान चंद्रमा को छीलि विधि,
राधे को बनायो मुख सोभा के विलास की ;
ता दिन ते छाती छेद भयो है छपाकर के,
वार पार दीखत है नीलिमा अकास की ॥ २ ॥

कुछ लोग पहले छंद को लाल कवि का बतलाते हैं, पर वह भंजन का ही प्रतीत होता है और सरदार कवि के शृंगारसंग्रह एवं पंडित नकछेदी तिवारी की मदनमंजरी में इसी कवि के नाम से दिया गया है।

(१११०) करन कवि

इनके विषय में ठाकुर शिवसिंहजी लिखते हैं कि ये पन्नानरेश के यहाँ थे और इन्होंने रसकल्लोल तथा साहित्यरस बनाए हैं। हमने इनका रसकल्लोल-नामक ग्रंथ उक्त ठाकुर साहब के पुस्तकालय में देखा, परंतु उसमें कुछ संवत् या पता इत्यादि नहीं लिखा है। उसके देखने से इतना जान पड़ता है कि करन के पिता का नाम वंशीधर था। यह ग्रंथ संवत् १८८९ का लिखा हुआ है, जिससे यही जान सकते हैं कि उक्त संवत् के प्रथम यह बना होगा। इन्हीं के लेखानुसार यह जान पड़ता है कि ये पाँड़े थे—

"खटकुल पाँड़े पहिसिहा भरद्वाज बर बंस ;
गुननिधि पाय निहाल के बंदौं जगत प्रशंस।"

करन ने छत्रसाल का नाम लिखा है। छत्रसाल हाड़ा महाराज का शरीरपात १७१९ में हुआ था और छत्रसाल महेवावाले का सं० १७८६ के लगभग। इन महाशय ने जो छंद लिखा है उसमें

छत्ता छितिपाल की मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया है । यह ग्रंथ भी बहुत प्राचीन समय का लिखा है। इससे इनके पुराने कवि होने में संदेह नहीं है।

इनका कविताकाल खोज में संवत् १७५७ दिया है और यह भी लिखा है कि ये हिंदूपति पन्नानरेश के यहाँ थे। यह यथार्थ जँचता है [खोज १६०४], क्योंकि हिंदूपति महाराजा छत्रसाल के वंशधर थे।

ये महाशय पाँड़े थे, अतः इनका निवासस्थान क़न्नौज, असनी या गेगासौं का होना संभव है, क्योंकि ये अपने को खटकुल अर्थात् उत्तम कान्यकुब्ज कहते हैं, और ऐसे पाँड़े क़नौजियों के मुख्य स्थान ये ही हैं।

इन ग्रंथ में २९२ छंद हैं, जिनमें रसभेद, ध्वनिभेद, गुण, लक्षणा इत्यादि वर्णित हैं। ग्रंथ प्रशंसनीय बना है । इनकी भाषा व्रजभाषा है और वह ललित एवं श्रुतिमधुर है। इन्होंने काव्य-सामग्री का विशाल वर्णन किया है। भाषाप्रेमियों से हम इस ग्रंथ के पढ़ने का अनुरोध करते हैं। यह अभी मुद्रित नहीं हुआ है। हम इनको तोष की श्रेणी में रखते हैं।

खल खंडन मंडन धरनि उद्धत उदित उदंड ;
दल मंडन दारुन समर हिंदुराज भुज दंड ॥ १ ॥

भौरनि को कंज राजहंसनि को मानसर,
चंद्रमा चकोरन को कहन बितै गयो ;
दुजन को कामतरु कान्ह व्रजमंडल को,
जलद पपीहन को काहू ने रितै गयो।
दीपनि को दीप हीराहार दिगबालनि को,
कोकनि को बासरेस देखत चितै गयो ;
छत्ता छितिपाल छिति मंडल उदार धीर,
धरा को अधार जो सुमेरु धौं कितै गयो ॥ २ ॥

कंटकित होत गात बिपिन समाज देखि,
हरी हरी भूमि हेरि हियो लरजतु है;
एते पै करन धुनि परत मयूरनि की,
चातक पुकार तेह ताप सरजतु है।
निपट चवाई भाई बंधु जे वसत गाउँ,
दाउँ परे जानि कै न कोऊ वरजतु है;
अरजो न मानी तू न गरजो चलत वेर,
एरे घन बैरी अब काहे गरजतु है॥ ३॥
झुरत सरित सरवर विटप विरह झार झर नीति;
कहौ सुकैसे राखिहौ कलित अंकुरित प्रीति॥ ४॥

(११११) रसिक गोविंद

इनका बनाया हुआ जुगुलरसमाधुरी-नामक ग्रंथ हमने देखा है, जो बड़ा विशद है। इसमें २०१ छंदों द्वारा वृंदावन तथा राधाका वर्णन है। इनकी कविता परम मनोहर और गंभीर होती थी। इन्होंने नैसर्गिक सुघराइयों का भी अच्छा वर्णन किया है। हम इन्हें दास कवि की श्रेणी में रक्खेंगे। इनका रचनाकाल खोज से १८९८ मिला है।

तैसिय निरमल नीर निकट जमुना बहि आई;
मनहु नील मनि माल बिपिन पहिरे सुखदाई।
अरुन नील सित पीत कमल कुल फूले फूलनि;
जनु बन पहिरे रंन-रंग के सुरँग दुकूलनि।
इंदीबर कल्हार कोकनद पदुमनि ओभा;
मनु जमुना दग करि अनेक निरखत बन सोभा।
तिन मधि झरत पराग प्रभा लखि दीठि न हारति;
निज घर की निधि रीझि रमा मनु बन पर वारति।
सरस सुगंध पराग सने मधु मधुप गुँजारत;
मनु सुखमा लखि रीझि परसपर सुजस उचारत।

पुलिन पवित्र बिचित्र चित्र चित्रित जहँ अवनी ;
रचित कनक मनि खचित लसति अति कोमल कमनी।

खोज द्वारा प्राप्त इनके अन्य ग्रंथों के ये नाम हैं—

(१) अष्टदेश भाषा, (२) गोविंदानंदघन, (३) कलियुग-रासो, [द्वि० त्रै० रि०] (४) पिंगलग्रंथ, (५) समयप्रबंध, (६) श्रीरामायणसूचनिका। (७) गोविंदचंद्र चंद्रिका-नामक ग्रंथ का च० त्रै० खोज रिपोर्ट में पता चलता है।

(११११) मुंशी गणेशप्रसाद कायस्थ
(वल्द लाला तीर्थराज)

इन्होंने 'राधाकृष्णदिनचर्या'-नामक ग्रंथ दोहा-चौपाइयों में पद्मपुराण पातालखंडांतर्गत वृंदावन-माहात्म्यवाले चौदहवें अध्याय के आशय पर संवत् १८९६ में रचा। यह ग्रंथ छतरपूर में है। इसमें ३२६ बड़े पृष्ठ हैं। इनका दूसरा ग्रंथ ब्रजवनयात्रा'-नामक भी दोहा-चौपाइयों में १७८ बड़े पृष्ठों का छतरपूर में है। इस ब्रज-यात्रा में वन-उपवन आदि के वर्णन हैं। हम इनकी गणना मधुसूदन दास की श्रेणी में करते हैं।

पुनि जल बाहर आय, त्रिय निदेश यक बिटप कहँ ;
बरपहु पट समुदाय, अरु भूषन बहु भाँति के।
नाना बिधि के बसन सोहाए ; अरु भूषन मनिमै छबि छाए।
बृंदाबन पादप हैं जेते ; सुरतरु सम ह्वै बरखे तेते।
लखि ब्रज तिय अतिही हरषानी ; पहिरहिं रुचि अनुसार सयानी।
जो पादप सन बसन मँगाए ; नहिं आचरज बेद अस गाए।

(१११३) सम्मन ब्राह्मण

ये मल्लावाँ ज़िला हरदोई में संवत् १८३४ में उत्पन्न हुए थे। इनका काव्यकाल संवत् १८६० मानना चाहिए। इन्होंने नीति के चुटीले दोहे कहे और पिंगल-काव्य-भूषण-नामक एक ग्रंथ भी १८७९

में बनाया। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है। याज्ञिकत्रय ने एक दूसरे सम्मन का पता दिया है जिनका समय १७२० के पूर्व है।

निकट रहे आदर घटै दूरि रहे दुख होय;
सम्मन या संसार मैं प्रीति करो जनि कोय॥ १ ॥
सम्मन चहु सुख देह को तौ छोड़ो ये चारि;
चोरी चुगुली जामिनी और पराई नारि। २ ॥
सम्मन मीठी बात सों होत सबै सुख पूर;
जेहि नहिं सीखो बोलिबो तेहि सीखो सब धूर॥ ३ ॥

(११११४) गोस्वामी जत्तनलालजी

इनका बनाया हुआ अनन्यसार ग्रंथ हमने छतरपूर में देखा है। यह २६४ पृष्ठों का एक बड़ा ही उपकारी ग्रंथ है, क्योंकि इसमें गोस्वामी हितहरिवंश का जीवनचरित्र तथा उनके चलाए हुए अनन्यमत का अच्छा वर्णन लिखा है और इस मत के बहुत-से महात्माओं के हाल इसमें वर्णित हैं। इनका समय जाँच से संवत् १८६० जान पड़ा। द्वितीय त्रैवार्षिक रिपोर्ट में संवत् १८६१ में लिखी हुई अनन्यसार की एक प्रति मिली है जिससे भी यह मत पुष्ट होता है। यह ८२ और २५२ वैष्णवों की वार्ताओं के ढंग पर अनन्य-मत का परमोपकारी ग्रंथ है। कविता की दृष्टि से इनको हम साधारण श्रेणी में रक्खेंगे। इस ग्रंथ का प्रकाशित होना आवश्यक है।

वृंदावन सुख रसिक बास श्रीकुंज महल मैं;
दंपति रूप प्रकास पास निजु सखी टहल मैं।
छिन-छिन प्रकृति बिचारि करति प्यारी पिय आगे;
पुजवत सो-सो चाह मोह मद आनँद पागे।
वर गौर बरन छवि प्रेम की रसमै जुगुल किसोर मन;
नित सुमिरौं श्री हरिवंश को रसिकशिरोमणि प्रानधन।

(१११५) मून

शिवसिंहजी ने मून ब्राह्मण असोथर, ज़िला ग़ाज़ीपूरवाले का समय सं० १८६० लिखा है। उन्होंने इनके रामरावण-युद्ध-नामक ग्रंथ का नाम लिखकर अन्य ग्रंथों का होना माना है। युगलकिशोरजी ने इनका एक नायिकाभेद पर ग्रंथ देखा है, पर नाम स्मरण नहीं है। इनकी कविता आदरणीय है। हम इन्हें तोप की श्रेणी में रखते हैं।

बिंब मैं प्रबाल मैं न जपा पुष्पमाल मैं,
न इंगुर गुलाल मैं न किंचित निहारे मैं;
दाड़िमप्रसून मैं न मून धरासून मैं,
न इंद्र की वधून मैं न गुंजा अँधियारे मैं।
है कुसुम रंग मैं न कुंकुम पतंग मैं,
न जावक मजीठ कंज पुंज वारि डारे मैं;
राधे जू तिहारी पदलालिमा की समता को,
हेरि हारे कविता न आवत विचारे मैं।

खोज में "सीतारामविवाह"-नामक इनका एक और ग्रंथ मिला है।

(१११६) लल्लूजी लाल

लल्लूजी लाल गुजराती ब्राह्मण आगरेवाले संवत् १८६० में वर्तमान थे। ये महाशय कलकत्ते के फोर्ट विलियम कॉलेज में नौकर थे और वहीं इन्होंने ब्रजभाषामिश्रित खड़ी बोली गद्य का प्रेमसागर-नामक भागवत दशम स्कंध की कथा का एक ग्रंथ बनाया, जिसमें स्थान-स्थान पर कुछ दोहा-चौपाई भी लिखे। इनके ग्रंथों के नाम नीचे लिखे जाते हैं—

प्रेमसागर, [प्र० त्रै० रि०] लतायफ़ हिंदी, राजनीति-वार्तिक (भाषाहितोपदेश), संग्रह-सभाविलास, माधवविलास, सतसई की

टीका (लालचंद्रिका), भाषा-व्याकरण, मसादिरे भाषा, सिंहासन-बत्तीसी, वैतालपच्चीसी, माधवानल और शकुंतला। द्वि० त्रै० रि० में इनके एक और ग्रंथ अँगरेज़ी-हिंदी-फ़ारसी बोली का पता चलता है। ये महाशय वर्तमान गद्य के जन्मदाता कहे जाते हैं। इनके प्रथम बहुत-से गद्य-लेखक हो गए हैं, पर उनके ग्रंथ न ऐसे ललित थे और न ऐसे प्रख्यात ही हुए। इन्होंने दोहा आदि भी अच्छे कहे हैं। हम कविता की दृष्टि से इन्हें साधारण श्रेणी में रखते हैं।

उदाहरण प्रेमसागर से—

"शुकदेवजी बोले कि राजा एक समय पृथ्वी मनुष्य तन धारण कर अति कठिन तप करने लगी। तहाँ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र इन तीनों देवताओं ने आ उससे पूछा कि तू किस लिये इतनी कठिन तपस्या करती है। धरती बोली—'कृपासिंधु ! मुझे पुत्र की बांछा है, इस कारण महा तप करती हूँ। दयाकर मुझे एक पुत्र अति बलवंत महा प्रतापी, बड़ा तेजस्वी दो; ऐसा कि जिसका सामना संसार में कोई न करे, न वह किसी के हाथ से मरे।' यह वचन सुन प्रसन्न हो तीनों देवताओं ने वर दे उससे कहा कि तेरा सुत भौमासुर नाम अति बली महाप्रतापी होगा।"

लल्लूजी लाल का जन्म-काल १८२० के लगभग है और संवत् १८८१ में ये जीवित थे। इनके मरण का संवत् हम लोगों को ज्ञात नहीं है। ये आगरावासी औदीच्य गुजराती ब्राह्मण थे और जीविकार्थ मुर्शिदाबाद तथा कलकत्ते में रहे।

(११९७) सदल मिश्र

वर्तमान गद्य के जन्मदाता सदल मिश्र और लल्लूजी लाल माने जाते हैं। यों तो पूर्वकाल में भी कई गद्य-ग्रंथ लिखे गए, पर उस समय इस प्रकार के कुछ ग्रंथ बनने तथा बहुत-से कवियों द्वारा कविता में उदाहरणार्थ गद्य लिखे जाने पर भी गद्य का प्रचार नहीं

हुआ। देवजी ने एवं अन्य बहुत-से कवियों ने यत्र-तत्र अपनी-अपनी कविता में गद्य भी लिखा, परंतु किसी ने इसका प्राधान्य नहीं रक्खा। फिर उन सभों ने गद्य भी पद्य ही की भाँति व्रजभाषा में लिखा। कुछ वैद्यक आदि की पुस्तकें भी गद्य में लिखी गईं और कई ग्रंथों की टीकाएँ भी व्रजभाषा गद्य में बनीं, परंतु पहलेपहल गोरखनाथ ने गद्य काव्य किया और फिर खड़ी बोली प्रधान गद्य में पुस्तक रूप से गंगा भाट ने काव्य किया और जटमल ने संवत् १६८० में गोराबादल की लड़ाई लिखी। उसके पीछे सूरति मिश्र ने बैताल-पचीसी का संस्कृत से व्रजभाषा में अनुवाद संवत् १७७० के लगभग किया। इनके प्रायः १०० वर्ष बाद इन्हीं दोनों महाशयों ने गद्य में काव्य ग्रंथ लिखे और तभी से वर्तमान गद्य हिंदी की जड़ दृढ़ता से स्थिर हुई।

ये दोनों महाशय फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में नौकर थे और वहीं संवत् १८६० विक्रमीय में इन दोनों ने गद्य में ग्रंथ बनाए। प्रेमसागर और नासकेतोपाख्यान [खोज १९०१] दोनों इसी संवत् में जॉर्ज गिल-क्राइस्ट की आज्ञानुसार बनाए गए। दोनों छात्रों के पठनार्थ बने। उसी समय से गद्य-काव्य का विशेष प्रचार हुआ। लल्लूलाल ने तो व्रजभाषा की मात्रा विशेष लिखी, परंतु सदल मिश्र ने खड़ी बोली का आधिक्य रक्खा। इन दोनों ने व्रजभाषा और खड़ी बोली का मिश्रण किया है।

नासकेतोपाख्यान में ३८ पृष्ठ हैं। इसमें पहले तो नासकेतु की उत्पत्ति का वर्णन है और फिर उनके द्वारा यमपुरी का दर्शन और ऋषियों से उनका हाल कहना कथित है। कथा अच्छी कही गई है और इस गद्य में काव्यानंद प्राप्त होता है। कहीं-कहीं एकाध स्थान पर कुछ छंद भी दे दिए गए हैं। अंत के अध्याय में यमराज की सभा का वर्णन कुछ-कुछ उपहासास्पद हो गया है। कुल मिलाकर यह ग्रंथ बहुत आदरणीय है।

उदाहरण—

नरक निवासी सुख के रासी हरिचरित्र नहिं गाए ;
क्रोध लोभ को नीच संग कर कहौ कौन फल पाए।
तजि आचार महामदमाते हृदय चेत में ल्याए ;
आतुर ह्वै नारिन के पीछे मानुख जन्म गँवाए।

सकल सिद्धिदायक वो देवतन में नायक गणपति को प्रणाम करता हूँ कि जिनके चरणकमल के स्मरण किए से विघ्न दूर होता है औ दिन-दिन हिथ में सुमति उपजती वो संसार में लोग अच्छा-अच्छा भोग-विलास कर सबसे धन्य-धन्य कहा अंत में परमपद को पहुँचते हैं कि जहाँ इंद्र आदि देवता सब भी जाने को ललचाते रहते हैं।

× × ×

चित्र-विचित्र, सुंदर-सुंदर बड़ी-बड़ी अटारिन से इंद्रपुरी समान सोभायमान नगर कलिकत्ता महाप्रतापी वीर नृपति कंपनी महाराज के सदा फूला-फला रहे, कि जहाँ उत्तम-उत्तम लोग बसते हैं औ देश-देश से एक-से-एक गुणी जन आय-आय अपने-अपने गुण को सुफल करि बहुत आनंद में मगन होते हैं।

(१११८) गुरुदीन पाँड़े

इन्होंने संवत् १८६० में बागमनोहर-नामक ग्रंथ बीस प्रकाशों में पूर्ण किया। इस ग्रंथ से विशेष पता इस कवि का नहीं लगता। यह कविप्रिया के ढंग पर बनाया गया है, यहाँ तक कि कविप्रिया में भी बीस ही प्रकाश हैं और इसमें भी। इसमें कविप्रिया से इतनी विशेषता रक्खी गई है कि और विषयों के साथ कवि ने पूरा पिंगल भी कह दिया है। इसी कारण इसमें प्रायः हर प्रकार के छंद एवं मेरु, मर्कटी, पताका इत्यादि सब प्रस्तुत हैं। इस ग्रंथ की रचना-शैली अच्छी है। इस तरह पर पिंगल और रीति के मिलित ग्रंथ भाषा-साहित्य में कम हैं। जो-जो विषय कि कविप्रिया में कहे गए हैं, वे सब

पूर्ण-रूप से इसमें भी वर्णित हैं। इसकी भाषा बैसवाड़ी तथा व्रजभाषा-मिश्रित है और वह ललित तथा प्रशंसनीय है। इस एक ही ग्रंथ को पढ़कर पाठक को भाषा-काव्य-रीति का ज्ञान हो सकता है। बड़े शोक का विषय है कि यह ग्रंथ अभी तक मुद्रित नहीं हुआ है। हम कवि गुरुदीनजी को पद्माकर की श्रेणी में समझते हैं। भाषा-काव्य-रसिकों को यह ग्रंथ अवश्य देखना चाहिए। यह आकार में १७५०० अनुष्टुप् छंदों भर होगा और रॉयल अठपेजी के इसमें प्रायः १४० पृष्ठ होंगे।

मुख सर्सों ससि दून कला धरे; कि मुकता गन जावक मैं भरे।
ललित कुंदकली अनुहारि के; दसन श्री वृषभानकुमारि के।
सुखद जंत्र कि भाल सोहाग के; ललित मंत्र किधौं अनुराग के।
भृकुटि यौं वृषभानसुता लसैं; जनु अनंगसरासन को हँसैं।
मुकुर तौ पर दीपति को धनी; ससि कलंकित राहु बिथा घनी।
अपर ना उपमा जग मैं लहै; तब प्रिया मुख की सम का कहै।

(११११) ब्रह्मदत्त ब्राह्मण

ये महाशय काशी-नरेश उदितनारायणसिंह के अनुज दीपनारायण के आश्रित थे। इन्होंने संवत् १८६१ में विद्वद्विलास [खोज १९०४] और १८६९ में दीपप्रकाश-नामक ग्रंथ बनाए। दीपप्रकाश छप चुका है। यह विशेषतया अलंकार-ग्रंथ है, पर आदि में भाव एवं रसों का भी इसमें वर्णन है। इनकी कविता अनुप्रासयुक्त अच्छी होती थी। इनको हम साधारण श्रेणी में रक्खेंगे।

कुसल कलानि मैं करन हार कीरति को,
कवि कोविदन को कलप तरवर है;
सील सनमान बुधि विद्या को निधान ब्रह्म,
मतिमान हंसन को मानसरवर है।
दीप नारायन अवनीप को अनुज प्यारो,
दीन दुख देखत हरत हरवर है;

गाहक गुनी को निरबाहक दुनी को नीको,
गनी गज बकस गरीबपरवर है।

खोज [१९०३] में दीपप्रकाश का रचना काल १८६६ मिलता है।

(११२०) माखन पाठक

ये महाशय पटी-टहनगा-निवासी थे। इन्होंने संवत् १८६० में बसंत मंजरी-नामक एक भव्य ग्रंथ बनाया, जिसमें होली ही में संपूर्ण नायिका, नायकभेद, दशा, दूती इत्यादि कह दिया। इन्होंने दोहों में स्वकृत छंदों का लक्षण भी लिखा है। इनकी कविता सुंदर है। हम इन्हें साधारण श्रेणी में रखते हैं।

गनो नायका राधिका नायक नंदकुमार ;
तिनकी लीला फागु की बरनौं परम उदार ॥ १ ॥

पोर अँगूठी नचै डफ पै कर कंकन पौंची चुरी दरसावति ;
कानन पात तरौना डुलैं त्यों कपोलनि झाईं प्रभा सरसावति।
माखन केसरि रंग कि चूनरि कंचुकी हार हियो तरसावति ;
झूम करा अखरा मुख चंद ते गावति मानो सुधा बरसावति ॥२॥

(११२१) मुरलीधर भट्ट

ये तैलंग ब्राह्मण अलवर के रावराजा बख़्तावरसिंह के कवि थे। इनका जन्म अनुमान से संवत् १८३७ में हुआ। कविता सरस करते थे। ये महाशय तोष की श्रेणी के कवि हैं।

छाकी प्रेम छाकन के नेम मैं छबीली छैल,
छैल की बँसुरिया के छलन छली गई ;
गहरे गुलाबन के गहरे गरूर गरे,
गोरी की सुगंध गैल गोकुल गली गई।
दर मैं दरीनहू मैं दीपति दिवारी दरी,
दंत की दमक दुति दामिनि दली गई ;

चौसर चमेली चारु चंचल चकोरन तैं,
चाँदनी मैं चंद्रमुखी चौंकत चली गई ॥ १ ॥

नाम—(११२१) भोगीलाल दुबे, प्रसिद्ध कवि देव के प्रपौत्र।

रचनाकाल—१८५६।

ग्रंथ—(१) अलंकार प्रदीप (अलंकार), (२) बखत विलास (नायिका-भेद)। स्वयं कवि के हाथ की लिखी प्रति मिली है।

रचनाकाल—१८५६।

उदाहरण—

कविवंश वर्णन

काश्यप गोत्र द्विवेदि कुल कान्यकुब्ज कमनीय;
देवदत्त कवि जगत में भए देव रमणीय ॥ ३३ ॥
जिनको श्री नवरंग सुत आजम साहि सुजान;
जाहर करो जहान मैं मान सहित सनमान ॥ ३४ ॥
तिनके पुरुसोत्तम भए सकल सुमति के ईस;
निपुननि उक्ति सुभुक्ति मैं उद्यत उक्ति फनीस ॥ ३५ ॥
तिनके सोभाराम सुत कविवर भए विनीत;
सीता श्रीरघुनाथ के चरचे चरन पुनीत ॥ ३६ ॥
तिनके भोगीलाल सुत वर्णत बखत विलास;
देखि कृपा करि सकल कवि करियौ हिए हुलास ॥ ३७ ॥

जाहर जहान जानि देखे राजारान कोई,
लागत न सान मान दान मजबूती की;
गाहत गुननि बीर बाहर नमाह सबै,
पौरुख अथाहता सराहत सपूती की।
कूरम नरेस बखतेस के निकट भोग,
संपति हमेस ही प्रकट पुरहूती की;

मारतंड मंडन अदंड नृप दंडन की,
जाके भुज दंडनि घमंड रजपूती की ॥ १९१ ॥

पठनार्थ श्री ५ राउ रानाजी श्री ५ बखतावरसिंहजी शुभम् सं० १८९७ भाद्र शुक्ला १५ बुधे ।

सूर्यवंश

तिही वंस उद्यत भए उदैकरन महराज ;
आमेरी निज थानपति सत्रुन के सिरताज ॥ १ ॥
भए पुत्र तिनके प्रगट नरू साहि नरपाल ;
करो अंस अवतंस निज विकसित वंस विसाल ॥ ११ ॥
जीति अदंडनि नृपनि वहु पौरुष प्रबल प्रचंड ;
नरूपंड जेहि जगत मैं कीनों उदित अखंड ॥ १२ ॥

(११२२) (११२२/१) सुवंस शुक्ल, उमरावसिंह चौधरी

शिवसिंहसरोज में लिखा है कि ये महाशय बिगहपुर, ज़िला उन्नाव के रहनेवाले थे, और इन्होंने अमेठी के राजा उमरावसिंह बंधलगोत्री के यहाँ अमरकोष, रसतरंगिणी और रसमंजरी-नामक ग्रंथ संस्कृत से भाषा किए और फिर बैलवाले राजा सुब्बासिंह के यहाँ जाकर विद्वन्मोदतरंगिणी-नामक ग्रंथ बनाने में राजा साहब को सहायता दी । हमारे पास इनका उमरावकोष-नामक ग्रंथ हस्तलिखित वर्तमान है, जो अमरकोष का अनुवाद है । इसमें सुवंस ने अपने आश्रयदाता का पूरा वर्णन किया है । वे कहते हैं बिसवाँ (ज़िला सीतापुर) में चौधरियों के घराने में राजा बालचंद के अमरसिंह पुत्र थे, जिनके शिवसिंह और भवानीसिंह-नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए । इन्हीं शिवसिंह के पुत्र उमरावसिंह उनके आश्रयदाता थे । बिसवाँ में चौधरी कायस्थों का यह घराना अद्यावधि वर्तमान है, और इनकी गणना अब भी रईसों में है । सुवंसजी ने लिखा है कि उन्होंने उमरावसिंह के नाम पर "उमरावशतक" और

"उमरावप्रकाश"-नामक दो ग्रंथ बनाए थे और फिर उन्हीं की आज्ञानुसार संवत् १८६२ में "उमरावकोप" बनाया। [खोज १६०५] अतः इनका अमेठी के राजा उमरावसिंह के आश्रय में ग्रंथ बनाना प्रमाणित नहीं होता और इस विचार से सुवंस का "रसतरंगिणी" और "रसमंजरी" का अनुवाद करना भी ठीक नहीं जान पड़ता। यह सुना जाता है कि ये महाशय वैल में भी गए थे। इन्होंने लिखा है कि उमरावसिंह ने इनको घोड़ा, हाथी, इत्यादि दिए। सुवंसजी लिखते हैंकि (१$\frac{१}{१}$२२) उमरावसिंह ने भी "रस-चंद्रिका"-नामक ग्रंथ बनाया। आपने उसका एक छंद भी अपने उमरावकोप में उद्धृत किया हैं। यथा—

सीसा के सदन आय बैठे एक आसन पै,
बाढ़ै लगी हरख मनोरथ के धाम की;
चंपलता सुंदर तमाल मनिमाल वारौं,
दुति दामिनी की अरु घन अभिराम की।
सिंधु तनु रूप की तरंगै उठैं दुहुन के,
भाखै उमराव छवि लाजै रति काम की;
ईस चित चोभा है मुनीस मन लोभा लेखि,
कोभा कबि कहै देखि सोभा स्यामा स्याम की।

साहित्य-समालोचक में बाबू ब्रजरत्नदास ने इनका जो परिचय दिया है उसके अनुसार में 'टेढ़ा' बिगहपुर के रहनेवाले केशी के शुक्र थे। इनके पिता का नाम प्रयागदत्त था। इनके आश्रयदाता डौंडियाखेरे के राजा रघुनाथसिंह और राजा सुदर्शनसिंह भी थे।

सुवंस कवि का केवल यही एक ग्रंथ हमने देखा है, जिसमें अमरकोप के श्लोकों का अनुवाद अच्छे छंदों में किया गया है, और ग्रंथ १८४ पृष्ठों में पूर्ण हुआ है। इन्होंने हरएक शब्द के जितने नाम कहे हैं उनकी गिनती लिख दी है। गँधौलीवासी पं०

युगलकिशोरजी मिश्र ने इसके अंत में एक शब्दानुक्रमणिका भी लगा दी है, जिससे ग्रंथ और भी उपयोगी हो गया है। इसकी रचना से जान पड़ता है कि सुवंसजी सुकवि थे। इन्होंने बड़ी मधुर व्रजभाषा में कविता की है। इनको हम तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं। तृ० त्रै० रि० में इनका एक और ग्रंथ द्विपटिका-नामक मिला है।

मोती जाके छत्र मैं नछत्र के समान सोहैं,
　　वचन पियूष करो रैयति को हाल भो;
चंद्रिका सी कीरति चहूँघा जाकी फैलि रही,
　　सुजन चकोर जासों परम निहाल भो।
सोहै मनीराम गुनसागर को तनै भूमैं,
　　शत्रुकुल कंज को उदंड बली काल भो;
बखत बलंद सुख कंद यों सुवंस कहै,
　　चंद के समान बालचंद महिपाल भो।

[द्वि० त्रै० रि०] खोज में पिंगल और ढेकी-नामक और ग्रंथ मिले हैं। जिनमें से पहला इन्होंने संवत् १८६५ में राजा उमरावसिंह की आज्ञानुसार लिखा था। बाबू व्रजरत्नदास ने, 'साहित्य-समालोचक' में 'सुवंश' की कुछ नई कविताएँ और एक 'रामचरित्र'-नामक ग्रंथ का और पता दिया है।

नाम—(११२३) मानदास।
ग्रंथ—(१) रामकूटविस्तार [प्र० त्रै० रि०] (६७ पृष्ठ),
　　(२) कृष्णविलास [प्र० त्रै० रि०] (२२५ पृष्ठ)।
समय—१८६३।
विवरण—रामकूटविस्तार में दोहा-चौपाइयों द्वारा नाममहिमा, भक्तिमहिमा, भक्तिज्ञान इत्यादि का कथन है। कृष्ण-विलास में कृष्णचरित्र का व्रज से द्वारका पर्यंत वर्णन

किया गया है। कविता साधारण श्रेणी की है। हमने ये ग्रंथ दर्बार छतरपूर में देखे हैं।

कौसलेस सुव चरित सुहाए; धनु दलि सीय व्याहि घर आए।
पितुहित बसि बन करि सुर काजू; लंका जीति अवध करि राजू।

भजौ मन राधे कृष्ण कृपाल।
जगन्नाथ जगदीस गुरु ब्रजपति दीनदयाल।
मधुसूदन माधव मुकुंद हरि नरहरि श्रीनँदलाल;
वनमाली बलबीर बिहारी राम कृष्ण गोपाल॥ २॥

नाम—(११२४) उत्तमचंद्र भंडारी।

ग्रंथ—(१) नाथचंद्रिका, (२) अलंकारआशय [खोज १६०१] (१८२७), (३) तारकतत्त्व, (४) नीति की बात, (५) रल हम्मीर की बात, (६) नाथपंथियों की महिमा।

कविताकाल—१८६४ तक [खोज १६०१]।

विवरण—महाराजा भीमसिंह जोधपुर-नरेश के मंत्री थे और कुछ दिन महाराजा मानसिंह के भी मंत्री रहे। इनकी कविता साधारण श्रेणी की है।

रहित विषय आश्रय स्वजन पद कुवलिय सुखकंद;
सदय अनामय जगतमय जै कंचन गिरि चंद॥ १॥
नर समुद्र मरु देस बिच जलज जोधपुर जान;
जहँ बैठे राजस करत विधि-विधि श्री नृप मान॥ २॥

नाम—(११२५) महाराजा मानसिंह, जोधपुर, राजपूताना।

ग्रंथ—(१) रागाँ रो जीलो, (२) बिहारी सतसई टीका, (३) जलंधरनाथजीरा चरित्र, (४) नाथचरित्र, (५) श्री-नाथजीरा दोहा, (६) रागसार, (७) नाथप्रशंसा, (८) कृष्णविलास (१८६७), (९) महाराज मान-सिंहजी की वंशावली (१८६७), (१०) नाथजी की

वाणी, (११) नाथकीर्तन, (१२) नाथमहिमा, (१३) नाथपुराण, (१४) नाथसंहिता [खोज १९०२], (१५) रामविलास, (१६) संयोग शृंगार का दोहा (देसी भाषा), (१७) कवित्त सवैया दोहे, (१८) सिद्धगंग (१८४२)।

कविताकाल—१८६७।

विवरण—इन महाराज ने संवत् १८६० से १९०० तक राज्य किया। इनकी कविता की भाषा राजपूतानी है, परंतु व्रजभाषा में भी ये महाशय अच्छी कविता करने में समर्थ हुए हैं। इन्होंने बहुत-से छंदों में कविता की है और रचना में कृतकार्यता भी पाई है। इनकी भाषा मनोहर और सुकवियों की-सी है। हम इन्हें तोष की श्रेणी में रक्खेंगे।

सीत मंद सुखद समीर ते चलत मृदु,
अंबन के मंजर सुबास भरे चारौं ओर;
जिनते उठत परिमल की लपट अति,
ललित सुचित जौन भौंरन को लेत चोर।
आयो कुसुमाकर सोहायो सब लोकन को,
हेरत ही हियरे उठत सुख की हिलोर;
अति उमदाने रहैं महा मोद साने रहैं,
भौंर लपटाने रहैं जिन पर साँझ भोर।

नाम—(११२६) महाराज सुंदरसिंह, बनारस।

ग्रंथ—(१) पंचाध्यायी (१८६९), (२) गौरीबाई की महिमा (१८६९), (३) हुस्नचमन (१८७०) [खोज १९०४]।

कविताकाल—१८६९।

विवरण—इन्होंने अपनी रचना में श्रीकृष्णसंबंधी श्रृंगार कविता विशेषतया कही है, परंतु एक ग्रंथ में गौरीबाई की भी महिमा लिखी है। इन्होंने छंदोभंग भी किए हैं। इनकी गणना हीन श्रेणी में है।

हरि गुन पै पल-पल बलि जाऊँ ; तिन किरपा ते हरि गुन गाऊँ।
श्री नागरीदास महराज ; हरि भक्तन औ कबि सिरताज।
रूप नगर के राज सोहाय ; बृंदावन दंपति मन लाय।
छोड़ि राज व्यवहार कि आसा ; दंपति चरनन कीन्हों बासा॥१॥

इश्क चमन के फूल सब रहे जहाँ-तहँ फूल ;
मैं सरवर को करि सकौं यह मेरी है भूल॥ २॥
इश्क चमन की चमन है ज्यों अकास में चंद ;
मैं पटबीज (हि) कहत हौं दीन हीन मतिमंद॥ ३॥

(११२७) ललकदास

राजा इंद्रविक्रमसिंहजी ताल्लुक़दार इटौंजा ज़िला लखनऊ के पुस्तकालय से हमको महाराज ललकदासकृत सत्योपाख्यान-नामक २६४ बड़े पृष्ठों में घनी रीति से लिखा हुआ एक बड़ा ग्रंथ प्राप्त हुआ। इसमें कवि के विषय में सिवा नाम के और कुछ भी नहीं लिखा है और न ग्रंथ बनने का समय दिया है। राजा साहब के पास संवत् १९३१ की लिखी हुई प्रति है। इस कवि का नाम शिवसिंहसरोज में भी नहीं लिखा है। इनका नाम हमें कहीं भी नहीं मिला, केवल बेनी कवि ने कई कवित्तों द्वारा इनकी निंदा की है, जिसका एक पद नीचे लिखा जाता है—

बाजे-बाजे ऐसे डलमऊ में बसत,
जैसे मऊ के जोलाहे लखनऊ के ललकदास ;

बेनी कवि का देहांत होना शिवसिंहजी ने संवत् १८९२ में लिखा है और बेनी का रसविलास-नामक ग्रंथ संवत् १८७४ का बना हुआ है। बेनी कवि बड़े भंडाचार्य थे। इस पद में उन्होंने डलमऊवालों

की और कई स्थानों के निवासियों की निंदा का ललकदास को उप-मेय बनाया है। अतः अनुमान से ललकदास के ग्रंथनिर्माण का संवत् १८७० के लगभग जान पड़ता है। लखनऊ में इनका पता नहीं लगता, परंतु बेनी ने इन्हें लखनऊ-वासी माना है और इनका ग्रंथ लखनऊ से १६ मील पर मिला। बेनी के एक छंद से यह भी विदित होता है कि महात्मा ललकदास कंठी धारण करते थे, इनके बहुत-से शिष्य थे, और ये कवियों से वाद भी करते थे। जान पड़ता है कि इन्होंने कभी बेनी कवि से भी वाद किया था और इसी से रुष्ट होकर उसने इनके तीन भँडौआ छंद बनाए। इन छंदों के अनुचित होने पर भी हमें इनसे इस महात्मा के चरित्र जानने में बड़ी सहायता मिली। सत्योपाख्यान में रामचंद्र के जन्म से लेकर उनके विवाहपर्यंत कथा बड़े ही विस्तार-पूर्वक वर्णित है। इसके पीछे उनकी होली और जलकेलि आदि के कथन हैं। राज्याभिषेक एवं वनवासप्रसंग इन्होंने नहीं उठाया है। जो-जो बातें इन्हें उचित नहीं जान पड़ीं, उन्हें ये छोड़ गए हैं। परशुराम से किसी भाँति का कोई भी विवाद न कराके इन्होंने उनसे राम को धनुष-मात्र दिला दिया है। इसी प्रकार वनवास की कथा न कहकर आपने ग्रंथ ही समाप्त कर दिया। इन्होंने रामचंद्र के जगद्विख्यात कर्मों का सूक्ष्म वर्णन किया, परंतु उनके गार्हस्थ-कार्यों में बड़ा ही विस्तार किया। वाल्मीकिजी ने बालकांड में सबसे अधिक विस्तार किया, परंतु इस कवि ने उनसे भी दुगुना बालकांड बनाया है। इनकी भाषा मानो गोस्वामी तुलसीदास की ही भाषा है और इनकी कविता बड़ी मनोहर है। कई जगह पर इन्होंने रघुवंश और नैषध के भाव रक्खे हैं, जिससे जान पड़ता है कि इनको संस्कृत का भी अभ्यास था। इन्होंने अपनी कथा भी पुराणों की रीति से लिखी है, और वह प्रशंसनीय है। बहुत स्थानों पर इनके वर्णन तुलसीदासजी

से मिल जाते हैं और इनके भक्ति-मार्ग के विचार भी गोस्वामीजी से मिलते-जुलते हैं। इन्होंने बहुधा दोहा-चौपाइयों में कथा कही है, परंतु कहीं-कहीं अन्य छंद भी लिखे हैं। इन्होंने अनुप्रास आदि का ध्यान अधिक न रख के मुख्य वर्णन को प्रधान रक्खा है। हम इनकी गणना मधुसूदनदास की श्रेणी में करते हैं।

धरि निज अंक राम को माता ; लह्यो मोद लखि मुख मृदु गाता।
दंत कुंद मुकता सम सोहै ; बंधुजीव सम जीभ बिमोहै।
किसलय सधर अधर छबि छाजै ; इंद्रनील सम गंड बिराजै।
सुंदर चिबुक नासिका सोहै ; कुमकुम तिलक चिलक मन मोहै।
काम चाप सम भृकुटि विराजै ; अलक कलित मुख अति छबि छाजै।
यहि विधि सकल राम के अंगा ; लखि चूमति जननी मुख संगा।

नाम—(११२८) सागर वाजपेयी, लखनऊ-निवासी, ऊँचेवाले।

ग्रंथ—बामा मनरंजन।

जन्म-काल—१८४३।

मरणकाल—१८७०।

विवरण—आप लखनऊवाले महाराजा टिकैतराय के यहाँ थे। इनका कोई ग्रंथ हमारे देखने में नहीं आया, परंतु आपकी स्फुट कविता संग्रहों में बहुत पाई जाती है, जो व्रजभाषा में मनोमोहिनी है। हम इनको पद्माकर की श्रेणी में समझते हैं।

जाके लगै सोई जानै बिथा परपीर मैं को उपहास करै ना ;
सागर ए चित मैं चुभि जात है कोटि उपाय करौ बिसरै ना।
नेक सी काँकरी जाके परै सु तौ पीर के कारन धीर धरै ना ;
एरी सखी कल कैसे परै जब आँखि में आँखि परै निसरै ना।

(११२९) खुमान

ये बुँदेलखंड में चरखारी राजधानी के निवासी वंदीजन थे।

जाँच से इनका कविताकाल १८७० समझ पड़ता है। ये विक्रमसाह चरखारीवाले के यहाँ थे। इन्होंने लक्ष्मणशतक तथा हनुमाननखशिख-नामक ग्रंथ बनाए। हमने लक्ष्मणशतक देखा है जिसमें कुल १२६ छंदों द्वारा मेघनाद और लक्ष्मण का युद्ध कहा गया है। इन्होंने व्रजभाषा में ज़ोरदार रचना की है, जो प्रशंसनीय है। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में समझते हैं।

आयो इंद्रजीत दसकंध को निबंध बंध,
बोल्यो रामबंधु सों प्रबंध किरवान को;
को है अंसुमाल को है काल बिकराल मेरे,
सामुहे भए न रहै मान महेसान को।
तूतौ सुकुमार यार लच्छन कुमार मेरी,
मार बेसुमार को सहैया घमासान को;
बीर ना चितैया रन मंडल रितैया काल,
कहर बितैया हौं जितैया मघवान को ॥ १ ॥

खोज से इनके निम्न-लिखित ग्रंथ और मिले हैं—अमरप्रकाश, अष्टयाम, हनुमानपंचक, हनुमतपचीसी, हनुमानपचीसी, नीतिनिधान, समरसार, नृसिंहचरित्र और नृसिंहपचीसी। खोज १६०५ में अमर प्रकाश का रचना काल १८३६ लिखा है। इनका एक और उदाहरण देते हैं। [प्र० त्रै० रि०]

भूप दसरथ को नवेलो अलबेलो रन,
रेलो रूप झेलो दल राकस निकर को;
मान कवि कीरति उमंडी खलखंडी,
चंडीपति सों घमंडी कुलकंडी दिनकर को।
इंद्रगज मंजन को भंजन प्रभंजन तनै,
को मनरंजन निरंजन भरन को;

रामगुन ज्ञाता मनवांछित को दाता,
हरिदासन को त्राता धनि आता रघुवर को।

कहते हैं कि ये महाशय जन्मांध थे। एक संन्यासी की कृपा से इन्हें कविता का बोध हुआ। इन्होंने संस्कृत और भाषा दोनों की कविता अच्छी की है। ये अनुप्रास के बड़े भक्त थे।

(११३०) धनीराम ब्रह्मभट्ट

ये महाशय असनी ज़िला फ़तेहपुर के निवासी ब्रह्मभट्ट कवि ठाकुर के पुत्र और कविशंकर एवं सेवकराम के पिता थे। इनके वंश का विशेष वर्णन सेवकजी की समालोचना में द्रष्टव्य है। इन्होंने बाबू जानकीप्रसाद काशीवासी के आश्रय में उन्हीं के नाम पर रामचंद्रिका एवं मुक्तिरामायण का तिलक और रामश्वमेध तथा काव्य-प्रकाश के अनुवाद किए, जिनमें काव्यप्रकाश का उल्था थोड़े ही प्रकाशों पर्यंत हो सका। इसकी स्फुट रचना वाग्विलास में यत्र-तत्र कवि सेवक ने लिखी है। इनका कोई ग्रंथ मुद्रित नहीं हुआ और न हमने देखा है। यह समालोचना स्फुट कविता के आश्रय से लिखी जाती है। खोज १९०३ में रामगुणोदय-नामक [१८६७ में रचा हुआ] इनका एक ग्रंथ भी लिखा है। धनीरामजी के जन्म-मरण इत्यादि के समय सेवक की जीवनी में नहीं दिए गए हैं। अनुमान से जाना जाता है कि इनका जन्म लगभग सं० १८४० के हुआ होगा और कदाचित् ये ५० वर्ष से अधिक जीवित न रहे होंगे, क्योंकि इनका काव्यप्रकाश अपूर्ण रह गया। इनका कविताकाल १८६७ के लगभग समझ पड़ता है। ये महाशय संस्कृत के ज्ञाता जान पड़ते हैं और भाषा की कविता भी इनकी सरस और प्रशंसनीय है। ये तोष कवि की श्रेणी के हैं।

चूमत फिरत मुख चारु पर नारिन के,
साधुन में पावत बड़ाई साधु रसकी ;

गुनि जन कंठ राखै सुमनसहार ताही,
भार अरि उरन दरार भारी मसकी।
कहै धनीराम भूप जानकीप्रसाद जाकी,
गाइ कवि सुमति सुपाइ पार न सकी;
धावै देस देसन चपल गति गामी कछु,
जानी न परति गति रावरे सुजस की॥ १ ॥
तारे सुत सगर उधारे बहु पातकिन,
भारे पाप पुंजनि विदारे प्राक पन से;
परम पिरीति पारवती को विहाय शंभु,
शीश पर धर्यौ है बचन क्रम मनसे।
कहै धनीराम गंग परम पुनीत तेरे,
छाए तीनौ लोक ओक-ओक जस धनसे;
गाइ जलकन गरुआई चार्यो ओर पाई,
पाई कहूँ बड़ेन बड़ाई बड़े तन से॥ २ ॥

नाम—(११३१) जानकीप्रसाद बनारसी।
ग्रंथ—(१) रामचंद्रिका टीका [खोज १९०३],(२) मुक्ति रामायण, (३) रामभक्ति प्रकाशिका।
कविताकाल—१८७२।
विवरण—ये महाशय अच्छे विद्वान् कवि हुए हैं। आपने रामचंद्रिका की टीका बड़ी उत्तम की और काव्य भी बढ़िया रचा। इनकी गणना तोप कवि की श्रेणी में है।

कुंडलित सुंड-गंड झुंडत मलिंद बृंद,
बंदन बिराजै मुंड अदभुत गति को;
बाल ससि भाल तीनि लोचन बिसाल राजै,
फनि गन माल सुभ सदन सुमति को।

ध्यावत बिनाही श्रम लावत न बार नर,
पावत अपार भार मोद धन पति को ;
पाप तरु कंदन को विघन निकंदन को,
आठौ जाम बंदन करत गनपति को।

नाम—(११३२) महाराजा जैसिंह, रीवाँ ।

ग्रंथ—(१) कृष्णतरंगिणी, (२) हरिचरितामृत, (३) नृसिंहकथा, (४) बामनकथा, (५) परशुरामकथा, (६) हरिचरित्रचंद्रिका, (७) कपिलदेवकथा, (८) पृथुकथा, (९) नारदसनत्कुमारकथा, (१०) स्वयंभुव-मनुकथा, (११) दत्तात्रेयकथा, (१२) ऋषभदेवकथा, (१३) व्यासचरित्रकथा, (१४) वलदेवकथा, (१५) नरनारायणकथा, (१६) हरि-अवतारकथा, (१७) हयग्रीवकथा, (१८) चतुश्लोकी भागवत ।

रचनाकाल—१८७३ से १८९० तक ।

ये महाराज रीवाँ-नरेश थे। इनकी कविता बड़ी ही सरस और मधुर होती थी। इस राज्य में सदैव कवियों का सम्मान होता रहा है और इनके पुत्र तथा पौत्र भी अच्छे कवि हुए हैं। इस राज्य से कविता को बहुत सहायता पहुँची। इनकी गणना तोप की श्रेणी में की जाती है। आपका जन्म संवत् १८२१ में हुआ था और सं० १८६५ से १८९१ तक राज्य रहा। आपने सं० १८६९ में अँगरेज़ों से संधि की।

(११३३) नवलसिंह कायस्थ

ये महाशय झाँसी-निवासी श्रीवास्तव कायस्थ समथर-नरेश राजा हिंदूपति की सेवा में थे। सुकवि होने के अतिरिक्त ये चित्रकार भी अच्छे थे। इन्होंने संवत् १८७३ से १९२६ पर्यंत ग्रंथ-रचना की। इनके तीस ग्रंथ खोज में मिले हैं, जिनमें एक व्रजभाषागद्य का भी है। ग्रंथों के नाम ये हैं—

रासपंचाध्यायी [द्वि० त्रै० रि०], रामचंद्रविलास का आदि खंड, रामचंद्रविलास का रासखंड, रामायणकोश (१६०३), शंकामोचन (१८७३), रसिकरंजनी (१८७७), विज्ञानभास्कर (१८७८), ब्रज-दीपिका (१८८३), शुकरंभासंवाद (१८८८), नामचिंतामणि (१६०३), जौहरिनतरंग (१८७५), मूलभारत (१६१२), भारत-सावित्री (१६१२), भारतकवितावली (१६१३), भाषासप्तशती (१६१७), कविजीवन (१६१८), आल्हा रामायण (१६२२), आल्हा-भारत (१६२२), रुक्मिणी-मंगल (१६२५), मूल ढोला (१६२५), रहस लावनी (१६२६), अध्यात्म रामायण [प्र० त्रै० रि०] [खोज १६०५] (१८६१), रूपक रामायण, नारीप्रकरण, सीता-स्वयंवर, रामविवाहखंड, भारतवार्तिक, रामायणसुमिरनी, विलासखंड, पूर्वश्रृंगारखंड, मिथिलाखंड, दानलोभसंवाद और जन्मखंड। खोज १६०५ में इनके एक और ग्रंथ नामरामायण (१६०३) का पता चलता है। ज्ञात संवतों के इनके ग्रंथ ५३ वर्षों पर फैले हैं। इन्होंने विविध छंदों में रचना की है, जिसका चमत्कार साधारण श्रेणी का है। आपने ब्रजभाषा का प्रयोग किया है।

उदाहरण—

"श्री मन्नारायन कौ मेरी नमस्कार है हैं कैसे नारायन जिनके सुदरसन चक्र की नैमिन तै उतपन्न भयो जो नैमिपारंन्य तीर्थ ताके विषै सौनकादिक रिषीश्वर भगवत भक्ति जग्य करकैं विष्णु भगवान कौ आराधन चिर काल तै करत ते तहाँ एक समै मैं सूत पौरानिक: के पुत्र उग्रश्रवा कौ आइवौ भयौ।"

"अभव अनादि अनंत अपारा ; अमन अप्रान अमरु अविकारा।
अग अरीह आतम अविनासी ; अगम अगोचर अविरल बासी।
अपि अव्यक्ति अनाम अमाया ; अवय अनामय अभय अजाया।
अकथनीय अद्वैत अरामा ; अमल असेप अकर्म अकामा।

रहत अलिप्त ताहि उर ध्याऊँ ; अनुपम अमल सुजस मय गाऊँ ।
एक अनेक आतमा रामा ; अभिमत अध्यातम अभिरामा ।"

"सगुन सरूप सदा सुषमा निधान मंजु,
बुद्धि गुन गुनन अगाध वनपति से ;
भनै नवलेस फैलो विसद मही मैं जस,
बरनि न पावै पार झार फनपति से ।
जक्त निज भक्तन के कलुष प्रभंजै रंजै,
सुमति बढ़ावै धन धाम धनपति से ;
अवर न दूजौ देव सहज प्रसिद्ध यह,
सिद्ध वर दैन सिद्ध ईस गनपति से ।

(११३४) नाथूराम चौबे

आपने संवत् १८७४ में दोहों द्वारा चित्रकूटशत-नामक एक साधारण श्रेणी का ग्रंथ रचा । छत्रपूर में हमने इसे देखा ।

चित्रकूट बन वास करु करि संतन को साथ ;
आस तजै सब जगत की भजै सदा रघुनाथ ॥ १ ॥
चित्रकूट सब कामदा पाप पुंज हरि लेत ;
छिन-छिन उज्जल जस बढ़त राम भगति को देत ॥ २ ॥

(११३५) जयगोपाल

ये काशीपुरी मोहल्ला दारानगर के रहनेवाले राधाकृष्ण के पुत्र थे । अपनी जाति या कुल का कोई पता इन्होंने नहीं दिया है । संत रामगुलाम इनके गुरु थे । इन्होंने संवत् १८७४ [खोज १९०४] में तुलसी शब्दार्थप्रकाश-नामक भाषाकोष बनाया, जिसमें तीन प्रकाश हैं । प्रथम प्रकाश में वस्तु-संख्या-वर्णन, द्वितीय में शब्दार्थ-निर्णय एवं तृतीय में गुह्य स्थलों के अर्थों का कथन है । हमारे पुस्तकालय में इस ग्रंथ का केवल प्रथम प्रकाश हस्तलिखित है, जिसमें १ से लेकर १८ पर्यंत शब्दों का वर्णन दोहों में हुआ है, जो इस क्रम से

कहा गया है कि जैसे यदि एक का वर्णन किया गया, तो उसमें जितने पदार्थ एक हैं उनका कथन कर दिया गया। पुस्तक उपयोगी है और यदि पूरा ग्रंथ हो तो अर्थ समझने में बहुत सहायता दे सकता है। हमारी हिंदी भाषा में कोषों का अभाव-सा है और जो कुछ हैं भी वे मुद्रित नहीं हुए हैं। यदि खोजकर कोष-ग्रंथ प्रकाशित किए जावें, तो कोष का इतना अभाव कदाचित् न रहे। हमारे ही पास सुबंस-शुक्ल-कृत "अमरकोष भाषा," पं० व्रजराज मिश्र-कृत "हिंदी-कोष" और यह ग्रंथ अपूर्ण प्रस्तुत हैं। यदि विशेष खोज की जावे तो बहुत-से कोषग्रंथ हस्तगत हो सकते हैं। भाषा इस ग्रंथ की साधारण श्रेणी की है।

उदाहरण—एकादि वस्तु गणना।

स्वस्तिश्री गणपतिदसन रूप भूमि अरु चंद;
शुक्रदृष्टि पुनि चक्र रबि एक सच्चिदानंद।

(११३६) हरिवल्लभ। इनका ठीक नंबर अब (२६८/१) है।

(११३७) वृंदावनजी

इनका जन्म संवत् १८४८ में बाबू धर्मचंद्रजी जैन के यहाँ शाहाबाद ज़िले के बारा-नामक ग्राम में हुआ था। संवत् १८६० में ये काशी में रहने लगे। संवत् १९०५ तक इन्होंने ग्रंथ बनाए, परंतु उसके पीछे इनका हाल अविदित है। इनका मृत्युकाल १९१५ के लगभग है। इनको गोस्वामीजी की रामायण की भाँति जैन-रामायण बनाने की बड़ी चाह थी, पर यह ग्रंथ कुछ कारणों से ये बना न सके। इन्होंने अपने पुत्र अजितदास से उसे बनाने को कहा और उन्होंने उसके ७१ सर्ग बनाए भी, पर पीछे उनका भी शरीरपात हो गया। अब उनके पुत्र हरिदास उसे समाप्त करना चाहते हैं।

वृंदावनजी ने १५ वर्ष की अवस्था से ही काव्य-रचना प्रारंभ

कर दी थी। इन्होंने प्रवचनसार (१६०५ में), तीस-चौबीस पाठ (१८७६ में), चौबीसी पाठ (१८७५ में), छंदशतक (१८६८ में) और अर्हत्पासा केवली-नामक पाँच ग्रंथ बनाए हैं और वृंदावन-विलास-नामक १५० पृष्ठ का ग्रंथ इनकी स्फुट कविताओं का संग्रह है। प्रवचनसार महात्मा कुंदकंदाचार्य के इसी नामवाले ग्रंथ के आशय पर बना है। यह २३० पृष्ठ का एक बड़ा और उत्तम जैन-धर्मग्रंथ है। छंदशतक में १०० उत्तम छंद छाँटकर कवि ने कहे हैं और प्रत्येक छंद का नाम उसी छंद में कह दिया है। यह ग्रंथ बहुत विलक्षण है। अर्हत्पासावली केवली एक शकुनग्रंथ है। वृंदावनजी ने यमक, अनुप्रासादि का अच्छा प्रयोग किया और सबल कविता की। इनकी भाषा व्रजभाषा है, परंतु खड़ी बोली में भी इनकी कुछ कविता मिलती है। ये महाशय आशुकवि भी थे। चौबीसी पाठ इन्होंने एक रात-भर में बना डाला था। हम इन्हें तोष की श्रेणी में रक्खेंगे।

बेजान में गुनाह मुझसे बन गया सही,
ककरी के चोर को कटार मारिए नहीं ;
आनंद कंद श्री जिनंद देव है तुही,
जस बेद औ पुरान में परमान है यही।
केवली जिनेश की प्रभावना अचिंत मित्त,
कंज पै रहैं सु अंतरिच्छ पाद कंजरी ;
मूस औ बिडाल मोर व्याल बैर टाल-टाल,
हैं जहाँ सुमीत ह्वै निचीत भीत भंजरी।
अंगहीन अंग पाय हर्ष को कहा न जाय,
नैनहीन नैन पाय मंजु कंज खंजरी ;
और प्रातिहार्य की कथा कहा कहै सुवृंद
शोक थोक को है सुअशोक पुष्पमंजरी ॥ १ ॥

(अशोक पुष्पमंजरी छंद का उदाहरण)

चारु चरन आचरन चरन चित हरन चिह्नकर ;
चंद चंद तन चरित चंदथल चहत चतुर नर ।
चतुक चंड चकचूरि चारि दिक चक्र गुनाकर ;
चंचल चलित सुरेस चूलनुत चक्र धनुरहर ।
चर अचर हितू तारन तरन सुनत चहकि चिरनंद सुचि ;
जिन चंद चरन चरच्यो चहत चित चकोर नचि रचि रुचि ॥२॥

इस कविरत्न के रचे हुए प्रवचनसार और वृंदावनविलास-नामक दो उत्तम ग्रंथ हमारे पास हैं। खोज में जैन छंदावलि (१८६१)-नामक ग्रंथ इन्हीं का और लिखा है [खोज १६००]।

नाम—(११३७/१) छेमकरन मिश्र ।

ग्रंथ—(१) कृष्ण चरितामृत, (२) रामगीतमाला, (३) पद विलास, (४) वृत्त भास्कर, (५) रघुराज घनाक्षरी, (६) गोकुलचंद्र कथानक । [द्वि० त्रै० रि०]

विवरण—साधारण श्रेणी ।

जन्म-काल—१८२८ ।

मृत्युकाल—१६१८ ।

इस समय के अन्य कवि गण ।

नाम—(११३८) जैनी साधु ।

ग्रंथ—सरधा अलखवारी ।

कविताकाल—१८५६ ।

नाम—(११३८/१) रूप मुनि जैन ।

ग्रंथ—श्रीपाल चौपाई ।

रचनाकाल—१८५६ ।

उदाहरण—

प्रथम नमों गुरु चरण कूं पायो ज्ञान अँकूर ;
जसु प्रसाद उपगार थी सुख पावे भरपूर।
सँवत् अठारा छप्पने कहवाया फागुन मास सवाया जी ;
कृष्ण सप्तमी अति हित कारी सूर्यवार जयकारी जी।
एक तालीसमी ढाल बखाणी रूप मुनि हित कारी जी ;
सुनै सुनावै रहै हितकारी, लहै मंगल जय कारी जी।

नाम—(११३९) अलिरसिक गोविंद, जैपुर। इनका ठीक नंबर १११९ है।

नाम—(११३९/१) कल्याणदास बाबा।
ग्रंथ—अंजीर रास। [पं० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८९७।

नाम—(११४०) यदुनाथ शुक्ल, बनारस ।
ग्रंथ—(१) पंचांगदर्शन [खोज १९०३](१८९७), (२) बृहज्जातक तथा राजमूक-प्रश्न, (३) सामुद्रिक [प्र० त्रै० रि०], (४) वाक् सहस्री। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८९७।
विवरण—पिता का नाम मथुरानाथ शुक्ल।

नाम—(११४०/१) प्रवीणराय।
ग्रंथ—पिंगल। [तृ० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८९७।
विवरण—यह ग्रंथ इन्होंने बलदाऊ के पुजारी दयाकृष्ण के कहने से रचा।

नाम—(११४१) प्रेमदास अग्रवाल, अजैगढ़। देखो नं० ९५८/२

नाम—(११४१/१) बुल्लासाहिब।
ग्रंथ—शब्दसार। [पं० त्रै० रि०]

नाम—(११४२) भोजराज ।

ग्रंथ—(१) रसिकविलास [खोज १६०३], (२) उपवन-विनोद (१८८४) [प्र० त्रै० रि०], (३) भोज भूषण [खोज १६०५] ।

कविताकाल—१८५७ ।

विवरण—महाराजा विक्रमाजीतसिंह, बुँदेलखंड के यहाँ थे । चरखारी-नरेश विजयबहादुर एवं रत्नसिंह के यहाँ भी गए ।

नाम—(११४२/१) मनरंगलाल, पल्लीवाल ।

ग्रंथ—(१) चौवीसी पूजा पाठ, (२) नेमि चंद्रिका, (३) सप्त व्यसन चरित्र, (४) सप्तर्षि पूजा ।

रचनाकाल—१८५७ ।

विवरण—क़न्नौजवासी ।

नाम—(११४३) रामशरण, हमीरपूर, इटावा ।

कविताकाल—१८५७ ।

विवरण—हिम्मतबहादुर के मुसाहब ।

नाम—(११४४) रामसिंह, बुँदेलखंडी ।

कविताकाल—१८५७ ।

विवरण—तोष श्रेणी । ये महाशय हिम्मतबहादुर के यहाँ थे ।

नाम—(११४४/१) शशिधर स्वामी ।

ग्रंथ—(१) दोहा को पुस्तक, (२) ज्ञानदीप, (३) सच्चिदानंद-लहरी । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८५७ ।

विवरण—गढ़वालवासी पहाड़ी ब्राह्मण थे ।

नाम—(११४५) श्यामसखा ।

ग्रंथ—रामध्यानसुंदरी ।

कविताकाल—१८५७ [खोज १६०३] ।

नाम—(११४६) शिव कवि ।
ग्रंथ—दौलतबागविलास ।
कविताकाल—१८५७ ।
विवरण—ग्वालियर-नरेश दौलतराय सेंधिया के दरबार में थे ।

नाम—(११४७) सुंदरदास, बनारस ।
ग्रंथ—(१) श्रीसुंदरश्यामविलास (१८६७), (२) विनयसार (१८५७), (३) सुंदरशतश्रृंगार (१८८८) [खोज १६०२ व १६०३] ।
कविताकाल—१८५७ ।
विवरण—हीन श्रेणी । विशेषतया दोहा-चौपाई में रचना है ।

नाम—(११४८) हरदेव, बनिया, वृंदावन ।
ग्रंथ—(१) छंदपयोनिधि, (२) नायिका लक्षण । [प्र० त्रै० रि०]
जन्म-काल—१८३० ।
कविताकाल—१८५७ ।
विवरण—अप्पा साहब नागपूर के यहाँ थे ।

नाम—(११४९) परमानंदकिशोर ।
ग्रंथ—कृष्णचौंतीसी । [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८५८ के पूर्व ।

नाम—(११५०) काज़िमअली ।
ग्रंथ—सिंहासनबत्तीसी । [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८५८ ।

नाम—(११५०/१) गोविंद ।
ग्रंथ—गोविंदानंदघन । [तृ० त्रै० रि०]
विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(११५१) प्राणनाथ कायस्थ, राजनगर तथा महोबा ।

ग्रंथ—(१) सुदामाचरित्र [खोज १६०५], (२) रागमाला, (३) बभ्रुवाहन कथा।

जन्म-काल—१८३३।

कविताकाल—१८५८।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(११५२) भूपनारायण भाट, काकूपुर।

ग्रंथ—चंदेलवंशावली।

कविताकाल—१८५८।

विवरण—शिवराजपूर के चँदेलों की वंशावली बनाई। साधारण श्रेणी।

नाम—(११५३) हरिसहाय गिरि, मिर्ज़ापूर।

ग्रंथ—(१) रामाश्वमेध, (२) रामरत्नावली (१८८५)।

कविताकाल—१८५६ [खोज १६०३]।

नाम—(११५४) जैदेव।

जन्म-काल—१८३५।

कविताकाल—१८६०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(११५५) नित्यानंद।

ग्रंथ—(१) भ्रमनिवारण [खोज १६०५], (२) भजन।

कविताकाल—१८६० के क़रीब।

विवरण—चरणदास इनके दादा-गुरु थे। साधारण श्रेणी।

नाम—(११५६) बख़्तावर, हाथरस, ज़िला अलीगढ़।

ग्रंथ—सुन्नीसार।

कविताकाल—१८६० [खोज १६०१]।

नाम—(११५७) बेनीदास।

ग्रंथ—भीखूचरित्र।

कविताकाल—१८६० ।

नाम—(११५८) मिर्ज़ा मदनायक, विलग्राम ।

ग्रंथ—स्फुट ।

कविताकाल—१८६० ।

विवरण—अच्छे गवैया और कवि थे ।

नाम—(११५८/१) मुक्तानंद ।

ग्रंथ—(१) विवेक चिंतामणि, (२) सत्संग शिरोमणि ।

विवरण—गढहा-निवासी स्वामी नारायण संप्रदाय के प्रभावशाली साधु थे । कहते हैं कि इन्होंने ६००० पद गुजराती में तथा इतने ही हिंदी में बनाए हैं ।

कविताकाल—१८६० ।

नाम—(११५६) रघुराय ।

जन्म-काल—१८३० ।

कविताकाल—१८६० ।

विवरण—साधारण कवि ।

नाम—(११६०) रामदास । देखो नं० (६७६/१) ।

नाम—(११६१) लक्ष्मणसिंह प्रधान, बुँदेलखंडी ।

ग्रंथ—(१) सभाविनोद, (२) रघुवीरप्रमोद, (३) प्रतिपाल परिणय ।

कविताकाल—१८६० । [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—दफ़्तर आदि का कथन ।

नाम—(११६२) लाला पाठक, रुकुमनगर ।

ग्रंथ—शालिहोत्र ।

जन्म-काल—१८३१ ।

कविताकाल—१८६० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(११६३) सबसुख कायस्थ, बलवंतपूर, जिला झाँसी।

ग्रंथ—चित्रगुप्तप्रकाश।

कविताकल—१८६०।

विवरण—चरखारी-नरेश महाराज विक्रमाजीत के यहाँ थे।

नाम—(११६४) सिंह।

जन्म-काल—१८३५।

कविताकाल—१८६०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(११६५) हित प्रियादास, राधावल्लभी।

ग्रंथ—(१) दोहा, (२) श्रीराधावल्लभ भाष्य, (३) सुसिद्धांतोत्तम।

कविताकाल—१८६०।

विवरण—छत्रपुर में देखा। साधारण श्रेणी। ये महाशय रीवाँ-नरेश महाराजा विश्वनाथसिंह के गुरु थे।

नाम—(११६५/१) देव सेन।

ग्रंथ—ज्ञान अक्षरी। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८६१ के पूर्व।

नाम—(११६६) महेश।

ग्रंथ—हम्मीर रासो।

कविताकाल—१८६१ के पूर्व [खोज १६०१]।

नाम—(११६७) उमेदराम चारण, अलवर।

ग्रंथ—वाणीभूषण।

कविताकाल—१८६१।

विवरण—साधारण श्रेणी। तिजोर-महाराज के वास्ते यह ग्रंथ बनाया।

नाम—(११६७/१) जयचंद्र जैन।

ग्रंथ—(१) सर्वार्थ सिद्धि (१८६१), (२) परीक्षामुख (१८६३), (३) द्रव्य संग्रह (१८६३), (४) आम ख्याति समय सार (१८६४), (५) स्वामी कार्त्तिकेयानुप्रेक्षा (१८६६), (६) अष्ट पाहुड़ (१८६७), (७) देवागम (१८८६), (८) ज्ञानार्णव (१८६९), (९) भक्तामर- चरित्र (१८७०), (१०) सामयिक पाठ, (११) चंद्रप्रभाकाव्य के द्वितीय सर्ग का न्यायभाग, (१२) मत समुच्चय, (१३) पत्र-परीक्षा।

रचनाकाल—१८६१।

विवरण—जयपुर-निवासी छावड़ा गोत्री खंडेलवाल जैन थे।

नाम—(११६८) मनराखनदास कायस्थ।

ग्रंथ—छंदोनिधि पिंगल। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६१।

विवरण—हरीनारायणदास, बाँदावाले के पुत्र।

नाम—(११६९) नोनेसाह।

ग्रंथ—(१) मूर प्रभाकर (१८६१), (२) वैद्यमनोहर (१८५१), (३) संजीवनसार (१८६६) । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६१।

नाम—(११६९/१) जगदीश।

ग्रंथ—जगतरस रंजन। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८६२।

विवरण—सवाई महाराजा जगतसिंह जयपूर के यहाँ थे।

नाम—(११७०) तेजसिंह कायस्थ, जिगनी। देखो नं० ९४७।

नाम—(११७०) मणिसिंह, उपनाम मनि द्विज ।

ग्रंथ—बहुला कथा । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८६२ ।

नाम—(११७१) चंद्रघन ।

ग्रंथ—भागवतसार भाषा ।

कविताकाल—१८६३ के पहले [खोज १९००] ।

नाम—(११७२) जैचंद, जैपुर ।

ग्रंथ—स्वामी कार्त्तिकायन प्रेच ।

कविताकाल—१८६३ ।

विवरण—जैनग्रंथ है ।

नाम—(११७२) हरिदास ।

ग्रंथ—भरतरी वैराग्य ।

रचनाकाल—१८६४ के पूर्व [खोज १९०१] ।

नाम—(११७३) दिनेश, टिकारी, गया ।

ग्रंथ—(१) रसरहस्य, (२) नखशिख ।

कविताकाल—१८६४ ।

विवरण—साधारण श्रेणी । एक दिनेश का छंद अलंकाररत्नाकर- में भी है । यदि वे भी यही हों तो इनका समय संवत् १७९८ के पूर्व जायगा ।

नाम—(११७३) नंदीराम ।

ग्रंथ—भगवद्गीता । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८६४ ।

नाम—(११७४) मंसाराम पाँड़े ।

ग्रंथ—भारत प्रबंध ।

कविताकाल—१८६४ [खोज १९०५] ।

विवरण—महाभारत का सार बनाया है । साधारण श्रेणी ।

नाम—(११७५) देवीदास कायस्थ, टटम, राज छतरपूर।
ग्रंथ—(१) सुदामाचरित्र, (२) हनुमत-नखशिख, (३) नाममाला रामायण (बालकांड), (४) राजनीति के कवित्त।
जन्म-काल—१८४०।
कविताकाल—१८६५।
विवरण—ये वैद्यकी का उद्यम करते और मिर्ज़ापूर में रहा करते थे।

नाम—(११७६) प्रताप कवि कायस्थ, झाँसी।
ग्रंथ—(१) चित्रगोपित्रप्रकाश, (२) श्रीवास्तवन के पटाके अष्टक।
कविताकाल—१८६५।
विवरण—राव रामचंद्र झाँसीवाले के समय में थे।

नाम—(११७७) पहिलवानदास साधू, भीखीपूर, ज़ि० बाराबंकी।
ग्रंथ—उपाख्यानविवेक (पृ० २६ पद्य), [द्वि० त्रै० रि०] (२) मसलेनामा। [च० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८६५।

नाम—(११७८) रामदास।
जन्म-काल—१८३६।
कविताकाल—१८६५।
विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(११७९) शिवलाल दुबे, डौंड़िया खेरा, उन्नाव।
ग्रंथ—(१) नखशिख, (२) षटऋतु।
जन्म-काल—१८३६।
कविताकाल—१८६५।
विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(११७९/१) हरजसराय।

ग्रंथ—(१) साधुगुणमाला, (२) देवाधिदेव रचना, (३) देवरचना।

रचनाकाल—१८६५।

नाम—(११७९/२) ज्ञानसागर।

ग्रंथ—(१) ज्ञान विलास, (२) समय तरंग।

रचनाकाल—१८६६ के पूर्व।

विवरण—श्वेतांबर साधु।

नाम—(११७९/३) विष्णुदत्त महापात्र।

ग्रंथ—(१) दुर्गाशतक, (२) वसंत विलास। [च० त्रै० रि०]

रचनकाल—१८६६।

नाम—(११८०) संग्रामसिंह राजा।

ग्रंथ—काव्यार्णव (पृ० १२०)। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६६।

विवरण—रीति-ग्रंथ।

नाम—(११८१) हितगुलाललाल, ब्रजवासी।

ग्रंथ—वाणी। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६७ के पूर्व।

विवरण—ये हितहरिवंशजी के संप्रदाय के थे।

नाम—(११८२) अमृतराम साधु निरंजनी।

ग्रंथ—अरजीरी नक़ल।

कविताकाल—१८६७ [खोज १९०२]।

विवरण—राजपूतानी भाषा।

नाम—(११८३) चैनदास।

ग्रंथ—गीत नाथजीरो।

कविताकाल—१८६७ [खोज १९०२]।

विवरण—राजपूतानी भाषा।

नाम—(११८३/१) जयजयराम अग्रवाल।

ग्रंथ—ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण खंड। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८६७।

नाम—(११८३/२) डालूराम अग्रवाल।

ग्रंथ—(१) गुरूपदेश श्रावकाचार (१८६७), (२) सम्यक्त्व प्रकाश (१८७१)।

रचनाकाल—१८६७।

विवरण—माधवराजपुर-निवासी।

नाम—(११८४) दौलतराम।

ग्रंथ—(१) जलंधरजीरोगुण [खोज १६०२], (२) परिचयप्रकाश।

कविताकाल—१८६७।

विवरण—राजपूतानी भाषा के कवि हैं।

नाम—(११८५) पहलाद बंदीजन, चरखारी।

कविताकाल—१८६७।

विवरण—राजा जगतसिंह के यहाँ थे।

नाम—(११८६) मगजी सेवक।

ग्रंथ—गीतासेवक मगरा [खोज १६०२]।

कविताकाल—१८६७।

नाम—(११८७) मनोहरदास।

ग्रंथ—(१) जसभूषणचंद्रिका [खोज १६०२], (२) फूलचरित्र। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६७।

नाम—(११८८) मेधा।

ग्रंथ—चित्रभूषणसंग्रह।

कविताकाल—१८६७।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(११८९) रिझवार।

ग्रंथ—(१) कविता श्रीहजूरा राँ [खोज १९०२], (२) कवित्त श्रीनाथजी रा [खोज १९०२], (३) नाथ चरित्र रो हकीकत। नामा [खोज १९०२], (४) रिझवार के कवित्त।

कविताकाल—१८६७।

विवरण—राजपूताना का कवि। आश्रयदाता जोधपुर-नरेश महाराजा मानसिंह।

नाम—(११९०) रिपुवार।

ग्रंथ—कविता श्रीहजूरन रा।

कविताकाल—१८६७।

विवरण—भूपति के साथ यह ग्रंथ बनाया।

नाम—(११९१) शंभुनाथ मिश्र, मुरादाबाद, उन्नाव।

ग्रंथ—राजकुमारप्रबोध।

कविताकाल—१८६७।

नाम—(११९२) स्वरूप मान।

ग्रंथजलंधरचंद्रोदय।

कविताकाल—१८६७। [खोज १९०२]

नाम—(११९२/१) संतोषीराम।

ग्रंथ—जालंधरनाथजी रो रूपक।

रचनाकाल—१८६८ [खोज १९०२]।

नाम—(११९२/२) दयाकृष्ण।

ग्रंथ—(१) पदावली, (२) स्फुट कवित्त, (३) पिंगल, (४) बलदेव विलास (१८६८)।

रचनाकाल—१८६८।

विवरण—संवत् १६०२ में मरे। [च० त्रै० रि०]

नाम—(११६३) भगवत्‌दास।

ग्रंथ—(१) रामरसायन पिंगल, (२) भगवतचरित्र, (३) भेद भास्कर।

कविताकाल—१८६८।

विवरण—साधारण श्रेणी। द्वि० त्रै० रि० में भगवत्‌चरित्र दूसरे भगवत्‌दास द्वारा लिखे जाने का पता चलता है।

नाम—(११६३/१) महामति।

ग्रंथ—(१) परिक्रमा, (२) प्रकट बानी, (३) संबंधसागर, (४) वेदांत कीर्तन। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८६६ के पूर्व। [च० त्रै० रि०]

नाम—(११६४) गंगादास चंदेल क्षत्रिय।

ग्रंथ—(१) शांतसुमिरनी, (२) शब्दसार, (३) महालक्ष्मीजू के पद, [प्र० त्रै० रि०] (४) भक्त शिरोमणि। [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६६।

विवरण—हरिसिंह के पुत्र नवनदास के शिष्य।

नाम—(११६५) जानकीदास कायस्थ।

ग्रंथ—(१) नामबत्तीसी, (२) स्फुट दोहा, कवित्त और पद।

कविताकाल—१८६६। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—दतिया-नरेश महाराजा परीक्षित के यहाँ थे। साधारण श्रेणी सानुप्रास कविता।

नाम—(११६५/१) प्रयागदास, बनारस।

ग्रंथ—(१) शब्दरत्नावली (१८६६), (२) भोजनविलास (१८८५)।

कविताकाल—१८६६।

विवरण—साधारण श्रेणी। महाराजा बनारस के यहाँ थे।

राजा विजय विक्रमादित्य बहादुर चरखारी-नरेश के यहाँ भी गए। [प्र० त्रै० रि०]

नाम—(११९६) प्रयागदास भाट, बसारी, राज्य छतरपूर।

ग्रंथ—हितोपदेश।

कविताकाल—१८६९ [खोज १९०२]।

विवरण—चरखारी-नरेश खुमानसिंह के यहाँ थे।

नाम—(११९७) विनोदीलाल।

ग्रंथ—कृष्णविनोद।

कविताकाल—१८६९।

विवरण—ये राजा चिरौंजीलाल उदयपुरवासी के पुत्र हैं। खोज १९०२ में कृष्णविनोद का रचनाकाल १८७९ संवत् लिखा है।

नाम—(११९८) मारकंडेय मिश्र।

ग्रंथ—चंडीचरित्र। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८६९ के पूर्व।

नाम—(११९९) लखनसेन।

ग्रंथ—महाभारत का हिंदी-अनुवाद।

कविताकाल—१८७० के पूर्व। [द्वि० त्रै० रि०]

विवरण—बड़ा ग्रंथ।

नाम—(१२००) केरनेस।

कविताकाल—१८७०।

विवरण—चंद्रशेखर कवि के गुरु थे।

नाम—(१२०१) चिरंजीव ब्राह्मण, बैसवारा गोसाईं, खेरा।

ग्रंथ—महाभारत भाषा।

कविताकाल—१८७०।

विवरण—साधारण ।

नाम—(१२०१/१) छिद्दूराम ।

ग्रंथ—लग्न सुंदरी । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८७० ।

विवरण—सगौनीग्रामवासी धरणीधर के पुत्र तथा मनसुखराम के भ्राता थे ।

नाम—(१२०२) दूलमदास ।

ग्रंथ—शब्दावली ।

कविताकाल—१८७० के लगभग ।

विवरण—ये जगजीवनदास के पुत्र या शिष्य थे, जिन्होंने जगजीवनदासी पंथ कोटवा, गाँजर में चलाया है । इस मत के अनुयायी उत्तर में बहुत हैं । इनको हुए क़रीब १०० वर्ष के हुए ।

नाम—(१२०३) धीर कवि ।

ग्रंथ—कवि प्रिया टीका । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८७० ।

विवरण—महाराजा वीरकिशोर के यहाँ थे ।

नाम—(१२०४) मनीराम ।

कविताकाल—१८७० ।

विवरण—चंद्रशेखर कवि के पिता ।

नाम—(१२०५) संगम ।

जन्म-काल—१८४० ।

कविताकाल—१८७० ।

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१२०५/१) हुलासराम ।

ग्रंथ—(१) बुद्धिप्रकाश, (२) वैतालपंचविंशतिका, (३) लंकाकांड ।

रचनाकाल—१८७० ।

जन्म-काल—१८४५ ।

मृत्युकाल—१९१२ ।

विवरण—रामनगर, फतहपूर-निवासी शाकद्वीपीय ब्राह्मण प्रयागदत्त् के पुत्र थे ।

नाम—(१२०६) अनंतराम ।

ग्रंथ—वैद्यक ग्रंथ की भाषा । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८७१ के पूर्व ।

विवरण—महाराजा सवाई प्रतापसिंह जैपुर-नरेश की आज्ञानुसार लिखा (१७७८—१८०३ सन्)। कविता साधारण श्रेणी।

नाम—(१२०६/१) बुधजन ।

ग्रंथ—(१) तत्त्वार्थबोध (१८७१), (२) बुधजन सतसई (१८८१), (३) पंचास्तिकाय (१८९१), (४) बुधजन विलास (१८९२)।

रचनाकाल—१८७१ ।

विवरण—जयपूरवासी खंडेलवाल जैन थे ।

नाम—(१२०७) भवानीशंकर ।

ग्रंथ—बैतालपचीसी ।

कविताकाल—१८७१ ।

विवरण—लक्ष्मण पाठक के पुत्र [खोज १९०१] ।

नाम—(१२०७/१) भूधरदास मिश्र ।

ग्रंथ—पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय की टीका, (२) चरचा समाधान ।

रचनाकाल—१८७१ ।

विवरण—शाहगंज, आगरा-निवासी ।

नाम—(१२०७/२) मन्नालाल, सांगा का ।

ग्रंथ—चरित्रसार वचनिका ।

रचनाकाल—१८७१ ।

नाम—(१२०७/३) सोनेसिंह मिश्र, उपनाम सोमदत्त ।

ग्रंथ—भजन संग्रह ।

रचनाकाल—१८७१ ।

जन्म-काल—१८४१ ।

मृत्युकाल—१९२५ ।

विवरण—सलेथू-निवासी जवाहिरलाल मिश्र के पुत्र थे ।

नाम—(१२०८) श्रीसूर्य या सूर्य ।

ग्रंथ—कर्मविपाक । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८७२ के पूर्व ।

नाम—(१२०८/१) सुदर्शन शाह ।

ग्रंथ—सभासार । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८७२ के लगभग ।

नाम—(१२०९) कृष्णलालजी गोस्वामी (कृष्ण), बूँदी ।

ग्रंथ—(१) कृष्णविनोद (१८७२), (२) रसभूषण (१८७४), (३) भक्तमाल की टीका ।

कविताकाल—१८७२ ।

विवरण—साधारण श्रेणी की कविता करते थे । आप प्रसिद्ध गोस्वामी गदाधरलाल के वंश में थे ।

नाम—(११०९/१) विश्वनाथ भाट ।

ग्रंथ—(१) अलंकारदर्श, (२) अलंकारा दपर्ण । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८७२ ।

नाम—(१२१०) भानदास, चरखारी (बुँदेलखंड) ।

ग्रंथ—रूपविलास (पिंगल), (२) दानलीला । [प्र० त्रै० रि०]

जन्म-काल—१८४५ ।

कविताकाल—१८७२ ।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१२१०/१) अखयराम।

ग्रंथ—(१) स्फुट कविता, (२) रत्नप्रकाश, (३) हस्तामलक वेदांत।

रचनाकाल—१८७३ के पूर्व।

नाम—(१२११) जनमोहन।

ग्रंथ—सनेहलीला। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८७३ के लगभग।

विवरण—ओरछा राज्य के पुरोहित थे।

नाम—(१२१२) भीमजू कायस्थ, भदरस, ज़िला कानपुर।

ग्रंथ—लीलावती अनुवाद (गणितसार)।

कविताकाल—१८७३ के पूर्व। [प्र० त्रै० रि०]

नाम—(१२१२/१) सदाराम, चित्रकूट।

ग्रंथ—(१)अखंड प्रकाश, (२) बोधविलास,(३) अनुभवआनंद सिंधु, (४) नाटक दीपिका। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८७३ के पूर्व।

नाम—(१२१३) लक्ष्मणराव।

ग्रंथ—लछिमन चंद्रिका। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८७३।

विवरण—महाराजा ग्वालियर दौलतराय सेंधिया के उच्च पदाधिकारी थे।

नाम—(१२१४) शंभूदत्त ब्राह्मण (पूस करणा),जोधपूर।

ग्रंथ—(१) राजकुमारप्रबोध [खोज १९०२], (२) राजनीतिउपदेश।

कविताकाल—१८७३।

विवरण—श्लोक संख्या ३२९।

नाम—(१२१५) सागरदान चारण।

ग्रंथ—गुणविलास।

कविताकाल—१८७३।

विवरण—आप जोधपूर के ठाकुर केसरीसिंह के यहाँ थे।

नाम—(१२१६) भगवद्मुदित। देखो नं० $\frac{३६६}{१}$।

नाम—(१२१७) गंगाप्रसाद, उदैनिया।

ग्रंथ—(१) रामानुग्रह, [प्र० त्रै० रि०] (२) रसबोध (१८८०)। [तृ० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८७४।

नाम—(१२१८) जयगोपालसिंह, ब्रजवासी।

ग्रंथ—(१) तुलसीशब्दार्थप्रकाश।

कविताकाल—१८७४ [खोज १९०२]।

विवरण—रामग़ुलाम मिर्ज़ापुरवाले के चेले हैं।

नाम—($\frac{२१}{१}$) दयाराम नागर ब्राह्मण।

ग्रंथ—(१) सतसई, (२) वस्तुवृंददीपिका, (३) वृंदावन-विलास, (४) स्फुट पद।

कविताकाल—१८७४।

विवरण—चंडीपुर ग्राम-वासी प्रभूराम के पुत्र वल्लभ संप्रदाय के वैष्णव थे।

उदाहरण—

चाहुँ बसाए हृदय में धरूँ त्रिभंगी ध्यान;
ताते राख्यो कुटिल उर होइ असी सो म्यान॥ १॥
मो उर में निज प्रेम अस परि वह अचलित देहु;
जैसे लोटन दीप सों सरकन ढुरक सनेहु॥ २॥
पीतांबर परिधानप्रभु राधा नीलनिचोल;
अंग रंग सँग परस्पर यों सब हारद तोल॥ ३॥

मुकुर मुकुर सब वस्तु भइ नयन अयन किय लाल ;
दृग पसार जित-जित अली तित-तित लखु गोपाल ॥ ४ ॥
ललना लोचन सित असित गोलक डारे लाल ;
यह त्रिवेनि मज्जन लही मुक्ति बिरह गोपाल ॥ ५ ॥

नाम—(१२१८/२) प्रियादास महाराजा।
ग्रंथ—(१) जलकेलि पचीसी, (२) झूला पचीसी, (३) दान-लीला, (४) सीता मंगल। [तृ० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८७४।
विवरण—महाराजा सूरतसिंह बीकानेर-नरेश के पुत्र थे।

नाम—(१२१६) रामनाथ।
ग्रंथ—चित्रकूट सतमाला। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८७४।

नाम—(१२२०) रसालगिरि।
ग्रंथ—(१) वैद्यप्रकाश, (२) स्वरोदय। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८७४।
विवरण—मैनपुरीनिवासी मोदिगिरि के शिष्य थे। संन्यासी होकर मथुरा चले गए।

नाम—(१२२१) द्विज दीनदास। देखो नं० १४६३।

नाम—(१२२२) ऊधो।
कवितकाल—१८७५।
विवरण—साधार श्रेणी।

नाम—(१२२२/१) कहान (कान)।
ग्रंथ—स्फुट कुंडलिया।
कविताकाल—१८७५।
विवरण—सिद्धपुर गुजरात-निवासी। कहते हैं कि सिद्धपुर के

मेले में इनका दीनदरवेश से एक कुंडलिया की रचना पर वादविवाद हुआ था।

नाम—(१२२२/२) जनक राज किशोरीशरण।

ग्रंथ—(१) सीताराम सिद्धांत मुक्तावली (१८७५), (२) अनन्य तरंगिणी (१८८८), (३) कवितावली, (४) सीताराम रस तरंगिणी, (५) आत्म संबंध दर्पण, (६) तुलसीदास चरित्र, (७) होली विनोद दीपिका, (८) वेदांतसार-श्रुति दीपिका, (९) अंदोह रहस्य दीपिका, (१०) रास दीपिका, (११) जानकी करुणाभरण, (१२) दोहावली, (१३) सिद्धांतचौंतीसा, (१४) रघुवर करुणाभरण, (१५) ललित श्रृंगार दीपिका, (१६) अष्टयाम, (१७) विवेकसार चंद्रिका, (१८) बारह खड़ी, (१९) ललित श्रृंगार दीपक।

कविताकाल—१८७५।

विवरण—अयोध्या के महंत तथा राघवदास के शिष्य थे। इन्होंने व्रजभाषा तथा संस्कृत में भी कई ग्रंथ बनाए। इनकी पुस्तकें हमने दरबार छतरपूर में देखी हैं। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है।

फूले कुसुम द्रुम विवध रंग सुगंध के चहुँ चाव;
गुंजत मधुप मधुमत्त नाना रंग रज अँग फाव।
सीरी सुगंध सुमंत बात विनोद कंत वहंत;
परसत अनंग उदोत हिय अभिलाख कामिनि कंत।

नाम—(१२२३) जीवनसिंह नल्लवंशी चारण, करौली।

ग्रंथ—स्फुट।

कविताकाल—१८७५ के लगभग।

विवरण—करौली दरबार में कवि थे। साधारण श्रेणी।

नाम—(१२२४) दरियावासिंह (ज्ञान) कायस्थ, पन्ना।

ग्रंथ—धनुषपचासा।

जन्म-काल—१८५०।

विवरण—पन्ना-नरेश हरवंशराय के समय में थे।

नाम—(१२२५) दीनदरवेश मुसलमान, बुँदेलखंड।

ग्रंथ—स्फुट कुंडलियाएँ।

कविताकाल—१८७५।

विवरण—महाराजा मानसिंह मारवाड़-नरेश के यहाँ थे।

नाम—(१२२६) फ़तहराम चौबे, बूँदी।

ग्रंथ—स्फुट।

कविताकाल—१८७५।

विवरण—राव राजा उमेदसिंह बूँदी महाराज के आश्रित थे। काव्य साधारण श्रेणी का है।

नाम—(१२२७) बहादुरसिंह कायस्थ, चरखारी।

ग्रंथ—(१) हनुमानचरित्र, (२) रघुवरविलास, (३) पांडवाश्वमेध, (४) वीर रामायण।

जन्म-काल—१८५०।

कविताकाल—१८७५।

विवरण—चरखारीनरेश महाराज रतनसिंह के यहाँ थे।

नाम—(१२२८) बाँकीदासजी कविराजा चारण।

ग्रंथ—(१) श्रीहजूरान री कविता [खोज १९०२], (२) राठोर राजाओं की फुटकर ख्याति।

जन्म-काल—१८४०।

कविताकाल—१८७५।

विवरण—ये महाशय मुरारिदान के पितामह थे। ये उत्तम अनुप्रास-पूर्ण रचना करते थे। इनकी गणना तोष कवि की श्रेणी में हो सकती है। राजपूतानी भाषा में कविता की है।

नाम—(१२२६) ब्रजलाल भट्ट, काशी।

ग्रंथ—(१) छंदरत्नाकर [खोज १९०४] (१८८१), (२) उदितकीर्तिप्रकाश [खोज १९०३] (१८७९), (३) हनुमंतबालचरित्र (१८७६)।

जन्म-काल—१८५०।

कविताकाल—१८७५।

विवरण—काशी-नरेश के आश्रित मान कवि के पुत्र।

नाम—(१२२६/१) ब्रह्मानंद।

कविताकाल—१८७५।

ग्रंथ—(१) धर्म प्रकाश, (२) विदुर नीति, (३) सुमति-प्रकाश, (४) ब्रह्म विलास।

विवरण—खानगाँव-निवासी शंभूदान के पुत्र थे, इन्होंने स्वामी नारायण संप्रदाय के आचार्य सहजानंद से दीक्षा लेकर ब्रह्मानंद नाम धारण किया।

उदाहरण—

मिलहि भूमि को राज साज सुख संपति नाना;
मिलहि स्वर्ग सुख लोक प्रबल अमृत को पाना।
मिलत इंद्र अधिकार मिलत क्रम करि पद बिधि को;
अष्ट सिद्धि पुनि मिलत मिलत संग्रह नव निधि को।
सुत भ्रात तात वनिता मिलै खूब खजाना नंग है;
पुनि ब्रह्म कहे सब ही मिलै इक दुर्लभ सत्संग है।

नाम—(१२३०) गुलाबसिंह, मानसिंह या मैनासिंह नानकपंथी के शिष्य।

कविताकाल—१८७९।

नाम—(१२३१) शिवलाल पाठक।

ग्रंथ—(१) अभिप्राय दीपक, (२) मानसमयंक।

कविताकाल—१८७५ [खोज ११०४]।

विवरण—रामायण की टीका की है।

नाम—(१२३२) श्रीलाल गुजराती, बांडेर, राजपूताना।

जन्म-काल—१८५०।

कविताकाल—१८७५।

नाम—(१२³²⁄₁) गणेश।

कविताकाल—१८७५।

ग्रंथ—(१) रस चंद्रोदय, (२) कृष्णभक्ति चंद्रिका नाटक, (३) सभासूर्य, (४) फागुनमाहात्य, (५) नग्रशतक।

विवरण—एक रौली के चौवे थे।

तीसवाँ अध्याय

पद्माकर-काल

(१८७६-१८८६)

नाम—(१२३३) पद्माकर भट्ट।

जन्मभूमि—बाँदा।

जन्म-काल—१८१०।

मृत्युकाल—१८६०।

ग्रंथ—(१) रामरसायन, (२) हिम्मतबहादुर बिरदावली, (३) जगद्विनोद, (४) पद्माभरण, (५) आलीजा-प्रकाश, (६) हितोपदेशभाषा, (७) प्रबोधपचासा, (८) गंगालहरी, (९) ईश्वर पचीसी।

कविताकाल—१८३७।

पद्माकर भट्ट के विषय में डुमराव-निवासी पंडित नकछेदी तिवारी ने एक लेख लिखा था, जो देवनागर के प्रथम वर्ष की प्रथम संख्या में प्रकाशित हुआ। इस लेख के ऐतिहासिक भाग को हम मुख्यशः

उसी के आधार पर लिखते हैं, क्योंकि हमारे पास उससे अच्छा कोई प्रमाण नहीं है। पद्माकर ने अपने किसी ग्रंथ में सन्-संवत् का कोई ब्योरा नहीं दिया। अतः उनके ग्रंथों का पूर्वापर क्रम बहिरंग प्रमाणों और अनुमानों पर ही निर्भर है।

पद्माकर भट्ट तैलंग ब्राह्मण थे। उनका जन्म संवत् १८१० में बाँदा में हुआ और संवत् १८९० में वे कानपुर में गंगातट पर स्वर्गवासी हुए। इस देश में तैलंगियों की माथुर और गोकुलस्थ-नामक दो शाखाएँ हैं। पद्माकर ने जगद्विनोद के कई अध्यायों के अंत में लिखा है कि "मथुरास्थाने मोहनलालभट्टात्मज कवि-पद्माकर-विरचित," जिससे जान पड़ता है कि ये महाशय माथुर शाखा के थे। ये लोग अत्रिगोत्री हैं। मधुकर भट्ट की पाँचवीं पीढ़ी में जनार्दन भट्ट उत्पन्न हुए। इनके पाँच पुत्र थे, अर्थात् अन्नाजू, गुधरजू, मोहनलाल, क्षेमनिधि और श्रीकृष्ण। मोहनलालजी बाँदा नगर में संवत् १७४४ में उत्पन्न हुए। ये महाशय पूरे पंडित होने के अतिरिक्त कवि भी थे। आप पहले नागपूर के महाराजा रघुनाथ-राव उपनाम अप्पा साहब के यहाँ रहे और फिर संवत् १८०४ में पन्ना के महाराज हिंदू-पति के यहाँ जाकर उनके मंत्र-गुरु हुए और उन्होंने इन्हें पाँच गाँव भी दिए। वहाँ से मोहनलालजी जयपूर-नरेश प्रतापसिंह के यहाँ गए। ये महाराज संवत् १८३६ में सिंहासनारूढ़ और संवत् १८६० में स्वर्गवासी हुए। प्रतापसिंह माधवसिंह के पुत्र थे। इन्हीं के पुत्र महाराजा जगत्सिंह थे, जो संवत् १८३० में गद्दी पर बैठे। इन्होंने १७ वर्ष तक राज्य किया। प्रतापसिंह के यहाँ मोहनलाल ने एक हाथी, जागीर, सुवर्णपदक, तथा कविराज-शिरोमणि की पदवी पाई।

पद्माकरजी मोहनलाल भट्ट के पुत्र थे। विद्या पढ़ने में इन्होंने संस्कृत और प्राकृत का भी अच्छा अभ्यास किया था। ये महाराज

"सुगरा" में नोने अर्जुनसिंह के मंत्र-गुरु हुए। इनके वंशधर अब भी वहाँ मंत्र-गुरु होते हैं। संवत् १८४६ में ये महाराज गोसाईं अनूपगिरि उपनाम हिम्मतबहादुर के यहाँ थे। हिम्मतबहादुर की प्रशंसा में इन्होंने जो कविता की है, और जिसका कुछ अंश नीचे दिया जायगा, वह उत्तम है। इन्होंने रामरसायन-नामक एक रामायण भी बहुत लंबी-चौड़ी बनाई है। वह ग्रंथ आकार में वाल्मीकीय रामायण से कुछ ही छोटा और प्रायः उसी का भाषानुवाद-सा है। रामरसायन तुलसीकृत रामायण की भाँति दोहा-चौपाइयों में बनी है। यह कथा-प्रासंगिक ग्रंथ है न कि नैषध आदि की भाँति काव्यच्छटाप्रदर्शक। इसके प्रथम तीन कांड (बाल, अयोध्या, और अरण्य) हमारे पास वर्तमान हैं। ये भारतजीवन प्रेस में छपे हैं। पद्माकरजी की अन्य कविता देखते हुए रामरसायन की कविता को बहुत शिथिल कहना पड़ता है। पद्माकरकृत किसी ग्रंथ की कविता ऐसी शिथिल नहीं है। इससे विदित होता है कि संवत् १८४६ में हिम्मतबहादुर के यहाँ जाने और "हिम्मतबहादुर-विरदावली"-नामक ग्रंथ बनाने के पहले ये महाशय रामरसायन बना-चुके थे। पंडित नकछेदी तिवारी ने लिखा है कि जगद्विनोद बना चुकने के पीछे उन्होंने रामरसायन बनाया है, परंतु जगद्विनोद की काव्यप्रौढ़ता और रामरसायन की शिथिलता देखकर हम यह कथन किसी अंश में प्रामाणिक नहीं मान सकते। कविता का गौरव देखकर हम निश्चय-पूर्वक कह सकते हैं कि राम-रसायन पद्माकर का प्रथम ग्रंथ होगा और प्रायः संवत् १८३७ से १८४२ पर्यंत बना होगा; अन्यथा वह पद्माकरकृत ग्रंथ ही न होगा। उदाहरण नीचे लिखा जाता है—

धन्य जनक तुम दोऊ भाई; पूजत जिनहिं सकल ऋषिराई।
तुम नित लहहु अनंद बधाए; यों कहि दशरथ डेरन आए।

नांदीमुख तहँ कीन्ह सराधू ; पूजि सुप्रोहित गुरु मुनि साधू ।
प्रातहि बहु गोदान कराए ; इक इक लाख सुविप्रन पाए ।

विधिवत चारौ सुतन सों यों गोदान दिवाय ;
द्यावत भे धन द्विजन को दशरथ हिय हरषाय ।

बाँदा में बहुत लोग कहते हैं कि यह ग्रंथ पद्माकरकृत नहीं है, वरन् उनके सोनारिन से उत्पन्न हुए पुत्र मनीराम का बनाया हुआ है । पद्माकरजी हिम्मतबहादुर के संवत् १८४६ वाले एक युद्ध में वर्तमान थे । इसका संवत् पद्माकरजी ने स्वयं वर्णन किया है । हिम्मतबहादुर पहले नवाब बाँदा के यहाँ रहते थे । ये बड़े बहादुर युद्ध-कर्ता थे । पीछे से ये अवध के बादशाह के यहाँ नौकर हो गए और उनकी ओर से बहुत-सी लड़ाइयों में सम्मिलित रहे । ये महाशय बक्सर की लड़ाई में भी लड़े और उसमें घायल हुए थे । पद्माकरजी ने इनके साथ बहुत दिनों तक रहकर "हिम्मतबहादुर-बिरदावली"-नामक एक उत्तम ग्रंथ बनाया । यह ग्रंथ हमने नागरी-प्रचारिणी ग्रंथ-माला द्वारा प्रकाशित देखा है और वह हमारे पुस्तकालय में प्रस्तुत है । इनके साथ पद्माकर संवत् १८९६ तक रहे थे । सो उसी समय तक यह ग्रंथ बना होगा ।

तीखे तेग वाही जे सिलाही चढ़ें घोड़ेन पै ,
स्याही चढ़ै अमित अरिंदन की ऐल पै ;
कहै पदुमाकर निसान चढ़ें हाथिन पै ,
धूरिधार चढ़ै पाकशासन के सैल पै ।
साजि चतुरंग चमू जंग जीतिबे के लिये ,
हिम्मतिबहादुर चढ़त फर फैल पै ;
लाली चढ़ै मुख पै बहाली चढ़ै बाहन पै ,
काली चढ़ै सिंह पै कपाली चढ़ै बैल पै ॥१॥

तुपक तमंचे तीर तोर तरवारन में,
काटि काटि सेना करी सोचित सितारे की;
कहै पदुमाकर महावत के गिरे कूदि,
बिकल किलाए आए गज मतवारे की।
हेरन हसन हरखन सान धन वह,
जूझत पवाँर वीर अरजुन भारे की;
जंगमैंन थाका करयो सूरन मैं साका जिहि,
ताका ब्रह्मलोक को पताका लै पँवारे की॥ २॥

इस ग्रंथ की कविता मनोहर और भाषा प्राकृतमिश्रित व्रजभाषा है। संवत् १८५६ में पद्माकर सितारेजी के महाराज रघुनाथराव उपनाम रवोवा के यहाँ गए। सुना जाता है कि इनकी कविता से प्रसन्न होकर रघुनाथराव ने इन्हें १ हाथी, १ लाख रुपया और १० गाँव दिए। रघुनाथराव के दान की प्रशंसा जगद्विनोद में कई जगह वर्णित है। उनके यहाँ कुछ दिन रहकर पद्माकरजी जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह के यहाँ गए। प्रतापसिंहजी बड़े वीर पुरुष होने के अतिरिक्त कवि भी थे, अतः उन्होंने पद्माकर का सम्मान करके उन्हें अपने यहाँ नौकर रख लिया। संवत् १८६० में महाराजा प्रतापसिंहजी वैकुंठवासी हुए और उनके पुत्र महाराजा जगत्सिंहजी गद्दी पर बैठे। इन्होंने पद्माकर का पूर्ववत मान तथा पद स्थिर रक्खा। इन्हीं महाराज की आज्ञा से पद्माकरजी ने संवत् १८६७ [खोज १६०३] के लगभग अपनी कविता का भूषण जगद्विनोद ग्रंथ निर्माण किया। यह ६२७ छंदों का एक बड़ा ग्रंथ है और इसमें भाव-भेद एवं रस-भेद विस्तार-पूर्वक वर्णित है। भाव-भेद के अंतर्गत नायिका-भेद भी आ जाता है। जगद्विनोद न केवल पद्माकरजी की कविता का वरन् भाषा-साहित्य का श्रृंगार है। इसके छंद पद्माकर के साहित्यगुणों के वर्णन में लिखे

जायँगे। नायिका-भेद के पढ़नेवाले जगद्विनोद और मतिरामजी-कृत रसराज सबसे पहले पढ़ते हैं और इन दोनों ग्रंथों की कविता जैसी मनोहर है वैसे इनके लक्षण वा उदाहरण भी बहुत ही साफ़ हैं। शृंगाररस के ग्रंथों में इन दोनों के बराबर किसी अन्य ग्रंथ का प्रचार नहीं है और भाषा-रसिकों ने जितना आदर इन ग्रंथों को दिया है वह योग्य है।

इसी समय या इसके कुछ ही आगे-पीछे पद्माकरजी ने पद्माभरण-नामक एक अलंकारों का ग्रंथ बनाया, जिसमें केवल दोहा-चौपाइयों द्वारा अलंकारों के लक्षण व उदाहरण दिखलाए गए हैं। इस ग्रंथ में ३४४ छंद हैं। काव्य की उत्तमता में यह साधारण है। उदाहरणार्थ दो-एक छंद नीचे दिए जाते हैं—

घन से तम से तार से अंजन की अनुहार ;
अलि से मावस रैनि से बाला तेरे वार ॥ ३ ॥
निरखि रूप नँदलाल को दृगन रुचै नहिं आन ;
तजि पियूष कोऊ करत कटु औषधि को पान ॥ ४ ॥
तो बचननि की मधुरता रही सुधा महँ छाय ;
चारु चमक नल मीन की नैनन गही बनाय ॥ ५ ॥

संवत् १८७१ में महाराज मानसिंह का विवाह जगत्सिंह की बहन से और महाराजा जगत्सिंह का विवाह कृष्णगढ़ के राजा मानसिंह के यहाँ हुआ। उस समय जगत्सिंहजी के साथ पद्माकरजी भी थे। और उनसे और कविराजा बाँकीदास से छेड़छाड़ हुई थी।

तदनंतर पद्माकरजी उदयपूर के महाराजा भीमसिंह के यहाँ गए। भीमसिंहजी का राजत्वकाल संवत् १८३६ से १८८६ तक रहा है। उनके यहाँ पद्माकरजी संभवतः संवत् १८७३ के लगभग गए होंगे। वहाँ जाकर रानाजी के चित्तविनोदार्थ इन्होंने गुनगौर-मेले का वर्णन

किया। इस मेले को रानाजी बहुत पसंद करते थे। यह मेला उदय पुर में अब तक होता है। रानाजी ने इनका बड़ा सम्मान करके सुवर्णपदक और भूषणादि देकर इन्हें प्रसन्न किया।

कुछ दिनों के पीछे ये ग्वालियर के महाराजा सेंधिया दौलतराव के दरबार में गए। इनका राजत्वकाल संवत् १८५३ से १८८५ तक है। सेंधिया महाराज के यहाँ इन्होंने निम्न-लिखित छंद पढ़ा—

मीनगढ़ बंबई सुमंद मंदराज, बंग,
बंदर को बंद करि बंदर बसावैगो;
कहै पदुमाकर कसकि कासमीर हू को,
पिंजर सो घेरि कै कलिंजर छुड़ावैगो।
बाँका नृप दौलत अलीजा महराज कबूँ,
साजि दल पकरि फिरंगिन दबावैगो;
दिल्ली दहपट्टि पटना हू को झपट्टि करि,
कबहूँक लत्ता कलकत्ता को उड़ावैगो ॥ ६ ॥

सेंधिया महाराज के यहाँ भी पद्माकर का अच्छा मान हुआ। इनके नाम पर पद्माकरजी ने आलीजाप्रकाश-नामक ग्रंथ बनाया है, परंतु सुना जाता है कि इसके आदि में दौलतराव की प्रशंसा के कुछ छंद रखकर मुख्य विषय में कवि ने जगद्विनोद ही को रख-दिया है। यह ग्रंथ अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ, और न हमने इसे देखा है। अतः इसके विषय में निश्चयात्मक कुछ नहीं कह सकते।

कहते हैं कि सेंधिया-दरबार के मुख्य मुसाहब ऊदाजी दक्खिनी के कहने से पद्माकर ने हितोपदेश का भाषानुवाद भी किया था। यह ग्रंथ भी अभी प्रकाशित नहीं हुआ और न हमारे देखने में आया है अतः हम इसके बाबत नहीं कह सकते कि इसकी कविता कैसी है, और इसका पद्माकर द्वारा इस समय निर्मित होना ठीक है या नहीं।

खोज १६०५ में हितोपदेश का पद्माकर-रचित होना लिखा है तथा इनके और ग्रंथ पद्माभरण का पता चलता है।

पंडित नकछेदी तिवारी ने पद्माकर का रघुनाथराव के यहाँ से दौलतराव के यहाँ होकर और वहाँ आलीजाप्रकाश और भाषा-हितोपदेश बनाकर जयपुर जाना लिखा है। परंतु हमको पूर्वोक्त क्रम से उनका सितारा, जयपुर, ग्वालियर जाना यथार्थ मालूम पड़ता है। कारण यह है कि संवत् १८६० में महाराजा प्रतापसिंह स्वर्गवासी हुए थे और तिवारीजी ने लिखा है कि पद्माकर उनके यहाँ नौकर रहे हैं, तो हमें हिसाब से पद्माकर का प्रताप-सिंह के यहाँ कम-से-कम क़रीब दो साल के रहना मानना पड़ेगा। फिर महाराजा रघुनाथराव के यहाँ भी उन्होंने प्रचुर पुरस्कार पाया-था, सो वहां भी वे साल-डेढ़-साल से कम क्या रहे होंगे। तिवारीजी के कथनानुसार पद्माकर संवत् १८५६ में हिम्मतबहादुर के यहाँ से चले। तब संवत् १८६० तक उनको इतना समय कहाँ से मिलता कि वे रघुनाथराव और प्रतापसिंह के यहाँ भी रहते और बीच में महाराज सेंधिया के वहाँ जाकर दो ग्रंथ भी बना आते? महाराजा जगत्सिंह ने संवत् १८६० तक राज्य किया और सेंधिया दौलतराव ने संवत् १८८६ तक। अतः पद्माकर का जयपुर के पीछे ग्वालियर जाना मानने में कोई आपत्ति भी नहीं है। ग्वालि-यर से ये महाशय बुँदी गए और वहाँ से अपने घर बाँदा को वापस आए। सुना जाता है कि अंत में यह कुष्ठ रोग से पीड़ित हो गए थे।

इसी समय रोगमुक्त होने की अभिलाषा से इन्होंने प्रबोधपचासा-नामक ५१ छंदों का एक भक्ति-रस का ग्रंथ बनाया। यह ग्रंथ बहुत अच्छा बना है और पद्माकर के ग्रंथों में पूज्य दृष्टि से देखने योग्य है। इसके छंदो से निर्वेद टपकता है और जान पड़ता है कि दुनिया के देखे हुए और उससे उकताए हुए किसी बुड्ढे ने इसे बनाया है।

स्थानाभाव के कारण इसका केवल एक छंद उद्धृत करते हैं ; परंतु छंद इसके सब दर्शनीय हैं।

मानुष को तन पाय अन्हाय अघाय पियो किन गंग को पानी ;
भाषत क्यों न भयो पदुमाकर रामहिं राम रसायन बानी।
सारँगपानि के पाँयन को तजि कै मनरे ! कत होत गुमानी ;
मोटी मुचंड महा-मतवारिनि मूड़ पै मीचु फिरै मड़रानी ॥ ७ ॥

रोगमुक्त होने पर पद्माकरजी गंगा-सेवनार्थ कानपुर चले गए और वहीं सुखपूर्वक अपनी आयु के शेष दिन उन्होंने प्रायः ७ साल तक व्यतीत किए। इसी समय आपने गंगालहरी-नामक ५६ छंदों का एक उत्तम ग्रंथ बनाया। इसके भी सब छंद बड़े चित्ताकर्षक हैं। उदाहरणार्थ १ छंद नीचे लिखते हैं।

जैसे तैं न मोकों कहूँ नेहहू डेरात हुतो,
तैसें अब तोसों हौं हूँ नेकहू न डरिहौं ;
कहै पदुमाकर प्रचंड जो परैगो तौ,
उमंड करि तोसों भुजदंड ठोकि लरिहौं।
चलो चलु चलो चलु विचलु न बीचही ते,
कीच बीच नीच तो कुटुंबहि कचरिहौं ;
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहिं,
गंगा की कछार मैं पछारि छार करिहौं ॥ ८ ॥

पद्माकरजी ने अपने पापों को अपार कहा हैं। हमने बाँदा में जाँच करने से केवल इतना सुना था कि इन्होंने एक सुनारिन को घर बिठला लिया था। इस एक पातक को कोई अपार नहीं कह-सकता। जान पड़ता है कि रोगी हो जाने के कारण पद्माकरजी अपने को उस जन्म का पापी समझते थे, इसी कारण उन्होंने ऐसे दीन वाक्य कहे हैं। इनका एक ग्रंथ ईश्वरपचीसी [खोज १९०१] में लिखा है।

अन्य कवियों की भाँति पद्माकरजी ने प्रधानतः शृंगार-कविता न करके वीर और भक्ति पक्ष का काव्य बहुत अधिक किया है। इनके सात ग्रंथों में केवल जगद्विनोद में शृंगार काव्य है, परंतु जनता की रुचि इसी ओर होने से इनका केवल यही ग्रंथ परम प्रसिद्ध हुआ। इसी कारण स्यात् कवियों का रुझान शृंगार की तरफ़ विशेषरूप से देख पड़ता है।

पद्माकरजी ने संवत् १८९० में गंगाजी के किनारे कानपुर में शरीर-त्याग किया। इन्होंने लाखों रुपए पैदा किए और ये सदैव बड़े-आदमियों की भाँति महाराजाओं से सम्मान पाकर रहते रहे और अंत में पुत्र-पौत्रों से संपन्न हो, अस्सी वर्ष की वृद्धावस्था में श्रीगंगाजी के किनारे देवताओं की भाँति यह संसार छोड़कर देवलोक की यात्रा कर गए। इनके लिये कविता कामधेनु हो गई। इस प्रकार सुखपूर्वक बहुत कम कवियों का समय बीता। अपने विषय में पद्माकर ने केवल एक निम्न-लिखित छंद बनाया है, जिससे इनकी महत्व-पूर्ण जीवनी का पूरा परिचय मिलता है।

भट्ट तिलँगाने को बुँदेल खंड बासी नृप,
सुजस प्रकासी पदुमाकर सुनामा हौं;
जोरत कबित्त छंद छप्पय अनेक भाँति,
संसकृत प्राकृत पढ़ो जु गुनग्रामा हौं।
हय रथ पालकी गयंद गृह ग्राम चारु,
आखर लगाय लेत लाखन की सामा हौं;
मेरे जान मेरे तुम कान्ह हौ जगतसिंह,
तेरे जान तेरो वह विप्र मैं सु दामा हौं॥ १॥

पद्माकर के मिहीलाल और अंबाप्रसाद (उपनाम अंबुज)-नामक दो पुत्र थे। गदाधर कवि इनके पौत्र थे। इन्होंने छंद मंजरी और अलंकारचंद्रोदय-नामक दो ग्रंथ बनाए थे। पद्माकर के

वंशधर जयपुर, बाँदा, दतिया और छत्रपुर आदि स्थानों में रहते हैं।

इनके ग्रंथों का वर्णन हम ऊपर कर चुके हैं। अब सूक्ष्मतया इनकी कविता के गुण-दोष नीचे लिखे जाते हैं।

इनकी कविता का सर्वप्रधान गुण अनुप्रास है। भाषा में किसी कवि ने यमक और अन्य अनुप्रासों का इतना व्यवहार नहीं किया। इन्होंने अनुप्रास इतना अधिक रक्खा है कि कहीं-कहीं वह बुरा मालूम होता है। यथा—

मल्लिकान मंजुल मलिंद मतवारे मिले,
मंद-मंद मारुत मुहीम मनसा की है;
कहै पदुमाकर त्यौं नादत नदीन नित,
नागरि नवेलिन की नजरि निसा की है।
दौरत दरेरे देत दादुर सु दूदैं दीह,
दामिनी दमंकनि दिसान में दसा की है;
बद्दलनि बूँदन विलोके बगुलान बाग,
बंगलन बेलिन बहार बरखा की है ॥१०॥

अन्य सुकवियों की भाँति इनकी भाषा बहुत मधुर और कोमल है। ऐसी उत्तम भाषा लिखने में बहुत कविजन समर्थ नहीं हुए हैं। यथा—

ए ब्रजचंद चलौ किन वा ब्रज लूकैं बसंत की ऊकन लागीं,
त्यों पद्माकर पेखौ पलासन पावक-सी मनौं फूलन लागीं।
वै ब्रजवारी बिचारी बधू बनि बावरी लौ हिए हूकन लागीं,
कारी कुरूप कसाइनैं ऐसी कुहू कुहू क्वैलिया कूकन लागीं ॥११॥

पद्माकर ने कहीं-कहीं लोकोक्तियाँ भी बहुत अच्छी कही हैं। यथा—

सोने मैं सुगंध औ सुगंध मैं सुन्यो न सोनो,
सोनो औ सुगंध तौ मैं दोनो देखियत हैं;

साँचहू ताको न होत भलो जो
कह, नहिं मानत चारि जने की।

मतिरामजी की भाँति पद्माकर ने भी प्रायः हर उदाहरण में बड़े छंदों के साथ एक-एक दोहा भी कहा है जो अक्सर उत्तम ढंग का होता है। यथा—

कछु गजपति के आहटनि छिन-छिन छीजत सेर ;
बिधु-बिकास बिकसत कमल कछू दिनन के फेर ॥ १२ ॥
मदन लाजबस तिय नयन देखत बनत इकंत ;
इँचे खिंचे इत-उत फिरत ज्यों दुनारि के कंत ॥ १३ ॥
कनक-लता श्रीफल फरी रही बिजन बन फूलि ;
ताहि तजत क्यों बावरे अरे मधुप मति भूलि ॥ १४ ॥

पद्माकर की कविता में बढ़िया छंद बहुतायत से पाए जाते हैं। उदाहरण देना हम व्यर्थ समझते हैं, क्योंकि ऐसे छंद इनके किसी अच्छे ग्रंथ में हर जगह मिल सकते हैं और ऊपर के उद्धृत छंदों में भी आ चुके हैं।

देवजी की भाँति पद्माकर ने भी कहीं-कहीं ऐसा सच्चा वर्णन किया है कि मानो तसवीर खींच दी है। यथा—

आरस सों आरत सम्हारत न सीस-पट,
गजब गुजारत गरीबन की धार पर ;
कहै पदुमाकर सुरा सों सरसार तैसे,
बिथुरि बिराजैं बार हीरन के हार पर।
छाजत छबीले छिति छहरि छरा के छोर,
भोर उठि आई केलि-मंदिर दुआर पर ;
एक पद भीतर औ एक देहरी पै धरे,
एक करकंज एक कर है किवार पर ॥ १५ ॥

इससे विशेष इनकी कविता जो पाठक देखना चाहें उनको

चाहिए कि पद्माकर-रचित जगद्विनोद, गंगालहरी और प्रबोध पचासा देखें।

बहुतेरे कवियों की दृष्टि में इनकी कविता बिलकुल निंद्य है, क्योंकि उनके मतानुसार पद-लालित्य के फेर में पड़कर इन्होंने निरर्थक अथवा शिथिल अर्थवाले शब्द बहुत-से रख दिए हैं और इनके विशेषण बहुत स्थानों पर अप्रयुक्त एवं अशुद्ध हैं। इधर भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र तक इनकी कविता के प्रेमी थे और कर्पूरमंजरी में उन्होंने मुक्त-कंठ से इनका भारी कवि होना स्वीकार किया है। ये महाशय अनुपयुक्त विशेषण एवं पद कहीं-कहीं अवश्य लिख जाते थे, परंतु इस बहुतायत से नहीं जैसा कि इनके तीव्र समालोचक बतलाते हैं। इस एक छोटे-से दूषण से इनकी प्रशस्त कविता दूषित नहीं ठहर सकती। ये महाशय ऐसे ऊँचे दरजे के सुकवि भी नहीं हैं कि हम इनकी गणना परमोत्तम कवियों में कर सकें। इन सब बातों पर ध्यान देकर हमने इन्हें तृतीय श्रेणी का कवि माना है, जिसके नायक यही हैं।

नाम—(१२३४) महाराज।

कविताकाल—१८७६ के पूर्व।

विवरण—तोष कवि की श्रेणी।

इनका कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया, पर इनकी कविता ऐसी मनोहर है कि इनकी गणना सुकवियों में की जाती है।

उदाहरण—

बात चली चलिबे की जहीं फिरि बात सोहानी न गात सोहानो;
भूषन साजि सकै कहि को महराज गयो छुटि लाज को बानो।
यों कर मीड़ति है बनिता सुनि पीतम को परभात पयानो;
आपने जीवन के लखि अंतहि आयु की रेख मिटावति मानो।

नाम—(१२३५) रामसहायदास।

इस कविचूड़ामणि की बनाई हुई एक सतसई छपी है, जिसका नाम इनके नाम पर "रामसतसई" था, परंतु उसमें उसके विषय पर भ्रम हो जाता था। अतः भारतजीवन प्रेस के स्वामी ने इसका नाम पलटकर "शृंगारसतसई" रख दिया। यह ग्रंथ संवत् १८९२ का लिखा प्रकाशक को मिला था, सो इस कवि का समय इस संवत् के प्रथम ठहरता है। इनका नाम सूदन कवि की नामावली में नहीं है, जिससे अनुमान होता है कि ये सूदन के पीछे के हैं। अपने विषय में इन्होंने इतना ही लिखा है कि इनके पिता का नाम भवानीदास है। खोज में इनका कविताकाल १८७३ दिया है और इनके बनाए चार और ग्रंथ वृत्ततरंगिनी सतसई [द्वि० त्रै० रि०], ककहरा रामसप्तसतिका [खोज १९०४] और वाणीभूषण भी लिखे हैं।

इस कवि ने अपनी कविता की प्रणाली बिलकुल बिहारीलाल से मिला दी है और बिहारीसतसई से शृंगारसतसई इतनी मिल गई है कि यदि बिहारी के दोहे सब लोगों को इतना याद न होते और ये चौदहौ सौ दोहे मिलाकर रख दिए जाते, तो बिहारी के सात सौ दोहे छाँटने में दो सौ दोहे तक इस कवि के भी छूँट आते। बिहारी की समता करने में और बहुत कवि इतना कृतकार्य नहीं हुए हैं। बिहारी के केवल उत्तमोत्तम दोहे इस कवि के आगे निकल जाते हैं, परंतु उनके शेष दोहे इनके दोहों से बढ़कर नहीं हैं। रामसहाय के दोहों की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। इसमें भाषा, यमक, अनुप्रासादि सब बिहारी के समान हैं। इस कवि ने अपनी सूक्ष्मदर्शिता का अच्छा परिचय दिया है। सुकुमारता का भी इन्होंने अच्छा वर्णन किया है। उत्तम छंदों की मात्रा इस ग्रंथ में बहुत अधिक है। इन ७२७ दोहों में इस कवि ने कोई क्रम नहीं रक्खा है और इन सबमें शृंगार-रस की स्फुट कविता है। परंतु ढूँढ़ने से इसमें प्रायः सभी काव्यांगों के उदाहरण मिल जायँगे।

सब प्रकार से विहारी के पैरों पर पैर रखकर भी इस कवि ने विहारी की चोरी नहीं की है, केवल विहारी की छाया कुछ छंदों में आ गई है। यथा—

सतरौहैं मुख रुख किए कहे रुखौहैं बैन;
रैन जगे के नैन ये सने सनेह दुरै। न ॥ १ ॥
खंजन कंज न सरि लहैं वलि अलि को न बखानि;
ए नीकी अँखियानि ते ये नीकी अँखियानि ॥ २ ॥
गुलुफनि लौं ज्यों-त्यों गयो करि-करि साहस जोर;
फिर न फिरयो मुरवानि चपि चित अति खात मरोर ॥ ३ ॥
पेखि चंदचूड़हि अली रही भली बिधि सेइ;
खिन-खिन खोंटति नखन छद नखनहुँ सूखन देइ॥ ४ ॥
सीस झरोखे डारि कै झाँकी घूँघुट टारि;
कैवर-सी कसकै हिए। बाँकी चितवनि नारि ॥ ५ ॥
वेलि कमान प्रसून सर गहि कमनैत बसंत;
मारि-मारि बिरहीन के प्रान करैरी अंत ॥ ६ ॥
मनरंजन तव नाम को कहत निरंजन लोग-;
जदपि अधर अंजन लगे तदपि न निंदन जोग ॥ ७ ॥
सखि सँग जाति हुती सुती भटभेरो भो जानि;
सतरौहीं भौंहन करी बतरौहीं अँखियानि ॥ ८ ॥
भौंह उचै, अँखिया नचै, चाहि कुचै, सकुचाय;
दरपन मैं मुख लखि खरी दरप भरी मुसुकाय ॥ ९ ॥
ल्याई लाल निहारिए यह सुकुमारि बिभाति;
उचके कुच के भार ते लचकि-लचकि कटि जाति ॥१०॥

हम इस कवि को दासजी की श्रेणी में रखते हैं।

(१२३६) ग्वाल कवि

ये महाशय वंदीजन सेवाराम के पुत्र थे। इन्होंने यमुनालहरी

में उसके बनने का समय एवं अपने कुल, ठिकाने आदि का हाल सूक्ष्मतया लिखा है। उसीसे विदित होता है कि ये मथुरा निवासी थे और संवत् १८७९ में इन्होंने यमुनालहरी बनाई। ठाकुर शिवसिंहजी ने इनके विषय में यह लिखा है—

"ये कवि साहित्य में बड़े चतुर हो गए हैं। इनके संगृहीत दो ग्रंथ बहुत बड़े-बड़े हमारे पास हैं, और नखशिख, गोपीपचीसी, यमुनालहरी इत्यादि छोटे-छोटे ग्रंथ, और साहित्यदूषण, साहित्य-दर्पण, भक्तिभावन, शृंगारदोहा, शृंगारकवित्त, रसरंग, अलंकार, हम्मीरहठ बहुत सुंदर ग्रंथ हैं।"

सो उन्होंने इनके पाँच ऐसे ग्रंथों के नाम लिखे हैं, जो उनके पास न थे और अन्य पाँच ग्रंथ उनके पास थे, जिनमें से दो संग्रह हैं। हमारे पास ग्वाल कवि के यमुनालहरी और कविहृदय-विनोद-नामक ग्रंथ हैं, और इनके रचित रसरंग (१९०४) और नखशिख भी हमने देखे हैं। यमुनालहरी में १०८ कवित्त और ९ दोहे हैं। कविहृदयविनोद वास्तव में कोई स्वच्छंद ग्रंथ नहीं जान पड़ता, वरन् वह ग्वाल-रचित कविता का संग्रह-मात्र है। इसमें २११ छंद हैं और इसका उत्तर भाग प्रशंसनीय है। गोपीपच्चीसी, पट्ऋतु इत्यादि सब इसी के अंतर्गत हैं। इसकी रचना यमुनालहरी के पीछे की जान पड़ती है। इसके अतिरिक्त इनका एक नखशिख भी हमने ठाकुर शिवसिंह सेंगर के पुस्तकालय में देखा है, जो संवत् १८८४ का रचित है। इनका ग्रंथ रसिकानंद खोज १९०० की रिपोर्ट में लिखा है, और राधामाधवमिलन तथा राधाष्टक-नामक दो ग्रंथ इनके और कहे जाते हैं। खोज १९०९ में हम्मीरहठ का रचनाकाल १८८१ तथा भक्तिभावन का १९१९ लिखा है। चतुर्थ त्रैवार्षिक खोज में अलंकारभ्रमभंजन, वंसीवीसा तथा कविदर्पण भी प्राप्त हुए हैं।

ग्वाल ने व्रजभाषा में कविता की है और वह प्रशंसनीय भी है। यमुना की प्रशंसा में इन्होंने नवरस और षट्ऋतु भी दिखाए हैं। इनको अनुप्रास और यमक बहुत पसंद थे और इनकी कविता में उनका प्रयोग भी बहुत हुआ है।

संबत निधि ऋषि सिद्धि ससि कातिक मास सुजान ;
पूरनमासी परम प्रिय राधा हरि को ध्यान ॥ १ ॥

ख्याल जमुना के लखि नाके भए चित्रगुप्त,
बैन करुना के बोलि मेरी मति ख्वै गई ;
कौन गहै कर मैं कलम कौन काम करै,
रोस की दवाहृति सों रोसनाई ध्वै गई।
ग्वाल कबि काहे ते न कान दै जमेस सुनौ,
नौकरी चुकाय कहाँ तेरी आँखि स्वै गई ;
लेखो भयो ड्योढ़ो रोजनामा को सरेखा भयो,
खाता भयो खतम फरद रद ह्वै गई ॥ २ ॥

सोहत सजीले सित असित सुरंग अंग,
जीन सुचि अंजन अनूप रुचि हेरे हैं ;
सील भरे लसत असील गुन साल दै कै,
लाज की लगाम काम कारीगर फेरे हैं।
घूँघुट फरस ताने फिरत फबित फूले,
ग्वाल कबि लोक अवलोकि भए चेरे हैं ;
मोर वारे मन के त्यों पन के मरोर वारे,
त्योर वारे तरुनी तुरंग दृग तेरे हैं ॥ ३ ॥

प्रीति कुलीनन सों निबहै अकुलीन की प्रीति मैं अंत उदासी ;
खेलन खेल गयो अबहीं हमैं जोग पठाय बन्यो अबिनासी।
त्यों कबि ग्वाल बिरंचि बिचारिकै जोरी मिलाय दई अतिखासी ;
जैसोई नंद को पालकु कान्ह सु तैसियै कूबरी कंस की दासी ॥४॥

बाज गजराज साज चित्ते फौज कामदार,
राखिबो सहज जातें राज उपचार होय ;
भाँड़ बहुरूपिया सरूपिया नचैयन कों,
कंचनी कलावत को आदर अपार होय।
ग्वाल कवि कविन कों राखिबो सहज है न,
हमैं वही राखै जाके लेख रेख चार होय ;
गुन को बिचार होय अति रिझवार होय,
उदित उदार होय सुजस लिवार होय ॥ ५ ॥
छायो शोर रहत हमेश कलकत्ता लगि,
दिल्ली के चकत्ता पर कत्ता चले बिनके ;
मथुरा पुरी के नेक आतुरी करी है जहाँ,
घन की घटा से दस उन्नत सुजन के।
ग्वाल कबि कहे नर नाहन के नाह धीर,
पूरन प्रतापसिंह तो प्रताप दिन के ;
कावली जे वैसे कावली से फिरे भाजे पर,
तेरी कावली ने कावलीने करे तिनके ॥ ६ ॥

इनकी गणना पद्माकर कवि की श्रेणी में है।

नाम—(१२३७) कान्ह प्राचीन।

जन्म-काल—१८५२।

कविताकाल—१८८०।

विवरण—इनका काव्य सरस है। इनकी गणना तोष कवि की श्रेणी में है।

उदाहरण—

कानन लौं अँखियाँ ये तिहारी हथेरी हमारी कहाँ लग फैलिहैं ;
मुंदे हू पै तुम देखती हौ यह कोर तुम्हारी कहाँ लौं सकेलिहैं।

कान्हरहू को सुभाउ यहै उनको हम हाथन ही पर झेलिहैं ;
राधेजी मानौ बुरो कै भलो अँखिमूँदनो संग तिहारे न खेलिहैं ।

नाम—(१२३७/१) खड्ग—ग्वाल कवि के शिष्य फुटकर रचना ।

(१२३८) चंद्रशेखर वाजपेयी

ये महाशय पौष शुक्ल १० संवत् १८५५ में मुअज़्ज़माबाद ज़िला फ़तेहपुर में उत्पन्न हुए थे । इनके पिता का नाम मनीराम था । वह भी अच्छे कवि थे । शेखरजी कविता में असनी-निवासी महापात्र करनेश कवि के शिष्य थे । २२ वर्ष की अवस्था में ये महाशय दरभंगा की ओर गए और ७ वर्ष तक उस प्रांत के राजाओं के यहाँ रहे । उसके पीछे यह जोधपूर-नरेश महाराजा मानसिंह के यहाँ ६ वर्ष तक रहे और १००) मासिक पाते रहे । फिर ये पटियाला-नरेश महाराजा कर्मसिंह के यहाँ गए और यावज्जीवन प्रतिष्ठा-पूर्वक इनके तथा इनके पुत्र महाराजा नरेंद्रसिंह के यहाँ रहते रहे । इनका शरीर-पात संवत् १९३२ में हुआ । इनके पुत्र गौरीशंकरजी अब तक पटियाले में रहते हैं और अच्छे कवि हैं । उन्हीं के आधार पर यह जीवनी छापी गई है ।

चंद्रशेखरजी ने हम्मीरहठ, विवेकविलास, रसिकविनोद, हरिभक्तिविलास, नखशिख, वृंदावनशतक, गुहपंचाशिका, ज्योतिष का ताजक, और माधवीवसंत-नामक नौ ग्रंथ बनाए । खोज [१९०३] में हमीरहठ [१९०२], तथा रसिकविनोद [१९०३] में रचना कहा है । और रसिकविनोद, नखशिख और हम्मीरहठ हमने देखे हैं । हम्मीरहठ पर हमने सन् १९०० की सरस्वती में समालोचना प्रकाशित की थी । उसमें हमने इनकी कविता के गुण-दोष यथाशक्ति दिखाए हैं । हम्मीरहठ में प्रधानतया वीर-काव्य है । जो गुण इनकी रचना के वीर-काव्य में प्रकट हुए थे वह सब शृंगार-काव्य

में भी वर्तमान हैं; और क्या वीर क्या शृंगार सभी विषयों में इनके वर्णन अत्यंत मनोहर हैं। इनको प्रताप वर्णन करने में बड़ी पटुता प्राप्त थी और इनके ऐसे वर्णन देखते ही बन आते हैं।

उदाहरण—

उदित उदंड मारतंड सो प्रताप पुंज,
देखि-देखि दुवन दुनी के दहियत है;
सहज सिकार धूम धौंसा की धुकार धाक,
देस-देस रिपु को न लेस लहियत है।
शेषर सराहै श्री नरेंद्रसिंह महाराज,
रावरी सभा मैं बैन साँचे कहियत है;
उड़ि गए रेजा लौं अरीन के करेजा अब,
कौन पै मजेजदार नेजा गहियत है॥ १॥

आलम नेवाज सिरताज पातसाहन के!
गाज ते दराज कोप नजरि तिहारी है;
जाके डर डिगत अडोल गढ़धारी,
डगमगत पहाड़ औ डुलत महि सारी है।
रंक जैसो रहत ससंकित सुरेस भयो,
देस देसपति मैं अतंक अति भारी है;
भारी गढ़धारी सदा जंग की तयारी धाक,
मानै ना तिहारी या हमीर हठ धारी है॥ २॥

इनकी शृंगार-कविता से उदाहरणार्थ दो छंद यहाँ लिखे जाते हैं—

है ब्रज बालन मैं बसिबो बिनु कारज बैर करैं कुल बामैं;
हौं गुरु लोगन माँझ गनी कुलकानि घनी बरतौं प्रतिजामैं।
हौ तुम प्रान हितू सिगरी कवि शेषर देहु सिखावन यामैं;
गैल मैं गोपद नीर भरो सखि! चौथि को चंद परयो लखि तामैं॥३॥

थोरी-थोरी वैसवारी नवल किसोरी सबै,
भोरी-भोरी बातनि बिहँसि मुख मोरतीं;
बसन बिभूषन बिराजत बिमल बर,
मदन मरोरनि तरकि तन तोरतीं।
प्यारे पातसाह के परम अनुराग रँगी,
चाय भरी चायल चपल दृग जोरतीं;
काम अबला-सी कलाधर की कला-सी चारु,
चंपकलता-सी चपला-सी चित चोरतीं ॥ ४ ॥

उपर्युक्त उदाहरणों से यह भी विदित है कि शेखरजी पदमैत्री का अच्छा व्यवहार कर सकते थे। भारी उद्दंडता, प्राबल्य और गौरव इनकी कविता के प्रधान गुण हैं। भाषा-साहित्य में बैताल, लाल, भूषण, हरिकेशादि कुछ ही कवियों को छोड़कर किसी कवि में ऐसी उमंगोत्पादक शक्ति नहीं पाई जाती।

उवै भानु पच्छिम प्रतच्छ दिन चंद प्रकासै;
उलटि गंग बरु बहै काम रति प्रीति बिनासै।
तजै गौरि अरधंग अचल ध्रुव आसन चल्लै;
अचल पौन बरु होय मेरु मंदर गिरि हल्लै।
सुरतरु सुखाय लोमस मरै मीर संक सब परिहरौ;
मुख बचन बीर हम्मीर को बोल न यह तबहू टरौ ॥ ५ ॥

शेखरजी में विविध विषयों के यथोचित वर्णन करने की शक्ति बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। अलाउद्दीन की मृगया, मोल्हन और हम्मीर का वादानुवाद, शाही सेना की रणथंभौर पर आक्रमण हेतु तैयारी, और हम्मीरदेव का जौहर पर शोक, इन वर्णनों में कवि की पटुता प्रकट होती है। शाही सेना के भगाने में ही कैसा आनंद किया है!

भागे मीरजादे पीरजादे औ अमीरजादे,
भागे खानजादे प्रान मरत बचाय कै;

भाजि गज बाजी रथ पथ न सम्हारैं परैं,
गोलन पै गोल सूर सहमि सकाय कै।
भाग्यो सुलतान जान बचत न जानि बेगि,
बलित बितुंड पै बिराजि बिलखाय कै;
जैसे लगै जंगल में ग्रीषम की आगि चलैं,
भागि मृग महिष बराह बिललाय कै॥ ६॥

हाथियों का भी वर्णन इन्होंने अच्छा किया है और कोट उड़ाने में शब्दों ही द्वारा मानो आसमान तक रज भर दी।

ये महाशय मुख्य वर्णन पर पाठक को शीघ्र पहुँचा देते हैं और व्यर्थ वर्णनों से कथा को नहीं बढ़ाते। कहीं-कहीं ये कुछ विषय प्रच्छन्न रीति पर वर्णन कर जाते हैं और उनका पूर्ण तात्पर्य समझना मर्मज्ञ पाठकों पर छोड़ देते हैं। घनघोर युद्ध के समय कोट के उच्च शिखर पर हम्मीरदेव के सम्मुख नृत्य कराने से कवि का शत्रु के चिढ़ाने से प्रयोजन है। इनको युद्ध का कुछ स्वाभाविक अनुभव-सा था। 'भटभेरा नेरा रहा भरि गोली की मार' में युद्धकर्ताओं के ही शब्द भी आए हैं, और इसी भाँति 'धरै मुच्छ पर हाथ बहुरि निरखै समसेरै' में एक शूर का फ़ोटो खींच दिया गया है। शेखरजी युद्ध की तैयारी में वीर-रस प्रधान रखते हैं और समराग्नि भभक उठने पर रौद्र और भयानक रसों का व्यवहार करने लगते हैं। ये महाशय नायकों के शीलगुण निभाने में कृतकार्य नहीं हुए हैं। नर्तकी के मारे जाने पर इन्होंने हम्मीरदेव को सशंकित कराकर उनसे यहाँ तक कहला दिया कि 'हठ करि मंड्यो युद्ध वृथा ही'। यह उचित नहीं हुआ, क्योंकि एक प्रकार से उनका हठ छूट गया। सब बातें विचारकर हम शेखरजी को दास की श्रेणी में रक्खेंगे।

(१२३६) प्रेमसखी ने १३६ सवैया तथा घनाक्षरियों में 'श्रीराम तथा सीताजी का शिषनख' कहा है। यह ग्रंथ छत्तरपूर में

है। इनकी कविता अच्छी है। हम इन्हें तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं। इनका कविताकाल जाँच से १८८० जान पड़ा।

कलपलता के सिद्धिदायक कलपतरु,
काम धेनु कामना के पूरन करन हैं;
तीनि लोक चाहत कृपा-कटाक्ष कमला की,
कमला सदाई जाको सेवत सरन हैं।
चिंतामनि चिंता के हरन हारे प्रेमसखी,
तीरथ जनक बर बानिक बरन हैं;
नख विधु-पूषन समन सब दूषन ये,
रघुवंस भूषन के राजत चरन हैं।

पद, कवित्त [खोज १६००] और होरी [प्र० त्रै० रि०]-नामक इनके तीन और ग्रंथ मिले हैं।

(१२४०) रसजान-कृत भक्तिरत्नावलीभाषा (१८८०) ग्रंथ छोटे साइज़ के ६० पृष्ठ का है। हमने इसे छतरपूर दरबार में देखा। काव्य-चातुरी इसकी साधारण श्रेणी की है।

(१२४१) प्रताप साहि

ये महाशय बंदीजन रतनेस के पुत्र थे और चरखारी के महाराज विक्रम साहि के यहाँ रहते थे। इन्होंने संवत् १८८२ में व्यंग्यार्थ-कौमुदी [खोज १६०३] और १८८६ में काव्यविलास [खोज १६०५] बनाया ; जैसा कि इन ग्रंथों से ही विदित होता है। यद्यपि वे महाराज इस समय के क़रीब सौ वर्ष प्रथम स्वर्गवासी हो चुके थे, पर सरोजकार ने भ्रमवश इनका पन्ना-नरेश महाराजा छत्रसाल के यहाँ होना लिख दिया है। इसी भ्रम में पड़कर खोजवालों ने प्रताप साहि और प्रताप-नामक दो कवि माने हैं और इन्हीं प्रताप साहि के ग्रंथों में व्यंग्यार्थकौमुदी प्रताप के नाम लिख दी और शेष ग्रंथ प्रताप साहि के नाम। वास्तव में प्रताप साहि एक ही कवि था, और

सब ग्रंथ इसी कविरत्न के बनाए हैं। महाराज छत्रसाल के यहाँ किसी प्रताप कवि का होना पाया नहीं जाता।

इनके बनाए हुए तीन ग्रंथ हमारे पास वर्तमान हैं, अर्थात् रामचंद्र का शिखनख, व्यंग्यार्थकौमुदी और काव्यविलास, जिनमें से प्रथम और तृतीय हस्तलिखित हैं। शिवसिंहसरोज में इनके काव्यविलास एवं व्यंग्यार्थकौमुदी का नाम लिखा है और यह कहा गया है कि इन्होंने भाषाभूषण और बलभद्र के शिखनख का तिलक [प्र० त्रै० रि०] भी लिखा है। हमने इनके बनाए हुए तिलक नहीं देखे हैं। शिवसिंहसरोज में लिखा है कि ये दोनों तिलक प्रताप ने विक्रम साहि की आज्ञा के अनुसार बनाए। इनके शिखनख में केवल पच्चीस छंद हैं, जिनमें रामचंद्र की शोभा का वर्णन है। इस ग्रंथ में संवत् नहीं दिया हुआ है, परंतु काव्य-प्रौढ़ता के देखते यह इनका प्रथम ग्रंथ समझ पड़ता है। खोज १९०५ में नखशिख का रचनाकाल १८८६ लिखा है। तो भी इनके प्रायः सब छंद मनोहर हैं। उदाहरणार्थं केवल एक छंद लिखते हैं—।

डोरे रतनारे बिच कारे और सारे सेत,
जिनके निहारे ते कुरंगगन भूले हैं;
आनँद उमाहन सुकीधौं विधु मंडल मैं,
सरद के खंजन सुभाय अनुकूले हैं।
जनकसुता के मुखचंद के चकोर किधौं,
बरने न जात अति उपमा अतूले हैं;
राजैं रामलोचन मनोज अति ओज भरे,
सोभा के सरोवर सरोज जुग फूले हैं॥ १॥

व्यंग्यार्थकौमुदी संवत् १८८२ में बनी थी। इसमें १२० छंदों द्वारा केवल व्यंग्यों का वर्णन हुआ है। यह बहुत सराहनीय ग्रंथ है और इसे भाषा-साहित्य का रत्न समझना चाहिए। इसके उदाहरण आगे इनकी कविता में दिए जायँगे।

काव्यविलास संवत् १८८६ में बनाया गया था। यह ८२ पृष्ठों का एक विलक्षण ग्रंथ है। इसमें काव्यलक्षण, पदार्थनिर्णय (जिसमें तात्पर्य भी कहा गया है), ध्वनि, रस, भाव, रसवदादि, गुण, दोष और दोष-शांति का थोड़े में बहुत अच्छा वर्णन हुआ है। इनके ग्रंथों में यह सर्वोत्तम है। इनके बनाए नीचे लिखे ग्रंथ खोज [प्र० त्रै० रि०] में मिले हैं—

जयसिंहप्रकाश (१८५२), शृंगारमंजरी (१८८६), शृंगारशिरोमणि (१८६४), अलंकारचिंतामणि (१८६४), काव्यविनोद (१८६६), रस-राज टीका (१८६६) तथा रत्नचंद्रिका (सतसई की टीका) (१८६६)।

प्रताप के सब गुणों में प्रधान इनकी भाषा-प्रौढ़ता है। इस कवि के स्वरूप में मानो डेढ़ सौ वर्ष पीछे स्वयं मतिराम ने अवतार लिया था। प्रताप की भाषा बहुत ही प्रशंसनीय है। ऐसी मधुर व्रजभाषा बहुत कम सुकवि भी लिखने में समर्थ हुए हैं। प्रताप ने मिलित वर्ण बहुत कम लिखे हैं। इनकी और मतिराम की भाषा में केवल इतना अंतर है कि इन्होंने अनुप्रास का उनसे कुछ अधिक आदर किया है। यथा—

तड़पै तड़िता चहुँ ओरन ते छिति छाई समीरन की लहरैं ;
मदमाते महा गिरिशृंगन पै गन मंजु मयूरन के कहरैं।
इनकी करनी बरनी न परै मगरूर गुमानन सों गहरैं ;
घन ये नभ मंडल मैं छहरैं घहरैं कहूँ जाय कहूँ ठहरैं ॥ २ ॥

इनकी कविता में अच्छे छंद बहुतायत से पाए जाते हैं, वरन् यों कहें कि बुरे छंद बहुत ढूँढ़ने से कहीं मिल सकते हैं।

पूजतीं और सबै बनिता जिनके मन मैं अति प्रीति सुहाति है ;
कौन की सीख धरी मन मैं चलि कै बलि काहे नजीक न जाति है।
साइति या बरसाइति की बर साइति ऐसी न और लखाति है ;
कौन सुभाव री तेरो परो बर पूजत काहे हिये सकुचाति है ॥ ३ ॥

प्रताप ने प्राकृतिक वर्णन भी अच्छे किए हैं—

चंचला चपल चारु चमकत चारौं ओर,
झूमि-झूमि धुरवा धरनि परसत है ;
सीतल समीर लगै दुखद वियोगिन,
सँजोगिन समाज सुख साज सरसत है।
कहै परताप अति निबिड़ अँध्यार माहँ,
मारग चलत नहीं नेकु दरसत है ;
झुमड़ि झलानि चहुँ कोद ते उमड़ि आजु,
धाराधर धारन अपार बरसत है॥ ४॥

इस कवि में उद्दंडता भी खूब पाई जाती है। यथा—

महाराज रामराज रावरो सजत दल,
होत मुख अमल अनिंदित महेस के ;
सेवैं यों दरीन केते गव्वर गनीम रहैं,
पन्नग पताल जिमि डरन खगेस के।
कहै परताप धरा धसत त्रसत,
कसमसत कमठ पीठि कठिन कलेस के ;
कहरत कोल, हहरत हैं दिगीस दस,
लहरत सिंधु, थहरत फन सेस के॥ ५॥

प्रताप को रामचंद्र का इष्ट-सा था ; सो इन्होंने एक तो उनका नखशिख लिखा और फिर जहाँ-तहाँ उनकी प्रशंसा के बहुत-से छंद बनाए। इनकी कविता हर प्रकार से प्रशंसनीय है। हम इन्हें दास कवि की श्रेणी में रखते हैं।

(१२४२) श्रीधर (ठाकुर सुब्बासिंह)

ये महाशय ओयलवाले राजा बख़्तसिंह के लघु भ्राता बैस ठाकुर ज़िला खीरी के निवासी थे। इनके कोई संतति न थी। आपने संवत् १८८४ वि० में विद्वन्मोदतरंगिणी-नामक ग्रंथ संगृहीत

किया। [तृ० त्रै० रि०] में इनका संवत् १८६६ में बनाया हुआ शालिहोत्रप्रकाशिका-नामक ग्रंथ मिला है। अनुमान से इनका जन्म संवत् लगभग १८५० का जान पड़ता है। यह ग्रंथ इन्होंने अपने गुरु कवि सुबंस शुक्ल की सहायता से बनाया। इसमें भावभेद रसभेद, इत्यादि का वर्णन विस्तार-पूर्वक किया गया है। श्रीधरजी ने लक्षण अपने दिए हैं पर उदाहरणों में प्राचीन कवियों के छंद लिखे हैं। सुबंसजी के छंद इसमें बहुत-से लिखे गए हैं। श्रीधरजी-कृत उदाहरण पचीस-तीस से अधिक न होंगे। विद्व-न्मोदतरंगिणी में श्रीधर के अतिरिक्त जिन ४३ प्राचीन और नवीन अन्य कवियों के छंद उदाहरण में लिखे गए उनके नाम ये हैं:—सुबंस, कबिंद, रघुनाथ, तोष, ब्रह्म, शंभु, शंभुराज, देव, श्रीपति, बेनी, कालिदास, केशव, चिंतामणि, ठाकुर, देवकीनंदन, पद्माकर, दूलह, बलदेव, सुंदर, संगम, जवाहिर, शिवदास, मतिराम, सुलतान, सखीसुख, हठी, शिव, दास, परसाद, मोहन, निहाल, कविराज, सुमेर, जुगराज, नंदन, नेवाज, राम, परमेश, काशीराम, रसखानि, मनसा, हरिकेश, गोपाल और लीलाधर। यह ग्रंथ हस्तलिखित फ़ुलस्केप साइज़ के ११६ पृष्ठों पर है और हमने इसे ठाकुर शिवसिंहजी के भतीजे ठाकुर नौनि-हालसिंहजी के पास देखा है। इनकी गणना साधारण श्रेणी में है।

जासु की दीपति दीप ते सौगुनी दामिनी कुंदन केसरि आइका ;
काम की खानि सदा मृदुबानि सनेह सनी छिति छेम बिछाइका।
अंग अनूपम की बरनै सब अंगन प्रीतम को सुखदाइका ;
मानौ रची बिधि मूरति मोहनी श्रीधर ऐसी सराहत नाइका।

(१२४३) बाबा दीनदयाल गिरि

ये महाशय काशी के पश्चिम द्वार में विनायक देव के पास रहते थे। इनके बनाए हुए दो ग्रंथ अर्थात् 'अनुरागबाग' और अन्योक्ति-कल्पद्रुम हमारे पास वर्तमान हैं। शिवसिंहजी ने इन ग्रंथों के अति-

रिक्त इनके 'बाग़बहार'-नामक एक तीसरे ग्रंथ का भी नाम लिखा है, परंतु जान पड़ता है कि वह ग्रंथ उनके देखने में नहीं आया। अनुरागबाग चैत्र शुक्ला ६ संवत् १८८८ को समाप्त हुआ था, और अन्योक्तिकल्पद्रुम संवत् १९१२ विक्रमीय माघ सुदि में वसंत पंचमी के दिन। इन संवतों का ब्योरा और बाबाजी के निवासस्थान का हाल इन ग्रंथों से ही विदित होता है। जान पड़ता है कि ये महाराज सदैव काशी में ही रहे। इन्होंने ये दोनों ग्रंथ काशी में ही बनाए थे अनुरागबाग में एक प्रकार से श्रीकृष्णचंद्रजी का जीवन-चरित्र वर्णित है, परंतु सब घटनाएँ न कहकर बाबाजी ने केवल बाल-लीला, माखनचोरी, होली, रास, अंतर्द्धानलीला, मथुरागमन, बारह-मासा, उद्धव का व्रजगमन, षटऋतु, उद्धव का गोपिकाओं से वार्तालाप और उद्धव का कृष्ण से गोपिकाओं के संदेश कहने के वर्णन किए हैं। उद्धवसंवाद बड़ा लंबा-चौड़ा है और उसमें सूर-दास की भाँति इन्होंने भी उद्धव का प्रेमोन्मत्त होना लिखा है। इस ग्रंथ में पाँच केदार (अध्याय) हैं, जिनमें से चार में उपर्युक्त कथा वर्णित है और पंचम में देवताओं की स्तुति है।

बाबाजी के इस ग्रंथ में शब्दवैचित्र्य बहुतायत से पाया जाता है। इन्हें इसका बहुत बड़ा शौक़ था। इसके अतिरिक्त ये महाशय रूपक के भी बड़े प्रेमी थे। इन्होंने अन्य काव्यांगों का भी वर्णन किया है। इस ग्रंथ के देखने से यह नहीं जान पड़ता कि यह कोई कथा-प्रासंगिक ग्रंथ है। इन्होंने साहित्य-रीति पर चलकर कथा कही है। कई स्थानों पर प्राकृतिक वर्णन भी अच्छे देख पड़ते हैं। इनकी कविता में बुरे छंद प्रायः कोई भी नहीं हैं, परंतु परमोत्तम छंदों का भी अकाल-सा है। जैसे टकसाली छंद उत्कृष्ट कवियों की रचनाओं में मिलते हैं, वैसे बाबाजी के ग्रंथों में नहीं पाए जाते। इन उपर्युक्त कथनों के उदाहरण-स्वरूप अनुरागबाग से कुछ छंद नीचे लिखे जाते हैं—

कब धौं पहिरि पीरे झँगा को सजैगो लाल,
कब धौं धरनि धीरे द्वैक पग राखि है ;
रगरि-रगरि कर अँचरा गहैगो हरि,
कब डरि झगरि-झगरि करि माखि है।
मेरे अभिलाषन को पूरि कर साखन सों,
दाखन के संग कब माखन को चाखि है ;
भैया-भैया बोलि बलभैया सों कहैगो कब,
मैया-मैया मोकहँ कन्हैया कब भाखि है ॥१॥

गुंजत पुंज अलीगन के बहु राजत लंब-कदंब दली है ;
ताहि थली यक छैल बली सिर सोहत पच्छन की अवली है।
माल लसै धवली गर मैं कर दीनदयाल रली मुरली है ;
कुंज गली मैं अचानक ही भली भाँति अली उन मोहिं छली है ॥२॥

कोमल मनोहर मधुर सुर ताल सने,
नूपुर निनादनि सों कौन दिन बोलि हैं ;
नीके मम ही के वृंद वृंदन सु मोतिन को,
गहि कै कृपा की कब चोंचन सों तोलि हैं।
नेम धरि छेम सों प्रमुद होय दीनद्याल,
प्रेम कोकनद बीच कब धौं कलोलि हैं ;
चरन तिहारे जदुबंस राजहंस कब,
मेरे मन-मानस मैं मंद-मंद डोलि हैं ॥ ३ ॥

अन्योक्तिकल्पद्रुम इनके प्रथम ग्रंथ से आकार में कुछ छोटा है। इसमें ८४ पृष्ठ रायल अठपेजी के हैं और उसमें १०४।

इसमें प्रायः अन्योक्तियों ही का वर्णन है। जहाँ किसी साधारण बात की आड़ से किसी अन्य वस्तु का उत्कृष्ट वर्णन होता है, वहाँ कविगण अन्योक्ति-अलंकार कहते हैं।

इसमें बाबा दीनदयाल गिरि ने बहुतेरे विषयों के सहारे अन्यो-

क्तियाँ कही हैं। यह ग्रंथ विशेषतः कुंडलियाओं में कहा गया है। दो-चार स्थानों पर दोहा, मालिनी छंद और सवैया एवं घनाक्षरी हैं। यह ग्रंथ भी प्रशंसनीय बना है और इसकी अन्योक्तियाँ दर्शनीय हैं। यद्यपि यह अनुरागबाग के चौबीस वर्ष पीछे बना, तथापि कविता के गुणों में उससे न्यून है। बाबाजी को हम तोष कवि की श्रेणी में रखते हैं। अन्योक्तिकल्पद्रुम के उदाहरणार्थ एक छंद नीचे लिखा जाता है—

गरजै बातन ते कहा धिक नीरधि गंभीर ;
बिकल बिलोकैं कूप पथ तृषावंत तो तीर।
तृषावंत तो तीर फिरैं तोहिं लाज न आवै ;
भँवर लोल कल्लोल कोटि निज बिभव दिखावै।
बरनै दीनदयाल सिंधु तोको को बरजै ;
तरल तरंगी ख्यात वृथा बातन ते गरजै ॥ ४ ॥

खोज में विश्वनाथनवरत्न, चकोरपंचक, दृष्टांततरंगिनी, काशी-पंचरत्न, वैराग्यदिनेश, [द्वि० त्रै० रि०] दीपकपंचक और अंतर्लापिका-नामक [खोज १९०४] इनके और ग्रंथों का पता लगा है।

(१२४४) बलवानसिंह (उपनाम काशिराज)

गौतम ऋषि के वंश में महाराजा बरिवंडसिंह काशी-नरेश हुए। उनके पुत्र महाराजा चेतसिंह काशीराज हुए। इन्हीं के पुत्र कुमार बलवानसिंह ने चित्रचंद्रिका-नामक ग्रंथ संवत् १८८९ में बनाया। हिंदी-साहित्य का यह बड़ा सौभाग्य रहा है कि बड़े-बड़े राजे-महाराजे तक इसे इतना पसंद करते आए हैं कि उन्होंने अनेकानेक ग्रंथ बनवाए और स्वयं भी कविता की। चित्रचंद्रिका २३३ पृष्ठों का एक बड़ा ग्रंथ है, जिसमें टीका भी शामिल है। बिना टीका के यह ग्रंथ साधारण पाठकों की समझ में कभी न आता। इसमें आद्योपांत चित्र-काव्य है और प्रायः सभी प्रकार के चित्रों का

इसमें उत्तम और पूर्ण वर्णन है। इस कवि की भाषा बहुत संतोष-दायक है। चित्र-कविता का विचार छोड़कर इसमें स्वतंत्र दृष्टि से देखने पर उत्कृष्ट छंद बहुत नहीं हैं। इसका कारण यही है कि इसमें शब्दवैचित्र्य पर अधिक ध्यान रक्खा गया है और कवि को चित्र-काव्य करने के कारण लाचार ऐसा करना पड़ा है। फिर भी इस ग्रंथ में प्रकृष्ट छंदों का अभाव नहीं है और अनेकानेक उत्तम चित्र देखकर कवि-पांडित्य की मुक्तकंठ से प्रशंसा करनी पड़ती है। चित्र-काव्य इतना सांगोपांग किसी कवि ने नहीं कहा है और इस ग्रंथ से श्रेष्ठ चित्र-काव्य शायद ही किसी भाषा-ग्रंथ में हो। इसमें सात-सात अर्थों तक के कवित्त वर्तमान हैं और फिर भी उनकी भाषा बिगड़ने नहीं पाई है। इस कवि को हम तोष की श्रेणी में रखते हैं। उदाहरणार्थ कुछ छंद नीचे लिखते हैं—

सप्तार्थ कवित्त— अभंग श्लेष

बंर हंस करि सोहै धारण किए हैं हरि,
दायक परम शिव जग मैं बखानिए;
कह्यो नैन भद्रा प्रिय गुण शुभ राजत है,
पत्त मैं रुचिर रुचि लोक लोक गानिए।
धरम प्रगट कियो रुचिर सकति धर,
भग छवि छाजत है वचन प्रमानिए;
भनि काशिराज ऐसे हरि हरि हरि हरि,
ऐसे हरि हरि किधौं प्रौढ़ा तिय जानिए॥ १॥

द्व्यर्थ कवित्त

सीकर ललित सोहै सुमन समाल पर,
राजै द्विजराज द्युति हंस कलरत जात;
कवि काशिराज भनि मृदु सुखदानि वानी,
मैन सैन रसन रसालहि भरत जात।

सोभै उर बसी रति सुंदर सुकेशी बेस,
रसन वलय मंजु घोष उचरत जात ;
रति बिपरीत किधौं जीति करि इंद्र आज,
बारन ते मुकुता हजारन झरत जात ॥ २ ॥

निर्मात्रिक कवित्त

कनक लजत तन अमल बसन सज,
बदन कमल बर कचन सघन घन ;
मलन करत कर रदन चमक पर,
बचन सरस मन बसन अतन तन ।
नयन सयन सर गमन लसत गज,
उरन नरम छँद सरँग फवन वन ;
रमत गहन बन चलत न धव अब,
तरल लखत पथ कहत अपन पन ॥ ३ ॥

नाम—(१२४५) रामनाथ प्रधान अयोध्यावाले रीवाँ के मंत्रिवंश में से हैं।

ग्रंथ—(१) रामकलेवा [प्र० त्रै० रि०] (१६०२), (२) प्रधाननीति [खोज १६०१], (३) रामहोरीरहस (१६१३), (४) धनुषयज्ञ ।

जन्म-काल—१८८७ ।

कविताकाल—१८८६ । इनकी कविता उत्कृष्ट और भाषा मनोहर है । ग्रंथों में नीति-वर्णन अच्छा है । इनकी गणना साधारण श्रेणी में है । इनकी रामकलेवा हमारे पास है, और प्रधाननीति भी हमने देखी है ।

उदाहरण—

जै गनपति गिरिजा गिरिजापति जैति सरस्वति माता ;
जै गुरुदेव केसरीनंदन चरन कमल सुखदाता ।

वनइस सै दुइ के संवत मैं जेठ दसहरा काहीं;
ग्रंथ कियो आरंभ अनूपम बैठि अजोध्या माहीं ॥ १ ॥

(१२४६) द्विज

ये महाशय द्विज कवि मन्नालाल नहीं हैं। इनका जन्म संवत् १८६० में हुआ, और कविताकाल १८८६ के लगभग समझना चाहिए। इन्होंने श्रीराधानखशिख-नामक एक उत्कृष्ट ग्रंथ अनुप्रास एवं भाव-पूर्ण बनाया है। खोज १६०३ में राधानखशिख का लिपिकाल १८५५ लिखा है। अतः जन्म-काल संदिग्ध है। हम इनकी गणना तोप की श्रेणी में करेंगे।

उदाहरण—

अमल कमल रंभ खंभ से उलटि धरे,
गुरज जुगल देखि केहरी नसत है;
सुधा रस पैर कारी लर मखतूल डारी,
सीफल मृनाल कंबु सोभा सरसत है।
सुमन गुलाब बिंब मदन मुकुर कीर,
खंजन कमान उपमा न परसत है;
द्विज कबि जान कही राधिका सुजान छबि,
मेरे जान चंद ढिग नागिनि लसत है।

(१२४७) गुरुदत्त शुक्ल

ये महाशय मकरंदनगर के रहनेवाले प्रसिद्ध कवि देवकीनंदन के भाई थे। इनका बनाया हुआ पक्षीविलास ग्रंथ परम मनोहर है। उसमें अन्योक्तियों का अच्छा चमत्कार है। स्वरोदय का भी इन्होंने एक उत्कृष्ट ग्रंथ बनाया है। खोज में इनका कविताकाल संवत् १८६३ लिखा है। अनुप्रास पर भी इनका ध्यान रहता है। इनके पिता का नाम शिवनाथ था। इन्होंने स्वयं लिखा है—

प्रगट भए शिवनाथ कवि सुकुल बंस मैं अंस;
ताको सुत गुरुदत्त कवि कबिता को अवतंस।

इन्हें हम तोष कवि की श्रेणी में रक्खेंगे।

सुख बालपनो को भयो सपनो, सुख मात पिता को न साथ चरो ;
जग जीवन हू को न स्वाद मिलो, जुवती उनमाद सो बादि हरो।
पन तीजे मैं तू अपने मन मैं, गुरुदत्त कहा धौं गरूर करो ;
अब टेक यहै करिए सुक जू भजौ राम अजौ पिंजरा मैं परो।

(१२४८) जुगुलानन्यशरण महंत अयोध्या

ये महंतजी जाति के ब्राह्मण थे। आपने बहुत-से ग्रंथ बनाए हैं, जिनका पता खोज [द्वि० त्रै० रि०] में लगा है। इनका देहांत संवत् १९३३ में हुआ। ग्रंथों के बाहुल्य से जान पड़ता है कि आपकी अवस्था मृत्यु-काल में प्रायः ७० वर्ष से कम न होगी। आपके ग्रंथों के नाम नीचे लिखे जाते हैं—

विनोदविलास (१४० पृष्ठ, सं० १९१०), सीतारामसनेह-वाटिका (पृ० ४४२, सं० १९२१), अष्टदलारहस्य (पृ० २४, सं० १९०४), उपदेशपत्रिका (पृ० २६, सं० १९१६), सत्संगसतसई (पृ० ३०, सं० १९१७), दिव्यदृष्टांतप्रकाशिका (पृ० ३८, सं० १९१८), अवधविहार (पृ० २२), विश्वबोधावली (पृ० ७०, सं० १९१९), हृदयहुलासिनी (पृ० ८०, सं० १९२०), सुमति-प्रकाशिका (पृ० ३६), प्रेमप्रकाश (पृ० ७२), प्रमोददायिका दोहा-वली (पृ० ३०), सुखसीमादोहावली (पृ० ३६), रामनाम-माहात्म्य सटीक (पृ० ३६२, सं० १९२२), मधुरमंजुमाला (पृ० १९४), प्रेमउमंग (पृ० १४), अर्थपंचक (पृ० २०), जानकी-स्नेहहुलास (पृ० १०), रामनामपरत्वपदावली (पृ० २८), (रूपरहस्यपदावली (पृ० ४२), संतसुखप्रवासिकापदावली (पृ० ५२), महिमाअवधवासी (पृ० ८), अभ्यासप्रकाश (पृ० ३२), संत-वचनविलासिका (पृ० २८), सीताराम-उत्सवप्रकाशिका (पृ० २८), विरहदिनेश (२४), भूलनफ़ारसी (पृ० १०), सीताराम-

सनेहसागर (पृ० ६८), प्रेमपरत्वप्रभादोहावली (पृ० ६६), विनयविहार (पृ० ४४), प्रियतमप्रेमप्रवर्द्धिनी (पृ० ३०), वर्णमाला (पृ० १०), विरतिशतक (पृ० ८), उपदेशनीतिशतक (पृ० ८), बरवाविलास (पृ० ८), मनबोधशतक (पृ० १०) और संतविनयशतक (पृ० ८) । वचनावली । चतुर्थ त्रैवार्षिक खोज में इनके उज्ज्वल उपदेश (१६१८), धामपरत्वप्रकाश (१६-१८), अरिल्लछंदावली (१६२०), सुमनकुंजविकासिका (१६-२०), एकाक्षरकोश, गुरुमहिमा, युगलविनोदविलास, उज्ज्वल-उत्कंठा, रामनामप्रतापप्रकाश, सीतारामरसतरंगिणी, संतसिद्धांत-सूर, संतसुखप्रकाशिका, संग्रह प्रीतिपचासिका, भक्तिरहस्य, झूलना, मोदचौंतीसा, नवलअंगप्रकाश, नामपदावली, भक्तनामावली, हरफ़-प्रकाश तथा अष्टादश रहस्य और मिले हैं ।

इन २७ ग्रंथों में से कुछ हमारे देखने में नहीं आए हैं । ग्रंथों के आकार से जान पड़ता है कि ये एक आशु कवि थे । इनके निम्न-लिखित ग्रंथ हमने छतरपूर में देखे हैं—

अर्थपंचक, संक्षिप्त मधुरमंजुमाला (११ अध्यायों में ब्रजभाषा व खड़ी बोली में), गुरु व संतप्रशंसा (४६ छंद), नाममहिमा (४१ छंद), सत्संगति (५२ छंद), वैराग्यकांति (५६ छंद), ज्ञानकांति (६० छंद), भक्तिकांति (६६ छंद), सधामपरत्व (६४ छंद), सुगुनकांति (८५ छंद), रूपकांति (१६८ छंद), सरसरसनिरूपण (१०४ छंद), दंपतिरहस्य (१०५ छंद), इश्क़कांति (१८० छंद) और सिद्धांतसारोत्तम (५२० छंद) । इनकी कविता अच्छी होती थी और इतने विषयों के ग्रंथों की रचना से इनकी विद्वत्ता प्रकट है । इनकी गणना तोष की श्रेणी में की जाती है । इनकी रचना परम मनोहर है । यदि अन्य महंत लोग इस प्रकार अपना समय लगावें, जैसा इन्होंने किया, तो हिंदी कृतार्थ हो जावे ।

ललित कंठ कमनीय लाल, मन मोल लेत विन दामैं ;
अरुन पीत सित असित माल, मनि नूतन लसत ललामैं ।
क्या तारीफ़ सरीफ़ कीजिए, रहिए हेरि हरामैं ;
जुगुलानन्य नवीन बीन, पिक कायल सुनत कलामैं ।

(१२४६) सूर्यमल्ल

बूँदी-निवासी सूर्यमल्ल कवि ने संवत् १८९७ में वंशभास्कर-नामक भारी ग्रंथ बनाया; जो प्रकाशित हो चुका है । टीका-समेत यह ४३६८ पृष्ठों में छपा है । ग्रंथ का आकार प्रायः २५०० पृष्ठों का होगा । इसमें विविध छंदों द्वारा मुख्यतया बूँदी-राज्य का वर्णन है और गौणरूप से अनेकानेक विषयों एवं कथाओं के सांगोपांग भारी कथन हैं । ग्रंथ महाराव राजा रामसिंह बूँदी-नरेश की आज्ञा से बना । इसका निर्माण १८९७ में आरंभ हुआ । कवि के कथनानुसार वह इस समय में एक प्रसिद्ध कवि था । अन्य प्रकार से हमें विदित हुआ कि सूर्यमल्ल का रचनाकाल १८८९ से १९२० पर्यंत है । इनके टीकाकार ने लिखा है कि इनके समान हिंदी में कोई भी कवि नहीं हुआ और न भविष्य में होने की आशा है । वंशभास्कर हमारे पास मौजूद है । इसके यत्र-तत्र पढ़ने से विदित हुआ कि इसके द्वारा हमारे यहाँ कथा-विभाग की अच्छी पूर्ति हुई है । इस कवि ने राजपूतानी-मिश्रित व्रजभाषा लिखी है और अनेक विषयों का विस्तार-पूर्वक अच्छा कथन किया है । इनका कविता-चमत्कार अच्छी श्रेणी का है । ग्रंथ से कवि का पांडित्य भली भाँति प्रदर्शित होता है—

रामदास नरराज भूप हरिसेन सेन भट ;
जिमि सिचान खरकोन वहुत किन्नै वट उब्बट ।
वहु सत्रुन रन व्याह दई अच्छरि नव दुलहनि ;
तनु तजि अप्पहु त्रिदिव वस्यो सुरराज सभ्य वनि ।

निज बैर लैन चाह्यो नृपति बिधि जोगसु उलटो बढ़्यो ;
करनाट-ईस दारुन कलह चाहि टेक धारन चढ़्यो ।

मुंशी देवीप्रसाद के लेखों से इनका निम्न-लिखित हाल ज्ञात हुआ था। ये कविराजा चंडीदानजी के पुत्र थे। इनका जन्म संवत् १८७२ में बूँदी में हुआ था। ये बड़े भारी विद्वान् तथा कवि एवं सौरसेनी, मागधी, पैशाची और व्रजभाषा के अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने महाराव राजा रामसिंह की आज्ञा से वंशभास्कर ग्रंथ लिखना स्वीकार किया था, परंतु जब रामसिंहजी का वर्णन आया और उनके भी दोष कविराजा ने लिखने चाहे, तब महाराज सहमत नहीं हुए। इस पर इन्होंने ग्रंथ बनाना छोड़ दिया। इससे इनकी सत्यप्रियता का पूरा प्रमाण मिलता है। संवत् १९२० में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके रचे ये ग्रंथ हैं— (१) वंशभास्कर महाचंपू, (२) बलवंतविलास, (३) छंदोमयूख, (४) वीर-सप्तशती। इनकी भाषा राजपूतानी बुँदेलखंडी और प्राकृत मिश्रित है। हम इन्हें तोष की श्रेणी का कवि समझते हैं।

बारन बयानै जरतारन के जीनवारे,
आरन के अडर हजारन के मोल मैं ;
बेग बल बाहक अरिन दल दाहक जे,
गमन के गाहक बलाहक से बोल मैं।
रामदिल दूलह के तरल तुरंग ताते,
चक्कर समान फिरैं छक्करन चोल मैं ;
डाकर भरे तैं रतनाकर कितीक बात,
चाकर ज्यौं चलत दिवाकर चँदोल मैं ॥ १ ॥

चढ़्यो मल्हार लै तुखार नो हजार नच्चते ;
धए प्रबीर तानि तीर जंगधीर जच्चते।
बजे निसान स्वान जे निसा दिसान बिरथरे ;
चमंकि पारि चिक्करी डिगेरु दिक्करी डरे ॥ २ ॥

रजोमई तमोमई भटालि भीर भूमई;
विमान जाल देवतान ताल रीझि कै दई।
धसैं छुरी तुसार बीर पार नीरधार सी;
स्वसैं उतंग के परे मतंग झुल्लि सारसी ॥ ३ ॥
झटक्कि इक्क कौं पटक्कि वज्र लौं मही परैं;
खटक्कि खग्ग खुप्परी अटक्कि पग्ग उत्तरैं।
दरक्कि छुत्ति देखि यों भरक्कि जैपुरे भजैं;
करक्कि संधि झंकटी वरक्कि बाढ़ के वजैं ॥ ४ ॥

इस समय के अन्य कविगण

नाम—(१२५०) आनंदराम।
ग्रंथ—रामसागर।
कविताकाल—१८७६। [खोज १६०१]
विवरण—जयपूरवासी।

नाम—(१२५१) परागदास ब्राह्मण, बनारस। देखो नं० (११६५/१)

नाम—(१२५१/१) प्राणनाथ भट्ट।
ग्रंथ—वैद्यदर्पण। [च० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८७७।

नाम—(१२५२) वीर कवि (दाऊ दादा वाजपेयी) मँडला-निवासी। देखो नं० (६११/१)

नाम—(१२५३) मान।
ग्रंथ—(१) रामचंद्रिका, (२) श्रीनृसिंहचरित्र। [खोज १६०४]
कविताकाल—१८७७।
विवरण—विक्रम साहि राजा चरखारी के यहाँ थे।

नाम—(१२५४) मंछ (मंसाराम) माड़वारी, जोधपुर।
ग्रंथ—रघुनाथरूपक। [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८७७।
विवरण—श्लोक सं० १५००, मरुभाषा का पिंगल।

नाम—(१२५५) रुद्रप्रतापसिंह, विंध्याचल।
ग्रंथ—कौशलपथ।
कविताकाल—१८७७ [खोज १९०३]

नाम—(१२५६) हरिजी रानी चावड़ा, जोधपुर।
कविताकाल—१८७७।

नाम—(१२५७) खेतसिंह, दतिया।
ग्रंथ—(१) बारहमासी [प्र० त्रै० रि०], (२) चौंतीसी [प्र० त्रै० रि०], (३) वैद्यप्रिया [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८७८।
विवरण—राजा परीक्षित के यहाँ थे।

नाम—(१२५८) घनश्यामराय, हीरालाल के पुत्र, कायस्थ सकसेना।
ग्रंथ—दुर्गाविनोद।
कविताकाल—१८७८।

नाम—(१२५९) बलभद्रसिंह।
ग्रंथ—बारहमासी।
कविताकाल—१८७८। [खोज १९००]
विवरण—ये नागौर के महाराज थे।

नाम—(१२६०) विजय।
कविताकाल—१८७८।
विवरण—राजा विजयबहादुर टेहरीवाले। बड़ी उत्तम कविता की है। तोष कवि की श्रेणी।

नाम—(१२६०/१) वृंदावन।
ग्रंथ—(१) प्रवचनसार, (२) चतुर्विंशति जिन पूजा पाठ, (३) तीस चौबीस पूजा पाठ, (४) छंदशतक, (५) वृंदावनविलास।
रचनाकाल—१८७८।
विवरण—बारा ज़िला शाहाबाद-निवासी जैन कवि।
नाम—(१२६१) गंगादास कायस्थ, बलरामपुर।
ग्रंथ—सुमनधन (पृ० १८८ पद्य)। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—सं० १८७६।
नाम—(१२६२) दीरघकवि ब्राह्मण, काशी।
ग्रंथ—(१) दृष्टांततरंगिणी (पृ० २८ पद्य), (२) वंशीवर्णन। [द्वि० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८७६।
विवरण—साधारण श्रेणी।
नाम—(१२६३) परमेशदास।
ग्रंथ—दस्तूरसागर।
कविताकाल—१८७६। [खोज १६०५]
विवरण—साधारण श्रेणी।
नाम—(१२६३/१) मंगल मिश्र।
ग्रंथ—समरांतसार। [द्वि० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८७६।
नाम—(१२६४) अमरजी, राजपूताने के।
कविताकाल—१८८० के पूर्व।
विवरण—टाड में इनका वर्णन है। राजपूताने के चारण हैं।
नाम—(१२६५) अर्जुन।
ग्रंथ—भर्तृहरिसार।

कविताकाल—१८८०। [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—नरवर-नरेश राजा माधवसिंह के दरबार में थे।

नाम—(१२६५) उन्नड़जी कच्छ-निवासी थे। इन्होंने भगवत-पिंगल, मेघाडंबर खुसनो खुमारी, भगवद्गीता, वोना ब्रह्मछतीसी, ईश्वरस्तुति, नीतिमर्यादा ग्रंथ बनाए।

नाम—(१२६६) उमेदसिंह।

ग्रंथ—नखशिख।

जन्म-काल—१८५३।

कविताकाल—१८८०।

विवरण—साधारण श्रेणी।

नाम—(१२६७) गोपाललाल।

ग्रंथ—नसीहतनामा।

जन्म-काल—१८५२।

कविताकाल—१८८०।

नाम—(१२६८) जैकेहरी, पटियाला।

ग्रंथ—भूपभूषण।

कविताकाल—१८८०।

विवरण—राजा पृथ्वीसिंह महाराजा पटियाला के यहाँ थे।

नाम—(१२६९) दरियावसिंह (चातुर), बिजावर।

ग्रंथ—स्फुट।

कविताकाल—१८८०।

विवरण—प्रसिद्ध कवि ठाकुर के पुत्र थे।

नाम—(१२७०) नरोत्तम, बुँदेलखंडी।

जन्म-काल—१८५६।

कविताकाल—१८८०।

विवरण—तोष श्रेणी।

नाम—(१२७१) नंददास । ये कदाचित् नंददास वृंदावन-वाले हों ।
ग्रंथ—(१) नाममाला, (२) मानमनोरीनाममाला ।
कविताकाल—१८८० ।
नाम—(१२७२) बलदीराम पद्मगिरि, बनगाँव, ज़िला खीरी ।
ग्रंथ—(१) जनकबत्तीसी, (२) कृष्णबत्तीसी, (३) व्यंजन-प्रकाश, (४) ज्योतिषपुंजप्रकाश, (५) भजनभास्कर, (६) खुद-रोज़नामा, (७) गुरुमहिमा ।
जन्म-काल—१८५२ ।
कविताकाल—१८८० ।
नाम—(१२७३) बेनी प्रकट ब्राह्मण, नरवल ।
कविताकाल—१८८० ।
नाम—(१२७४) रामनाथ सिरोहिया, बूँदी ।
ग्रंथ—स्फुट ।
कविताकाल—१८८० के लगभग ।
विवरण—साधारण कवि थे ।
नाम—(१२७५) रामराव राजा ।
ग्रंथ—काव्यप्रभाकर ।
कविताकाल—१८८० । [प्र० त्रै० रि०]
विवरण—क्षत्रिय, सूर्यवंशी ।
नाम—(१२७६) श्रीगोविंदजी ब्राह्मण (वाजपेयी) गोपालपुर सरवार ।
ग्रंथ—(१) नखशिख (१८८०) (पृ० ६०), (२) विलासतरंग (पृ० ४६) । द्वि० त्रै० रि०
कविताकाल—१८८० ।

विवरण—आश्रयदाता गोपालपुरा के स्वामी ।

नाम—(१२७७) साधर ।

जन्म-काल—१८५५ ।

कविताकाल—१८८० ।

विवरण—हीन श्रेणी ।

नाम—(१२७८) सुकवि ।

जन्म-काल—१८५५ ।

कविताकाल—१८८० ।

विवरण—तोष श्रेणी ।

नाम—(१२७९) हरीदास (हरी) कायस्थ, चरखारी ।

ग्रंथ—राधाशिखनख ।

कविताकाल—१८८० ।

विवरण—महाराजा रतनसिंह के समय में थे ।

नाम—(१२८०) कविराज ।

कविताकाल—१८८१ ।

विवरण—निम्न श्रेणी ।

नाम—(१२८१) गोपाल बंदीजन । देखो १०६४

नाम—(१२८१/१) दरयाव दौवा ।

ग्रंथ—जनकपचासा । [प्र० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८१ ।

नाम—(१२८१/२) शिवबख्शराय खत्री ।

ग्रंथ—रामायण शृंगार । [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८१ ।

विवरण—बाँगरमऊ ज़िला हरदोई वासी ।

नाम—(१२८१/३) हरिदास ।

ग्रंथ—हरिविलास ।

रचनाकाल—१८८१ ।

विवरण—खादड़पुर काठियावाड़ वासी रामानुज संप्रदाय के वैष्णव थे ।

नाम—(१२८२) गणेश कायस्थ, पँवारी या दतिया ।
इनका ठीक नंबर (१०६३/१) है ।

नाम—(१२८३) गाडूराम ।

ग्रंथ—(१) यशभूषण, (२) यशरूपक ।

कविताकाल—१८८२ ।

नाम—(१२८३/१) दुर्गाप्रसाद ।

ग्रंथ—हफ़्तख़्वान शौक़त ।

रचनाकाल—१८८२ ।

नाम—(१२८३/२) दुर्गेश ।

ग्रंथ—द्वैताद्वैतवाद । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८२ ।

नाम—(१२८४) पहार सैयद ।

ग्रंथ—(१) वैद्यमनोहर, (२) रसरत्नाकर, (३) रस-सार-ग्रंथ ।

कविताकाल—१८८२ के पूर्व । [प्र० त्रै० रि०] द्वि० त्रै० रि० ।

नाम—(१२८५) वदनजी चारण ।

ग्रंथ—रसगुलज़ार ।

कविताकाल—१८८२ । [खोज १९०२]

विवरण—साधारण श्रेणी ।

नाम—(१२८६) शिवनाथ शुक्ल मकरंदनगर, फ़र्रुख़ाबाद ।

ग्रंथ—वंशावली रीवाँ ।

कविताकाल—१८८२ । [खोज १९०१]

विवरण—साधारण श्रेणी । ये महाशय देवकीनंदन के भाई थे ।

नाम—(१२८६/१) रामगोपाल ।

ग्रंथ—अष्टजाम। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८३ के पूर्व।

नाम—(१२८६/२) रघुनाथसिंह।

ग्रंथ—करीकल्पद्रुम। [तृ० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८३।

विवरण—ओयल ज़िला खीरी के राजा थे।

नाम—(१२८७) लक्ष्मीनाथ।

ग्रंथ—(१) राजविलास [खोज १६०२], (२) भजनविलास [खोज १६०२]।

कविताकाल—१८८३।

नाम—(१२८८) जयरामदास।

ग्रंथ—ज्वरविनाशन। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८४ के पूर्व।

नाम—(१२८९) अयसलदूनाथजी।

ग्रंथ—सिद्धांतसारशतक टीकासहित।

कविताकाल—१८८४।

नाम—(१२९०) लाढूनाथ जोगी, जोधपुर।

ग्रंथ—सिद्धांतसार की टीका।

कविताकाल—१८८४।

विवरण—योगवर्णन।

नाम—(१२९०/१) देवीदास।

ग्रंथ—(१) भाषा भागवत द्वादश स्कंध, (२) दामोदर लीला। [द्वि० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८५ के पूर्व।

नाम—(१२९१) गंगादीन, पिता परमसुख कायस्थ, डौंड़ियाखेरा।

ग्रंथ—शिवपुराण भाषानुवाद।

जन्म-काल—१८६०।

कविताकाल—१८८९।

मृत्यु-संवत्—१९३०।

विवरण—राव विजयसिंह जागीरदार बेरी के निरीक्षक थे।

नाम—(१२९२) चैनराम।

ग्रंथ—भारतसार भाषा।

कविताकाल—१८८९। [खोज १९०१]

विवरण—दूनी जैपुरवाले चंदसिंह की इच्छानुसार बना।

नाम—(१२९३) दुर्गा।

जन्म-काल—१८६०।

कविताकाल—१८८९।

विवरण—निम्न श्रेणी।

नाम—(१ २/१ ९३) बलिराम।

ग्रंथ—अद्वैतप्रकाश। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८९।

नाम—(१२९४) महेश।

जन्म-काल—१८६०।

कविताकाल—१८८९।

विवरण—तोष कवि की श्रेणी।

नाम—(१ २/१ ९४) मोतीराम।

ग्रंथ—व्रजेंद्रविनोद। [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८९।

नाम—(१२९५) हरसहाय भट्ट, पटना।

ग्रंथ—(१) रामरत्नावली (पृष्ठ १५२), (२) रामरहस्य।
[द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८९ ।

विवरण—ग़ाज़ीपुर-निवासी जीवनदास के शिष्य ।

नाम—(१२६६) लछिमनदास ।

ग्रंथ—(१) दोहाओं का संग्रह [प्र० त्रै० रि०], (२) गुरु-चरितामृत । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८६ के पूर्व ।

नाम—(१२६७) जवाहिरसिंह कायस्थ, चरखारी राज्य ।

ग्रंथ—(१) मंगलपचासा, (२) वाल्मीकीय रामायण का छंदोबद्ध अनुवाद ।

जन्म-काल—१८६० ।

कविताकाल—१८८६ ।

विवरण—चरखारी-नरेश महाराज रतनसिंह के राज-कवि थे ।

नाम—(१२६८) मोगजी ।

ग्रंथ—खीची चौहानों का इतिहास ।

कविताकाल—१८८६ ।

विवरण—राजपूतानावाले ।

नाम—(१२६९) रतनसिंह, महाराज चरखारी ।

ग्रंथ—विनयपत्रिका की टीका ।

कविताकाल—१८८६ ।

विवरण—साधारण ।

नाम—(१३००) कृष्णदेव ।

ग्रंथ—रासपंचाध्यायी । [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८७ के पूर्व ।

नाम—(१३०१) जनदयाल ।

ग्रंथ—प्रेमलीला । [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८७ के पूर्व ।

नाम—(१३०१/१) वीरभद्र ।
ग्रंथ—फागुन लीला । [च० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८८७ के पूर्व ।

नाम—(१३०१/२) सदासुख मिश्र ।
ग्रंथ—अष्टावक्रोक्ति भाषा । [पं० त्रै० रि०]
रचनाकाल—१८८७ के पूर्व ।

नाम—(१३०२) अमीरदास, भूपाल ।
ग्रंथ—(१) सभामंडल, (२) दूषणोल्लास । [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८८७ ।

नाम—(१३०३) गिरिधर भट्ट ब्राह्मण, गौरिहार बाँदा-निवासी ।
ग्रंथ—(१) राधानखशिख (१८८६), (२) सुवर्णमाला (१९०८), (३) भाव-प्रकाश (१९१२) । [प्र० त्रै० रि०]
कविताकाल—१८८७ ।
विवरण—साधारण से कुछ अच्छे ।

नाम—(१३०४) गोपाल कायस्थ, रीवाँ ।
ग्रंथ—गोपालपचीसी ।
कविताकाल—१८८७ ।
विवरण—महाराजा विश्वनाथसिंहजू रीवाँ-नरेश के मंत्री थे । साधारण श्रेणी ।

नाम—(१३०५) गिरिधर ।
ग्रंथ—(१) मकुंदजी की वार्ता [द्वि० त्रै० रि०], (२) मकुंदजी की वाणी ।
कविताकाल—१८८७ ।
विवरण—बनारस गोपाल-मंदिर के महंत थे ।

नाम—(१३०६) जगन्नाथ क्षत्रिय, ढिगँवस, ज़िला प्रतापगढ़ ।

ग्रंथ—(१) जुद्धजोत्सव [द्वि० त्रै० रि०] (युद्धोत्सव) (पृष्ठ ४०, पद्य १८८७), (२) ब्रह्मसमाधियोग।

कविताकाल—१८८७।

नाम—(१३०७) तोवँरदास।

ग्रंथ—शब्दावली (पृष्ठ १३४)। [द्वि० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८७।

नाम—(१३०८) दयाल कवि, गुजराती ब्राह्मण।

ग्रंथ—दायदीपक (पृष्ठ १६६ गद्य-पद्य)।

कविताकाल—१८८७। [द्वि० त्रै० रि०]

विवरण—धर्मनीति। संवत् १७५४वाले सूदन कवि ने भी एक दयाल का नाम लिखा है।

नाम—(१३०९) पूर्णदास (नगर्भोरा)।

ग्रंथ—(१) कबीरदास का बीजक टीका [प्र० त्रै० रि०] (१८९७), (२) बानी [खोज १९०१] (१८८७)।

कविताकाल—१८८७।

विवरण—ये महाशय अपने गुरु दयालदास की गद्दी पर संवत् १८८४ में बैठे।

नाम—(१३१०) संतसिंह साधु।

ग्रंथ—(१) भावप्रकाशिनी टीका (१८८१) [खोज १९०४], (२) विमल-वैराग्यसंपादिनी, (३) ज्ञान-वैराग्य-संपादिनी, (४) भावप्रकाश।

कविताकाल—१८८७।

विवरण—रामायण तुलसी-कृत की टीका।

नाम—(१३११) सीताराम, दतिया।

ग्रंथ—रामायण। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८७।

विवरण—दतिया-नरेश राजा पारीछत के दरबार में।

नाम—(१३१२) ईसवीख़ाँ।

ग्रंथ—विहारी-सतसई टीका।

कविताकाल—१८८८ के पूर्व।

विवरण—अमरचंद्रिका के साथ इनकी टीका हमारे यहाँ प्रस्तुत है। अमरचंद्रिका में जो स्थल संशय के रह गए हैं उन्हें इन्होंने साफ़ कर दिया है। टीका प्रशंसनीय बनी है।

नाम—(१३१३) साहिज़ू पंडित।

ग्रंथ—बुँदेलवंशावली।

कविताकाल—१८८८ के पूर्व।

नाम—(१३१४) सेवक।

ग्रंथ—(१) अकबरनामा [प्र० त्रै० रि०], (२) वशिष्ठ श्रीरामजी का संवाद।

कविताकाल—१८८८ के पूर्व।

नाम—(१३१५) चतुर्भुजसहाय कायस्थ, महम्मदनगर, ज़िला छपरा।

ग्रंथ—स्फुट।

कविताकाल—१८८८।

विवरण—छतरपूर के दीवान थे।

नाम—(१३१६) जनकराज किशोरीशरण। देखो नं० (१०३२/२)

नाम—(१३१७) दामोदरदेव महाराष्ट्र, ओरछा-निवासी।

ग्रंथ—(१) रस-सरोज (१८८८), (२) वलभद्रशतक, (३) उपदेशअष्टक, (४) वलभद्रपचीसी, (५) वृंदावनचंदशिखनखध्यान-मंजूषा। [प्र० त्रै० रि०]

कविताकाल—१८८८।

विवरण—ओरछा-नरेश राजा हम्मीरसिंह के गुरु थे ।

नाम—(१३१७/१) नंदलाल, छावड़ा ।

ग्रंथ—मूलाचार । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८८ ।

विवरण—ऋषभदास के साथ ग्रंथ बनाया ।

नाम—(१३१७/२) मीरहसन ।

ग्रंथ—मसनवी मीरहसन । [च० त्रै० रि०]

रचनाकाल—१८८९ के पूर्व ।

नाम—(१३१८) अकबरख़ाँ, अजैगढ़वाले ।

ग्रंथ—योगदर्पणसार ।

कविताकाल—१८६९ । [प्र० त्रै० रि०]

विवरण—वैद्यक पद्य-ग्रंथ ।

नाम—(१३१९) ताराचरण व्यास ।

ग्रंथ—नाथानंदप्रकाशिका ।

कविताकाल—१८८९ । [खोज १९०२]

नाम—(१३२०) टीकाराम फ़ीरोज़ाबाद, आगरा ।

जन्म-काल—१८६५ ।

कविताकाल—१८८९-१९२३ तक ।

विवरण—आप बोधा कवि के पौत्र थे । आपके पुत्र गोपीलाल अभी तक जीवित हैं ।

नाम—(१३२१) दयानाथ दुबे ।

ग्रंथ—आनंदरस ।

कविताकाल—१८८९ ।

विवरण—नायिकाभेद का ग्रंथ बनाया है । साधारण श्रेणी ।

नाम—(१३२१/१) दीपचंद ।

ग्रंथ—(१) ज्ञानदर्पण, (२) अनुभवप्रकाश, (३) आत्मा-

वलोकन, (४) चिद्विलास, (५) परमात्मपुराण, (६) स्वरूपानंद, (७) उपदेशरत्न, (८) अध्यात्मपचीसी।

रचनाकाल—१९वीं शताब्दी विक्रम।

विवरण—आमेर जयपूरवासी काशलीवाल गोत्रीय जैन थे।

नाम—(१३२१/२) भोलाराम।

ग्रंथ—फुटकल कविता।

रचनाकाल—१९वीं शताब्दी विक्रम।

विवरण—गढ़वाल के रहनेवाले प्रसिद्ध चित्रकार थे। हिंदी के कवि भी थे। 'साहित्य-समालोचक' में इनका हाल आया है।

नाम—(१३२१/३) अंबेलाल।

विवरण—इनके छंद गोविंद गिल्लाभाई के पुस्तकालय में हैं।

नाम—(१३२१/४) अभूमित्र चौवे।

रचना—जुगरहस्य।

नाम—(१३२१/५) अयुद्ध।

विवरण—वेंकटेश्वर प्रेस में छपे 'काव्य-संग्रह' ग्रंथ में इनके छंद हैं।

नाम—(१३२१/६) अलवेली अली।

विवरण—इनकी कविता भक्तमाल में है, और ३०० पद गोविंदगिल्लाभाई के पुस्तकालय में हैं। रसमंजरी में भी इनके कवित्त हैं।

नाम—(१३२१/७) इनके दो कवित्त गोविंद गिल्लाभाई के पुस्तकालय में हैं।

नाम—(१३२१/८) अलमस्त।

विवरण—भक्तमाल की टीका में इनका एक कवित्त है।

नाम—(१३२१/९) अरारची।

विवरण—इनका नाम सुजानविनोद की सूची में है और वे रामनगर के निवासी लिखे हैं।

कवि-नामावली

शुद्धाशुद्ध-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४२२	११	व्रजावसी	व्रजवासी
४२३	२३	(३.१७)	($\frac{३ १ ७}{१}$)
४२५	२	जगन्नथादास	जगन्नाथदास
४३२	२३	ठीकाकारों	टीकाकारों
४३७	१४	जाद	जात
४३८	१२	कागमुशुंडी	कागभुशुंडी
४४६	७	अलसानी	अलसानि
४७१	६	ठाड़ो	ठाढ़ो
४८६	२०	छत्रसाल	छतसाल
५३१	५	उन्नाववाले	कानपूरवाले
५३८	२१	उदयनाम	उदयनाथ
५४७	६	शेरअफ़गान	शेरअफ़गन
५४८	१६	अरौ	और
५६६	२०	$४\frac{५}{१}४$	$४\frac{५}{२}२$
५७३	७	रौअ	और
५९९	१५	रीरी	रोरी
६०३	२४	पद्म	पद्य
६३१	१७	राजनूताना	राजपूताना
६३५	१७	१७१६	१७६६
६७१	३	वेर	ओर
६७३	१६	पात	ताप
७३१	१८	पुखी	पिकी (।यह छंद देवजी का है)
७४०	१३	प्रथय	प्रथम
७५३	७	वर्तमान	स्वर्गीय